

| प्रतिपाद्यविषयाः ।                      | पृ०सं० | प्रतिपाद्यविषयाः ।                      | पृ०सं० |
|---|--------|---|--------|
| त्रिकोणैकाधिपत्य शोधनप्राप्तेरुत्साकरणे |        | बुधविचारः ....                          | ११     |
| ध्वब्दानयनम् ....                       | १०९    | गुरुविचारः ....                         | ११     |
| सूर्यतच्चतुर्थाभ्यामायुःकथनम् ....      | १११    | शुक्रविचारः ....                        | १३८    |
| रश्मिविचारेण पितृमात्ररिष्टम् ....      | ११२    | शनिविचारः ....                          | ११     |
| वेश्मस्थाने रेखाभावे आयुःकथनम् ....     | ११३    | उक्तानां फलविचारः ....                  | ११     |
| करणादिविचारेण भावविचारः ....            | ११४    | <b>दशमोऽध्यायः १०.</b>                  |        |
| <b>षष्ठोऽध्यायः ६.</b>                  |        | अथ पिंडांशकादिभेदवर्णनम् ....           | १४०    |
| अथाब्दध्वर्यया भाग्यादिवर्णनम् ....     | ११९    | पिंडायुर्ध्रुवांकवर्णनम् ....           | १४१    |
| भावफलज्ञाने कालचर्या ....               | ११     | ध्रुवायुर्दायिध्रुवांकविचारः ....       | १४१    |
| भावफलज्ञाने शुभग्रहपापग्रहभेदेन वि-     |        | रश्म्यायुर्दायिध्रुवांकविचारः ....      | १४२    |
| शेषः ....                               | १२०    | वर्षमासायायुरुत्पादनप्रकारः ....        | ११     |
| कारकसंज्ञग्रहविचारः ....                | १२१    | नवांशायुरुत्पादनप्रकारः ....            | १४३    |
| भावेषु शुभाशुभग्रहविचारः ....           | १२२    | प्रक्रमानुगतायुर्दायोत्पादनप्रकारः .... | १४५    |
| दृग्बलसिद्धग्रहव्यवस्था ....            | ११     | अष्टकवर्गायुर्दायोत्पादनप्रकारः ....    | ११     |
| स्त्रीपुंस्वभावविचारः ....              | १२३    | ध्रुवांकसहितनवांशायुर्दायिकथनम् ....    | १४६    |
| स्थानविशेषेषु रव्यादीनां पाचकादिसंज्ञा  | १२४    | नक्षत्रायुर्दायः ....                   | १४७    |
| स्थानसंबन्धेन पाचकादिग्रहाः ....        | ११     | आयुर्दायिकथनहेतूपन्यासः ....            | १४८    |
| रव्यादीनां दशागोचरादिफलकालः ...         | १२६    | भावायुर्दायिवर्णनम् ....                | ११     |
| <b>सप्तमोऽध्यायः ७.</b>                 |        | आयुर्दायस्य मुख्यत्वेन पाहविध्यवर्णनम्  | १४९.   |
| अथ मासचर्यायां शुभाशुभदिवसज्ञानम्       | १२७    | <b>एकादशोऽध्यायः ११.</b>                |        |
| <b>अष्टमोऽध्यायः ८.</b>                 |        | अथ मारकयोगविचारः ....                   | १५०    |
| पूर्वाध्यायोक्तयोगभंगपरंपरा ....        | १२९    | आयुर्योगविचारः ....                     | ११     |
| स्थानविशेषकरणाधिपसंभवेन भंगः ....       | ११     | गुरुबुधशुक्रयोगायुर्मानम् ....          | १५१    |
| राश्यानयनेन भंगांतरम् ....              | ११     | दायहरणप्रकारः ....                      | १५३    |
| राशिप्रयोजनम् ....                      | १३०    | व्याप्यादिहरणप्रकारः ....               | ११     |
| प्रकारांतरेण भावभंगः ....               | १३१    | भावसंघिगतायुर्हरणम् ....                | १५४    |
| भंगयोजना ....                           | १३२    | आयुर्हरणप्रक्रिया ....                  | १५५    |
| <b>नवमोऽध्यायः ९.</b>                   |        | अनेकग्रहयोगे विशेषकर्तव्यम् ...         | १५६    |
| अथ द्वादशभावनामानि ....                 | १३४    | ग्रहद्वययोगे कर्तव्यम् ....             | ११     |
| रविग्रहविचारः ....                      | १३६    | शुभद्वययोगे विशेषः ....                 | ११     |
| चंद्रग्रहविचारः ....                    | ११     | अस्तंगतग्रहाणां दायहरणप्रकारः ....      | १५७    |
| मौमविचारः ....                          | १३७    | लघ्रायुर्दायहरणरीतिः ....               | ११     |
|   |        | लघ्ने कूरग्रहयोगे आयुर्हरणसंस्कारः ...  | ११     |

| प्रतिपाद्यविषया ।                             | पृ०स० | प्रातःपाद्यविषया ।                  | पृ०स० |
|---|-------|-------------------------------------|-------|
| सचद्राव्हायुर्दायः                            | १६०   | त्रयोदशोऽध्यायः १३.                 |       |
| लग्नगतसचद्राव्हायुर्दायः                      | "     | अथ सकलव्यवहारसाधनोभूत भाग्यादि-     |       |
| द्रेक्काणवशात्स्थानवृद्धिक्षयो                | १६१   | विचारोपक्रम.                        | १८३   |
| अस्तगतग्रहायुर्हानिः                          | "     | भाग्यविचाररीतिः                     | "     |
| शत्रुक्षेत्रगतग्रहायुर्हानिः तत्रसुदृढगता-    |       | स्वदेशपरदेशभाग्योदयविचारः           | १८४   |
| ना विशेषः मित्रादीना वृद्धिः, शत्रु-          |       | भावफलसम्प्रापदेशः                   | १८५   |
| दीना हरणम्                                    | १६२   | प्रकारातरेण समानानयनम्              | १८६   |
| अतर्दशाभागाः                                  | १६३   | उच्चादिस्थानविशेषेण रव्यादीना फल-   |       |
| अतर्दशानयनप्रकार                              | "     | विशेषः                              | १८७   |
| समच्छेदाभावस्थानानि                           | १६५   | भाग्यविचारे चन्द्रफलम्              | "     |
| अतर्दायोपभोक्तृक्रम.                          | १६६   | " भौमफलम्                           | १८८   |
| ग्रहेभ्यो भावेभ्यश्च द्वादशस्थानभागांशा       | १६७   | " बुधफलम्                           | १८९   |
| अवगिष्टव्यवस्था                               | "     | " गुरुफलम्                          | १९१   |
| कालाशपत्यर्चद्वाराशपतिहराः                    | १६८   | " शुक्रफलम्                         | १९२   |
|   |       | " शनिफलम्                           | १९३   |
| द्वादशोऽध्यायः १२.                            |       | फलागमकालविचारः                      | " "   |
| अथ पिंडायुर्भेदगणना                           | १६९   | भ्रात्रादिसहोदयाविचारः ..           | १९५   |
| ग्रहतारतम्येनाशायन्यतमायुर्दायग्रहणम्         | "     | चतुर्दशोऽध्यायः १४.                 |       |
| स्योच्चायधिकारतारतम्येन आयुर्दायग्रह-         |       | वर्षचर्योपक्रम.                     | १९६   |
| णे विशेष                                      | १७०   | लग्नविचारः                          | "     |
| लग्नगतबलवद्ग्रहतारतम्येनायुर्दायग्रहणम्       | १७१   | त्रिंशन्नक्षत्रसंज्ञाः              | "     |
| उच्चायधिकारवशाल्लग्नगतानामायु क्रम            | "     | द्वात्रिंशद्दिनादीद्वयमुद्धृतसंज्ञा | १९७   |
| द्वादशभावेषु ग्रहाणा मिश्रायुर्दायग्रहणम्     | १७२   | षष्टिनाडीसंज्ञा.                    | १९८   |
| उक्तायुर्दायगणना                              | १७४   | कलाशा                               | १९९   |
| अमिश्रायुर्दायभेदा                            | "     | राशिचक्रगतकलाशा                     | "     |
| मिश्रायुर्दायदशाग्रहणरीतिः.                   | १७५   | नित्योदयक्रम.                       | "     |
| नक्षत्रायायुर्दायेषु पिंडायुर्दायग्रहणस्थलानि | "     | नक्षत्रमग्रहणप्रकारभेदाः            | २००   |
| प्रकारातरेण पेंडायुर्दायग्रहणम्               | १७६   | रात्रिदिनत्रयमग्रहणप्रकारः.         | २०१   |
| ध्रुवायुर्दायग्रहणम्                          | "     | मेपादिनित्योदयाना प्रत्यहभोगकालः.   | "     |
| योगविशेषेण बलवचरसप्तमग्रहेषु पृथ-             |       | दशवर्गादिषु फलानि                   | २०२   |
| क्वपृथक्दायविशेषग्रहणम्                       | १७७   | राहवेत्तुगति                        | २०६   |
| रश्मिवशादायुर्दायग्रहणम्                      | १७९   | राहवेत्तुगतिप्रयोजनम्               | "     |
| अत्राथ गर्गवाक्यप्रमाणम्                      | १८०   | पित्रापरिष्टविचार                   | २०८   |

| प्रतिपाद्यविषयाः ।                        | पृ०सं० | प्रतिपाद्यविषयाः ।                  | पृ०सं० |
|---|--------|-------------------------------------|--------|
| अपमृत्युकालनिर्णयः ....                   | २१०    | पंचविंशतिदिशिफलानि ....             | २४२    |
| स्वल्पायासेन चिरायुर्ज्ञानप्रकारः ....    | २११    | एकोनविंशतिदिशिफलानि ....            | २४३    |
| नवचतुर्दशग्रहणां षष्ट्यंशत्रिंशांशादयः .. | २१२    | रविस्थानफलानि ....                  | २४५    |
| नक्षत्रगणनाप्रकारः ....                   | २१२    | चंद्रभावफलानि....                   | २४६    |
| कलांशादिपूत्पन्नानां प्रियारसाः , ...     | २१४    | भौमभावफलानि ....                    | २४७    |
| बंध्यात्वादिज्ञानम् ....                  | २१५    | भावेपुबुधफलानि ....                 | २४८    |
| संन्यासित्वयोगाः ....                     | २१५    | भावेपुगुरुशुक्रफलानि ....           | २४९    |
| परमहंसादियोगाः , ...                      | २१६    | भावेपुमंदफलानि ....                 | २४९    |
| पारित्राह्यमज्ञानम् ....                  | २१७    | अधिभिन्नादिस्थानस्थितानां भावोक्तफ- |        |
| अंशविशेषज्ञातस्य स्त्रीलक्षणयोगः ....     | २१७    | ल-हासवृद्धी....                     | २४९    |
| शुभाशुभकर्मरतिज्ञानम् ....                | २१९    | दृष्टिवशाद्विफलम् ....              | २५०    |
| मेघादिशाशिज्ञातफलम् ....                  | २२०    | चंद्रफलम् ....                      | २५०    |
| सूर्यादीनां कलांशवशात्फलम् ...            | २२१    | भौमफलम् ....                        | २५१    |
| षष्ट्यंशफलानि ....                        | २२३    | बुधफलम् ....                        | २५१    |
| अंशद्वयैक्येन त्रिंशत्फलानि ....          | २२५    | गुरुफलम् ....                       | २५२    |
| सूर्यकालांतिमे मरणनिमित्तानि ...          | २२५    | शुक्रफलम् ....                      | २५२    |
| जन्मलग्नस्थसूर्यादिनवग्रहवशान्मृतिनि-     | २२६    | शनिफलम् ....                        | २५२    |
| मित्तम् ....                              | २२६    | स्थानबलवशाद्ग्रह्यादीनांफलानि ....  | २५४    |
| नवांशफलकनिधनमित्तानि ....                 | २२८    | कालायनचेष्टाबलान्यतमवर्तमानग्रहफ-   |        |
| कालादिरव्यंतचतुर्दशग्रहवशान्मृत्युनि-     | २२८    | लानि ....                           | २५४    |
| श्वयः ....                                | २२८    | इष्टकष्टबलवशाद्ग्रहणांफलानि....     | २५६    |
| रश्मिवशेनाव्दाब्दहरकमः ....               | २२९    | दशाविचारः ...                       | २५७    |
| अंशापुर्हराः ....                         | २२९    | बलग्रहणानुक्रमः ...                 | २५८    |
| नवांशापुर्दीपांकावयनक्रमः ....            | २३०    | <b>षोडशोऽध्यायः १६.</b>             |        |
| शतायुर्दीयानयनम् ....                     | २३०    | अथ संध्यादिविचारेणभावगतग्रहफलानि    | २५९    |
| उक्तयोगफलानि....                          | २३१    | ग्रहयोऽन भावलक्षणम् ....            | २६०    |
| योगनामानि ....                            | २३१    | तिर्यग्मुखादीनां भावानां फलकथनरीतिः | २६०    |
| शुभयोगाः ....                             | २३३    | भावस्थानांकसंख्या ....              | २६१    |
| लक्ष्मीयोगः ....                          | २३४    | भावेपु करणांकसंख्याः ....           | २६१    |
| <b>पंचदशोऽध्यायः १५.</b>                  |        | स्थानकरणाणां विषमसमसंख्याया शु-     |        |
| अथरश्म्यंशफलम् ....                       | २३६    | भाऽशुभविचारः ....                   | २६२    |
| चतुर्दशादिदिशिफलम् ....                   | २३८    | समविषमराशिषु स्थानकरणांकसंख्याया    |        |
| अथविंशतिदिशिफलम् ....                     | २४१    | व्याधिरितिः ....                    | २६२    |

| प्रतिपाद्यविषयाः ।                     | पृ० सं० | प्रतिपाद्यविषयाः ।                             | पृ० सं० |
|--|---------|--|---------|
| विषमराशोः स्थानफलम् ....               | २६३     | प्रष्टुश्चिन्हज्ञानम् ...                      | २७९     |
| जात्यादितारतम्येन फलानि ....           | २६३     | प्रश्नकालीनलघ्नस्थशुभाशुभग्रहविलोचनम्          | २८१     |
| सप्तादशोऽध्यायः १७.                    |         | प्रश्नकाले जन्मकाले वाऽयनवृत्तिज्ञानविचारः     | २८१     |
| अथ स्थानग्रहवशात्फलानि ....            | २६४     | मासतिथिज्ञानम्....                             | २८१     |
| उक्तशास्त्रोपसंहरणम् ....              | २६४     | प्रश्नलग्नादयोर्वर्षज्ञानम् ....               | २८२     |
| अष्टादशोऽध्यायः १८.                    |         | तिथिज्ञानं दिवारात्रिज्ञानं च ....             | २८२     |
| अथ प्रश्नप्रकरणोपक्रमः ....            | २६७     | प्राणज्ञानम् ....                              | २८२     |
| प्रश्नविचारणोपायवर्णनम् ....           | २६७     | प्रश्नकालान्मासराशिलग्नज्ञानम् ....            | २८२     |
| ज्ञानोपायवर्णनम् ....                  | २६८     | जन्मवृत्तिज्ञानं तत्र भिन्नाभिन्नप्रकाराः .... | २८३     |
| सर्वमंत्राणां ऋष्यादिस्मरणं विना सि-   |         | लग्नस्थबलवत्त्वम् ....                         | २८४     |
| द्धयभाववर्णनम् ..                      | २६९     | ग्रहाणां दृष्टिः ....                          | २८५     |
| ध्यानप्रकारः ..                        | २७०     | ग्रहाणां स्थानबलं दिग्बलं च ....               | २८५     |
| गणकाधिकारः ....                        | २७१     | अयनबलम् ....                                   | २८६     |
| पृच्छकलक्षणम् ....                     | २७१     | पक्षचेष्टादिवारात्रिनिसर्गबलम्....             | २८७     |
| देवज्ञकर्तव्यम् ....                   | २७१     | दशवर्गबलम् ...                                 | २८७     |
| आरूढलग्नगतआयुर्निर्णयः द्वेष्काणफलंच   | २७२     | प्रश्नलग्नज्ञानमलग्नम् ....                    | २८८     |
| मृत्युयोगप्रकारः ....                  | २७३     | अध्यायोपसंहारः ....                            | २८८     |
| राहुकालयोगज्ञानम् ....                 | २७४     | एकोनविंशोऽध्यायः १९.                           |         |
| नक्षत्रतिथिवारेण दिक्क्रमः .           | २७५     | पूर्वार्धोक्ताऽध्यायानुक्रमः ....              | २८९     |
| द्वितीयमावादष्टमभावपर्यंतं रश्मयः .... | २७६     | उत्तरार्धोक्ताऽध्यायानुक्रमः ....              | २९०     |
| मेषादिराशिषु रश्मयः .                  | २७६     | विंशोऽध्यायः २०.                               |         |
| व्याधितस्य प्रश्नकालमरणमृचककाल-        |         | शास्त्रप्रणयनफलम् ....                         | २९२     |
| राहुविशेषयोगांतराणि ....               | २७७     | व्योतिःशास्त्रपरंपरा ....                      | २९४     |
| आश्विनीक्रमान्नक्षत्रेष्ववयवाः ..      | २७८     |  |         |

इति श्रीमद्वृहत्पाराशरहोरोत्तरभागस्थ-  
विषयानुक्रमणिका संपूर्णम्.



श्रीः ।

अथ बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागः सटीकः—

भाषाटीकासहितश्च प्रारभ्यते ।

टीकाकर्तुर्मंगलाचरणं वंशादिवर्णनं च ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वन्दे राधारमणं त्रिजगत्परिपालनाय चिन्मायाम् ॥  
आद्यामाश्रित्यादौ यः सगुणो भाति चिन्मयः साक्षात् ॥ १ ॥ निर्विघ्नाय  
गणेशः सकलागममूलहेतुरीशो यः ॥ ज्ञानोदयाय शक्तिध्वान्तध्वंसाय भास्क-  
रो भगवान् ॥ २ ॥ विष्णुर्धर्मसमृद्धयै जातस्त्वेकोपि पञ्चधा तस्मै ॥ अति-  
नतबुद्ध्या सततं नतिशतमास्तां सुमंगलो मेऽसौ ॥ ३ ॥ सूर्यं ज्योतिष्मतां  
श्रेष्ठं पराशरमहासुनिम् ॥ नत्वा तदुक्तिबोधाय टीकां कुर्वे यथामति ॥ ४ ॥  
आसीज्यपुरे श्रीमान्नीतिज्ञः सर्वशास्त्रवित् ॥ दध्यङ्गुल्यवार्ध्यान्दू राजमा-  
मंगलाचरण भाषा ।

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीसरस्वत्यैनमः ॥ मैं आदौ कहते हैं प्रथम राधारमण जो श्री-  
कृष्ण उनकूं वंदे नमस्कार करता हूं वे कैसे हैं जो भगवान् श्रीकृष्ण तीन जग-  
त्के पालन करनेके अर्थ अपनी ज्ञानशक्तिका आश्रय करके स्वतः प्रत्यक्ष ज्ञान-  
रूप हैं सगुण शोभते हैं ॥ १ ॥ जो श्रीकृष्ण विघ्ननाशार्थं गणपतिरूप संपूर्ण  
शास्त्रोंके निर्माणार्थं मूलभूत शिवरूप, ज्ञानोदयके अर्थ शक्तिरूप, अज्ञानांधकार-  
के नाशार्थं सूर्यरूप ॥ २ ॥ धर्मसमृद्धयर्थं विष्णुरूप, धारण करते भये ऐसे एक  
जो भगवान् पञ्चस्वरूप होते भये उनोंकूं अति नम्रबुद्धिसे निरंतर मेरे शत न-  
मस्कार हों और मेरेकूं मंगलरूप हों ॥ ३ ॥ सर्व ज्योतिर्गणोंमें श्रेष्ठ जो सूर्य और  
महाबुद्धिमान् जो पराशरमुनि उनकूं नमस्कार करके श्रीपराशरोक्तवचनके सुवो-  
धार्थ मैं यथामति भाषाटीका करताहूं ॥ ४ ॥ जयपुर नाम करके धन्व देश  
(ढुंढाड)में प्रसिद्ध नगर हैं वहां श्रीमान्, नीतिमार्गमें निपुण, सकल शास्त्रोंके जान-  
नेवारे दध्यङ्गु ऋषिका वंशरूप जो समुद्र उसमेंसे जैसे चंद्र तत्तुल्य राजमान्य दिवा-

## मंगलाचरणम् ।

न्यो दिवाकरः ॥ ५ ॥ तस्य द्वौ तनुजावास्तां तत्र ज्येष्ठो महायशः ॥ राम-  
लालः पुराणज्ञो ज्योतिःशास्त्रविशारदः ॥ ६ ॥ गंगादत्तः कनिष्ठस्तु पुरा-  
णव्याकृतौ पटुः ॥ वंशीधरस्तत्सुतो भूत्पुराणज्ञस्तदात्मजौ ॥ ७ ॥ सूर्यना-  
रायणो ज्येष्ठः पुराणकुशलः सुधीः ॥ कनिष्ठः श्रीधरो धीमाञ्ज्योतिःशा-  
स्त्रविशारदः ॥ ८ ॥ पूर्वोक्तरामलालस्य द्वौ तनूजौ बभूवतुः ॥ शिवशंकर-  
नामाभ्यां जटाशंकरनामकः ॥ ९ ॥ कनीयाभ्याममीमांसाशब्दशास्त्रवि-  
शारदः ॥ अष्टगृहादत्तकं वंशवृद्धये श्रीधरं स माम् ॥ १० ॥ सोऽहं परोपका-  
राय देशदेशांतरं भ्रमन् ॥ बृहत्पाराशरीहोरापुस्तकानि तु यत्नतः ॥ ११ ॥  
संग्रह्य शोधयित्वा तु विद्म्यद्भस्तदनंतरम् ॥ सामंतवाटिकावासीधौरेयोपामि-  
धस्य तु ॥ १२ ॥ श्रीकृष्णशर्मणः सम्यक् साहाय्येन तथापि च ॥ बृहत्पारा-  
शरीटीकां रचयामि यथामति ॥ १३ ॥ क्षमध्वं साहसं धीरा उपकारधियो

## भाषा ।

कर नाम करके होते भये ॥ ५ ॥ वह दिवाकरजीके दो पुत्र होते भये उनमें ज्येष्ठ  
पुत्र रामलाल करके बड़े यशस्वी पुराण और ज्योतिषशास्त्र इनमें निपुण हुए ॥ ६ ॥  
कनिष्ठ पुत्र गंगादत्त करके पुराण और व्याकरणशास्त्र इनमें कुशल हुये. गंगा-  
दत्तके वंशीधर नामक पुत्र भये. उनके दो पुत्र भये ॥ ७ ॥ उनमें ज्येष्ठ  
सूर्यनारायण नाम करके पुराणविद्यामें कुशल भये. कनिष्ठ श्रीधर नाम करके  
ज्योतिःशास्त्रमें कुशल विद्वान् भये ॥ ८ ॥ पूर्वोक्त जो रामलाल उसके दो पु-  
त्र भये ज्येष्ठ पुत्र शिवशंकर कनिष्ठ पुत्र जटाशंकर भये ॥ ९ ॥ सो  
न्याय वेदांत व्याकरण शास्त्रमें कुशल थे. उनोंने वंशवृद्धयर्थ श्रीधर जो मैं से  
मेरेकुं दत्तक लिये ॥ १० ॥ सो मैं श्रीधर परोपकारार्थ देशदेशांतरमें  
करके पाराशरहोराके पुस्तक बड़े प्रयत्नपरिश्रमसे ॥ ११ ॥ संग्रह करके  
विद्वान् लोगोंसे शुद्ध करवायेके बाद कौंकणदेशके सामंतवाडी ग्रामके  
धौरेय जिनका उपनाम ॥ १२ ॥ ऐसे श्रीकृष्णशर्मा शास्त्री उनकी  
यह पाराशरहोराके ऊपर यथामति मैं टीका निर्माण करता हूं ॥ १३ ॥ यह  
साहसकृत्यके विषे उपकारक बुद्धिमान् धीरपुरुषोंने क्षमा करना कारण है

## मंगलाचरणम् ।

मम ॥ क पराशरवाग्विधः काहं मंदमतिर्बुधाः ॥ १४ ॥ तथापि च यथा-  
बुद्धि रचयामि विशोध्यताम् ॥ सर्वज्ञो न यतो लोके मानुषः परमेश्वरात् ॥  
॥ १५ ॥ अत्र तु प्रथमेऽध्याये मैत्रेयप्रश्ननन्दितः ॥ पराशरो व्याकरोति  
शिष्यायाष्टकवर्गकान् ॥ १६ ॥

## भाषा ।

जनो ! पराशरवाक्यरूपी समुद्र कहां और मंदबुद्धि मैं कहां ॥ १४ ॥ तथापि यथा-  
मति ग्रंथ शोधके टीकाकी रचना करता हूं, लोकमें परमेश्वरविना सर्वज्ञ कोई मनु-  
ष्य नहीं है ॥ १५ ॥ अब ग्रंथके प्रथमाध्यायमें मैत्रेयके प्रश्नसे प्रसन्न हुये पराशर  
मुनि शिष्यकूं अष्टकवर्ग कहते हैं ॥ १६ ॥

## ग्रंथारंभः ।

मैत्रेय उवाच-भगवन्सर्वमाख्यातं जातकं विस्तरेणमे ॥

ससहस्रायुतग्रंथैरशीत्यध्यायसंयुतैः ॥ १ ॥

## टीका ।

अथ श्रीमैत्रेयः मित्राया अपत्यं पुमान्स मुनिः पराशरमुखाद्विस्तरतः  
पूर्वार्धोक्तं जातकमाकर्ण्य कलियुगोत्पत्त्यमानजडमतिस्वल्पायुर्नरस्थिति-  
माज्ञाय तदुपकाराय ग्रंथलाघवेन सर्वजातकतत्त्वजिज्ञासुर्मुनिं प्रति पुनः  
पप्रच्छ भगवन्निति—हे भगवन् “उत्पत्तिं विलयं चैव अगतिं च गतिं  
तथा ॥ वेत्ति विद्यामविद्यां च भगवान् स निगद्यते” इत्युक्तपद्धिधल-  
क्षणपरिपूर्णः । अनेन स्वप्रश्नानुरूपप्रत्युत्तरदानसामर्थ्यशृषेः सूचितम् ।  
अपि च भगवन्निति विशेषणेन ग्रंथादौ निर्विघ्नपरिसमाप्तिप्रचयगमनजन-  
कं मंगलमपि ध्वनितम् । ससहस्रायुतग्रंथैः ग्रथ्यंते निबध्यंत एभिर्विषया इति  
ग्रंथाः श्लोकाः सहस्रेण सहिताः ससहस्राः ते च ते अयुताश्च तथोक्ताः सह-

अथ मूलग्रंथका आरंभ भाषा ।

उस प्रथमाध्यायमें प्रथम मैत्रेय ऋषि प्रश्न करते हैं हे भगवन् ! आपने पूर्वभागमें  
अशीति ( ८० ) अध्याययुक्त ग्यारह हजार ( ११००० ) श्लोकसे सविस्तर सं-

संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरात् ॥ नान्येन  
हीदृगस्येदमिति वक्तुमलं नराः ॥ २ ॥ कलौ युगे ततोऽल्पै-  
व बुद्धिः पापोत्तरा नराः ॥ अतो न चास्य प्रचयगमनं न  
प्रयोजनम् ॥ ३ ॥

### टीका ।

स्त्रायुताश्च ते ग्रंथाश्च तैः एकादशसहस्रश्लोकैरित्यर्थः । विस्तृतग्रंथनानां-  
प्रकरणभेदमुखपरिज्ञानाभावशंकां वास्यति । अशीत्यध्यायसंयुतैः अशीति-  
संख्याका अध्यायाः तत्तत्प्रकरणभेदद्योतका भागा इत्यर्थः । तैः जातकं  
जातजंतुफलसूचकं शास्त्रं विस्तरेण मे सर्वमशेषमाख्यातं स्फुटतया कथितम्  
भगवतेति शेषः ॥ १ ॥ ननु स्फुटतया समग्रजातके व्याख्यातेपि कुतः पुनः  
प्रश्न इति चेत् चतुर्भिः श्लोकैस्तद्वेतुं दर्शयति संकरादित्यादिभिः । तत्र  
प्रथमे विषयकारणं दर्शयति । संकरादिति । ग्रहाणां गृह्णन्ति पीडयन्ति शरी-  
रमनसी इति ग्रहास्तेषां गतिसंकरात् गतिर्गमनं तस्याः संकरः अन्योन्य-  
मिश्रणं तस्मात् फलानां पृथङ्निश्चितफलानां संकरः विपर्यय इत्यर्थः तस्मा-  
द्धेतोः अस्य ग्रंथोक्तवचनस्य अनेन ईदृक्प्रकारेण ईदृक् एवं प्रकारकं  
फलमिति शेषः इति एवं हीति निश्चयेन वक्तुं कथयितुं नराः नालं न सम-  
र्थाः भवेयुः ॥ २ ॥ ननु विस्तृते ग्रंथे सत्यपि कुतः फलनिश्चयासमर्थत्व-  
मित्याशंक्य बुद्धिहीनत्वादित्याह कलाविति । कलौ युगे यतः पापो-  
त्तराः पापाधिकाः नराः ततः तेषामिति शेषः बुद्धिः अल्पैव हीनैव अतः  
अस्य पूर्वार्द्धस्य विस्तृतग्रंथस्य प्रचयगमनं दीर्घकालप्रवृत्तिः न नस्यात्

### भाषा ।

पूर्ण जातकशास्त्र मेरेकुं वर्णन किया ॥ १ ॥ परंतु पुनः प्रश्न करनेका कारण यह है  
कि ग्रहोंकी गतिका अन्योन्यमिश्रण होनेसे फलोंकाभी विपर्यय हुआ है उसके लिये  
इस वचनसे ऐसा फल कहना ऐसा निश्चय करनेको कोई मनुष्य समर्थ नहीं हो-  
ता है ॥ २ ॥ और प्रश्न करनेका दूसरा प्रयोजन यह है कि पूर्वार्द्ध जो है वो  
बड़ा सविस्तर ग्रंथ है, और कलियुगमें मनुष्य अल्पबुद्धि उसमेंभी पापी बहुत ।

अत्र त्रेतायुगे कं चिद्वापरे च कृते युगे ॥ कुशाग्रमतयः  
सर्वे पुण्यभाजश्चिरायुषः॥४॥अतोऽल्पबुद्धिगम्यं यच्छास्त्रं-  
मेतद्वदस्व मे॥लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा॥५॥

## टीका ।

अपि च प्रयोजनं फलज्ञानरूपकार्यमपि न स्यात्॥३॥कथं तर्ह्येतावन्तं काल-  
मस्य प्रयोजनं प्रचयगमनं चासीत् इति शंकायामाह अत्रेति । अत्र कृतयुगे  
यतः सर्वे नराः पुण्यभाजः धर्मनिष्ठाः ततः चिरायुषः दीर्घायुषः अनेन  
विस्मृतस्यापि ग्रंथस्य प्रचयगमनहेतुर्दर्शितः कुशाग्रमतयः पुण्यातिशयोक्तं  
सूक्ष्मबुद्धयः इति ग्रंथोक्तफलज्ञानसामर्थ्यमपि दर्शितं । तथाभूताः त्रेतायुगे  
द्वापरेपि के चिदासन् न कृतयुगवत्सर्वे युगकालमनुसृत्योत्तरोत्तरं कालं  
पुण्यं-हंसादित्यर्थः कलिकालस्तु सर्वथैतद्गुणहीन इति पूर्वश्लोके एवाभिहि-  
तः अनेन युगत्रये पूर्वार्द्धस्यैव प्रवृत्तिरासीत् द्वापरांतएवोत्तरार्द्धमश्न इति  
निष्कर्षः ॥ ४ ॥ एवं कलौ पूर्वार्द्धप्रवृत्तिहेतुं दर्शयित्वा उत्तरार्द्धविषये मुनि-  
प्रार्थयते अतइति । अतः पूर्वोक्तहेतोः अल्पबुद्धिगम्यं अल्पबुद्धिभिः हीन-  
मतिभिः गम्यते ज्ञायते तत्तथा शास्त्रं ज्योतिःशास्त्रं मे वदस्व । कथं तच्छास्त्रं  
लोकयात्रापरिज्ञानं लोकानां जनानां यात्रासुखदुःखमोगोपगतिरित्यर्थः त-  
स्याः परिज्ञानं यस्मिंस्तत्तथा यस्मिन्शास्त्रे आयुषो निर्णयः आयुषः जीवन-  
स्य निर्णयः अल्पं मध्यमं पूर्णमिति निश्चयः तथाभूतं शास्त्रमिति संबंधः॥५॥

## भाषा ।

उसके लिये वो महान् ग्रंथका विचार होसकता नहीं है और कार्यभी होता नहीं  
है ॥ ३ ॥ फिर तुम कहोगे कि इतने कालपर्यंत इस ग्रंथका उपयोग कैसा भयां  
और अब कैसा नहीं होता ? उसका प्रयोजन आपही कहते हैं, हे मुनीश्वर ! यह  
त्रेतायुगमें और द्वापर युगमें सत्ययुगमें जो मनुष्य वे कुशाके अग्रसरीखी सूक्ष्मबुद्धि  
और पुण्यवंत दीर्घ आयुष्यवंत होते रहै उसके लिये वो पूर्वार्द्ध भागकूं देखनेकूं समर्थ  
थे ॥ ४ ॥ इसवास्ते यह कलियुगमें अल्पमति मनुष्योंके जाननेमें आवे ऐसा शास्त्र मेरेकूं  
कहो जिसके अभ्यास करनेसे लोकोंका सुखदुःखका परिज्ञान होवै और आयुष्यका

पराशर उवाच-साधु पृष्टं त्वया ब्रह्मन्वदामि तव सुव्र-  
त ॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥ ६ ॥ संक-  
रस्याविरोधं च शास्त्रस्यापि च सिद्धये ॥ प्रयोजनस्य  
लोकानामुपकाराय तच्छृणु ॥ ७ ॥ लग्नादिव्ययपर्यन्ता

टीका ।

एवं पंचश्लोकोक्तमैत्रेयप्रश्नानंतरं पराभूतः वसिष्ठशोकरूपशरो यस्मात्स तथा  
ग्रंथाज्ञानद्वुःखनिवर्तनशील इत्यर्थः तन्नामा ऋषिः उवाच अनुरूपमुत्तरं दत्त-  
वान् । तत्रादौ प्रश्नारंभं प्रशंसयन्नाह साध्विति । सुव्रत सुष्ठु व्रतं वैधाचर-  
णनियमो यस्य एतादृश सुव्रत अत एव ब्रह्मन् श्रेष्ठप्रश्नाधिकारिन्नित्यर्थः  
त्वया साधु परोपकारशालि पृष्टं इति तं सत्कृत्य लोकयात्रापरिज्ञानं तथा  
आयुषो निर्णयमिति तत्प्रश्नद्वयमेवानुद्य वदामीति प्रतिजानीते ॥ ६ ॥  
प्रश्नानुरूपं प्रत्युत्तरं वदामीति पूर्वोक्तमेव विशदयति । संकरस्येति । संकरस्य  
संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरादिति भवदुक्तस्य अविरोधं विरोधाप्रा-  
प्तिः शास्त्रस्य सिद्धये कलौ युगे इत्यादिश्लोकोक्तासिद्धिकारणं निवार्येतच्छास्त्र-  
प्रवृत्तये अपि च प्रयोजनस्य सिद्धये तस्मिन्नेव श्लोके भवत्पृष्टप्रयोजनाभावं  
निवार्य ग्रंथप्रयोजनसिद्धयर्थं लोकानां उपकाराय गतिसांकर्यादिसम्यक्फल-  
ज्ञानसिद्ध्युपकारार्थं यद्वदामि तच्छृणु इत्यन्वयः ॥ ७ ॥ वदामीति प्रति-

भाषा ।

निर्णय मालूम होवै सो कहो ॥५॥ तब पराशर कहते हैं हे मैत्रेय तुमने उत्तम प्रश्न  
किया तेरेकू लोकोंका सुखदुःख मालूम होवे और आयुष्यप्रमाण मालूम होवे सो  
कहताहूं ॥ ६ ॥ और तुमने जो प्रथम प्रश्न कियाथा कि ग्रहोंकी गतिकी संक-  
रतासे फलका विपर्यास होताहै सो शास्त्रकी सिद्धता होनेके वास्ते उसकाभी अ-  
विरोध प्रकार और प्रयोजनभी लोकोंके उपकारार्थ कहताहूं सो श्रवण करो ॥ ७॥  
इस शास्त्रमें लग्नादि व्ययपर्यंत राशिकुंडलीमें बारह म्थान हैं वे बारह भाव हैं वे शुभ  
ग्रहोंसे अवलोकित होवे अथवा शुभग्रहयुक्त होवे तो अपने अपने स्थानानुरूप  
उत्तम फल देते हैं और पापग्रहावलोकित होवे अथवा पापग्रहयुक्त होवे तो अपने

भावाः संज्ञानुरूपतः ॥ फलदाः शुभसंदष्टा युक्ता वा शो-  
भना मताः ॥ ८ ॥ पापदृष्टयुता भावाः कल्याणेत्यदाय-  
काः ॥ नितरां शत्रुनीचस्थैर्न च मित्रोच्चगैश्च तैः ॥ ९ ॥  
एवं सामान्यतः प्रोक्तं होराविद्भिस्तु सूरिभिः ॥ मयैतत्स-  
टीका ।

ज्ञानमुपचक्रमे लग्नादित्यादि सार्द्धश्लोकेन । लग्नादिव्ययपर्यन्ताः तन्वादिव्य-  
यमर्यादा द्वादश भावाः संज्ञानुरूपतः संज्ञानुगुणं फलदाः ज्ञातव्याः तेऽपि च  
शुभसंदष्टाः शुभग्रहावलोकिताः युक्ताः शुभसंयुक्ता वा शोभनाः शुभफले-  
दाः मताः निश्चिताः ते भावाः पापदृष्टयुताः पापग्रहैर्दृष्टा वा युताश्च सैतः  
कल्याणेत्यं अशुभफलं ददतीति कल्याणेत्यदायकाः ज्ञातव्याः । एतदुक्तं  
भवति । शुभदृष्टयुतस्तनुभावः पुष्टिसौंदर्यादिफलभाक् अशुभदृष्टयुतस्तनु-  
भावः कार्यकुरूपादिफलभाक् एवंघनादिभावाः शुभदृष्टयुतास्तत्फलवर्ध-  
काः अशुभदृष्टयुताश्च तत्तत्फलनाशका इति भावः । अत एव षष्ठाष्टमस्थ-  
शुभाः शत्रुसृष्ट्युवर्धकाः तत्स्थाः पापाः तन्नाशका इति दिक् ॥ ८ ॥ उक्त-  
योगस्यातिशयत्वमपवादं च कथयति उत्तरार्द्धेन नितरामिति । शत्रुनीचस्थैः  
तैः शत्रुक्षेत्रनीचस्थानगतैः दृष्टयुता भावा इति पूर्वोक्तमनुसंधेयम् । नितरां  
अत्यंतं कल्याणेत्यदायकाः तैः पापैरपि मित्रोच्चगैः मित्रक्षेत्रोच्चस्थानग-  
तैश्चेदृष्टयुता भावाः तर्हि अशुभफलदा न भवति किं तु शुभफलदा एवे-  
त्यर्थः ॥ ९ ॥ उक्तविषयो न स्वकपोलकल्पित इत्याशयेनाह एवमिति ।  
एवं पूर्वश्लोकोक्तं होराविद्भिः होरा लग्नं तत्पयुक्तं शास्त्रं होरा आम्रस्य फल-  
मात्रमिति वत् तां विदन्ति जानन्तीति तैः ज्योतिःशास्त्रज्ञैरित्यर्थः सूरिभिः  
पंडितैः सामान्यतः संक्षेपतः प्रोक्तं स्वनिर्मितग्रंथेषु रचितं एतत् इदमेव प्र-  
भाषा ।

स्थानानुरूप अनिष्ट फल देते हैं ॥ ८ ॥ और उसमेंभी जो वे बारह भाव शत्रु-  
राशिगत, नीचराशिगत, अशुभग्रहोंसे दृष्ट, होवे या मिले हुवे होवे तो बहुत दुःख-  
दायक होवे और मित्र राशि उच्चराशिगत पापग्रहोंसे वे बारह भाव मिले हुवे या  
दृष्ट होवे तो शुभफल दायक होवे हैं ॥ ९ ॥ यह फल संक्षेपरीतिसे पूर्वाचार्योंने वर्णन

कलं प्रोक्तं पूर्वाचार्यानुवर्तिना ॥ १० ॥ आयुश्च लोकया-  
त्राश्च शास्त्रेऽस्मिन्स्तत्प्रयोजनम् ॥ निश्चेतुं तन्न शक्नोति  
वसिष्ठो वा बृहस्पतिः ॥ ११ ॥ किं पुनर्मनुजास्तत्र विशे-  
षात्तु कलौ युगे ॥ नष्टादिषु च नातीव द्रेष्काणादिफलेषु  
च ॥ १२ ॥ आचार्यस्य मुखादेतच्छास्त्रं तु शृणुयाद्बुधः ॥

### टीका ।

वर्वाचार्यानुवर्तिना पूर्वं च ते आचार्याः उपदेष्टारः ज्योतिःशास्त्रोपदेशका  
इति यावत् ताननुवर्तते अनुसरतीति तथा तेन मया पराशरेण सकलं समग्रं  
प्रोक्तं पूर्वार्धे इति शेषः ॥ १० ॥ एतच्छास्त्रस्यातीव दुःखबोध्यतामाह आयुरिति।  
अस्मिन् शास्त्रे ज्योतिःशास्त्रे आयुः जीवितकालमानं लोकयात्राः लोकानां  
जनानां यात्राः सुखदुःखमार्गसंसरणानि तत्प्रयोजनं तयोः पूर्वोक्तयोः प्रयो-  
जनं कारणं यदुक्तं तदिति शेषः । वसिष्ठः साक्षाद्ब्रह्मपुत्रोऽस्मत्पितामहः वा  
उत च बृहस्पतिः बृहतो वेदागमादिवाक्यद्वन्पाति ज्ञातृत्ववक्तृत्वादिना सं-  
रक्षतीति तथा स चापि निश्चेतुं निर्णेतुं न शक्नोति न समर्थो भवति ॥ ११ ॥  
किंपुनरिति । तत्र निर्णये अल्पमेधसः हीनमतयः मनुजाः किं न शक्नुयु-  
रिति तात्पर्यम् । विशेषाद्विशेषतः कलौ युगे नष्टादिषु हतविस्मृतवस्त्वादिषु  
च द्रेष्काणादिफलेषु द्रेष्काणा आदयो येषां ते सप्तांशादयः तेषां फलेषु सु-  
खदुःखपूर्णस्वल्पायुर्नष्टवस्तुलाभाऽलाभादिषु ज्ञापकेषु अतीव सर्वथैवेत्यर्थः  
नैव समर्था भवेयुरित्यर्थः ॥ १२ ॥ कथं तर्ह्येतच्छास्त्रस्य सम्यक्परिज्ञानमि-

### भाषा ।

किया है उस रीतिसे मैंने वर्णन किया ॥ १० ॥ यह ज्योतिःशास्त्र बड़ा दुर्बोध है इस  
शास्त्रमें आयुष्यप्रमाणका ज्ञान और लोकोंके सुखदुःखका ज्ञान यह मुख्य प्रयोजन  
है सो यह आयुर्मान सुखदुःखका निश्चय करनेकूं वसिष्ठ व बृहस्पति समर्थ नहीं हैं  
॥ ११ ॥ वहां मनुष्य समर्थ कहाँसे होंगे उसमेंसे और कलियुगमें तो विशेष-  
करके नष्ट, चौर, विस्मृत वस्तु लाभालाभिक कार्यमें द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांशा-  
दिक प्रकारसे यथा " द्रेष्काणैस्तस्करादयः " इत्यादिवचनोंसे फल कहनेकूं बहुत  
करके समर्थ न होंगे ॥ १२ ॥ तब यह शास्त्रका परिज्ञान कैसा होवे उस



संप्रदायेन यः श्रान्तश्चास्मिञ्छास्त्रे महामतिः ॥ १३ ॥  
कर्मज्ञानविदा वेदो द्विधा यद्वत्तदाऽऽह्ये ॥ होराशास्त्रं  
द्विधा प्रोक्तं संकीर्णनिश्चयादिति ॥ १४ ॥ प्रोक्तः संकीर्ण-  
भागस्तु निश्चयांशस्तु कथ्यते ॥ यो वेत्ति सम्यगेतत्तु दैव-  
टीका ।

ति चेत्तदुपायमाह आचार्यस्येति । बुधः व्याकरणन्यायादिवेत्ता आचार्यस्य  
गुरुमुखादेतच्छास्त्रं शृणुयात् न स्वयमेवास्याधिकारीत्यर्थः । एवं प्रकारेण  
यः संप्रदायेन पारंपर्यागतेन श्रान्तः एतज्ज्ञानपरिपाकदशां प्राप्तः “श्रमु  
पाके” अस्मिञ्छास्त्रे महामतिर्विशालबुद्धिः भवतीति शेषः ॥ १३ ॥ एत-  
च्छास्त्रस्य वेदसाम्यं दर्शयति । कर्मेति । कर्म संध्योपासनादि “अहरहः सं-  
ध्यामुपासीत” इत्यादि श्रुतिगम्यं, ज्ञानं आत्मज्ञानं “सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म”  
इत्यादि श्रुतिगम्यं तद्वेत्ति जानातीति कर्मज्ञानवित् तेन कर्मकांडज्ञानकां-  
डपरिनिष्णातेन एकोपि वेदः द्विधा द्विप्रकारकः प्रोक्तः यद्वत् तद्वदेतदपि  
होराशास्त्रमपि आह्वयेऽभिधास्ये कथं तदाह । होराशास्त्रं ज्योतिःशास्त्रं सं-  
कीर्णनिश्चयात् संकीर्णनिश्चयाविति मेदद्वयात् द्विधा एकमपि द्विप्रकारकं  
प्रोक्तमिति ॥ १४ ॥ उक्तप्रकारौ वक्ष्यमाणरीत्या विशदयति प्रोक्तेति । सं-  
कीर्णभागः प्रोक्तः पूर्वार्द्ध इत्यर्थः । अधुना तु निश्चयांशः निर्णयभागः क-  
थ्यते विविच्योच्यते इत्युक्तस्य पुनः कथनावश्यकतापि ध्वनिता यः एत-  
द्विप्रकारकं शास्त्रं उक्तं वक्ष्यमाणरूपमित्यर्थः सम्यक् प्रागुक्तरीत्या वेत्ति स  
एवं दैवज्ञः । दैवं दिष्टं जानातीति स तथा उदाहृतः कथित इति ॥ १५ ॥

भाषा ।

ऊपर कहते हैं:—यह शास्त्र गुरुमुखसे श्रवण करके उसके देखनेमें सर्वदा श्रम  
करेगा, तो उच्चरोत्तर बुद्धि चातुर्य बढ़ेगा ॥ १३ ॥ यह शास्त्र वेदतुल्य है, जैसा  
वेद, कर्ममार्ग, ज्ञानमार्ग प्रतिपादकतासे दोप्रकारका है वैसा ज्योतिःशास्त्रभी सं-  
कीर्णनिश्चयमेदसे दो प्रकारका कहा है ॥ १४ ॥ उसमें संकीर्ण विषय जो था सो तो  
पूर्वभागमें वर्णन किया है और निश्चयमात्र जो है सो यह उच्चरभागमें कहते हैं.

ज्ञः स उदाहृतः ॥ १५ ॥ भावदृष्ट्यादिषु प्रोक्तानर्थान्स-  
म्यग्विचार्य च ॥ समीचीनास्तु संगृह्य विरुद्धास्तु परि-  
त्यजेत् ॥ १६ ॥ आयुर्दायैः परं योगैः फलान्यष्टकवर्गतः ॥  
तन्वादीनां तु भावानां सूक्तैर्भावादिभिः फलैः ॥ १७ ॥  
ज्ञात्वाऽऽदौ करणं स्थानं बिंदुरेखे च वर्गणाम् ॥ क्रमादष्ट-  
कवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत् ॥ १८ ॥

### टीका ।

संकीर्णस्योक्तस्य निश्चयज्ञानप्रकारमाह । भावेति । भावास्तन्वादयः दृष्टयः  
सप्तम्यादिस्थानगम्याः पूर्वोक्ताः ताः आदयो येषां तेषु आदिशब्देन बला-  
दिविषयेषु पूर्वोक्तानर्थान् कथितार्थान्सम्यग्विचार्य सूक्ष्मतयाविचारं कृत्वा  
तान्समीचीनान्ग्रहबलाधिक्येनानुकूलानित्यर्थः । संगृह्य संग्रहं कृत्वा विरु-  
द्धान्ग्रहलगादिनैर्बल्येन प्रतिकूलानित्यर्थः । तास्तु परित्यजेज्ज्ञादिति ॥ १६ ॥  
अथ शुभाशुभफलकथनरीतिमाह आयुर्दायैरिति । ज्ञात्वेति च आयुर्दायैः  
आयुषो दाया विभागाः तैः आयुर्मानं विचिंत्येत्यर्थः परं योगैः अत्यंतं  
स्थानं द्वित्रिगृहादिभिः नामसादिभिर्नानायोगैः परशब्देनात्यंतबलवद्भिरि-  
त्यर्थः । आदौ अष्टकवर्गस्य वक्ष्यमाणस्य क्रमात्करणं स्थानं च वक्ष्यमाणं  
बिंदुरेखे च करणस्थानापरपर्यायौ बोद्धव्यौ अष्टकवर्गतः सकाशात्तन्वादी-  
नां भावानां द्वादशानां सूक्तैः सम्यक्कथितैर्भावादिभिः फलैः केवलभावा-  
दिविचारितैः फलैश्च फलानि सर्वसमूहरूपाणि ज्ञात्वा सम्यग्विचार्य फलं  
निश्चयोपलब्धं फलं वर्गणां वक्ष्यमाणलक्षणां च ज्ञात्वा वदेत्कथयेत् ॥ १७ ॥ १८

### भाषा ।

यह दो भेदोंको जो जानता है उसको देवज्ञ कहना ॥ १५ ॥ तन्वादिक जो भाव  
और सप्तमादिक स्थानगम्य जो दृष्टियोग उसका सूक्ष्म बल विचारकरके उत्तम  
बलको ग्रहण करके हीनबलका त्याग करना ॥ १६ ॥ आगे शुभाशुभ कैसा क-  
हना सो कहते हैं:- पहले आयुष्यका मानपरिज्ञान और नामसादिक योगफल  
अष्टवर्गजन्य फल उन्को उत्तम बलबल देवक फल कहना ॥ १७ ॥ १८ ॥

तनुस्वायुस्त्रिरिष्फेषु पंच कामे सुखेर्णवाः ॥ अरौ भाग्ये  
त्रयः पुत्रे षट् करौ खे भवे च भूः ॥१९॥ लग्नेदुर्जीवशुक्र-  
ज्ञास्तनौ खे मरणेपि च॥ रविभौमार्किचंद्रार्या व्यये ज्ञेदु-  
टीका ।

अथ पूर्वोक्तायुर्दायादिविषयांतर्गताष्टकवर्गविचारमादौ विशदयति तनुरि-  
त्यादि यावदध्यायसमाप्ति । तत्रादौ द्वादशभावेषु खेः करणप्रदनियतसं-  
ख्यामाह । तनुरिति । तनुस्वायुस्त्रिरिष्फेषु १।२।८।३।१२ भावेषु करणप्रदाः  
पंच, कामे सुखे च ७।४ भावद्वयेऽर्णवाः करणप्रदाश्चत्वारः, अरौ भाग्ये च ६।९-  
भावद्वये करणप्रदास्त्रयः, पुत्रे ५ भावे करणप्रदाः पद, खे १० भावे करौ कर-  
णप्रदौ द्वौ, भवे ११ भावे च भूः १ करणप्रद इति ॥ १९ ॥ पूर्वश्लोके सं-  
ख्यामुक्त्वा तन्नामान्याह लग्नेत्यादिश्लोकत्रयेण । तनौ १ खे २ मरणे ८  
एतत्स्थानत्रयेऽपि लग्नेदुर्जीवशुक्रज्ञाः एतन्नामकाः करणप्रदाः पंच प्रागु-  
क्तसंख्याकाः, व्यये १२ स्थाने रविभौमार्किचंद्रार्याः आर्यो गुरुः स्पष्टमन्यत्  
एतन्नामकाः पंच, सुखे ४ स्थाने ज्ञेदुसितार्यकाः बुधचंद्रशुक्रगुरुवः एतन्ना-  
मकाश्चत्वारः, धर्मे ९ भावे होरेदुशुक्राः होरा लग्नं स्पष्टमन्यत् एते करण-  
प्रदास्त्रयः, अरौ ६ भावेऽर्काकिंकुजाः रविशनिभौमाः करणप्रदास्त्रयः,  
कामे ७ भावे होराहार्थेददः लग्नबुधशुक्रचंद्राः करणप्रदाश्चत्वारः, भवे ११  
भावे दैत्येद्रपूजितः दैत्यानामिंद्रः राजा वृषपर्वा तेन पूजितः शुक्रः एक  
एव, सहजे ३ भावे अर्काकिंकुशकार्यभौमाः रविशनिशुक्रगुरुमंगलाः करण-  
भाषा ।

अब अष्टवर्गसे शुभाशुभ फल कहते हैं. अष्टकवर्गमें शून्य और रेखा इसका ज्ञान  
मुख्य है. वारते प्रथम सूर्यादिकोंका शून्यज्ञान उपपत्तिपूर्वक कहते हैं. शून्यकू इस  
शास्त्रमें करण कहते हैं सो सूर्यकी करणसंख्या सूर्यसे प्रथम भावमें, धनभावमें,  
अष्टमभावमें, सहजभावमें, द्वादश भावमें, पांच पांच करण जानना. सातवेंमें  
और चौथेमें, चार चार करण देनेवाले जानना. छठे, नवें भावमें तीन तीन  
करण देनेवाले जानना. पंचमभावमें छः करण, दशमभावमें दो करण, ग्यारहवें  
भावमें एक करण देनेवाले जानना ॥ १९ ॥ ऐसी संख्या कहके नाम कहते हैं.

सितार्यकाः॥२०॥सुखे होरेंदुशुक्राश्च धर्मेर्कार्किंकुजा अरौ॥  
होराज्ञायेंदवः कामे भवे दैत्येद्रपूजितः॥२१॥सहजेर्कार्किं-  
शुक्रार्यभौमाः खे गुरुभार्गवौ ॥ सुतेर्कार्कीन्दुलभारशुक्राः  
स्युः करणं रवेः ॥ २२ ॥ भाग्यस्वयोश्च पड्वेश्म मृतिहो-

## टीका ।

प्रदाः पंच, खे १० भावे गुरुभार्गवौ द्वौ, सुते ५ भावे अर्कार्कीन्दुलभारशु-  
क्राः रविशनिचंद्रलग्नकुजशुक्राः करणप्रदाः पद स्युः भवेयुः एवं रवेः करणं  
ज्ञेयम् ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ एवं रविभावकरणसंख्यामुक्त्वा चंद्रभावकर-  
णप्रदसंख्यामाह भाग्येति सार्धश्लोकेन । भाग्यस्वयोः ५२ भावयोः क-

## भाषा ।

सूर्यसे पहले घरमें, दूसरे घरमें आठवेमें लग्न,  
चंद्र, गुरु, शुक्र, बुध, यह पांच करण देनेवाले  
हैं। बारहवें भावमें सूर्य, मंगल, शनि, चंद्र,  
गुरु यह पांच करण देनेवाले चौथे भावमें बुध,  
चंद्र, शुक्र, गुरु यह चार करण देनेवाले हैं।  
नवम भावमें लग्न, चंद्र, शुक्र, यह तीन करण  
देनेवाले हैं। छठे भावमें सूर्य, शनि, मंगल यह  
तीन करण देनेवाले हैं, सातवे भावमें लभेश,  
बुध, गुरु, चंद्र यह चार करण देनेवाले हैं। ग्या-  
रहवें भावमें शुक्र एक करण देनेवाला है।

| अथ उदाहरणार्थ सूर्यविंदुकोष्टकं लिख्यते। |     |     |    |    |     |     |     |     |    |     |  |
|--|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|-----|----|-----|--|
| पर।                                      | भा। | गु. | च. | म. | बु. | गु. | शु. | शु. | ल. | सं. |  |
| १  | ल.  | ०   | ०  |    | ०   | ०   | ०   |     | ०  | ५   |  |
| २  | दि. | ०   | ०  |    | ०   | ०   | ०   |     | ०  | ५   |  |
| ३  | तु. | ०   | ०  | ०  |     | ०   | ०   | ०   |    | ५   |  |
| ४  | च.  | ०   | ०  |    |     | ०   | ०   | ०   |    | ४   |  |
| ५  | र.  | ०   | ०  | ०  |     |     | ०   | ०   | ०  | ६   |  |
| ६  | प.  | ०   |    | ०  |     |     |     |     | ०  | १   |  |
| ७  | रा. |     | ०  |    | ०   | ०   |     |     |    | ४   |  |
| ८  | घ.  | ०   | ०  |    |     | ०   | ०   | ०   |    | ५   |  |
| ९  | न.  |     | ०  |    |     |     | ०   |     |    | ३   |  |
| १०                                       | द.  |     |    |    |     | ०   | ०   |     |    | २   |  |
| ११                                       | ए.  |     |    |    |     |     | ०   |     |    | १   |  |
| १२                                       | झ.  | ०   | ०  | ०  |     | ०   |     | ०   |    | ५   |  |

तीसरे भावमें सूर्य, शनि, शुक्र, गुरु, मंगल यह पांच करण देनेवाले हैं। दशवें भावमें  
गुरु, शुक्र, यह दो करण देनेवाले हैं। पांचवे भावमें सूर्य, शनि, चंद्र, लग्न, मंगल,  
शुक्र, यह छः करण देनेवाले हैं ऐसी यह सूर्यकी करणसंख्या और नाम कहै इसका  
चक्रमी स्पष्ट लिखाया है॥२०॥२१॥२२॥अब चंद्रकी करण ( विंदु ) प्रद संख्या  
कहते हैं चंद्रसे नवमभावमें, दूसरे भावमें, करण देनेवाले संख्या छः जानना,  
चौथे, आठवें, पहिले भावमें करण देनेवाला संख्या पांच हैं। दसवें तीसरे भावमें

रासु पंच च ॥ मानदुश्चिक्वयोरेकः सुते वेदा अरिस्त्रियोः  
॥ २३ ॥ त्रयो व्ययेष्टावाये च शून्यं शीतकरस्य तु ॥ हो-  
टीका ।

णप्रदसंख्या षट्, वेदमृतिहोरासु ४।८।१ भावेषु करणप्रदाः पंच, मानदुश्चि-  
क्वयोः १०।३ भावयोः करणप्रदः एकः, सुते ५ भावे करणप्रदा वेदाश्चत्वा-  
रः, अरिस्त्रियोः ६।७ भावयोः करणप्रदास्त्रयः, व्यये १२ भावे करणप्रदा  
अष्टौ, आये ११ भावे शून्यं करणाभावः, तु निश्चयेन शीतकरस्य शीताः  
शीतलाः करा मयूखा यस्य तस्य चंद्रस्यैवं करणं ज्ञेयम् ॥ २३ ॥ एवं  
चंद्रस्य करणप्रदसंख्यामुक्त्वा तन्नामान्याह होरेत्यादिसार्धपंचविंशतिश्लो-  
कपर्यंतम् । तनौ भावे होराकारार्किभृगवः लग्नरविभौमशनिशुक्राः कर-  
भाषा ।

करण देनेवाली संख्या एक है, पांचवे भावमे करण देनेवाली संख्या चार हैं, छः  
सातवे भावमे करण देनेवाली संख्या तीन हैं, बारहवे भावमें करण देनेवाली  
संख्या आठ हैं, ग्यारहवे भावमे करण देनेवाली नहीं है ॥२३॥ अब वह करण दे-  
नेवालेके नाम कहते हैंः—चंद्रसे पहिले घरमे लग्न. सू. मं. श. शुक्र यह पांच क-  
रण देनेवाले हैं. दूसरे घरमें ल. बु. सू. चं. श.  
शु. यह छः करण देनेवाले हैं. तीसरे घरमें  
गुरु एकही है. चौथे घरमे सूर्य श. च. लग्न  
मं. यह पांच करण देनेवाले हैं. पाचवें घरमें  
लग्न चंद्र गु. सू. यह चार करण देनेवाले हैं.  
छठे घरमे शुक्र बु. गु. यह तीन करण देनेवा-  
ले हैं. ७ वे घरमें मं. लग्न. श. यह तीन क-  
रण देनेवाले हैं. आठवे घरमे मं. लग्न श. शु.  
चं. यह पांच करण देनेवाले हैं. नववे घरमें  
ल. सू. मं. श. बु. गु. यह छः करण देनेवाले  
हैं. दशवें घरमें शनि करण देनेवाला एकही  
है. ग्यारहवे घरमे करण देनेवाला कोई नहीं. बारहवें घरमे सूर्य, चंद्र, मंगल.

अथ उदाहरणार्थं चंद्रकरणकोष्ठकमिदम्.

| घर | भा | सू | च | म | बु | गु | श | ल | स |
|----|----|----|---|---|----|----|---|---|---|
| १  | ल  | ०  |   | ० |    |    | ० | ० | ५ |
| २  | दि | ०  | ० |   | ०  |    | ० | ० | ६ |
| ३  | तु |    |   |   |    | ०  |   |   | १ |
| ४  | च  | ०  | ० | ० |    |    |   | ० | ५ |
| ५  | ग  | ०  | ० |   |    | ०  |   |   | ४ |
| ६  | ष  |    |   |   | ०  | ०  |   |   | ३ |
| ७  | स  |    |   | ० |    |    | ० | ० | ३ |
| ८  | ज  |    | ० | ० |    |    | ० | ० | ५ |
| ९  | न  | ०  |   | ० | ०  | ०  |   | ० | ६ |
| १० | द  |    |   |   |    |    | ० |   | १ |
| ११ | ए  |    |   |   |    |    |   |   | ० |
| १२ | हा | ०  | ० | ० | ०  | ०  | ० | ० | ८ |

( १४ )

बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे—

राकारार्किभृगवोंगज्ञार्केन्द्रार्किभार्गवाः ॥ २४ ॥ जीवोर्कार्की-  
न्दुलग्नारा होरेन्दुगुरुभास्करौ ॥ सितज्ञार्याः कुजतनुर्मदा-  
स्ते सितशीतगुः ॥ २५ ॥ होराकारार्किविजीवाः शनिः  
खं सकलाः क्रमात् ॥ व्ययवेश्मसुतस्त्रीषु षट् सप्त धनध-

टीका ।

रणप्रदाः पंच, धनभावे अंगज्ञार्केन्द्रार्किभार्गवाः लग्नबुधरविचंद्रशनिशुक्राः  
करणप्रदाः षट्, तृतीयभावे जीवः गुरुरेक एव, सुखभावे अर्कार्कीन्दुल-  
ग्नाराः रविशनिचंद्रलग्नभौमाः पंच, सुतभावे होरेन्दुगुरुभास्कराः लग्नचंद्र-  
गुरुसूर्याश्रत्वारः, अरिभावे सितज्ञार्याः शुक्रबुधगुरुवः त्रयः, जायामावे  
कुजतनुर्मदाः त्रयः, मृत्युभावे कुजतनुर्मदाः सितशीतगु च भौमलग्नश-  
निशुक्रचंद्राः पंच, भाग्यभावे होराकारार्किविजीवाः लग्नरविभौमशनि-  
बुधगुरुवः षट्, दशमभावे शनिरैक एव, आयमावे खं करणाभावः ।  
व्ययभावे सकलाः सर्वे अष्टसंख्याकाः एवं क्रमाच्चंद्रस्य भावकरणप्रदाः ज्ञा-  
तव्या इति ॥ २४ ॥ २५ ॥ अथ कुजभावकरणप्रदसंख्यामाह व्यय इ-  
त्यादि सप्तविंशतिश्लोकपर्यंतम् । व्ययवेश्मसुतस्त्रीषु १२।४।५।७ भावेषु षट्  
संख्याकाः, धनधर्मयोः २।९ भावयोः सप्त, होरामृत्योः १।८ भावयोः शराः  
पंच, विक्रमे ३ भावे वेदाश्रत्वारः, खे १० भावे त्रयः क्षते ६ भावे द्वौ, भवे  
११ भावे शून्यं० एवं भूमिजस्य भौमस्य तु करणं करणसंख्या स्यात् ॥ २६ ॥

भाषा ।

बुध, गुरु, शुक्र, शनि लग्न यह ८ करण देनेवाले हैं। इस रीतिसे चंद्रकी करण संख्या  
और करण देनेवालेके नाम कहे इसका स्पष्ट चक्रमी आगे दिखाया है ॥ २४ ॥  
॥ २५ ॥ अब मंगलकी करण ( विंदु ) देनेवालीकी संख्या कहते हैं:—मंगलसे  
चारहवें, चौथे, पांचवें, सातवें भावमें छः करण देनेवाले संख्या जाननी। दूसरे नवें  
भावमें सात, पहिले आठवें भावमें पांच, तीसरे भावमें चार, दूसरे भावमें तीन,  
छठे भावमें दो, ग्यारहवें भावमें कोईभी नहीं। यह मंगलके चारह भावोंकी विंदु

र्मयोः ॥२६॥ होरामृत्योः शरा वेदा विक्रमे खेत्रयः क्षतो॥  
द्वौ भवे शून्यमेवं स्यात्करणं भूमिजस्य तु ॥ २७ ॥ कुज-  
स्यार्केन्दुविज्जीवसिता लग्नशनी च ते ॥ सितारगुरुमंदाः  
स्युर्धर्मोक्तेषु कुजं विना ॥ २८ ॥ चंद्रारगुरुशुक्रार्किलग्नानि  
कुजभास्करी ॥ ज्ञेद्वर्कसितलग्नार्या एषु शुक्रं विना ततः  
॥ २९ ॥ विना शनिं सप्तधर्मं सितेन्दुज्ञा वियत्ततः ॥ अ-

टीका ।

॥ २७ ॥ एवं भौमभावकरणप्रदसंख्यामुक्त्वा तन्नामान्याह । कुजस्येत्या-  
दिश्लोकत्रयेण । तनुभावे अर्केन्दुविज्जीवसिताः रविचंद्रबुधगुरुशुक्राः पंच,  
धनभावे लग्नशनी स्पष्टौ ते तनुभावोक्ताश्च अर्केन्दुविज्जीवसितलग्नशनयः सप्त  
सहजभावे सितारगुरुमंदाः शुक्रभौमगुरुशनयश्चत्वारश्चतुर्थभावे धर्मोक्तेषु न-  
वमस्थानवक्ष्यमाणेषु कुजं विना स्युः । रविचंद्रबुधगुरुशुक्रलग्नानीत्यर्थः षट्

भाषा ।

संख्या कही ॥ २६ ॥ २७ ॥ अब विंदु देनेवालेके नाम कहते हैं—मंगलसे पहिले घरमे  
सू. च. बु. गु. शु. यह पांच विंदु देनेवाले हैं. दूसरे घरमे लग्न, शनि, सूर्य, चंद्र,  
बुध, गुरु, शुक्र, यह सात विंदु देनेवाले हैं तीसरे घरमें शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, यह चार.  
चौथे घरमें सूर्य, चंद्र, बुध, गुरु, शुक्र, लग्न,  
यह छः हैं. पांचवें घरमें चंद्र, मंगल, गुरु,  
शुक्र, शनि, लग्न यह छः हैं. छठे घरमें मंगल,  
शनि, यह दो हैं. सातवें घरमें बुध, चंद्र, सूर्य,  
शुक्र, गुरु, लग्न, यह छः हैं. आठवें घरमे बुध,  
चंद्र, सूर्य, गुरु, लग्न, यह पांच हैं. नवे घर-  
रमे सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, लग्न,  
यह सात हैं. दशवें घरमें शुक्र, चंद्र, बुध,  
यह तीन हैं. ग्यारहवे घरमें कोई नहीं हैं. बारहवे घरमें सूर्य, शनि, बुध, चंद्र, लग्न

| अयोदाहरणार्थं मंगलकरणकोष्टकम्. |    |    |   |   |    |    |    |   |   |   |   |
|--------------------------------|----|----|---|---|----|----|----|---|---|---|---|
|                                | भा | सू | च | म | बु | गु | शु | श | ल | स |   |
| १                              | ल  | ०  | ० |   | ०  | ०  | ०  |   |   |   | ५ |
| २                              | दि | ०  | ० |   | ०  | ०  | ०  | ० | ० | ० | ७ |
| ३                              | तु |    |   | ० | ०  | ०  | ०  | ० |   |   | ४ |
| ४                              | च  | ०  | ० |   | ०  | ०  | ०  |   | ० |   | ६ |
| ५                              | प  |    | ० | ० |    | ०  | ०  | ० | ० | ० | ६ |
| ६                              | प  |    |   | ० |    |    |    |   | ० |   | २ |
| ७                              | स  | ०  | ० |   | ०  | ०  | ०  |   | ० |   | ६ |
| ८                              | अ  | ०  | ० |   | ०  | ०  |    |   |   | ० | ७ |
| ९                              | न  | ०  | ० | ० | ०  | ०  | ०  |   | ० | ० | ७ |
| १०                             | ट  |    | ० |   | ०  |    | ०  |   |   |   | ३ |
| ११                             | ए  |    |   |   |    |    |    |   |   |   | ० |
| १२                             | हा | ०  | ० | ० | ०  |    |    |   | ० | ० | ६ |

कार्किङ्गेंदुलग्नाराः करणं प्रोच्यते क्रमात् ॥ ३० ॥ तनुस्व-  
गृहकर्मारिधर्मेष्वाग्निर्मृतौ करौ ॥ भ्रातृस्त्रियो रसा लामे  
शून्यं पुत्रे व्यये शराः ॥ ३१ ॥ बुधस्यार्केन्दुगुरवो गुरुसू-  
र्यबुधाः क्रमात् ॥ लग्नार्कार्किचंद्रार्या झार्कार्याहिबुधस्य

### टीका ।

सुतभावे चंद्रगुरुशुक्रार्किलग्नानि षट् रिपुभावे कुजभास्करी भौमशनी द्वा-  
वेव जायाभावे जेन्द्रर्कसितलग्नार्याः बुधचंद्रविशुक्रलग्नगुरवः षट् मृत्यु भावे  
एषु जायाभावोक्तेषु शुक्रंविना शुक्राहते बुधचंद्रविलग्नगुरवइत्यर्थः पंच  
ततः तदनंतरं धर्मे भावे शनिं विना रविचंद्रभौमबुधगुरुशुक्रलग्नानि सप्त  
संख्याकाः दशमभावे सितेन्दुज्ञाः शुक्रचंद्रबुधाः त्रयः ततः आयभावे विष-  
च्छून्यं० करणाभाव इत्यर्थः व्ययभावे अर्कार्किङ्गेंदुलग्नाराः रविशनिबुधचंद्र-  
लग्नभौमाः षट् एवं क्रमात् क्रमशः कुजस्य करणं प्रोच्यते कथ्यते पूर्वाचा-  
र्यैरिति शेषः ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ अथ बुधभावकरणप्रदसंख्यामाह ।  
तन्विति । तनुस्वगृहकर्मारिधर्मेषु १।२।४।१०।६।९ एतेषु गृहभावेषु अग्निः  
त्रयः करणप्रदाः मृतौ ८ भावे करो द्वौ करणप्रदौ भ्रातृस्त्रियोः ३।७ भावयोः  
रसाः षट् लामे ११ भावे शून्यं करणप्रदाभावः पुत्रे ५ व्यये च १२ भाव-  
द्वयेपि शराः पंचेति ॥ ३१ ॥ एवं करणप्रदसंख्यामुक्त्वा बुधस्य भावकरण-  
प्रदनामान्याह । बुधस्येति सार्द्धद्वयेन । तनुभावेऽर्केन्दुगुरवः स्पष्टाः एते  
करणप्रदास्त्रयः धनभावे गुरुसूर्यबुधाः स्पष्टं एते करणप्रदास्त्रयः सहजभावे

### भाषा ।

मंगल यह छः हैं. ऐमा मंगलके भावोंमें करण संख्या इत्यादिकका चक्र यहां दि-  
खाया है ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ अब बुधके भावमें करण ( चिन्टु ) देनेवालेकी  
संख्या कहते हैं. बुधसे पहिले, दूसरे, चवथे, दशवें, छठे, नवें, धरमें तीन करण  
देनेवालेकी संख्या जाननी. आठवेंमें दो, तीसरेमें, मातवें धरमें छः, ग्यारहवें धरमें  
बुद्ध नहीं. पांचवें, बारहवें धरमें पांच करण देनेवालेकी संख्या जाननी ॥ ३१ ॥  
ऐसी करण देनेवालेकी संख्या कहके अब उन्नोंके नाम कहते हैं. बुधसे पहिले  
धरमें सूर्य, चंद्र, गुरु, यह तीन करण देनेवाले हैं. धनभावमें गुरु, सूर्य, बुध यह



तु ॥ ३२ ॥ जीवारेन्द्रार्किलग्रानि शुक्रमंदधरासुताः ॥ जे-  
न्दुलगार्कशुक्रार्थाः शार्कौ जीवेन्दुलग्रकाः ॥ ३३ ॥ अकार्य-

लक्षणानि टीका ।

लग्नार्कार्कचंद्रार्थाः लग्नरविभौमशनिचंद्रगुरुवः एते करणप्रदाः षट्, सुख-  
भावे शार्कार्थाः बुधरविगुरुवः एते करणप्रदाः त्रयः, सुतभावे जीवारेन्द्रा-  
र्किलग्रानि गुरुभौमचंद्रशनिलग्रानि एते करणप्रदाः पंच, रिपुभावे शुक्र-  
मंदधरासुताः एते करणप्रदाः त्रयः, जायाभावे जेन्दुलग्नार्कशुक्रार्थाः बुध-  
चंद्रलग्नरविशुक्रगुरुवः एते करणप्रदाः षट्, मृत्युभावे शार्कौ बुधसूर्यौ कर-  
णप्रदाद्वौ, धर्मभावेन्दुलग्नकाः गुरुचंद्रलग्नानि करणप्रदात्रयः, दशमभावे अ-  
कार्यशुक्राः रविगुरुशुक्राः करणप्रदात्रयः, आयभावे शून्यं करणप्रदाभावः,  
व्ययभावे होरेन्द्रार्कभार्गवाः लग्नचंद्रभौमशनिशुक्राः एते करणप्रदाः पंच;  
एवं बुधस्य भावेषु क्रमात् करणप्रदाः ज्ञेया इति ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ अथ गु-

णप्रदाः भाषा ।

तीन करण देनेवाले हैं. तीसरे घरमें लग्न, सूर्य, शनि, चंद्र, मंगल, गुरु, यह, छः

करण देनेवाले जानना. चौथे घरमें बुध, सूर्य,  
गुरु, तीन करण देनेवाले जानना. पांचवें  
घरमें गुरु, मंगल, चंद्र, शनि, लग्न यह पांच  
करण देनेवाले जानना. छठे घरमें शुक्र, श-  
नि, मंगल, यह तीन करण देनेवाले हैं. सा-  
तवें घरमें बुध, चंद्र, लग्न, सूर्य, शुक्र, गुरु,  
यह छः करण देनेवाले हैं. आठवें घरमें बुध,  
सूर्य, यह दो करण देनेवाले हैं. नवें घरमें  
गुरु, चंद्र, लग्न यह तीन करण देनेवाले हैं.  
दशवें घरमें सूर्य, गुरु, शुक्र, यह तीन करण

| अथोदाहरणार्थं बुधकरणकोष्टकम्. |     |    |    |    |     |     |    |    |     |  |
|-------------------------------|-----|----|----|----|-----|-----|----|----|-----|--|
|                               | था. | स. | च. | म. | बु. | गु. | श. | ल. | सं. |  |
| १                             | ल.  | ०  | ०  |    |     | ०   | ०  | ०  | ३   |  |
| २                             | हि. | ०  |    |    | ०   | ०   |    |    | ३   |  |
| ३                             | गु. | ०  | ०  | ०  |     | ०   |    | ०  | ६   |  |
| ४                             | च.  | ०  |    |    | ०   | ०   |    |    | ६   |  |
| ५                             | प.  | ०  | ०  |    |     |     |    | ०  | ५   |  |
| ६                             | प.  |    |    | ०  |     | ०   | ०  |    | ३   |  |
| ७                             | स.  | ०  | ०  |    | ०   | ०   | ०  |    | ६   |  |
| ८                             | अ.  | ०  |    |    | ०   |     |    |    | २   |  |
| ९                             | न.  |    | ०  |    |     | ०   |    |    | २   |  |
| १०                            | द.  | ०  |    |    |     | ०   | ०  |    | ३   |  |
| ११                            | ए.  |    |    |    |     |     |    |    | ०   |  |
| १२                            | झ.  |    | ०  | ०  |     |     | ०  | ०  | ५   |  |

द देनेवाले हैं. ग्यारहवें घरमें करण देनेवाला नहीं है. बारहवें घरमें लग्न, चंद्र, मंग-  
ल, शनि, शुक्र, यह पांच करण देनेवाले हैं. ऐसी बुधके भावोंमें करण देनेवालोंकी  
संख्या और नाम. कहे उसका चक्रभी दिखाया है. ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ अब गुरुके

शुक्राः शून्यं च होरेन्द्रार्किर्भागवाः ॥ रूपं धनाययोः  
 खे द्वौ व्यये सप्तकृतेऽर्णवाः ॥ ३४ ॥ मृतिविक्रमयोः पंच  
 गुरोः शेषेषु बन्धयः ॥ शुक्रेन्दुमंदा लगे स्व आये मंदश्च  
 विक्रमे ॥ ३५ ॥ लग्नारेन्दुशमृगवः सुतेर्कार्यकुजा गृहे ॥

### टीका ।

रूपावकरणप्रदसंख्यामाह । रूपमित्याद्यर्धकद्वयेन । धनाययोः २।११ भाव-  
 योः रूपं एक एव करणप्रदः, खेः १० दशमभावे द्वौ करणप्रदौ, व्यये १२  
 भावे सप्त करणप्रदाः, कृते ६ भावे अर्णवाः चत्वारः करणप्रदाः, मृतिविक्र-  
 मयोः ८।३ भावयोः करणप्रदाः पंच, शेषेषु उक्तावशिष्टभावेषु १।४।५।७।९  
 एतेषु भावेषु बन्धयः, इति गुरोः भावेषु संख्या ज्ञेया ॥ ३४ ॥ एवं क-  
 रणप्रदसंख्यामुक्त्वा तन्नामान्याह शुक्रेन्द्रित्यादि सार्धसप्तत्रिंशच्छ्लोकपर्यन्त-  
 म् । लगे १ भावे शुक्रेन्दुमंदाः शुक्रचंद्रशनयः त्रयः, स्वे २ भावे आये ११  
 भावे च मन्दः शनिरेक एव, विक्रमे ३ भावे लग्नारेन्दुशमृगवः लग्नमौमच-  
 न्द्रबुधशुक्राः पंच, सुते ५ भावे अर्कार्यकुजाः रविगुरुभौमास्त्रयः, गृहे ४ भावे  
 शुक्रमन्देन्दवः शुक्रशनिचंद्रास्त्रयः, द्यूने ७ भावे बुधशुक्रशनैश्चराः त्रयः,  
 शत्रौ ६ भावे जीवार्केन्दुशमृगवः गुरुभौमचन्द्रशुक्राश्चत्वारः, व्यये १२ भावे  
 शनिं विना सर्वे, कर्मणि १० भावे इन्दुशनी चन्द्रशनी द्वौ, धर्मे ९ भावे मं-  
 दारगुरवः शनिभौमगुरवः त्रयः, मृतौ ८ भावे लग्नार्किसितचन्द्रज्ञाः लग्नश-

### भाषा ।

भावमें करण ( विन्दु ) देनेवालेकी संख्या कहते हैं. गुरुसे दूसरे, ग्यारहवें भा-  
 वमें एक करण देनेवालेकी संख्या जाननी: दशवें घरमें दो हैं, बारहवें घरमें  
 सात हैं, छठे घरमें चार हैं. आठवे, तीसरे घरमें पांच हैं. पहिले, चौथे, पांचवें,  
 सातवें, नवमें, धरोमें तीन करण देनेवालेकी संख्या जानना ॥ ३४ ॥ ऐसी कर-  
 णप्रदोंकी संख्या कहके उन्हेके नाम कहते हैं. गुरुसे पहिले घरमें शुक्र, चंद्र,  
 शनि, यह तीन करण देनेवाले जानना. दूसरे घरमें, ग्यारहवें घरमें शनि एकही  
 करण देनेवाला है. तीसरे घरमें लग्न, मंगल, चंद्र, बुध, शुक्र, यह पांच करण

शुक्रमन्देन्दवो द्यूने बुधशुक्रशनिश्चराः ॥ ३६ ॥ जीवार्कै-  
न्दवः शत्रौ मंदः सर्वे विना व्यये ॥ कर्मणीन्दुशनी धर्म  
मंदारगुरवो मृतौ ॥ ३७ ॥ लग्नार्किसितचंद्रज्ञाः करणं च

टीका ।

निशुक्रचन्द्रबुधाः पंचः, एवं इदमुक्तप्रकारक गुरोः करणं ज्ञेयमिति शेषः  
॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ अथ शुक्रभावकरणप्रदसंख्यामाह सुतायुरित्यर्द्धक-  
द्वयेन । सुतायुर्विक्रमेषु ५।८।३ भावेषु अक्षीति लग्नविभक्तिकं पदं अक्षिणी-  
त्यर्थः । करणप्रदसंख्या अक्षिशब्देन द्वौ, तनुस्वव्ययत्वे १।२।१२।१० भावेषु  
इषुः करणप्रदाः पंचः स्त्रिया ७ भावेऽष्टौ, अरौ ६ भावे षट्, धर्मे ९ भावे  
भूरेकः, मित्रे ४ भावे अग्नीत्यपि, लग्नविभक्तिकं अग्नयस्त्रयइत्यर्थः, भवे ११

भाषा ।

देनेवाले जानना. प्रांचवें घरमें सूर्य, गुरु, मंगल, यह तीन करण देनेवाले जान-  
ना. चौथे घरमें शुक्र, शनि, चंद्र, यह तीन  
हैं. छठे घरमें गुरु, मंगल, चंद्र शुक्र, यह  
चार हैं. बारहवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध,  
गुरु, शुक्र, लग्न, यह सात करण देनेवाले हैं.  
वशवें घरमें चंद्र, शनि यह दो हैं. नवम घर-  
में शनि, मंगल गुरु, यह तीन हैं. आठवें  
घरमें लग्ने, शनि, शुक्र, चंद्र, बुध, यह पांच  
करण देनेवाले हैं. ऐसी गुरुभावकी करणसं-  
ख्या और नाम कहै. उसका स्पष्ट चक्र ऊपर  
दिखाया है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ अब शु-  
क्रके भावमें करण ( बिंदु ) देनेवालेकी संख्या कहते हैं. शुक्रसे प्रांचवें, तीसरे, घरमें  
दो बिंदु देनेवालेकी संख्या है. पहिले, दूसरे, बारहवें, दसवें, घरमें पांच बिंदु देने-

| अथ उदाहरणार्थ गुरुकरणकोष्टकम्. |     |    |    |     |     |     |    |    |    |   |  |
|--------------------------------|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|---|--|
| ग्रा.                          | स.  | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | ल. | स. |   |  |
| १                              | ल.  |    | ०  |     |     |     | ०  | ०  |    | ३ |  |
| २                              | हि. |    |    |     |     |     |    | ०  |    | १ |  |
| ३                              | तु. |    | ०  | ०   | ०   |     |    | ०  | ०  | ५ |  |
| ४                              | च.  |    | ०  |     |     |     |    | ०  | ०  | ३ |  |
| ५                              | प.  | ०  |    | ०   |     |     |    |    |    | ३ |  |
| ६                              | प.  |    | ०  | ०   | ०   | ०   |    |    |    | ४ |  |
| ७                              | सं. |    |    |     | ०   |     | ०  | ०  |    | ३ |  |
| ८                              | अ.  |    |    |     | ०   |     |    | ०  | ०  | ५ |  |
| ९                              | न.  | ०  |    |     |     |     |    |    |    | १ |  |
| १०                             | द.  | ०  | ०  | ०   | ०   |     |    |    |    | ५ |  |
| ११                             | ए.  |    |    |     |     |     |    |    |    | ० |  |
| १२                             | हा. |    |    |     | ०   | ०   | ०  | ०  | ०  | ५ |  |

गुरोरिदम् ॥ सुतायुर्विक्रमेष्वक्षितनुस्वव्ययखेष्विषुः ॥ ३८ ॥

अष्टौ स्त्रियामरौ षड्भूर्धर्मे मित्रेभिस्त्वं भवे ॥ लग्ने स्वे-  
कारविज्जीवमंदाः सर्वे च काममे ॥ ३९ ॥ अर्कार्यो विक्र-  
मस्थाने सुतेऽर्कारौ शुभे रविः ॥ सुखेर्कबुधजीवाः स्युर्मौम-  
ज्ञौ मृतिमे द्विज ॥ ४० ॥ शुक्रार्केन्द्रार्किलग्नार्याः शत्रौ शून्यं

टीका ।

भावे स्वं शून्यं करणप्रदाभावः ॥ ३८ ॥ एवं संख्यामुक्त्वा नामान्याह लग्न-  
इत्यादिसार्धद्वयेन । लग्ने १ स्वे २ भावद्वये अर्कारविज्जीवमंदाः रविमौम-  
बुधगुरुशनयः करणदाः पंच, काममे ७ भावे सर्वेऽष्टावपि, विक्रमस्थाने ३ भावे  
अर्कार्यो रविगुरु द्वौ, सुते ५ भावे अर्कारौ रविमौमो द्वौ, शुभे ९ भावे रविरेक  
एव, सुखे ४ भावे अर्कबुधजीवाः स्पष्टं, मृतिमे ८ भावे मौमज्ञौ द्वौ, शत्रौ ६  
भावे शुक्रार्केन्द्रार्किलग्नार्याः शुक्ररविचंद्रशनिलग्नगुरवः षट्, भवे ११ भावे  
शून्यं करणप्रदाभावः, व्यये १२ भावे होराकिंबुधशुक्रार्याः लग्नशानिबुध-  
शुक्रगुरवः पंच, स्वे १० भावे तन्वारहोद्विनाः लग्नमौमबुधचंद्ररवयः पंच कर-

भाषा ।

भवे व्यये॥ होराकिंबुधशुक्रार्थास्तन्वारज्ञेन्द्रिनाश्च खे॥४१॥  
स्वस्त्रीधर्मेषु सप्तांगं मृतिहोरागृहेषु च॥ आज्ञाभ्रातृव्यये  
वेदा रूपं शत्रौ सुते शराः ॥४२॥ आयेऽशून्यं शनेरेवं  
करणं प्रोच्यते बुधैः॥ गृहे तनौ च लग्नाको स्वस्त्रियोश्च

## टीका ।

णप्रदाः, हे द्विज, हे मैत्रेय ! स्युर्भवेयुरित्यन्वयः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ अथः  
शनिभावकरणप्रदसंख्यामाह स्वेति सार्धेन । स्वस्त्रीधर्मेषु ॥ २७ ॥ भावेषु  
करणप्रदाः सप्त, मृतिहोरागृहेषु ॥ ११ ॥ भावेषु अंगं षट्, आज्ञाभ्रातृव्यये स-  
माहारद्वंद्वः १० । ३ । १२ भावेषु वेदाः चत्वारः, शत्रौ ६ भावे रूपं एक एव,  
सुते ५ भावे शराः पंच, आये ११ भावे शून्यं करणप्रदाभावः, एवं शनेः क-  
रणं बुधैः प्रोच्यते इति ॥ ४२ ॥ इति संख्यामुक्त्वा शनिभावकरणप्रदनामा-  
न्याह गृहे इत्यादिपंचचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । गृहे तनौ च ॥ ४१ ॥ भावद्वये  
लग्नाको विना लग्नसूर्यरहिताः सर्वे नामकरणदाः षट्, स्वस्त्रियोः ॥ २७ ॥

## भाषा ।

शनि, बुध, शुक्र, गुरु, यह पांच हैं. दसवें घ-  
रमें लग्न, मंगल, बुध, चंद्र, सूर्य, यह पांच  
हैं. ऐसे शुक्रभावके बिंदु देनेवालेकी संख्या  
और नाम कहे. यहां चक्र स्पष्ट लिखा है  
॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ अब शनिके भावमें  
करणबिंदु देनेवालेकी संख्या कहते हैं. श-  
निसे दूसरा, सातवां, नवम घरमें सात बिंदु  
देनेवालेकी संख्या है. दसवें, तीसरे, बारहवें  
घरमें चार बिंदु देनेवालेकी संख्या हैं. छठे  
घरमें एक बिंदु देनेवालेकी संख्या हैं. पांचवें  
घरमें पांच बिंदु देनेवालेकी संख्या हैं. ग्यारहवें घरमें बिंदु देनेवाला नहीं है. ऐसी

| अथ उदाहरणार्थ शुक्र करणं कोष्टकम् । |     |     |    |    |     |    |    |    |    |    |    |
|-------------------------------------|-----|-----|----|----|-----|----|----|----|----|----|----|
| घर                                  | भा. | सू. | च. | म. | गु. | ध. | श. | ल. | स. | र. | स. |
| १                                   | ल.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |
| २                                   | हि. | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |
| ३                                   | बु. | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | २  |
| ४                                   | च.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ३  |
| ५                                   | ग.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | २  |
| ६                                   | घ.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ६  |
| ७                                   | स.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ८  |
| ८                                   | अ.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | २  |
| ९                                   | न.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | १  |
| १०                                  | द.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |
| ११                                  | ए.  | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ४  |
| १२                                  | हा. | ०   | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |

गुरोरिदम् ॥ सुतायुर्विक्रमेष्वक्षितनुस्वन्ययखेष्विषुः ॥ ३८ ॥  
 अष्टौ स्त्रियामरौ षड्भूर्धर्मे मित्रेऽग्निखं भवे ॥ लग्ने स्वे-  
 कारविज्जीवमंदाः सर्वे च कामभे ॥ ३९ ॥ अर्कार्यौ विक्र-  
 मस्थाने सुतेऽर्कारौ शुभे रविः ॥ सुखेर्कबुधजीवाः स्युर्भौम-  
 ज्ञौ मृतिभे द्विज ॥ ४० ॥ शुक्रार्केन्द्रार्किलग्नार्याः शत्रौ शून्यं

### टीका ।

भावे खं शून्यं करणप्रदाभावः ॥ ३८ ॥ एवं संख्यामुक्त्वा नामान्याह लग्न-  
 इत्यादिसार्धद्वयेन । लग्ने १ स्वे २ भावद्वये अर्कारविज्जीवमंदाः रविभौम-  
 बुधगुरुशनयः करणदाः पंच, कामभे ७ भावे सर्वेऽष्टावपि, विक्रमस्थाने ३ भावे  
 अर्कार्यौ रविगुरु द्वौ, सुते ५ भावे अर्कारौ रविभौमो द्वौ, शुभ ९ भावे रविरेक  
 एव, सुखे ४ भावे अर्केबुधजीवाः स्पष्टं, मृतिभे ८ भावे भौमज्ञौ द्वौ, शत्रौ ६  
 भावे शुक्रार्केन्द्रार्किलग्नार्याः शुक्ररविचंद्रशनिलग्नगुरवः षट्, भवे ११ भावे  
 शून्यं करणप्रदाभावः, व्यये १२ भावे होराकिंबुधशुक्रार्याः लग्नशानिबुध-  
 शुक्रगुरवः पंच, खे १० भावे तन्वाखेन्द्रिनाः लग्नभौमबुधचंद्ररवयः पंच कर-

### भाषा ।

वालेकी संख्या है. सातवें घरमें आठ बिंदु हैं. छठे घरमें छः बिंदु हैं. नवें घरमें  
 एक बिंदु है. चउथे घरमें तीन करण हैं. ग्यारहवें घरमें करणसंख्या नहीं है ॥ ३८ ॥  
 करण देनेवाले ग्रहोंके नाम कहते हैं. पहिले दूसरे घरमें सूर्य, मंगल, गुरु, बुध,  
 गुरु, शनि, यह पांच करण देनेवाले जानना. सातवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध,  
 गुरु, शुक्र, शनि, लग्न यह आठ करण देनेवाले हैं. तीसरे घरमें सूर्य, गुरु, यह  
 दो करण देनेवाले हैं. पाचवें घरमें सूर्य, मंगल, दो हैं. नवें घरमें सूर्य, बुध, गुरु,  
 यह तीन हैं. आठवें घरमें मंगल, बुध, दो हैं. छठे घरमें शुक्र, सूर्य, चंद्र, शनि,  
 लग्न, गुरु, यह छः हैं. ग्यारहवें घरमें करण देनेवाला नहीं है. बारहवें घरमें लग्न,

भवे व्यये॥ होराकिंबुधशुक्रार्यास्तन्वारज्ञेन्द्रिनाश्च खे॥४१॥  
स्वस्त्रीधर्मेषु सप्तांगं मृतिहोरागृहेषु च॥ अज्ञाभ्रातृव्यये  
वेदा रूपं शत्रौ सुते शराः ॥४२॥ आयेऽन्य शनेरेव  
करणं प्रोच्यते बुधैः॥ गृहे तनौ च लग्नाको स्वस्त्रियोश्च

टीका ।

अप्रदाः, हे द्विज, हे मैत्रेय ! स्युर्भवेयुरित्यन्वयः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ अथ  
शनिभावकरणप्रदसंख्यामाह स्वेति सार्धेन । स्वस्त्रीधर्मेषु ॥ २७ ॥ भावेषु  
करणप्रदाः सप्त, मृतिहोरागृहेषु ८॥ १४ भावेषु अंगं षट्, अज्ञाभ्रातृव्यये स-  
प्तांगं १०॥ ३१२ भावेषु वेदाः चत्वारः, शत्रौ ६ भावे रूपं एक एव,  
सुते ५ भावे शराः पंच, आये ११ भावे अन्यं करणप्रदाभावः एवं शनेः क-  
रणं बुधैः प्रोच्यते इति ॥ ४२ ॥ इति संख्यामुक्त्वा शनिभावकरणप्रदनांमा-  
न्याह गृहे इत्यादिपंचचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । गृहे तनौ च ४१ भावद्वये  
लग्नाको विना लग्नसूर्यरहिताः सर्वे नामकरणदाः षट्, स्वस्त्रियोः २७

भाषा ।

शनि, बुध, शुक्र, गुरु, यह पांच हैं. दसवें ध-  
रमें लग्न, मंगल, बुध, चंद्र, सूर्य, यह पांच  
हैं. ऐसे शुक्रभावके विंदु देनेवालेकी संख्या  
और नाम कहे. यहां चक्र स्पष्ट लिखा है  
॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ अब शनिके भावमें  
करणविंदु देनेवालेकी संख्या कहते हैं. श-  
निसे दूसरा, सातवां, नवम घरमें सात विंदु  
देनेवालेकी संख्या है. दसवें, तीसरे, बारहवें  
घरमें चार विंदु देनेवालेकी संख्या हैं. छठे  
घरमें एक विंदु देनेवालेकी संख्या है. पांचवें  
घरमें पांच विंदु देनेवालेकी संख्या हैं. ग्यारहवें घरमें विंदु देनेवाला नहीं है. ऐसी

| अथ उदाहरणार्थ शुक्र करण कोष्टकम् | घर  | भा. | स. | च. | म. | घ. | ग. | ध. | श. | ल. | स. |
|----------------------------------|-----|-----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| १                                | ल.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |
| २                                | दि. | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |
| ३                                | गु. | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | २  |
| ४                                | च.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ३  |
| ५                                | प.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | २  |
| ६                                | ष.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ६  |
| ७                                | स.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ८  |
| ८                                | अ.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | २  |
| ९                                | न.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ३  |
| १०                               | द.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |
| ११                               | ए.  | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ४  |
| १२                               | भा. | ०   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ५  |

रविं विना ॥४३॥ हित्वा धर्मे बुधं माने लग्नाररविचंद्रजा-  
न॥ ततो भ्रातरि जीवार्कबुधशुक्राः क्षते रविः ॥ ४४ ॥  
व्यये लग्नेन्दुमन्दार्काः सितार्केन्दुज्ञलग्नकाः ॥ सुते मृतौ बुधा-  
र्को च हित्वाऽऽये खं शनेर्विदः ॥ ४५ ॥ उक्ताऽन्ये स्थान-

## टीका ।

भावयोः रविं विना, रविरहिताः करणदाः सप्त, धर्मे ९ भावे बुधं हित्वा  
शेषाः करणदाः सप्त, माने १० भावे लग्नाररविचंद्रजान्विना चन्द्रगुरुशुक्र-  
शनयश्चत्वारः, ततो भ्रातरि ३ भावे जीवार्कबुधशुक्राः चत्वारः, क्षते ६ भावे  
रविः एक एव, व्यये १२ भावे लग्नेन्दुमन्दार्काः स्पष्टं करणदाश्चत्वारः, सुते  
५ भावे सितार्केन्दुज्ञलग्नकाः शुक्ररविचंद्रबुधलग्नानि करणदाः पंच, मृतौ  
८ भावे बुधार्को, हित्वा अवशिष्टाः षट्, आये ११ भावे करणप्रदाभावः एवं  
करणप्रदाः शनेः विदुः पूर्वाचार्या इति शेषः । तनुकरणं तु चतुःपष्टितमे श्लोके  
वक्ष्यते ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अथ संक्षेपतः स्थानान्याह उक्तान्ये इत्यर्थे-  
न । पूर्वोक्तप्रकरणे ये करणप्रदा उक्ताः तेभ्योऽन्ये नामशेषाः स्थानदातारः  
स्थानप्रदा बोध्याः । इति एवं प्रकारेण बुधाः विद्वांसः स्थानं रेखापरपर्यायं  
विदुः । एवं संक्षेपेणोक्त्वा विस्तरेण बभ्रुमारभते अथेत्यादिं त्रिपष्टिश्लोक  
पर्यंतम् । अथेत्यनंतरं सूरिणां विदुषां सुखबोधाय सुगमज्ञानाय स्थानग्रहान्

## भाषा ।

शानिकी करणसंख्या कही ॥ ४२ ॥ अब विंदु देनेवालेके नाम कहते हैं. शानिसे  
चौथे पहिले घरमें चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि यह छः विंदु देनेवाले जा-  
नना. दूसरे सातवें घरमें चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न यह सात विंदु  
देनेवाले हैं. नवम घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न यह सात विंदु  
देनेवाले हैं. दसवें घरमें चंद्र, गुरु, शुक्र, शनि यह चार विंदु देनेवाले हैं. तीसरे  
घरमें गुरु, सूर्य, बुध, शुक्र, यह चार विंदु देनेवाले हैं. छठे घरमें सूर्य एकही विंदु  
है. बारहवें घरमें लग्न, चंद्र, शनि, सूर्य, यह चार विंदु देनेवाले हैं. पा-



दातार इति स्थानं विदुर्बुधाः ॥ अथ स्थानग्रहान्वक्ष्ये सु-  
खबोधाय सूरिणाम् ॥ ४६ ॥ स्वायुस्तनुषु मंदारसूर्याजी-

टीका ।

रेखापरपर्यायस्थानप्रदग्रहान् वक्ष्ये कथयामि ॥ ४६ ॥ अथादौ रविभा-  
वस्थानप्रदान् ग्रहानाहस्वायुरित्यादिसार्धाष्टचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । स्वायु-  
स्तनुषु २।८।१ भावेषु मंदारसूर्याः शनिभौमरवयः स्थानप्रदा रेखाप्रदा  
इति शेषः त्रयो बोध्याः, सुते ५ भावे जीवबुधौ रेखाप्रदौ, विक्रमे ३ भावे  
ज्ञेन्दुलग्नानि बुधचंद्रलग्नानि त्रीणि, गृहे ४ भावे लग्नार्कार्किंजुजाः ल-  
ग्नशनिभौमाः चत्वारः, खमे १० भावे ते च ज्ञेन्दुलग्नार्कार्किंजुजज्ञेन्दवः  
षट्, आये ११ भावे शुक्रं विना सर्वे शुक्ररहिताः सप्त, व्यये १२ भावे ल-  
ग्नशुक्र बुधास्त्रयः, शत्रौ ६ भावे ते च तौ जीवसुधाकरौ लग्नशुक्रबुधगुरु-  
चंद्राः पंच, धूने ७ भावे अर्कार्किंशुक्राः सूर्यभौमशनिशुक्राः चत्वारः, धर्मे  
९ भावे अर्कार्किंविद्गुरुः सूर्यभौमशनिबुधैः सहितोः गुरुः, नाम इमे पंच,

भाषा ।

चवे घरमे शुक्र, सूर्य, चंद्र, बुध, लग्न यह  
पांच विदु देनेवाले हैं. आठवे घरमे चंद्र, सं-  
गळ, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न यह छः विदु दे-  
नेवाले हैं. ग्यारहवें घरमे विदु देनेवाले नहीं  
हैं. ऐसी शनिभावकी विदु देनेवालेकी संख्या  
और नाम कहें. इसका चक्र यहां लिखा है.  
लग्नके विदुका भेद आगे रेखाके सहित बता-  
वेगे ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ऐसा सूर्या-  
दि सात ग्रहोके विदुवांका निर्णय कहके  
आगे सूर्यादिकांके भावोके रेखानिर्णय कहते  
हैं. जो पूर्व विदु देनेवाले यह कहे उनसे शेष ग्रह जो रहें वे रेखा देने  
वाले हैं. ऐसे संक्षेपसे कक्षा विस्तारसे आगे कहते हैं ॥ ४६ ॥ अथ

| अयोदाहरणार्थं शनिर्विदुकोष्टकम्. |     |     |    |    |     |     |    |      |    |    |   |
|----------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|----|------|----|----|---|
|                                  | भा. | सू. | च. | म. | बु. | गु. | श. | ज्ञ. | ल. | स. |   |
| १                                | रु  |     | ०  | ०  | ०   | ०   | ०  | ०    |    |    | ६ |
| २                                | दि  |     | ०  | ०  | ०   | ०   | ०  | ०    | ०  |    | ७ |
| ३                                | दृ  | ०   |    |    | ०   | ०   | ०  |      |    |    | ४ |
| ४                                | च   |     | ०  | ०  | ०   | ०   | ०  |      |    |    | ६ |
| ५                                | प   | ०   | ०  |    | ०   |     | ०  |      | ०  |    | ५ |
| ६                                | प   | ०   |    |    |     |     |    |      |    |    | १ |
| ७                                | स   |     | ०  | ०  | ०   | ०   | ०  | ०    | ०  |    | ७ |
| ८                                | अ   |     | ०  | ०  |     | ०   | ०  | ०    | ०  |    | ६ |
| ९                                | न   | ०   | ०  | ०  |     | ०   | ०  | ०    | ०  |    | ७ |
| १०                               | ट   |     | ०  |    |     | ०   | ०  | ०    |    |    | ४ |
| ११                               | ए   |     |    |    |     |     |    |      |    |    | ० |
| १२                               | दा  | ०   | ०  |    |     |     |    | ०    | ०  |    | ४ |

वबुधौ सुते ॥ विक्रमे ज्ञेन्दुलग्नानि लग्नार्कारिकुजा गृहे  
॥ ४७ ॥ ते च ज्ञेन्दुस्वभेचाऽऽये सर्वे शुक्रं विना व्यये ॥  
लग्नशुक्रबुधाः शत्रौ ते च जीवसुधाकरौ ॥ ४८ ॥ द्यूनेऽ-

## टीका ।

अत्र एकवचनं पुंस्त्वं चार्षम् । एवं रविमावरेखाप्रदा बोध्याः ॥ ४७ ॥ ४८ ॥  
अथ चन्द्रभावेरेखाप्रदानाह ज्ञेन्दुत्याद्येक्यं चाशच्छ्लोकपर्यंतम् । तनु १ भावे  
ज्ञेन्दुजीवाः बुधचन्द्रगुरुवः त्रयः, धन २ भावे कुजायौ भौमगुरु द्वौ, सहज  
२ भावे ज्ञार्किन्द्वारार्कितनृशनाः बुधरविचन्द्रभौमशनिलग्नसहित उशनाः  
शुक्रः एते सप्त, सुख ४ भावे जीवशुक्रबुधाः त्रयः, सुत ३ भावे भौमबुध-  
शुक्रशनैश्चराः चत्वारः, रिपुभावे रवीन्द्वारार्किलग्नानि रविचन्द्रभौमशनिलग्न-

## भाषा ।

सूर्यके बारह भावमें स्थान ( रेखा ) कहते हैं। स्थानरेखाका नाम है सो रेखा देनेवाले-  
के नाम कहते हैं। सूर्यसे दूसरा आठवा, प-  
हिला, यह घरमें शनि, मंगल, सूर्य यह तीन  
रेखा देनेवाले हैं। पांचवें घरमें गुरु, बुध, यह  
दो रेखा देनेवाले हैं। तीसरे घरमें बुध, चंद्र,  
लग्न रेखा देनेवाले हैं। छवथे घरमें लग्न, सूर्य,  
शनि, मंगल रेखा देनेवाले हैं। दसवें घरमें  
लग्न, सूर्य, मंगल, शनि, बुध, चंद्र रेखा दे-  
नेवाले हैं। ग्यारहवें घरमें सूर्य, चन्द्र, मंगल,  
बुध, गुरु शनि, लग्न रेखा देनेवाले हैं। बारहवें घरमें लग्न, शुक्र, बुध, रेखा देने-  
वाले हैं। छठे घरमें लग्न, शुक्र, बुध, गुरु, चंद्र रेखा देनेवाले हैं। सातवें घरमें सूर्य,  
मंगल, शनि, शुक्र रेखा देनेवाले हैं। नवम घरमें सूर्य, मंगल, शनि, बुध, गुरु,  
रेखा देनेवाले हैं। यह सूर्य भावकी रेखा कही यहां चक्र गपट लिखा है  
॥ ४७ ॥ ४८ ॥ अब चंद्रके बारह भावोंमें रेखा देनेवाले नाम कहते हैं, चन्द्रसे

अथ उदाहरणार्थ सूर्यरेखाचक्रम्.

|    | वा | स | च | म | बु | गु | श | ल | स |
|----|----|---|---|---|----|----|---|---|---|
| १  | ल  |   |   |   |    |    |   |   | ३ |
| २  | हि |   |   |   |    |    |   |   | ३ |
| ३  | तु |   |   |   |    |    |   |   | ३ |
| ४  | च  |   |   |   |    |    |   |   | ४ |
| ५  | प  |   |   |   |    |    |   |   | २ |
| ६  | प  |   |   |   |    |    |   |   | ५ |
| ७  | स  |   |   |   |    |    |   |   | ४ |
| ८  | अ  |   |   |   |    |    |   |   | ३ |
| ९  | न  |   |   |   |    |    |   |   | ५ |
| १० | द  |   |   |   |    |    |   |   | ६ |
| ११ | ए  |   |   |   |    |    |   |   | ७ |
| १२ | हा |   |   |   |    |    |   |   | ४ |

कारार्किशुक्राश्च धर्मेऽकारार्किविद्गुरुः॥ज्ञेन्दुजीवाः कुज-  
र्यो जार्केन्द्रारार्कितनूशनाः ॥ ४९ ॥ जीवशुक्रबुधा भौम-  
बुधशुक्रशनैश्चराः ॥ रवीन्द्रारार्किलग्नानि रवीन्द्रार्यज्ञभा-  
र्गवाः ॥ ५० ॥ अर्कज्ञजीवाः शुक्रेन्दू ते च तौ लग्नभूसुतौ॥  
सर्वे शून्यं क्रमात्प्रोक्तं स्थानं शीतकरस्य च ॥ ५१ ॥

## टीका ।

नि पंच, जायामावे रवीन्द्रार्यज्ञभार्गवाः पंच, मृत्युमावे अर्कज्ञजीवाः त्रयः,  
धर्मभावे शुक्रेन्दू द्वौ, कर्मभावे ते च मृत्युभावोक्ताः तौ च धर्म भावोक्तौ ल-  
ग्नभूसुतौ च नाम अर्कज्ञजीवशुक्रेन्दु लग्नभूसुताः सप्त आयभावे सर्वे अष्टा-  
वपि, व्ययभावे शून्यं रेखाप्रदामावः । इति शीतकरस्य चंद्रस्य स्थानम् प्रो-

## भाषा ।

पहिले घरमें बुध, चन्द्र, गुरु रेखा देनेवाले हैं। दूसरे घरमें मंगल, गुरु रेखा देने-  
वाले हैं। तीसरे घरमें बुध, सूर्य, चन्द्र, मंगल, शनि, लग्न, शुक्र, रेखा देनेवाले हैं।

चवथे घरमें गुरु, शुक्र, बुध, रेखा देनेवाले हैं।

पांचवें घरमें मंगल, बुध, शुक्र, शनि, रेखा  
देनेवाले हैं। छठे घरमें सूर्य, मंगल, शनि, लग्न

रेखा देनेवाले हैं। सातवें घरमें सूर्य, चंद्र,

गुरु, बुध, शुक्र, रेखाप्रद हैं। आठवें घरमें

सूर्य, बुध, गुरु, रेखा देनेवाले हैं। नवें घरमें

शुक्र, चंद्र, दो, दसवें घरमें सूर्य, बुध, गुरु,

शुक्र, चन्द्र, लग्न, मंगल, रेखा देनेवाले हैं।

ग्यारहवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, शुक्र,

शनि, लग्न, रेखा देनेवाले हैं। बाहरवें घरमें

कोई नहीं है। ऐसी चंद्रभावकी रेखा कही। स्पष्ट चक्र लिखा है॥४९॥५०॥५१॥

अथोदाहरणार्थं चंद्ररेखाकोष्टकम्.

|    | भा. | सु. | चं. | म. | बु. | गु. | श. | ल. | स |
|----|-----|-----|-----|----|-----|-----|----|----|---|
| १  | ल.  |     |     |    |     |     |    |    | ३ |
| २  | हि. |     |     |    |     |     |    |    | २ |
| ३  | वृ. |     |     |    |     |     |    |    | ७ |
| ४  | च.  |     |     |    |     |     |    |    | ३ |
| ५  | पं. |     |     |    |     |     |    |    | ४ |
| ६  | प.  |     |     |    |     |     |    |    | ५ |
| ७  | स.  |     |     |    |     |     |    |    | ५ |
| ८  | अ.  |     |     |    |     |     |    |    | ३ |
| ९  | न.  |     |     |    |     |     |    |    | २ |
| १० | द.  |     |     |    |     |     |    |    | ७ |
| ११ | ए.  |     |     |    |     |     |    |    | ८ |
| १२ | हा. |     |     |    |     |     |    |    | ० |

लग्नमंदकुजा भौमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपाः मन्दारौ झरवी-  
ज्ञेन्दुजीवार्कितनुभार्गवाः ॥ ५२ ॥ मंदारौ तौ सितश्चार्कि-  
कुजाकार्यार्किलग्नकाः ॥ सर्वे गुरुसितौ स्थानं भौमस्यैवं  
विदुर्बुधाः ॥ ५३ ॥ लग्नमंदारशुक्रज्ञा लग्नारेन्दुसितार्कि-

## टीका ।

क्तम् स्थानान्युक्तानीति तदर्थः ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ अथ कुजभावेरेखा-  
प्रदानाह लग्नेत्यादित्रिपंचाशत्पर्यंतम् । तनुभावे लग्नमंदकुजाः त्रयः रेखा-  
प्रदाः, धनभावे भौमः एक एव, सहजभावे होराज्ञेन्दुदिनाधिपाश्चत्वारः, सु-  
खभावे मंदारौ द्वौ, सुतभावे झरवी द्वौ, रिपुभावे ज्ञेन्दुजीवार्कितनुभार्गवाः  
षट्, जायाभावे मंदारौ द्वौ, मृत्युभावे तौ पूर्वोक्तौ सितश्च मंदारशुक्राद्वयः,  
धर्मभावे अर्किः शनिः कर्मभावे कुजाकार्यार्किलग्नकाः पंच, आयभावे स-  
र्वेऽष्टावपि, व्ययभावे गुरुसितौ द्वौ, एवं भौमस्य स्थानं बुधाः विदुरित्यन्वयः  
॥ ५२ ॥ ५३ ॥ अथ बुधभावेरेखाप्रदानाह लग्नेत्यादिसार्धद्वयेन । तनुभावे

## भाषा ।

अब मंगलके बारह भावमें रेखा देनेवालेके नाम कहते हैं. पहिले घरमें लग्न, शनि,  
मंगल रेखा देते हैं. दूसरे घरमें मंगल, तीसरे  
घरमें लग्न, बुध, चंद्र, सूर्य, चवथे घरमें शनि,  
मंगल, दो रेखा देते हैं. पांचवें घरमें बुध, सूर्य,  
छठे घरमें बुध, चंद्र, गुरु, सूर्य, लग्न, शुक्र  
रेखा देते हैं. सातवें घरमें शनि, मंगल, आठवें  
घरमें शनि, मंगल, शुक्र रेखा देते हैं. नवमें  
घरमें शनि एकही है. दसवें घरमें मंगल, सूर्य,  
गुरु, शनि, लग्न, देते हैं. ग्यारहवें घरमें सूर्य,  
चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न,  
और बारहवें घरमें गुरु, शुक्र, रेखा देते हैं.

ऐसी यह मंगलके बारह भावोंकी रेखा कही. ऊपर स्पष्ट चक्र लिखा है ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

| अथ उदाहरणार्थ मंगलरेखाचक्रम्. |     |    |    |     |     |    |    |    |    |   |  |
|-------------------------------|-----|----|----|-----|-----|----|----|----|----|---|--|
| मा.                           | सु. | च. | म. | बु. | गु. | श. | श. | ल. | स. |   |  |
| १                             | ल.  |    |    |     |     |    |    |    |    | ३ |  |
| २                             | हि. |    |    |     |     |    |    |    |    | १ |  |
| ३                             | वृ. | १  | १  |     | १   |    |    |    |    | ४ |  |
| ४                             | च.  |    |    | १   |     |    |    |    |    | २ |  |
| ५                             | प.  | १  |    |     | १   |    |    |    |    | २ |  |
| ६                             | प.  | १  | १  |     | १   |    |    |    |    | ५ |  |
| ७                             | म.  |    |    | १   |     |    |    |    |    | २ |  |
| ८                             | म.  |    |    | १   |     |    |    |    |    | २ |  |
| ९                             | न.  |    |    |     |     |    |    |    |    | १ |  |
| १०                            | द.  | १  |    | १   |     | १  | १  | १  | १  | ५ |  |
| ११                            | प.  | १  | १  | १   | १   | १  | १  | १  | १  | ८ |  |
| १२                            | हा. |    |    |     |     | १  | १  | १  | १  | ० |  |

जाः ॥ शुक्रज्ञौ लग्नचंद्रार्किसिताराज्ञार्कभार्गवाः ॥ ५४ ॥  
जीवज्ञार्केन्दुलग्नानि भूमिपुत्रशनैश्वरौ ॥ तौ च लग्नेन्दु-  
शुक्रार्था मंदारार्कज्ञभार्गवाः ॥ ५५ ॥ लग्नमंदारविच्चन्द्राः  
सर्वे जीवज्ञभास्कराः ॥ गुरोर्लग्ने सुखे जीवलभारार्कबुधाः

टीका ।

लग्नमंदारशुक्रज्ञाः पंच रेखाप्रदाः, धनभावे लग्नेन्दुसितार्कजाः पंच, सह-  
जभावे शुक्रज्ञौ द्वौ, सुखभावे लग्नचंद्रार्किसिताराः पंच, सुतभावे ज्ञार्कभा-  
र्गवाः त्रयः, रिपुभावे जीवज्ञार्केन्दुलग्नानि पंच, जायाभावे भूमिपुत्रशनैश्वरौ  
द्वौ, मृत्युभावे तौ पूर्वोक्तौ द्वौ, लग्नेन्दुशुक्रार्थाश्चत्वारश्चेति षट्, धर्मभावे मंदा-  
रार्कज्ञभार्गवाः पंचः, कर्मभावे लग्नमंदारविच्चन्द्राः पंच, आयभावे सर्वे अष्टा-  
वपि, व्ययभावे जीवज्ञभास्कराः त्रयः, इति बुधभावस्थानप्रदाः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥  
अथ गुरुभावरखाप्रदानाह गुरोरित्यादिसार्धाष्टपंचाशत्पर्यंतम् । तनुसुखमा-  
वद्वये जीवलभारार्कबुधाः पंच, धनभावे पूर्वोक्ताः पंच, चंद्रशुक्रौ चेति सप्त,

भाषा ।

॥ ५३ ॥ अब बुधके वारह भावमें रेखा देनेवालेके नाम कहते हैं। बुधसे पहिले  
घरमें लग्न, शनि, मंगल, शुक्र, बुध, रेखा देते हैं। दूसरे घरमें लग्न, मंगल, चंद्र,  
शुक्र, शनि, रेखा देते हैं। तीसरे घरमें शुक्र, बुध, रेखा देते हैं। चवथे घरमें लग्न,  
चंद्र, शनि, शुक्र, मंगल, रेखा देते हैं। पांचवें घरमें बुध, सूर्य, शुक्र, रेखा देते  
हैं। छठे घरमें गुरु, बुध, सूर्य, चंद्र, रेखा देते हैं। सातवें घरमें मंगल, शनि,  
रेखा देते हैं। आठवें घरमें लग्न, चंद्र, शुक्र, गुरु, मंगल, शनि रेखा देते हैं। नवमें  
घरमें शनि, मंगल, सूर्य, बुध, शुक्र, रेखा देते हैं। दसवें घरमें लग्न, शनि, मंगल,  
बुध, चंद्र, रेखा देते हैं। ग्यारहवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि,  
लग्न, रेखा देते हैं। बारहवें घरमें गुरु, बुध, सूर्य रेखा देते हैं। ऐसी बुधके वारह-  
भावकी रेखा कही। आगे स्पष्ट कोष्टक बनाया है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ अब  
गुरुके वारह भावमें रेखा देनेवालेके नाम कहते हैं। गुरुसे पहिले, चवथे घरमें

धर्मे ॥ ५६ ॥ चन्द्रशुक्रौ च दुश्चिक्ये मंदार्यार्काः शनि-  
र्व्यये ॥ सुते शुक्रेन्दुलग्नज्ञमन्दाश्चन्द्रं विना त्वरौ ॥ ५७ ॥  
लग्नारार्याऽर्केन्दवोऽस्ते मृतौ जीवार्कभूसुताः धर्मे शुक्रार्कल-  
ग्नेन्दुबुधा मंदं विनाऽऽयमे ॥ ५८ ॥ माने गुरुबुधार्कशु-

टीका ।

दुश्चिक्ये ३ भावे मंदार्यार्काः त्रयः, व्यये शनिः एक एव, सुते भावे शुक्र-  
ेन्दुलग्नज्ञमन्दाः अरौ चन्द्रं विना पूर्वोक्ताः चत्वारः, अस्ते सप्तमभावे लग्नार-  
ार्यार्केन्दवः पंच, मृतौ भावे जीवार्कभूसुतास्त्रयः, धर्मे भावे शुक्रार्कलग्नेन्दुबु-  
धाः पंच, आयमे मंदं विना शनिरहिताः सप्त, माने दशमभावे गुरुबुधारा-  
र्केन्दुशुक्रहोराः षट्, तथा प्राग्बत गुरोः रेखाप्रदाः विदुरित्यन्वयः ॥ ५६ ॥ ५७ ॥  
॥ ५८ ॥ अथ शुक्रभावेरेखाप्रदानाह लग्नेत्यादि एकषष्टिलोकपर्यन्तम् ।

भाषा ।

| अयोदाहरणार्थं बुधरेखाचक्रमाह. |     |     |    |    |     |     |     |    |    |    | अथ उदाहरणार्थं गुरुरेखाचक्रमाह. |     |     |    |    |     |     |     |    |    |    |
|-------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|---------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
|                               | भा. | सू. | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | ल. | स. |                                 | भा. | सू. | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | ल. | स. |
| १                             | ल.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५. | १                               | ल.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  |
| २                             | हि. |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  | २                               | हि. |     |    |    |     |     |     |    |    | ७  |
| ३                             | तु. |     |    |    |     |     |     |    |    | २  | ३                               | तु. |     |    |    |     |     |     |    |    | ३  |
| ४                             | च.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  | ४                               | च.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  |
| ५                             | पं. |     |    |    |     |     |     |    |    | ३  | ५                               | पं. |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  |
| ६                             | प.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  | ६                               | प.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ४  |
| ७                             | स.  |     |    |    |     |     |     |    |    | २  | ७                               | स.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  |
| ८                             | अ.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ६  | ८                               | अ.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ३  |
| ९                             | न.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  | ९                               | न.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  |
| १०                            | द.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ५  | १०                              | द.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ६  |
| ११                            | ए.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ८  | ११                              | ए.  |     |    |    |     |     |     |    |    | ७  |
| १२                            | हा. |     |    |    |     |     |     |    |    | ३  | १२                              | हा. |     |    |    |     |     |     |    |    | १  |

गुरु, लग्न, मंगल, सूर्य, बुध, रेखा देते हैं. दूसरे घरमें गुरु, लग्न, मंगल, सूर्य, बुध, चंद्र, शुक्र, रेखा देते हैं. तीसरे घरमें शनि, गुरु, सूर्य, रेखा देते हैं. चार-  
हवें घरमें शनिरेखा देता है. पांचवें घरमें शुक्र, चंद्र, लग्न, बुध, शनि, रेखा

कहोरास्तथा विदुः ॥ लग्नशुक्रेंदवस्ते ते ज्ञाकार्यारास्ते ज्ञव-  
जिताः ॥ ५९ ॥ सुतमे लग्नशशिजशशांकार्यार्किभार्गवाः ॥  
ज्ञारौ शून्यं सितार्केन्दुगुरुलग्नशनैश्वराः ॥ ६० ॥ सर्वे रविं

## टीका ।

तनुभावे लग्नशुक्रेंदवः त्रयः, धनभावे ते पूर्वोक्ता एव त्रयः, सहजभावे ते पूर्वोक्तास्त्रयः, ज्ञाकार्याराश्च षट्, सुखभावे ज्ञवजितास्ते नाम लग्नशुक्रेंद्रार्का-  
राः पंच, सुतभावे लग्नशशिजशशांकार्यार्किभार्गवाः षट्, रिपुभावे ज्ञारौ द्वौ,  
जायाभावे शून्यं० रेखाप्रदाभावः, मृत्युभावे सिताऽर्केन्दुगुरुलग्नशनैश्वराः  
षट्, धर्मभावे रविं विना रविरहिताः सर्वे सप्त, कर्मभावे शुक्रगुरुमंदास्त्रयः,  
आयभावे सर्वे अष्टावपि, व्ययभावे कुजेन्दुरवयः त्रयः, एते क्रमाद्भुगुसुतस्य

## भाषा ।

देते हैं। छठे घरमे शुक्र, लग्न, बुध, शनि रेखा देते हैं। सातवे घरमे लग्न, गुरु, मंगल,  
सूर्य चंद्र रेखा देते हैं। आठवे घरमें गुरु, सूर्य, मंगल, रेखा देते हैं। नवे घरमे  
शुक्र, सूर्य, चंद्र, बुध रेखा देते हैं। ग्यारहवे घरमे सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु,

शुक्र, लग्न रेखा देते हैं। दसवे घरमें गुरु, बुध,  
सूर्य, शुक्र, लग्न और मंगल रेखा देते हैं। ऐसी  
गुरुके बारह भावोकी रेखा कही। यहा चक्रभी  
दिखाया है ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ अब शुक्रके  
बारह भावोमे रेखा देनेवालेके नाम लिखते  
हैं। शुक्रसे पहिले घरमे लग्न, शुक्र, चंद्र, रेखा  
देते हैं। दूसरे घरमे लग्न, शुक्र, चंद्र, रेखा देने-  
वाले हे। तीसरे घरमे लग्न, शुक्र, चंद्र, बुध,  
शनि, मंगल रेखा देते हैं। चवथे घरमे लग्न,  
शुक्र, चंद्र, मंगल, सूर्य रेखा देते हैं। पाचवे

| अथ उदाहरणार्थं शुक्ररेखा कोट्टकमिदम् |    |   |   |    |    |   |   |   |   |  |
|--------------------------------------|----|---|---|----|----|---|---|---|---|--|
| परभा                                 | सु | च | म | बु | गु | श | ल | स |   |  |
| १ ल                                  |    | । |   |    |    | । |   | । | ६ |  |
| २ द्वि                               |    | । |   |    |    | । |   | । | ३ |  |
| ३ तृ                                 |    | । | । | ।  |    | । | । | । | ९ |  |
| ४ च                                  |    | । | । |    |    | । | । | । | ५ |  |
| ५ ग                                  |    | । |   | ।  | ।  | । | । | । | ६ |  |
| ६ ष                                  |    |   | । | ।  |    |   |   |   | ० |  |
| ७ स                                  |    |   |   |    |    |   |   |   | ० |  |
| ८ अ                                  | ।  | । |   |    | ।  | । | । | । | ६ |  |
| ९ न                                  |    | । | । | ।  | ।  | । | । | । | ७ |  |
| १० द                                 |    |   |   |    |    | । | । | । | ३ |  |
| ११ ए                                 | ।  | । | । | ।  | ।  | । | । | । | ८ |  |
| १२ डा                                | ।  | । | । |    |    |   |   |   | ३ |  |

घरमे लग्न, चंद्र, बुध, गुरु, शनि, शुक्र रेखा देते हैं। छठे घरमे बुध, मंगल, रेखा देते हैं।

विना शुक्रगुरुमन्दाश्च मानभे ॥ सर्वे कुजेन्दुरवयः क्रमा-  
 द्भृगुसुतस्य च ॥ ६१ ॥ शने रवितनू सूर्यो लग्नेन्दुकुज-  
 सूर्यजाः॥लग्नार्को जीवमन्दाराः सर्वे सूर्य विना क्षते॥६२॥  
 अर्कोऽर्कज्ञौ बुधोऽर्कारतनुज्ञाः सकलास्ततः ॥ कुजज्ञगुरु-  
 टीका ।

शुक्रस्य रेखाप्रदाः स्युरिति ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ अथशनिभावेरेखाप्रदा-  
 नाह शनेरित्यादिद्वाभ्याम् । तनुभावे रवितनू द्वौ, धनभावे सूर्यः एक एव,  
 सहजभावे लग्नेन्दुकुजसूर्यजाः चत्वारः, सुखभावे लग्नार्को द्वौ, सुते भावे  
 जीवमन्दारास्त्रयः, क्षते रिषुभावे सूर्य विना सूर्यरहिताः सर्वे सप्त, जायाभावे  
 अर्कः एक एव, मृत्युभावे अर्कज्ञौ द्वौ, धर्मभावे बुध एक एव, कर्मभावे अ-  
 र्कारतनुज्ञाः चत्वारः आयभावे संकलाः अष्टावपि, ततः तदनंतरं व्ययभावे  
 कुजज्ञगुरुशुक्राः चत्वारः, इदं शनेः क्रमात्स्थानं विदुस्त्यन्वयः ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

### भाषा ।

हैं. सातवें घरमें रेखा नहीं है. आठवें घरमें शुक्र, सूर्य, चंद्र, गुरु, लग्न, शनि रेखा देते  
 हैं. नवें घरमें चंद्र, मंगल, गुरु, बुध, शुक्र, शनि, लग्न रेखा देते हैं. दशवें घरमें शुक्र, गुरु,  
 शनि, रेखा देते हैं. ग्यारहवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न रेखा देते  
 हैं. बारहवें घरमें मंगल, चंद्र, सूर्य, रेखा देते हैं. ऐसी शुक्रके बारह भावोंकी रेखा कही-  
 इसका स्पष्ट चक्र आगे लिखा है ॥ ५९ ॥  
 ॥ ६० ॥ ६१ ॥ अब शनिके बारह भावोंमें  
 रेखा देनेवाले ग्रहोंके नाम कहते हैं. शनिसे  
 पहले घरमें सूर्य, लग्न, दोनों रेखा देते हैं.  
 दूसरे घरमें सूर्य एकही रेखा देता है. तीसरे घरमें लग्न, चंद्र, मंगल, शनि, रेखा  
 देते हैं. चवथे घरमें लग्न, सूर्य रेखा देते हैं. पांचवें घरमें गुरु, शनि, मंगल, रेखा

| अथोदाहरणार्थं शनिरेखाकोष्टकम्. |     |    |   |   |    |    |   |   |   |   |  |
|--------------------------------|-----|----|---|---|----|----|---|---|---|---|--|
|                                | भा  | सु | च | म | बु | गु | श | ल | स |   |  |
| १                              | ल   | ।  |   |   |    |    |   |   | । | २ |  |
| २                              | हि  | ।  |   |   |    |    |   |   |   | १ |  |
| ३                              | गु  |    | । | । |    |    |   | । | । | ४ |  |
| ४                              | च   | ।  |   |   |    |    |   |   | । | ३ |  |
| ५                              | प   |    |   | । |    | ।  |   | । |   | ३ |  |
| ६                              | प   |    | । | । | ।  | ।  | । | । | । | ७ |  |
| ७                              | रा  | ।  |   |   |    |    |   |   |   | १ |  |
| ८                              | अ   | ।  |   |   | ।  |    |   |   |   | २ |  |
| ९                              | न   |    |   |   | ।  |    |   |   |   | २ |  |
| १०                             | द   | ।  |   | । | ।  |    |   |   | । | ४ |  |
| ११                             | ए   | ।  | । | । | ।  | ।  | । | । | । | ८ |  |
| १२                             | डा. |    |   | । | ।  | ।  | । | । |   | ४ |  |



शुक्राश्च क्रमात्स्थानमिदं विदुः॥६३॥ तनौ तुर्ये च बन्धिः  
स्याद्बुधश्चिक्ये द्वौ धने शराः ॥ बुद्धिमृत्यंकरिः फेषु षट् खे-  
शक्षतराशिषु ॥ ६४ ॥ रूपं स्त्रियां गुरुं त्यक्त्वा लग्नस्य क-

## टीका ।

एवं ग्रहाणां भावकरणस्थानान्युक्त्वा लग्नस्य भावकरणस्थानान्याह तनौ-  
वित्यादिसार्धश्लोकेन । तनौ १ तुर्ये ४ भावद्वये च बन्धिः स्यात् नाम त्रयः  
करणप्रदाः स्युः, बुधश्चिक्ये ३ भावे द्वौ, धने २ भावे शराः पंच, बुद्धिमृत्यंकरि-  
फेषु ५।८।९।१२ भावेषु षट्, खेशक्षतराशिषु १०।११।६। भावेषु रूपं एकः,  
स्त्रियां ७ भावे गुरुं त्यक्त्वा गुरुवर्जिताः सर्वे सप्त, करणप्रदाः । इदं उक्त-  
रूपं लग्नस्य करणं ज्ञेयमिति शेषः ॥ ६४ ॥ एवं करणनियतसंख्यामुक्त्वा  
तन्नामान्याह होरेत्यादिसार्धसप्तषष्टिपर्यन्तम् । लग्ने भावे होरासूर्येन्दवः त्रयः,  
धनभावे लग्नारौद्रिनसूर्यजाः लग्नभौमचंद्ररविशनयः पंच, सहजभावे गुरुद्वौ  
द्वौ, सुखभावे लग्नचंद्राराः त्रयः, सुतभावे लग्नसूर्यचंद्रमंगलबुधसौरयः  
लग्नसूर्यचंद्रभौमबुधशनयः षट्, तथा तथैव क्षते रिपुभावे शुक्रः एक एव,  
कामे ७ भावे गुरुं विना गुरुहिताः सर्वे सप्त, मृतौ ८ भावे भृगुबुधौ  
त्यक्त्वा शेषाः षट्, धर्मे भावे गुरुसितौ विना सर्वे षट्, कर्मणि भावे तथा  
आये भावे च शुक्र एक एव. व्यये भावे सूर्येन्दुवर्जिताः सूर्येन्दू हित्वा सर्वे

## भाषा ।

देते हैं. छठे घरमे चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न रेखा देते हैं. सातवें  
घरमें सूर्य रेखा देता है. आठवें घरमे सूर्य, बुध, रेखा देते हैं. नवें घरमे बुध रेखा  
देता है. दसवें घरमें सूर्य, मंगल, लग्न, बुध रेखा देते हैं. ग्यारहवें घरमे सूर्य, चंद्र,  
मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न रेखा देते हैं. आठवें घरमे मंगल, बुध, गुरु,  
शुक्र रेखा देते हैं. ऐसी शनिकी वारह भावोंकी रेखा कहीं इसका चक्रमी स्पष्ट  
लिखा है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ अब लग्नके वारह भावोंमें बिंदु देनेवालेकी संख्या क-  
हते हैं. लग्ने और चवथे घरमे तीन सख्या बिंदु देनेवाली हैं. तीसरे घरमे दो  
सख्या हैं. दूसरे घरमे पाच हैं. पाचवें, आठवें, नवें वारहवें घरमें छः सख्या है.

रणं त्विदम् ॥ होरासूर्येन्दवो लग्ने लग्नारोहिनसूर्यजाः ॥६५॥  
गुरुज्ञौ लग्नचंद्रारा लसूचंमंबुसौरयः ॥ क्षते शुक्रस्तथा  
चैकः कामे सर्वे गुरुं विना ॥६६॥ मृतौ भृगुबुधौ त्यक्त्वा  
धर्मे गुरुसितौ विना ॥ कर्मण्याये तथा शुक्रो व्यये सूर्ये-  
न्दुवर्जिताः ॥ ६७ ॥ लग्नस्येदं तु संप्रोक्तं करणं द्विजपुंग-  
व ॥ अथ स्थानं प्रवक्ष्यामि लग्नस्य द्विजपुंगव ॥ ६८ ॥

### टीका ।

करणप्रदाः षट्, हे द्विजपुंगव हे मैत्रेय ! इदं लग्नस्य करणं विद्वपरपर्यायं  
प्रोक्तं कथितं सूरिभिरिति शेषः ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ अथ लग्नभावस्था-  
नप्रदग्रहानाह अथेत्येकसप्ततिश्लोकपर्यन्तम् । अथ करणकथनानंतरं लग्नस्य  
संबंधि इति संबंधसामान्यविवक्षायां “पष्ठीशेषे” इति पष्ठी. स्थानं रेखासंज्ञं  
प्रवक्ष्यामि कथयामि हे द्विजपुंगव द्विजश्रेष्ठ मैत्रेय ! तत्रेति शेषः । तच्चृण्वि-  
त्यध्याहारश्च । लग्नभावे आर्किज्ञशुक्रगुर्वाराः शनिबुधशुक्रगुरुमौमाः स्थान-

### भाषा ।

दसवें, ग्यारहवें, छठे घरमें एककी संख्या है.

सातवें घरमें सात सात बिंदु देनेवाले हैं. ऐसी

लग्नके घारह भावोंकी बिंदु संख्या कही ॥६४॥

अब बिंदु देनेवालेके नाम कहते हैं. लग्न घरमें

लग्न, सूर्य, चंद्र, यह तीन बिंदु देते हैं. दूसरे घरमें

लग्न, मंगल, चंद्र, सूर्य, शनि, बिंदु देते हैं. ती-

सरे घरमें गुरु, बुध, बिंदु देते हैं. चौथे घरमें, लग्न,

चंद्र, मंगल बिंदु देते हैं. पांचवें घरमें लग्न, सूर्य,

चंद्र, मंगल, बुध, शनि बिंदु देते हैं. छठे घरमें

शुक्र एकही बिंदु देता है. सातवें घरमें सूर्य, चंद्र,

मंगल, बुध, शुक्र, शनि या सात बिंदु देते हैं. आठवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, गुरु,

शनि, लग्न यह छः बिंदु देते हैं. नवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, शनि, लग्न यह

| अयोदाहरणार्थ लग्नबिंदुकोष्टकम्. |     |     |     |    |     |    |    |    |    |    |
|---------------------------------|-----|-----|-----|----|-----|----|----|----|----|----|
|                                 | मा. | गु. | बु. | म. | शु. | ग. | घ. | श. | र. | त. |
| १                               | २   | ०   | ०   |    |     |    |    | ०  | ०  | ३  |
| २                               | ६   | ०   | ०   | ०  |     |    |    | ०  | ०  | ५  |
| ३                               | ३   |     |     |    | ०   | ०  |    |    |    | २  |
| ४                               | ५   | ०   | ०   |    |     |    |    | ०  | ०  | ३  |
| ५                               | ५   | ०   | ०   | ०  | ०   |    |    | ०  | ०  | ६  |
| ६                               | ५   |     |     |    | ०   |    |    |    |    | १  |
| ७                               | ५   | ०   | ०   | ०  | ०   |    | ०  | ०  | ०  | ५  |
| ८                               | ५   | ०   | ०   | ०  | ०   | ०  |    | ०  | ०  | ६  |
| ९                               | ३   | ०   | ०   | ०  | ०   |    |    | ०  | ०  | ६  |
| १०                              | ३   |     |     |    |     | ०  |    |    |    | ४  |
| ११                              | ०   |     |     |    |     | ०  |    |    |    | १  |
| १२                              | ६   |     |     |    |     | ०  | ०  | ०  | ०  | ६  |

आर्किज्ञशुक्रगुर्वाराः सौम्यदेवेज्यभार्गवाः ॥ हित्वा सौ-  
म्यगुरू शेषाः सूज्ञेज्यभृगुसूर्यजाः ॥ ६९ ॥ तथा जीवभृ-  
गू बुद्धौ सर्वे शुक्रं विनाक्षतेजीव एकस्तथा द्यूने मृतौ सौ-  
म्यभृगू तथा ॥ ७० ॥ धर्मे गुरुसितावेव खे सर्वे शुक्रमं-  
तरा ॥ सूर्यचन्द्रौ तथा रिप्फे स्थानं लग्नस्य कीर्तितम्  
॥ ७१ ॥ करणं बिंदुवत्प्रोक्तं स्थानं रेखा तथोच्यते ॥ मु-

टीका ।

दाः पंच, धनभावे सौम्यदेवेज्यभार्गवाः स्थानदास्त्रयः, सहजभावे सौम्यगु-  
रू हित्वा शेषाः लग्नरविचन्द्रभौमशुक्रमंदाः स्थानदाःषट्, सुखभावे सूज्ञे-  
ज्यभृगुसूर्यजाः सूशब्देन सूर्यः “नामैकदेशे नामग्रहणम्” इति न्यायात्  
स्पष्टमन्यत् । स्थानदाः पंच, सुतभावे जीवभृगू एतौ स्थानदौ द्वौ, क्षते ष-  
ड्भावे शुक्रं विना सर्वे लग्नरविचन्द्रभौमबुधगुरुशनयः स्थानदाः सप्त, द्यूने  
सप्तमभावे जीव एक एव स्थानदः मृतौ भावे सौम्यभृगू बुधशुक्रौ स्थानदौ  
द्वौ, धर्मे भावे गुरुसितौ द्वावेव खे विशेषानुक्तत्वात् करणविचारोपलब्ध्या  
च आये च एतद्भावद्वये च शुक्रमंतरा सर्वे शुक्रं विना लग्नादयः स्थानदाः  
सप्त, रिप्फे व्ययभावे सूर्यचन्द्रौ स्थानदौ द्वौ एवं लग्नस्य कीर्तितं मयेत्याक्षेपः  
॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ एवं रव्यादीनां सप्त ग्रहाणां लग्नस्य च कर-  
णस्थानान्युक्ता करणस्थानप्रदद्वयेन किं ज्ञेयं तदुच्यते करणमित्यर्थश्लोके-  
न । करणं बिंदुवत् बिंद्वाकारकं प्रोक्तं कथितं स्थानं तु रेखा इत्युच्यते । अयं  
भावः करणं शून्याकारं लिखेत् स्थानं रेखाकारं लिखेत् एवं च करणस्थान-  
पदाभ्यां बिन्दुरेखे अवगंतव्ये इति । इति करणस्थानार्थं स्पष्टीकृत्य अग्रे  
भाषा ।

बिन्दु देते हैं. दसवें घरमें और ग्यारहवें घरमें शुक्र एक बिन्दु देता है. बारहवें घर-  
में मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, लग्न यह छः बिन्दु देते हैं. हे मैत्रेय ऋषे ! यह  
लग्नके बारह भावोंकी बिन्दु संख्या और बिन्दु देनेवालेके नाम कहे हैं ॥ ६९ ॥  
॥ ६६ ॥ ६७ ॥ अब लग्नके बारह भावोंमें रेखा देनेवालेके नाम कहते हैं. रेखाकू

निदिग्वसुवेदादिगिष्वद्रयष्टनवेषवः ॥ ७२ ॥ रुद्रार्कावर्ग-  
णामेषाद्विषयेष्वष्टवायवः ॥ पंक्तिस्वरेषवः सूर्याद्वर्गणा प्रो-  
टीका ।

उपयुक्तवर्गणासंज्ञकलग्नग्रहध्रुवांकानाह मुनीत्यादिसार्धसप्ततिश्लोकपर्यन्तम्  
मेघे मुनयः सप्त ७ वर्गणा ध्रुवांकाः, वृषे दिक् दश १० वर्गणांकाः,  
मिथुने वसवः अष्टौ ८ वर्गणांकाः, कर्के वेदाश्चत्वारः वर्गणांकाः, सिंहे  
दिक् १० वर्गणांकाः, कन्यायां इषवः पंच ५ वर्गणांकाः, तुलायां अद्रयः  
सप्त ७ वर्गणांकाः, वृश्चिके अष्ट ८ वर्गणांकाः, धनुषि नव ९ वर्गणांकाः,  
मकरे इषवः पंच ५ वर्गणांकाः, कुंभे रुद्राः ११ वर्गणांकाः, मीनेऽर्कः १२  
वर्गणांकाः, इति मेघात् मेषक्रमात् राशिषु वर्गणांका ज्ञेया इति । अथ  
ग्रहेषु वर्गणांकाः । सूर्यात् सूर्यादिक्रमशः विषयाः ५, इषवः ५, अष्ट ८,  
वायवः ५, पंक्तिः १०, स्वराः ७, इषवः ५ रविचंद्रभौमबुधगुरुशुक्रशनीनां  
क्रमाद्वर्गणा ध्रुवांकाः बुधेः प्रोच्यते शब्द्यते ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

### भाषा ।

स्थान ऐसी संज्ञा है. हे मैत्रेय । अब लग्नमें  
रेखा देनेवालेके नाम सुनो. लग्न घरमें शनि,  
बुध, शुक्र, गुरु, मंगल यह पांच रेखा देने-  
वाले हैं. दूसरे घरमें बुध, गुरु, शुक्र, यह रेखा  
देनेवाले हैं. तीसरे घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल,  
शुक्र, शनि, लग्न रेखा देनेवाले हैं. चवथे घर-  
में सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र, शनि रेखा देने-  
वाले हैं. पांचवें घरमें गुरु, शुक्र दोनों रेखा दे-  
नेवाले हैं. छठे घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु,  
शनि, लग्न रेखा देनेवाले हैं. सातवें घरमें गुरु

| अथ उदाहरणार्थं लग्नरेखाचक्रम्. |     |    |   |   |    |    |   |   |   |    |
|--------------------------------|-----|----|---|---|----|----|---|---|---|----|
|                                | भा  | गु | च | म | बु | शु | श | ल | स | र  |
| १                              | ल.  |    |   |   |    |    |   |   |   | ३  |
| २                              | हि. |    |   |   |    |    |   |   |   | ४  |
| ३                              | वृ  |    |   |   |    |    |   |   |   | ५  |
| ४                              | म   |    |   |   |    |    |   |   |   | ६  |
| ५                              | प.  |    |   |   |    |    |   |   |   | ७  |
| ६                              | र   |    |   |   |    |    |   |   |   | ८  |
| ७                              | स   |    |   |   |    |    |   |   |   | ९  |
| ८                              | अ.  |    |   |   |    |    |   |   |   | १० |
| ९                              | ज.  |    |   |   |    |    |   |   |   | ११ |
| १०                             | द.  |    |   |   |    |    |   |   |   | १२ |
| ११                             | पु  |    |   |   |    |    |   |   |   | १३ |
| १२                             | रु  |    |   |   |    |    |   |   |   | १४ |

रेखा देनेवाला है. आठवेंमें बुध, शुक्र, रेखा देनेवाले हैं. नवें घरमें गुरु, शुक्र दोनों  
हैं. दसवें ग्यारहवें घरमें सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शनि, लग्न रेखा देनेवाले हैं.  
चारहवें घरमें सूर्य, चंद्र, यह दोनों हैं. ऐसी लग्नके चारह भागोंकी रेखा कही. यही  
स्पष्ट चक्र दिताया है ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ करण शब्दकरके बिंदुन-

च्यते बुधैः ॥७३॥ अष्ट रेखा लिखेदूर्ध्वास्तिर्यग्रेखास्त्रयो-  
दश ॥ तदा चतुरशीतिः स्युर्ग्रहयोगे पदानि तु ॥७४॥ इ-  
ति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागेऽष्टकवर्गप्रधानः  
प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

## टीका ।

अथ करणस्थानचक्रलेखनप्रकारं समुचित्य पदसंख्यां चाह अष्टेति। ऊर्ध्वा  
उर्ध्वगामिन्यो रेखाः अष्ट लिखेत् तथा तिर्यग्गामिन्यो रेखाः त्रयोदश १३  
लिखेत् एवं कृते पदानि कोष्टकानि ग्रहयोगे भावेषु ग्रहसंयोगविषये चतुरशी-  
ति संख्याकानि स्युर्भवन्ति अर्थात् भावेषु लग्नग्रहसमाहारयोगे तु षण्णवन्ति  
पदानि भवेयुः । अस्मिन्विषये रेखा अपि ऊर्ध्वगा नव ९ तिर्यचः चतुर्दश  
१४ बोध्या इति तात्पर्यम् ॥७४॥ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे श्री-  
मद्ध्यङ्गुल्ययकमलाकरकौमुदीनायकवेदशास्त्राधनवधविद्याविद्योतित-  
दिङ्मंडलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितसुबोधिनीटीकायां प्रथ-  
मोऽध्यायः ॥ १ ॥

## भाषा ।

रीखा आकार लिखना स्थानकरके रेखाकार लिखना. ऐसा बिन्दु रेखाका निर्णय  
स्पष्ट कहा अब आगे उपयोगमें आवे ऐसा सूर्यादि ग्रहोंके और लग्नांकावि बा-  
रह भावोंके ध्रुवांक कहते हैं. मेपके ७ ध्रुवांक, वृषभके १० दस, मिथुनके ८  
आठ, कर्कके ४ चार, सिंहके १० दस, कन्याके ५ पांच, तुलाके ७ सात, वृश्चि-  
कके ८ आठ, धनके ९ नव, मकरके ५ पांच, कुंभके ग्यारा, मीनके १२ वारा,  
ध्रुवांक जानना. अब सूर्यादिकोंके ध्रुवांक कहते हैं. सूर्यके ध्रुवांक ५, चंद्रके ५,  
मंगलके ८, बुधके ५, गुरुके १०, शुक्रके ७, शनिके ५, यह ध्रुवांक कहै  
॥ ७२ ॥ ७३ ॥ अब अष्टक वर्ग निकालनेके वास्ते चक्र करनेका विधि  
बताते हैं. खड़ी रेखा ९ नव लिखना, आड़ी रेखा १४ निकालना, तो छद्म ९६  
कोष्टक होते हैं. उसमें सूर्यादिक ग्रह लिखना. मेपादि द्वादश भाव लिखना.  
बीचके कोष्टकमें विंदुरेखा लिखना ॥ ७४ ॥ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोरा-  
शास्त्रे श्रीमद्ध्यङ्गुल्ययजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितायां बालबोधिनीभाषाटी-  
कायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

लग्नं सुखात् सुखं कामात् कामं खात् खं च लग्नतः॥त्र्यंश-

टीका ।

श्रीमत्पाराशरऋषिः शिष्यायोपदिदेश हि ॥ भावदिक्षड्वलान्यस्मिन्न-  
ध्याये तु द्वितीयेके ॥ १ ॥ अथास्मिन् द्वितीयेऽध्याये भगवान् पराशरः स-  
कलजातकफलविचारोपयोगित्वाद्भावदृष्टिफलसाधनानि मैत्रेयं प्रति स्फुट-  
याति तत्रादौ ससंधिभावसाधनमाह लग्नमित्यादिश्लोकद्वयेन । अत्रादौ ता-  
त्कालिकं सूर्यं स्पष्टं विधाय तस्माल्लग्नमानीय पूर्वार्धोक्तं दशमभावं च कृत्वा  
उभयोः षड्राशिमेलनेन सप्तमचतुर्थभावौ च निर्माय ततः लग्नं तनुभावः,  
सुखात् सुखभावात् संशोध्य अवशिष्टस्य त्र्यंशं त्रिभिरंशं संपाद्य लग्ने युं-  
ज्यात् स द्वितीयभावो भवति, तमेव त्र्यंशं द्विगुणितं द्वाभ्यां गुणयित्वा  
लग्ने युंज्यात् स सहजभावो भवति, एवमग्रेऽपि सुखं चतुर्थभावं, कामात्  
सप्तमभावात् संशोध्य अवशिष्टस्य त्र्यंशं सुखे संयोज्य सुतभावो भवति,  
तमेव त्र्यंशं त्रिगुणीकृत्य सुखभावे संयोज्य रिपुभावो भवति, एवमेव कामं  
सप्तमभावं खादशमभावात् संशोध्य, अवशिष्टत्र्यंशं सप्तमभावे संयोज्य मृ-  
त्युभावो भवति, तं त्र्यंशं द्विगुणितं सप्तमभावे संयोज्य भाग्यभावो भवति,  
एवं खं दशमभावं च लग्नतः तनुभावात् संशोध्य प्राग्वदेव शिष्टत्र्यंशं दश-  
मभावे संयोज्यायभावो भवति, तमेव द्विगुणीकृत्य दशमभावसंयोजिते व्य-  
यभाव इति द्वादशभावा भवंति । अथ संधिनाह । द्वयोः प्राक्परयोर्भावयोः  
पूर्वापरयुतेः पूर्वभावापरभावयोगः तस्य यत् अर्धं समांशः संधिर्भवति एव-  
मुक्तं भवति तनुधनभावयोगार्धसंधिः तनुभावस्यांत्यसंधिः धनभावस्य च  
आदिसंधिर्भवति एवं क्रमशः भावसंधयो ज्ञातव्याः । श्रीपृथ्वीपतिविक्रमा-

भाषा ।

अब द्वितीयाऽध्यायमें बलाबलका लक्षण स्पष्ट बताते हैं. उसमें पहिले चारह  
भावोंका साधन कहते हैं. जन्मकालीन इष्ट घटी पलके समयका स्पष्ट सूर्य करके  
वे सूर्यसे स्पष्ट लग्न और दशम भाव पूर्वार्धमें कहा है उस रीतिसे करके लग्नमें  
छः राशि मिलायके मातवां भाव दशममें छः राशि मिलानेसे चतुर्थ भाव  
करना, पीछे लग्नकू चौथे भावमें कम करके शेष जो रहा उसका तृतीयांश लेके


मेकद्विगुणितं युज्याल्लभादिषु क्रमात् ॥ १ ॥ पूर्वापरयुते-  
रर्थं संधिस्स्याद्भावयोर्द्वयोः ॥ एवं द्वादश भावास्तु भवन्ति

टीका ।

ब्दयुगर्विद्वंकद्विजप्रेयसि शाके बाणरिपूरुविक्रममुनिश्रीसूर्यनारायणे । मा-  
संत्ये गुरुवासरे शुभमहाविष्णोस्तिथौ श्रीधरो जातो लोकहितैककारणतया  
कीलालनाथे सुभे ॥ १ ॥ ममास्मिन्सुमहाग्रंथं उदाहरणकारणात् ॥ प्रक्षिप्तो  
पत्रिका सम्यक्परिष्कृत्य स्वचित्ततः ॥ २ ॥ संवत् १९०० शाके १७६५  
फाल्गुने कृष्णे १२ द्वादश्यां श्रौ २३।४३ पूर्वाषाढानक्षत्रे १३।५० सिद्धि-  
योगे २३।८ तैतिलकरणे श्रीसूर्योदयादिष्टघटी ८।१६ अस्माद्यंथादहर्ग-  
णसाधनमाह । ग्रंथगताब्दाः ३२३ चक्रं २९ शेषांकाः ४ अधिमासः ३  
मध्यमाहर्गणः १८६० अहर्गणः १८३२ पलमाः ६।४ रेखापश्चिमे ०।१ च-  
खंडाः ६०।४८।२० अयनांशाः २२।१।५० ॥ अथाग्रे उदाहरणानि प्रार-  
भ्यन्ते ॥ अत्र भावो दाहरणम् । लग्नं ०।६।३।४२ सुखभावः ३।१।१९।८ अ-  
नयोर्न्तरं २।२५।१५।२६ अस्य त्र्यंशः ०।२८।२५।८ अयं लग्ने योजितः  
जातो धनभावः १।४।२८।५० प्राक्तनद्वयंशः ०।२८।२५।८ अयं द्विगुणितः

भापा ।

लग्नमें जोडे तो द्वितीय भाव भया. वोही त्र्यंशकूं द्विगुणित करके लग्नमें मिलाये

| सूर्यादिमध्यमग्रहाः स्युः ।  | अथ जन्माचगजम् ।   | सूर्यादिग्रहाः स्पष्टाः स्युः ।  |
|--|---|--|
| <p>स. च. उ. रा. म. बु. द. शु. श. रा. के.</p> <p>१० ८ ० ७ ० ७ १० २ ९</p> <p>२ १२ २१ २८ १६ १० २१ २२ ११</p> <p>३२ ५१ ४७ २२ ४१ ५८ ४७ ४९ १८</p> <p>११ १५ ३० ३ ३९ ५५ ४१ ५२ ४४</p> <p>११ ०० ६ ३ ३१ ५ ५ ३० २</p> <p>८ ३५ ४१ ११ २६ ७४ ० ० ०</p> |  | <p>स. च. म. बु. शु. य. रा. रा. के.</p> <p>१० ८ ११ ९ १० ११ ९ ७ १</p> <p>४ २१ २७ ४० १५ ७ ८ २८ २८</p> <p>१४ ५१ ४ ३४ ३२ १४ १७ २१ २१</p> <p>२० ८ ४ ९ ४२ ४४ ३० ३१ ३१</p> <p>६० ५५ ४७ ३८ १३ ७७ ६ ३ ३</p> <p>३१ ३४ १० ५३ ४४ ३५ ४ ११ ११</p> |

तो तीसरा भाव भया. ऐसा आगेभी करना जैसा लग्नकूं चौथे भावमें कमी  
करके शेषका तृतीयांश निकालके दो भाव बनाये वैसा चौथा सातवेंमें सातवां  
दसमें दसवां लग्नमें कमी करके शेषका अंश निकालके पंचम आदि करके भाव

च ससंधयः ॥ २ ॥ दृश्याद्विशोध्य द्रष्टारं षड्राशिभ्योऽधि-  
का भवेत् ॥ दिग्भ्यो विशोध्य द्वाभ्यां तू भागीकृत्य च  
टीका ।

१२६।५०।१६ लग्ने योजितः २।२६।५३।५८ जातोऽयं सहजभावः । एव  
सुखसप्तम दशमभावेषु ज्ञेयमिति ॥ अथ संध्युदाहरणम् । लग्नं ०।६।३।४२  
धनभावः १।४।२८।५० अनयोर्योगः १।१०।३२।२२ अस्यार्धं ०।२०।१६।१६  
तनुधनयोः संधिः एवं रीत्याग्रेऽपि क्रमशः संधयोः ज्ञेयाः एवं च द्वादश

| तन्वादयो द्वादशभावाः ससन्धयस्त्युः । |    |    |    |    |    |    |    |    |    |    |    |
|--------------------------------------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| ल                                    | स  | २  | ३  | ४  | ५  | ६  | ७  | ८  | ९  | १० | ११ |
| ०                                    | ०  | १  | १  | २  | २  | ३  | ३  | ४  | ४  | ५  | ५  |
| ६                                    | २० | ४  | १८ | २  | १७ | १  | १७ | २  | १८ | ४  | २० |
| ३                                    | १६ | २८ | ४१ | ७३ | ६  | १५ | ६  | ७३ | ४१ | २८ | १६ |
| ४२                                   | १६ | ५० | २५ | ७५ | ३३ | ८  | ३३ | ७५ | २५ | ५० | १६ |
| ७                                    | ८  | ९  | १० | ११ | १२ | १३ | १४ | १५ | १६ | १७ | १८ |
| ६                                    | ६  | ७  | ७  | ८  | ८  | ९  | ९  | १० | १० | ११ | ११ |
| ६                                    | २० | ४  | १८ | २  | १७ | १  | १७ | २  | १८ | ४  | २० |
| ३                                    | १६ | २८ | ४१ | ७३ | ६  | १५ | ६  | ७३ | ४१ | २८ | १६ |
| ४२                                   | १६ | ५० | २५ | ७५ | ३३ | ८  | ३३ | ७५ | २५ | ५० | १६ |

भावाः तन्वादयः संधयो भवन्ति ॥ १ ॥ २ ॥ एवं भावसाधनमुक्त्वा पद्व-  
लसाधनं वक्तुमारभते । तानि तु दृग्वलं ६ स्थानवलं १ दिग्बलं २ काल-  
बलं ३ निसर्गवलं ४ चेष्टावलं ५ इति बलानि पद्विधानि, तत्र स्थानादि-  
पंचविधस्यैक्यतया दृग्वलस्यैव ऋणधनतया मुख्यत्वादादौ दृग्वलसाधनं  
वक्तुमाह ग्रहदृष्टिसाधनरीतिमाह दृश्यादिति सार्धत्रिभिः । दृश्यात् द्रष्टुं  
योग्यः तस्माद् ग्रहाद्भावाद्वा द्रष्टारं पश्यन्तं ग्रहं विशोध्य ऊनं कृत्वा शेषश्चेत्  
षड्राशिभ्यः राशिरथानापन्नपटकेभ्यः अधिकः भवेत् तर्हि दिग्भ्यः दश रा-

भावा ।

करना अब सधि करनेका विधि बताते हैं. पहिले घरकं भावाक और आगेकं  
भावके अक इन दोनों भावोंक एकट्टे मिलायके पीछे उस अकोंका अर्ध करना  
सो सधि भए ऐसे बारह सधि करना उसको करनेका उदाहरण संस्कृत टीकामें  
बताया है और स्पष्ट चक्र यहा दिखाया है ॥ १ ॥ २ ॥ अब दृष्टिबल साधन



टीका ।

शिष्यो विशोध्य शेषं भागीकृत्य अवशिष्टराशिभागान्कृत्वा भागेषु संयोज्य द्वाभ्यां हराभ्यां यद्भागादि फलं तदेव दृष्टव्यः भवन्तीति शेषः १. तथा शराधिके दृष्टनदृश्यावशेषे राश्यंके पंचाधिके सति विना राशि राश्यंकांस्त्यक्त्वा द्विघ्नाः द्विगुणिताश्च भागाः अंशा एव दृष्टव्यो भवन्ति तथा वेदाधिके वेदेभ्यश्चतुर्भ्यः अधिके दृष्टनदृश्यावशेषे राश्यंके सति भूतात्पञ्चभ्यः त्यजेत् विशोधयेत् शेषस्य भागा एव दृष्टव्यो भवन्ति तथा त्रिभाधिके त्रीणि च तानि भानि राशयश्च त्रिभानि तेभ्योऽधिके प्राग्वदवशिष्टराश्यंके सन्ति अर्णवतः चतुर्भ्यः विशोध्य द्वाभ्यां यलब्धं तद्विशिष्टं त्रिंशद्भिः युतं भागस्थानमित्यर्थः । तद्वृष्टिर्भवेत् तथा प्राग्वदवशिष्टे कराधिके राश्यंके सति राशि विना राश्यंकं परित्यज्य ये अवशिष्टा भागाः ते तिथियुताः कार्या इति तथा प्राग्वद्वृष्टिर्भवेत् तथा रूपाधिके प्राग्वदवशिष्टराश्यंके सति विना राशि राश्यंकं विहाय भागाः द्वाभ्यां विभाजिताः दृष्टिस्थान् । अत्र क्रमेणोदाहरणानि तत्रादौ षडधिकोदाहरणम् । द्रष्टा चंद्रः ३।५।२।१ दृश्यः सूर्यः ९।७।५।४३ अस्माद्विशोध्य शेषः ६।२।३।४२ अयं दिग्भ्यः विशोध्य अंकाः ३।२।७।५६।१८ एतद्वृष्टिपरिस्थराश्यंकभागाः ९० मूलभागाः २७ मिलित्वा जाताः ११।७।५६।१८ द्वाभ्यां भाजिताः ५८।५८।९ इयं दृष्टिरिति । अथावशिष्टशराधिकराश्यंके दृष्ट्युदाहरणम् । द्रष्टा चंद्रः ३।५।२।१ दृश्यः सूर्यः ८।७।५।४३ अस्माद्धीनः शेषं ५।२।३।४२ राश्यंकं विहाय शेषमंशादि २।३।४२ द्विगुणीकृत्य ४।७।२४ इयं दृष्टिरिति । अथावशिष्टवेदाधिकराश्यंके दृष्ट्युदाहरणम् । द्रष्टा चंद्रः ३।५।२।१ दृश्यः सूर्यः ७।७।५।४३ अस्माद्धीनः शेषांकाः ४।२।३।४२ भूताः ५ शोधिताः शेषाः ०।२।७।५६।१८ इयं दृष्टिरिति । अथ त्रिभाधिकशेषराश्यंके दृष्ट्युदाहरणम् । द्रष्टा चंद्रः ३।५।२।२१ दृश्यः सूर्यः ६।७।५।४३ अस्माद्धीनः शेषं ३।२।३।४२ एतत् अर्णवेभ्यः विशोध्यावशिष्टं २।२।७।५६।१९ द्वाभ्यां विभज्य लब्धफलं १।१३।५८।९ एतद्विशिष्टं ४३।५८।९ जाता दृष्टिः । अथ करा २ धिकावशिष्टराश्यंकोदाहरणम् । द्रष्टा चंद्रः ३।५।२।१ दृश्यः सूर्यः ५।७।५।४२ अस्माद्धीनः शेषं २।२।३।४२ अत्रत्यराश्यंकं परित्यज्य अवशिष्टाः २।३।४२ इमे तिथि १५

दृष्टयः ॥ ३ ॥ शराधिके विना राशिं भागाद्विघ्नाश्च दृष्ट-  
यः ॥ वेदाधिके त्यजेद्भुताद्वागादृष्टिस्त्रिभाधिके ॥ ४ ॥ वि-  
शोधयर्णवतो द्वाभ्यांलब्धत्रिंशद्युतं भवेत्।कराधिके विना-  
राशिभागास्तिथियुतास्तथा ॥ ५ ॥ रूपाधिके विना राशिं

टीका ।

युताः १७।३।४२ इयं दृष्टिरिति । अथ रूपाधिकावशेषराश्यंकोदाहरणम् ।  
द्रष्टा चंद्रः ८।२५।३७।१६ दृश्यः सूर्यः १०।४।१४।२२ अस्माद्धीनः शेष  
१।८।३।७।६ अत्रत्यराशिं त्यक्त्वा शेषमागाः ८।३७।६ द्वाभ्यां भक्ताः फलं  
४।१८।३३ इयं दृष्टिरिति ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ एवं सर्वग्रहसाधारणदृष्ट्यान्प-  
भाषा ।

करनेकी रीति बताते हैं, जिस ग्रहके ऊपर जिस ग्रहका या भावकी दृष्टि है उस-  
मेंसे देखनेवालेको कमी करके शेष जो छः राशिसे जादा होवे तो दस राशिमें  
गिराये उसके अवशेषके राशिके अंश करके उसका दोसे भाग लेके जो फल  
आये ओही दृष्टिवल होता है, और दृश्य द्रष्टाका शोधन करके जो शेष अंक  
आवे वे पांचसे जादा होवे तो राश्यंक छोड़के  
अंशकूं द्विगुणित करना ओही दृष्टियां होती  
हैं, शोधन करके शेष राश्यादिक अंक चारसे  
जादा होवे तो पांचमें शोधन करके जो अंश  
आवे ओही दृष्टि होती है, और शोधन करके  
शेष राश्यादिक अंक तीनसे जादा होवे तो  
चारमें शोधन करके दोसे भाग लेके जो ल-  
ब्धांश अंक है उसमें तीस मिलाना, वह दृष्टि  
होती है, ऐसा शेषांक जो दोसे जादा होवे  
तो वे राशिकूं छोड़के अंश जो है उसमें पं-

| अथ ग्रहदृष्टिचक्रमाह. |     |    |    |     |     |    |    |    |    |
|-----------------------|-----|----|----|-----|-----|----|----|----|----|
|                       | रा. | च. | म. | बु. | गु. | श. | श. | यो |    |
| रा.                   | ००  | ०० | ०० | ००  | ००  | ०० | ०० | ०० | ०० |
| च.                    | २५  | ०० | ४५ | ००  | १०  | ०० | ०० | ०० | ०० |
| म.                    | ००  | ३५ | ०० | १५  | ००  | ०० | ३५ | ०० | ०० |
| बु.                   | ००  | ०० | ३५ | ००  | ००  | ३५ | ०० | ०० | ०० |
| गु.                   | ००  | ०० | ०० | ००  | ००  | ०० | ०० | ०० | ०० |
| श.                    | ००  | ५५ | ०० | ००  | ००  | ०० | ०० | ०० | ०० |
| श.                    | ००  | ०० | ५५ | ००  | ००  | ०० | ०० | ०० | ०० |
| यो                    | ००  | ०० | ०० | ५५  | ००  | ०० | ०० | ०० | ०० |
| शम                    | ३५  | ५५ | ३५ | ३५  | ३५  | ३५ | ३५ | ३५ | ३५ |
| पाप                   | ३५  | ५५ | ३५ | ३५  | ३५  | ३५ | ३५ | ३५ | ३५ |

घरा मिलाये ओही दृष्टि होती है, शेषांक एकसे जादा होवे तो राशिकूं छोड़के  
अंशको दोसे भाग लेना जो लब्ध आवे ओही दृष्टि जानना, इसका उदाहरण  
संस्कृत टीकामें दिखाया है, इसके चक्र स्पष्ट यहां दिवाया है ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

भागा द्वाभ्यांविभाजिताः॥ त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्रे  
क्रमादथ ॥ ६॥ शरवेदाः खरामाश्च तिथयो योजिताः क्र-  
टीका ।

नमुत्क्रा अथानंतरं शनिगुरुभौमानां द्रष्टृणां स्थानविशेषेण संस्कारविशेष-  
माह त्रिदश इत्यादिसार्द्धश्लोकेन । शनिदेवेज्यभौमानां शनिगुरुभौमानां  
द्रष्टृणां क्रमात्रिदशे ३।१० स्थानद्वये त्रिकोणे ५।९ स्थानद्वये चतुरस्रे ४।८  
स्थानद्वये च तत्तत्स्थानस्थग्रहे च दृश्ये सति आदौ पूर्वं उक्तसंस्कारेण दृ-  
श्याद्विशोध्येत्यादिना संस्कृतेति आदौ शब्दार्थः या दृष्टिस्तपन्ना तत्र क्र-  
मात् क्रमशः शरवेदाः ४५ शनिदृष्ट्यां खरामाः ३० गुरुदृष्ट्यां तिथयः १५  
भौमदृष्ट्यां च योजिताः संयुक्ताः कार्याः । अनेन विशेषसंस्कारेण शनि-  
गुरुभौमानां प्रत्येकं उक्तस्थानद्वये दृष्टिः स्फुटा स्पष्टा भवेदिति । अत्रोदा-  
हरणम् । तत्र शनेः द्रष्टा शनिः ९।८।१७ दृश्यो भृगुः ११।७।१४ अयं दृश्यः  
द्रष्टुः शनेः तृतीयस्थानापन्नः अस्मादृश्याद्द्रष्टारं विशोध्य शेषांकाः १।२८।  
५७ रूपाधिके विना राशिमिति राश्यंकं त्यक्त्वा शेषांकाः २८।५८ एते भा-  
गाः द्वाभ्यां विभाजिताः फलं १४।२९ अयं सर्वसाधारणसंस्कारो जातः  
तस्य विशेषसंस्कारस्तु त्रिदशे शरवेदा इति ४५ इमे योजिताः जाता तृती-  
यस्थानीयशनिस्पष्टदृष्टिः ५९।२९ एवं रीत्यादशमस्थानेपि ज्ञेयम् । एवमेव  
प्रकारेण गुरोः ५।९ स्थानयोः पूर्वोक्तसर्वसाधारणदृष्टिसंस्कारं विधाय विशे-  
षस्तु खरामाः ३० योज्याः इति त्रिकोणस्थानयोर्युग्मदृष्टिः स्पष्टा स्यात् एव-  
मेव भौमस्य ४।८ स्थानीयदृष्टिविचारे सर्वसाधारणसंस्कारांते विशेषसंस्कारः

भाषा ।

ऐसा साधारण सर्व ग्रहोंका दृष्टिबल कहके शनि, गुरु, मंगलका विशेष दृष्टिबल  
कहते हैं. आगे जो दृष्टिबल लानेका प्रकार बताया है, ओही रीतिसे इन तीनों  
ग्रहोंका दृष्टिबल लाना. परंतु शनि जो तीसरे, १० वें घरमें देखता होवे तो प-  
हिले लाये हुवे दृष्टिफलमें पैतालीस और मिलाना. ओदृष्टि होती है. गुरुकी जो  
५।९ घरमें दृष्टि होवे तो पहिले लाये हुवे दृष्टिफलमें तीस मिलाना. ओ दृष्टि  
स्पष्ट जानना. मंगल जो ४ थे ८ वें घरमें देखता हो तो पहिले लाये हुवे दृष्टिफ-

मात॥ शनिदेवेज्यभौमानामादौदृष्टिः स्फुटा भवेत् ॥७॥

नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके चक्राद्विशोधयेत् ॥ भार्गीकृत्य

टीका ।

तिथयः १५ योजिताः कार्या इति स्पष्टभौमदृष्टिश्चतुरस्रस्थानयोः स्यात् ॥६॥ ॥७॥ एवं प्रथमं दृग्बलमुक्त्वा क्रमप्राप्तं पड्वलांतर्गतं द्वितीयं पंचविधस्था-  
नबलं उच्चबलं १ सप्तवर्गबलं २ युग्मायुग्मबलं ३ केंद्रादिबलं ४ द्रेष्काणबलं ५  
चेति तत्रादौ उच्चबलमाह नीचेति । ग्रहं सूर्याद्यन्यतमं नीचोनं स्वनीचेन ऊनं  
कृत्वा भार्धाधिके उर्वरिते पद्माश्रयधिके सति चक्रात् द्वादशराशिभ्यः विशो-  
धयेत् । अनंतरं नीचोनपडधिकं चक्रतः शुद्धं ग्रहं भार्गीकृत्य राशिभागान्  
कृत्वांशेषु नियोज्य तन्निर्भक्तं भाजितं लब्धफलं उच्चबलं एतत् संज्ञकं  
बलं भवेत् स्यात् । अत्रोदाहरणम् । रवि १०।४।१४ नीचं ६।१० ऊनं ३।  
२४।१४ इदं पद्माश्रयूनं भार्गीकृतं ११४।१४ त्रिभिर्भक्तं ३८।४ इदं सूर्यस्यो-

भाषा ।

| अधोबलचक्रम्.              |        |        |        |        |        |        |        | अथ सप्तवर्ग बलचक्रमिदम्. |        |        |        |        |        |        |        |
|---------------------------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------------------------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|
| सु.                       | च.     | म.     | व.     | गु.    | श.     | जा.    | या.    | सु.                      | ग.     | उमि.   | मि.    | रा.    | श.     | उश.    |        |
| ०                         | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०                        | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      |
| १८                        | १७     | ४०     | २१     | १३     | ३३     | ३३     | २८     | ४५                       | ३०     | २०     | १५     | १०     | ४      | २      | १      |
| ४                         | २९     | १९     | २९     | ३२     | २४     | ५४     | २      | ०                        | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      | ०      |
| अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्. |        |        |        |        |        |        |        | अथ नैमिगिकमैत्रीचक्रम्.  |        |        |        |        |        |        |        |
| सु.                       | च.     | म.     | व.     | गु.    | श.     | जा.    | या.    | सु.                      | च.     | म.     | व.     | गु.    | श.     | जा.    | या.    |
| पं.म.                     | सु.पं. | सु.चं. | सु.मं. | सु.वं. | सु.गं. | सु.शं. | सु.या. | पं.म.                    | सु.पं. | सु.चं. | सु.मं. | सु.वं. | सु.गं. | सु.शं. | सु.या. |
| पं.श.                     | सु.गं. | सु.मं. | सु.वं. | सु.गं. | सु.शं. | सु.या. | सु.पं. | पं.श.                    | सु.गं. | सु.मं. | सु.वं. | सु.गं. | सु.शं. | सु.या. | सु.पं. |
| व.                        | पं.श.  | सु.गं. | सु.मं. | सु.वं. | सु.गं. | सु.शं. | सु.या. | व.                       | पं.श.  | सु.गं. | सु.मं. | सु.वं. | सु.गं. | सु.शं. | सु.या. |
| गु.                       | ०      | गं.    | शं.    | रा.    | मं.    | व.     | गं.    | गु.                      | ०      | गं.    | शं.    | रा.    | मं.    | व.     | गं.    |

लमें पंधरा मिलाना. ओ दृष्टि स्पष्ट जानना. उदाहरण संस्कृत टीकामें स्पष्ट है  
॥ ६ ॥ ७ ॥ अब उच्चबल कहते हैं. जिस ग्रहका उच्चबल करना होवे उस ग्रह-  
के राशि अंशमें अपनी नीचकी राशि और अंश कर्मी करके जो राशि गरी दो  
राशि जो कभी छः अंशमें जादा होवे तो बाग्रहमें शुद्ध करके राशिके अंश करना.  
उसमें नीचेके अंश मिलानाके नानिमें भाग नित्य जो लब्ध आवे उनकें उच्चबल

त्रिभिर्भक्तं फलमुच्चबलं भवेत् ॥ ८ ॥ मूलत्रिकोणस्वर्भाधिमित्र-  
टीका ।

चबलोदाहरणमिति सर्वग्रहेषु ज्ञेयमिति ॥ ८ ॥ अथ स्थानबलांतर्गतं द्वि-  
तीयसप्तवर्गबलमाह मूलेत्यादिसार्धश्लोकद्व्यावितिपदाधिकेन । अत्र यस्य  
कस्यापि ख्याद्यन्यतमस्य सप्तवर्गजं बलं ग्राह्यमस्ति तद्ग्रहसंबन्धि वर्तमान-  
ग्रहहोराद्रेष्काणसप्तमांशद्वादशांशत्रिंशांशाधिपतीनां मूलत्रिकोणस्वर्क्षाधि-  
मित्रमित्रसमार्थधिशत्रुगृहस्थितानां क्रमशः भूताब्धि ४५ खराम ३० नख  
२० तिथि १५ दिक् १० युग ४ द्वि २ परिमितं बलं ग्राह्यं अत्रेत्यं तत्त्वं ख्या-  
द्यन्यतमस्य ग्रहाद्यन्यतमसप्तवर्गपतिः स्वमूलत्रिकोणे एव विद्यते चेत्तद्वलं ४५  
ग्राह्यं तत्र न चेत्स्वर्क्षस्थे सति तद्वलं ३० ग्राह्यम् तत्रापि न चेदधिमित्रस्थान  
स्थिते सति तद्वलं २० ग्राह्यम् तत्रापि न चेन्मित्रस्थाने स्थिते सति तद्वलं  
१५ ग्राह्यम् तत्रापि न चेत्समराशिस्थिते सति तद्वलं १० ग्राह्यम् तत्रापि न  
चेदरिस्थानस्थिते तद्वलम् ४ तत्राप्यसति अधिशत्रुस्थानजं बलं २ ग्राह्यम् ।  
मूलत्रिकोणादिपूर्वपूर्वाधिके भावे उत्तरोत्तरक्रमशः उपलब्धगौणस्य ग्राह्य-  
त्वं ज्ञेयम् । मूलत्रिकोणादधिकमुच्चस्थानं तत्रस्थे गृहादिवर्गपतौ उच्च-  
स्थानजमेव ग्राह्यम् । तदभावे मूलत्रिकोणादिजमिति पूर्वार्धे सप्तवर्ग-  
बलविचारप्रकरणे, उच्चस्थबलग्राह्यत्वप्रामाण्यादिति, । ननु कस्यापि ग्रह-  
होराद्यधिपस्य मूलत्रिकोणस्वक्षेत्रसंबन्धद्वये उच्चमूलत्रिकोणस्वक्षेत्रसंबन्धत्रये  
च कथमिति चेत्पूर्वार्धोक्तिप्रामाण्याद्वचवस्थोच्यते । तत्र रवेः सिंहरा-  
शिर्वर्तमानस्य मूलत्रिकोणस्वक्षेत्रस्थानद्वयसंबन्धः अत्र २० अंशपर्यन्तं  
वर्तमानस्य मूलत्रिकोणोक्तं ४५ बलं ततस्त्रिंशदंशपर्यन्तं स्वक्षेत्रजं ३०  
बलं ग्राह्यम् । एवं वृषराशिर्वर्तमानस्य चंद्रस्य उच्चमूलत्रिकोणस्थानद्वय-  
संबन्धः अत्रतु ३ अंशपर्यन्तमुक्तं ११०१० ततस्त्रिंशत्पर्यन्तं मूलत्रिकोणजं  
४५ बलं ग्राह्यम् । एवं मेषराशिर्वर्तमानस्यभौमस्य मूलत्रिकोणस्वक्षेत्रसंब-  
न्धद्वयं अत्र १२ अंशपर्यन्तं मूलत्रिकोणोक्तं ४५ ततश्च स्वक्षेत्रोक्तं ३०

भाषा ।

कहना ॥ ८ ॥ अब सप्तवर्ग बल कहते हैं, जिस सूर्यादिक ग्रहोंका सप्तवर्गबल

मित्रसमारिषु॥अधिशत्रुगृहे चापि स्थितानां क्रमशो बलम् ९  
टीका ।

एवं कन्याराशिवर्तमानस्य बुधस्य उच्चमूलत्रिकोणस्वक्षेत्रस्थानत्रयसंबंधः  
अत्र तु १५ अंशावधि उच्चोक्तं १।०।० ततो विंशत्यंशपर्यन्तं त्रिकोणोक्तं ४५  
ततस्त्रिंशदशपर्यन्तं स्वक्षेत्रोक्तं ३० एवमेव धनूराशिस्थगुरोर्मूलत्रिकोणस्व-  
क्षेत्रसंबंधः अत्र १० अंशपर्यंतमूलत्रिकोणोक्तं ४५ ततः स्वक्षेत्रोक्तं ३० बलं  
ग्राह्यम् । एवं तुलाराशिस्थशुक्रस्यमूलत्रिकोणस्वक्षेत्रद्वयसंबंधः अत्र १५  
अंशपर्यंतं मूलत्रिकोणोक्तं ४५ ततश्च स्वक्षेत्रोक्तं ३० एवं कुंभराशिवर्तमान-  
स्य शने मूलत्रिकोणक्षेत्रद्वयसंबंधः अत्र २० अंशपर्यन्तं मूलत्रिकोणोक्तं ४५  
ततश्च स्वक्षेत्रोक्तं ३० बलं ग्राह्यम् । अस्योदाहरणम् । अथात्रक्रमान्मूलत्रि-  
कोणस्वक्षाधिमित्रमित्रसमार्यधिशत्रुस्थानोक्तानि सप्तवर्गबलोदाहरणानि ।  
रविः १०।४।१४।२२ कुंभस्थः तत्पतिः शनिः १०।८।१७।३० स्वमूलत्रिको-  
णस्थः अतस्तद्वलं स्वमूलत्रिकोणस्थोक्तं ४५ इतिविंशत्यंशपर्यन्तम् । ततश्च  
स्वक्षेत्रस्थोक्तं ३० ग्राह्यमिति क्षेत्रबलविचारे मूलत्रिकोणस्थोदाहरणम् । अत्र  
तु कल्पितोदाहरणम् । चंद्र ३।१०।५।२ अयं चं ० होरायां व ० होरापति-  
श्चंद्रः स्वक्षेत्रस्थः अतः होराबलविचारे स्वक्षेत्रस्थोक्तबलं ३० ग्राह्यमिति स्व-  
क्षेत्रोदाहरणम् । रविः १०।४।१४।० अयं वृश्चिकनवांशे वर्तमानः तत्पति-  
र्भौमो मीनराशिस्थः तत्पतिर्गुरुर्भौमस्याधिमित्रः अतः अधिमित्रोक्तं बलं  
२० नवमांशविचारेणाऽत्रग्राह्यमित्यधिमित्रबलोदाहरणम् । रविः १०।४।१४  
२२ अयं मीनद्वादशांशे वर्तमानः तत्पतिर्गुरुर्मित्रक्षेत्रे वर्तमानः अतोऽत्र  
मित्रोक्तं बलं १५ ग्राह्यमितिमित्रबलम् । चंद्रः ८।२५।२९।९ अयं द्वेष्काण-  
विशेषसिंहद्वेष्काणे वर्तमानः तत्पतिः सूर्यः समक्षेत्रस्थः अतोत्र समोक्तं १०  
बलं ग्राह्यम् इति समबलोदाहरणम् ॥ ५ ॥ अथ बुधः ९।१०।३४।० अयं  
कन्यासप्तमांशे वर्तमानः तत्पतिर्बुधः शनिक्षेत्रस्थः तस्य बुधेन पंचधा मैत्र्यां  
शत्रुत्वात् शत्रुबलं ४ ग्राह्यमिति सप्तमांशविचारे शत्रुबलोदाहरणमिति ॥ ६ ॥  
रविः १०।५।७।९ अयं कुम्भात्रिंशांशे स्थितः तत्पतिः शनिः अधिशत्रुक्षेत्रस्थः  
अतस्तद्वलं अधिशत्रुक्तं २ त्रिंशांशविचारे ग्राह्यमिति अधिशत्रुबलोदाहर-  
णम् ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

भाषा ।

करना होवे तो ओ ग्रह मूल त्रिकोणका होवे तो उसका बल ४५ लेना, स्व-  
राशिका होवे तो तीसका बल लेना, अधिमित्रका होवे तो बीसका बल लेना,  
मित्रका होवे तो पंधराका बल लेना, समस्थानका होवे तो दसका बल लेना,  
शत्रुका होवे तो चारका बल लेना, अधिशत्रुका होवे तो दोका बल लेना ॥ ९॥

| अथ पंचधा मैत्रीचक्रम्. |                  |                  |                  |                      |                  |                  |           |
|------------------------|------------------|------------------|------------------|----------------------|------------------|------------------|-----------|
| सु.                    | च.               | म.               | बु.              | गु.                  | शु.              | श.               | ग्रहाः    |
| च. म.                  | सु. बु.          | सु. च. गु.       | सु. शु.          | च. म.                | बु. श.           | शु.              | ऽमित्र.   |
| बु.                    | मं. गु. गु. श.   | बु. श.           | म. गु.           | श.                   | गु.              | गु.              | मित्र.    |
| शु. शु. श.             | ०                | ०                | चं               | सु. शु. बु.          | सु. च.           | म. बु. सु. चं.   | सम.       |
| ०                      | ०                | शु.              | श.               | ०                    | म.               | ०                | शत्रु.    |
| ०                      | ०                | ०                | ०                | ०                    | ०                | ०                | ऽतिशत्रु. |
| अथ सप्तवर्गचक्रम्.     |                  |                  |                  | अथ सप्तवर्गबलचक्रम्. |                  |                  |           |
| सु.                    | च.               | म.               | बु.              | गु.                  | शु.              | श.               | ग्रहाः    |
| ११<br>श.<br>स्व.       | ९<br>गु.<br>मि.  | १२<br>गु.<br>मि. | १०<br>श.<br>स्व. | ११<br>श.<br>स्व.     | १२<br>गु.<br>मि. | १०<br>श.<br>स्व. | गु.       |
| ५<br>सु.<br>स्व.       | ४<br>चं.<br>स्व. | ५<br>सु.<br>स्व. | ४<br>चं.<br>मि.  | ४<br>चं.<br>मि.      | ४<br>चं.<br>मि.  | ४<br>चं.<br>मि.  | शु.       |
| ११<br>श.<br>स्व.       | ५<br>सु.<br>स.   | ८<br>मं.<br>ऽमि. | २<br>श.<br>मि.   | ३<br>बु.<br>श.       | १२<br>गु.<br>मि. | १०<br>श.<br>स्व. | शु.       |
| ११<br>श.<br>स्व.       | २<br>श.<br>मि.   | १२<br>गु.<br>मि. | ६<br>बु.<br>श.   | २<br>श.<br>मि.       | ७<br>श.<br>मि.   | ५<br>सु.<br>स.   | स.        |
| ८<br>मं.<br>ऽमि.       | ८<br>मं.<br>ऽमि. | १२<br>गु.<br>मि. | ६<br>बु.<br>श.   | ११<br>श.<br>स्व.     | ६<br>बु.<br>श.   | १२<br>गु.<br>मि. | न.        |
| १३<br>गु.<br>मि.       | ७<br>श.<br>मि.   | १०<br>श.<br>स्व. | २<br>श.<br>मि.   | ५<br>सु.<br>स.       | २<br>श.<br>मि.   | १<br>मं.<br>ऽमि. | दा.       |
| १<br>मं.<br>ऽमि.       | ७<br>श.<br>मि.   | ८<br>मं.<br>ऽमि. | ६<br>बु.<br>श.   | ९<br>गु.<br>मि.      | ६<br>बु.<br>श.   | ६<br>बु.<br>श.   | त्रि.     |
| ३<br>५<br>१            | १<br>४<br>०      | २<br>१<br>०      | १<br>५<br>०      | १<br>५<br>०          | २<br>१<br>०      | १<br>१<br>०      | योग.      |

भूताब्धयः खरामाश्व नखास्तिथिर्दिशो युगाः ॥ द्वाविंश-  
शुक्रौ युग्मांशे तिथिरोजांशगाः परे ॥१०॥ केन्द्रादिषु स्थि-

### टीका ।

अथ स्थानबलांतर्गतं तृतीयं युगमायुग्मबलमाह द्वाविंशशुक्रावित्यर्थेन ।  
अत्र द्वाविति पदं पूर्वान्वयि इंदुशुक्रौ चंद्रभृगू युग्मांशे युग्मश्चासावंशश्च त-  
स्मिन्समांशे ग्रंथांतरप्रामाण्याद्युग्मराशौ च संतौ तिथि १५ संख्याकं बलं दद्या-  
ताम् । एवं परे रविभौमबुधगुरुशनयः ओजांशगाः ओजश्चासावंशश्च तस्मि-  
नाच्छंतीति तथा विषमांशगा इत्यर्थः । प्राग्वद्विषमराशिस्था अपि तिथिबलं  
१५ दद्युरिति अर्थादुक्तान्यराश्यंशगता बलहीना इति ज्ञेयम् । अत्रोदाहरण-  
माह । अथ युगमायुग्मबलोदाहरणम् । चंद्रशुक्रौ ८।२५।२९।० इमौ अयुग्म-  
राशिसंबन्धियुग्मनवांशे वर्तमानौ अतस्तद्वलं युग्मांशविचारेण ग्राह्यम् । अ-  
पि च चंद्रशुक्रौ १।४।४।५ विषमांशस्थावपि ग्रंथांतरप्रामाण्यात्समराशिस्थि-  
त्या १५ बलं दत्त इतियुग्मबलोदाहरणम् । अथायुग्मबलोदाहरणम् । रवि-  
भौमबुधगुरुशनयः एते पंच ग्रहाः १।४।५।७ एवं युग्मराशावपि विषमांश-  
स्थित्या अपि च २।४।५।७ एवं युग्मांशस्था अपि विषमराशिस्थित्या बलं  
१५ दद्युरित्ययुग्मोदाहरणम् ॥ १० ॥ अथ स्थानबलांतर्गतं चतुर्थं केन्द्रा-

### भाषा ।

| अथ युगमायुग्मबलचनम्. |    |   |    |    |    |   |    | अथ केन्द्रादिबलचरुमिदम्. |    |    |    |    |    |    |    |
|----------------------|----|---|----|----|----|---|----|--------------------------|----|----|----|----|----|----|----|
| सू                   | च  | म | बु | गु | शु | श | यो | सू                       | च  | म  | बु | गु | शु | श  | यो |
| ०                    | ०  | ० | ०  | ०  | ०  | ० | ०  | ०                        | ०  | ०  | १  | ०  | ०  | १  | ३  |
| ०                    | १५ | ० | १५ | १५ | १५ | ० | ०  | ३०                       | १५ | १५ | ३० | १५ | ०  | ४५ | ४५ |
| ०                    | ०  | ० | ०  | ०  | ०  | ० | ०  | ०                        | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  |

अथ युगमायुग्म बल कहते हैं. चंद्र और शुक्र यह दोनों सम राशि सम नवमां-  
शके होवे तो पंधराका बल लेना. विषम राशि विषम नवमांशके होवे तो बलहीन  
शून्य बल जानना. और सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शनि, यह विषम राशि विषम न-  
वमांशके होवे तो १५ का बल लेना. और सम राशि सम नवमांशके होवे तो शू-  
न्य बल जानना ॥ १० ॥ अब ग्रहोंका केन्द्रबल कहते हैं. जन्मलग्नसे जो ग्रह केन्द्र-



ताः लग्नात्षष्टिस्त्रिंशत्तिथिः क्रमात् ॥ आदिमध्यावसानेषु  
द्रेष्काणेषु स्थिताः क्रमात् ॥११॥ पुनपुंसकयोषारव्या द-  
टीका ।

दिवलमाह केन्द्रेत्यर्थेन । लग्नात्सकाशात्केन्द्रादिषु स्थिताः केन्द्राणि आदीनि  
येषु तानि पणफरापोक्लिमानि तेषु केन्द्रपणफरापोक्लिमेषु स्थिताः क्रमेण षष्टिः  
६० त्रिंशत् ३० तिथिः १५ बलानि दद्युरिति । अथात्र केन्द्रबलोदाहर-  
णम् । जन्मलग्नं ५।२।२७।४ कन्याख्यं अस्य केन्द्राणि कन्याधनुर्मीनमिथु-  
नानि अत्रस्था ग्रहाः षष्टिः ६० बलदाः । तुलामकरमेषकर्काणि पणफरसंज्ञा-  
नि अत्रस्था ग्रहाः ३० बलदाः । वृश्चिककुम्भवृषमसिंहाख्यानि आपोक्लिमसं-  
ज्ञानि अत्रस्था ग्रहाः १५ बलदाः । इति केन्द्रादिवलोदाहरणम् । अथ स्था-  
नबलात्तर्गतं पंचमं द्रेष्काणवलमाह आदीति द्वादशश्लोकपर्यंतम् । ग्रहा-  
ख्यादयः आदिमध्यावसानेषु प्रथममध्यमांत्येषु द्रेष्काणेषु क्रमात् क्रमेण  
पुनपुंसकयोषारव्याः एतत्संज्ञकाः स्थिताः वर्तमानाः सतस्तिथिवलं १५  
दद्युः एते एव षड्वर्गगताः स्वेषां षड्वर्गेषु गताः वर्तमानाः संतः त्रिंशत्  
३० बलं दद्युः अर्थात् क्रमोऽक्तान्यद्रेष्काणे वर्तमाना विबला इत्यर्थः । एव-  
मुक्तपंचप्रकारकं स्थानबलं विदुः पूर्वाचार्या इत्याध्याहारः । अथ द्रेष्काणव-  
लोदाहरणम् । जन्मलग्नं ५।८।२७।४ सूर्यभौमगुरुवः एते पुरुषसंज्ञका ग्रहाः  
५।७।२।९ अथ वा ७।४।११।५ एवं वर्तमानाः कन्याप्रथमद्रेष्काणे वृश्चिक-  
प्रथमद्रेष्काणे वा वर्तमानाः अतः १५ फलदाः पुंस्त्वे सति प्रथमद्रेष्काणे  
स्थितत्वात् बुधशनी क्लीबसंज्ञौ ५।१३।९।१७ अथ वा ९।१७।१५।१२ एवं  
भाषा ।

| अथ द्रेष्काणवलसंज्ञकम्. |    |    |     |     |    |    |     | अथ पंचानां योगसंज्ञकम्. |    |    |     |     |    |    |     |
|-------------------------|----|----|-----|-----|----|----|-----|-------------------------|----|----|-----|-----|----|----|-----|
| सू.                     | च. | म. | बु. | गु. | श. | र. | यो. | सू.                     | च. | म. | बु. | गु. | श. | र. | यो. |
| ०                       | ०  | ०  | ०   | ०   | ०  | ०  | ०   | ४                       | २  | ३  | ३   | ३   | २  | ३  | २४  |
| १५                      | १५ | ०  | १५  | ०   | ०  | ०  | ०   | ४५                      | २८ | ४७ | २५  | ४५  | १२ | ४६ | ५७  |
| ०                       | ०  | ०  | ०   | ०   | ०  | ०  | ०   | ४                       | २९ | १९ | २९  | ३३  | २४ | ५४ | १२  |

स्थानमें १।४।७।१० बैठा होवे तो साठका बल लेना, और लग्नसे जो ग्रह २।-  
५।८।११ यह पणफर स्थानमें बैठा होवे तो तीसका बल लेना, और लग्नसे

द्युस्तिथिवलं ग्रहाः ॥ स्वपङ्चवर्गगतास्त्रिंशदेवं स्थानबलं  
विदुः ॥ १२ ॥ अर्काकुजात्सुखं जीवाज्ज्ञाच्चास्तं लग्नमा-

टीका ।

वर्तमानाः एवं कन्याद्वितीयद्रेष्काणे मकरद्वितीयद्रेष्काणे वा वर्तमानाः  
अतः १५ फलदौ भवतः क्लीबत्वे सति द्वितीयद्रेष्काणस्थत्वात् तथा शुक्र-  
चंद्रौ स्त्रीसंज्ञकौ ५।२२।१७।२ अथ वा १०।२५।७।५ एवं कन्यान्त्यद्रेष्काणे  
कुंभांत्यद्रेष्काणे वा वर्तमानौ अतः १५ फलदौ ज्ञेयौ स्त्रीत्वे सति अंत्यद्रेष्का-  
णे स्थितत्वात् तथा एते एव पङ्चवर्गविभागेन स्ववर्गगताः संतः ३ बलं  
दक्षुरिति ॥ ११ ॥ १२ ॥ एवं पङ्चवर्गांतर्गतं पंचविधं प्रथमं स्थानबलमुक्त्वा  
द्वितीयं दिग्बलमाह अर्कादित्यादिसार्धेन । अर्काद्रवेः कुजाद्भौमात्सुखं च-  
तुर्थभावं विशोध्य पङ्माधिके पङ्माश्रयधिकेऽवशिष्टे सति चक्रात् १२ अंकात्  
विशोध्य शेषं भागीकृत्य राशिभागान् भागस्थानांके संयोज्य रामाप्तं त्रि-  
भिर्भक्तं यत्फलं तद्वलं भवति एवमग्रे जीवाद्गुरोः ज्ञाद्गुधाच्च अस्तं सप्तमभावं  
विशोध्य प्राग्वत्संस्कारे कृते बलं भवति एवमार्कितः शनेः लग्नं तनुभावं  
विशोध्य तथा भृगोः शुक्राच्चंद्राच्च मध्यलग्नं दशमभावं हित्वा विशोध्य प्रा-  
ग्वत्पङ्माधिके चक्राद्विशोध्य भागीकृत्य च रामाप्तं फलमेव तद्वलं भवति

भाषा ।

३।६।९।१२ यह आपोक्विलम स्थानमें बैठा होवे तो पंचराका बल लेना । अथ  
द्रेष्काणबल कहते हैं। पुरुषग्रह सूर्य, मंगल, गुरु, यह तीन प्रथम द्रेष्काणमें कहते  
हैं । दश अंशके अंदर होवे तो १५ का बल लेना। दससे ज्यादा अंश होवे तो  
बलहीन जानना। ऐसा नपुंसक ग्रह चुब शनि यह दोनों मध्य द्रेष्काणमें अर्थात्  
दस अंशसे ज्यादा व वीसके अंदर होवे तो १५ का बल लेना अन्यथा बलहीन  
जानना। स्त्रीग्रह शुक्र चंद्र तीसरे द्रेष्काणमें होवे तो पंचराका बल लेना अन्यथा  
बलहीन जानना। इस द्रेष्काणबलमें थोड़ा विशेष कहते हैं। जो ग्रह अपने ग्रह होरा  
आदि पङ्चवर्गमें होवे तो तीसका बल लेना ॥ ११ ॥ १२ ॥ अथ ग्रहोंका दिशाका  
बल कहते हैं। राश्यादि सूर्यमें और राश्यादिमंगलमें चतुर्थ भावकी राश्यादिक

कितः ॥ मध्यलग्नं भृगोश्चंद्रादित्वा षड्भाधिके सति ॥ १३ ॥  
चक्राद्विशोध्यरामाप्तं भागीकृत्य च तद्वलम् ॥ आमध्या-  
टीका ।

इति दिग्बलम् । अथोदाहरणम् । अर्कः १०।४।१४। अस्माच्चतुर्भावं ३।१।१९  
हित्वा शेषं ७।२।५५ इदं षड्भाधिकं चक्राद्विशोध्यावशिष्टं ४।२७।५ अस्य  
मागाः १४७।५ त्रिभिर्मक्ताः लब्धं फलं ०।४९।१ जातं रविदिग्बलं एवं स-  
र्वत्र ज्ञेयमिति ॥ १३ ॥ अथ षड्वलांतर्गतं तृतीयं कालबलं सार्धविंशति  
श्लोकपर्यंतं तत्रादौ आमध्यान्हादित्यादिसपादद्वयेन नतोन्नतबलमाह । आ-  
मध्यान्हात् अर्धरात्रं मध्यान्हमारम्यार्धरात्रपर्यंतं मध्यरात्रिमारम्य मध्यान्ह-  
पर्यंतं दिवा दिवसः रात्रिः प्रसिद्धा इति क्रमात् नतोन्नते ग्राह्ये एवमुक्तं  
भवति मध्यान्हमारम्यार्धरात्रपर्यंतं इष्टकालस्य नतं कृत्वा तदेवाग्रिमसं-  
स्कारे ग्राह्यम् । मध्यरात्रिमारम्य मध्यान्हपर्यंतं इष्टकालसमुत्पादितनतस्य  
उन्नतं कृत्वाग्रिमसंस्कारे ग्राह्यमिति । अथ दिवाशब्दोक्तोन्नतस्य नाड्यो  
द्विघ्नाः द्विगुणिताः अर्कमार्गवसूरीणां रविशुक्रगुरुणां दिवावलं भवति त-  
था उक्तनाड्यः इमाः षष्टिम्यो वर्जिताः कृत्वा यदवशिष्टं तत्तेषामेव रात्रि-  
वलं भवति भौमचंद्रशनीनां तु अन्यथा उक्तक्रमविपर्ययेण ज्ञेयं एवमुक्तं भ-  
वति अर्कमार्गवसूरीणां दिवावलवत्संस्कृतं भौमचंद्रशनीनां रात्रिवलं भवति  
तथा तेषां उक्तरात्रिवलवत्संस्कृतं एषां दिवावलं भवति इत्यन्यथाशब्देन

भाषा ।

कमी करके शेषांक छःसे जादा होवे तो बारहमें घटायके राशीकूं अंशादिक करके  
तीनसे भाग लेना जो लब्ध आवे वो दिग्बल जानना.

ऐसा गुरुबुधमे सप्तम भाव घायके पूर्वसरीखा बल  
लाना. और शनिमें लग्न क्रम करना. शुक्र और चंद्रमे  
दशमभाव घटायके पूर्वरीतिप्रमाणसे बल जानना । इति

| अथ दिग्बलचक्रम्. |    |    |    |    |    |    |     |   |  |
|------------------|----|----|----|----|----|----|-----|---|--|
| सु               | च  | म  | बु | गु | श  | ज  | मो. |   |  |
| ०                | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०   | ३ |  |
| ४९               | १  | ३२ | ३१ | ४३ | २१ | २९ | २८  |   |  |
| १                | ५६ | ०५ | ३० | १२ | ५८ | १५ | १४  |   |  |

दिग्बलम् ॥ १३ ॥ अब नतोन्नत बल कहते हैं. मध्यान्ह काल लेके अर्ध रात्र-  
पर्यंत जो समय इष्टकाल होवे तो दिवावल. नतके तरफमे सूर्य, शुक्र, गुरु,

॥ ज्हादर्धरात्रादिवारात्रिरिति क्रमात्-॥ १४ ॥ अर्कभार्गव-  
सूरीणां द्विघ्ना नाड्यो गता दिवा ॥ भौमचंद्रशनीनां तु  
षष्टिभ्यो वर्जयेदिमाः ॥ १५ ॥ दिवाबलमिति प्रोक्तं बलं

## टीका ।

भौमादित्रयाणां विलोमसंस्कारो ज्ञेय इति तस्य बुधस्य सदा सर्वकालं घ-  
टिरेव एतत्संख्याकं कलात्मकं रूपं संज्ञकं बलं ज्ञेयम् तस्य नान्यः संस्कारः  
नियतत्वादिति । अथैषामुदाहरणम् । इष्टं ८१६ दिनार्धं १३।५४ अनयो-  
रंतरं ५।३८ एतत्पूर्वनतं अस्योन्नतं २४।२२ एतद्विघ्नं ४८।४४ जातमेतद्वि-  
शुक्रगुरुणां दिवाबलं एतदेव षष्टिच्युतं ११।१६ जातमेतच्चंद्रभौमशनीनां  
दिवाबलं रात्रिबलं तु अतोऽन्यथा एतद्विपरीतं तदित्यं प्रागर्कभार्गवसौरिसं-  
स्कारविहितं ४८।४४ चंद्रभौमशनिरात्रिबलं जातं तथा च यच्चंद्रभौमशनि-  
विहितं ११।१६ जातमेतदर्कभार्गवसूरीणामर्कबलमिति ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथ  
कालबलांतर्गतं द्वितीयं पक्षबलमाह चंद्रादित्यादिकिंचिदाधिकसप्तदशश्लो-  
कपर्यंतम् । चंद्रात्सकाशात् अर्कं विशोऽध्यावशिष्टं राश्यादिकं अंगाधिके ष-  
डधिके सति अर्कात् १२ राशिभ्यः विशोऽध्य, अवशिष्टं भागीकृत्य राशिभा-  
गान् भागांकेषु संयोज्यं त्रिभिर्भजेत् तत उत्पन्नं फलं इंदुज्ञशुक्रार्याणां चंद्र-  
बुधशुक्रगुरुणां पक्षजं पक्षसमुत्पन्नं बलं भवति तथा एतदेव ६० षष्टिः  
सकाशाद्विषावशिष्टं फलं अन्येषां रविभौमशनीनां पक्षजबलं ज्ञेयमिति ।  
अस्योदाहरणम् । चंद्रः ८।२५।२९ अस्मादर्कं १०।४।१४ एवंब्रूतं विशोऽध्य

## भाषा ।

देते हैं, और उस बलकू साठमे घटाने से मंगल, चंद्र, शनि दिवाबल देते हैं. म-  
ध्यरात्रिसे लेके मध्यान्हपर्यंत इष्टकाल होवे तो रात्रिबल नतकू लायके पीछे नतसे  
उन्नत लायके द्विगुणित करके जो फल आया वो चंद्र, मंगल, शनिका रात्रिबल  
जानना. और ओ बलकू साठमें कम किये तो सूर्य, शुक्र, गुरु का रात्रिबल होता  
है. इसका टीकामे उदाहरण बताया है. और बुधका सदैव साठका बल है  
॥ १४ ॥ १५ ॥ अब पक्षबल कहते हैं. स्पष्ट राश्यादि चंद्रमें स्पष्ट राश्यादि

नैशं ततोऽन्यथा ॥ षष्टिरेव सदा ज्ञस्य चंद्रादिकं विशोध्य च ॥ १६ ॥ अंगाधिके विशोध्यार्काद्वागीकृत्यत्रिभिर्भजेत् ॥ पक्षजं बलमिदुज्जशुक्रार्याणां तु षष्टितः ॥ १७ ॥ हित्वान्येषामहोरात्रिं त्रिभागीकृत्य यत्र तु जन्मलग्नतदंशाधिपतेः

### टीका ।

ऊनं कृत्वा शेषं १०।२१।१५ एतदंगाधिकमतः चक्रविशोधितं जातं १।८।४५ एतद्वागीकृत्य जातं ३।८।४५ त्रिभिर्मक्तं लब्धं फलं ०।१२।५५ जातं तदिदं दुज्जशुक्रगुरुणां पक्षजबलोदाहरणम् एतदेवं षष्टितो हित्वा शेषं फलं ०।४७।५ जातमेतद्रविभौमशनीनां पक्षबलोदाहरणम् ॥ १६ ॥ १७ ॥ अथ कालबलतिर्गतं तृतीयं दिनरात्रित्रिभागबलमाह । अहोरात्रिमित्याद्येकोनविंशतिश्लोकपर्यंतम् । अहः त्रिभागीकृत्य रात्रिं च त्रिभागीकृत्य तेषां अहोरात्रिषड्भागानां जार्कमन्देन्दुशुक्राराः बुधरविशनिचंद्रशुक्रभौमाः क्रमात्प्रपतयो ज्ञेयाः ततः यत्र तु यत्र कुत्रापि दिनरात्रित्रिभागे जन्मलग्नं भवति तदंशाधिपतेः तस्य अंशस्य दिनरात्र्यंतर्गतेऽष्टत्रिभागस्य यः अधिपतिः पूर्वोक्तजार्केत्याद्यंतर्गतः तस्य षष्टिबलं रूपबलमित्यर्थः ग्राह्यं तेनैव क्रमेणाधानकालविचारे त्रिंशत् ३० बलं ग्राह्यम् तेनैव क्रमेण चित्प्रवेशे चितश्चैतन्यस्य प्रवेशः आगमः तस्य विचारे तु भूतार्णवाः ४५ बलं ग्राह्यं अपि च सर्वदा

### भाषा ।

| अथ नतोन्नतबलचक्रम् । |    |    |    |    |    |    |    | अथ पक्षबलचक्रमिदम् - |    |    |    |    |    |    |    |
|----------------------|----|----|----|----|----|----|----|----------------------|----|----|----|----|----|----|----|
| सू                   | च  | म  | बु | गु | शु | श  | पौ | सू                   | च  | म  | बु | गु | शु | श  | पौ |
| ०                    | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ४  | ०                    | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ३  |
| ४८                   | ११ | ११ | ०  | ४८ | ४८ | १६ | ०  | ४०                   | १२ | ४७ | १२ | १२ | ४७ | १२ | ४७ |
| ४४                   | १६ | १६ | ०  | ४४ | ४४ | ११ | ०  | ५                    | ५५ | ५  | ५५ | ५५ | ५५ | ०  | १५ |

सूर्यकू घटायके शेष अंक छःसे ज्यादा होवे तो चारहमें घटायके राश्यादिककू अंशादिक करके तीससे भाग लेना. जो लब्ध आवे ओ फल चंद्र, बुध, शुक्र, गुरुका पक्षबल जानना. पीछे ओ फलकू साठमें घटाये तो शेष फल. जो आवे वो सूर्य, मंगल, शनिका पक्षबल जानना. उदाहरण टीकामें स्पष्ट है ॥ १६ ॥ १७ ॥ अथ दिनरात्रिका बल कहते हैं. दिनके तीन भाग और रात्रिके तीन

षष्टिबलं भवेत्॥१८॥आधाने चित्रवेशे तु त्रिंशद्भूतार्णवा  
बलम्॥ज्ञाऽर्कमंदेंदुशुक्राराःपतयः सर्वदा गुरुः॥१९॥वर्ष-  
मासदिनेशानां तिथिस्त्रिंशच्छरार्णवाः ॥ कालहोराधिप-

टीका ।

सर्वरात्रिदिवात्रिभागेषु गुरुः सर्वदा दिनरात्रिसर्वत्रिभागेषु जन्मलग्नाधान-  
चित्प्रवेशविचारे च रूपबलदो ज्ञेयः । अथोदाहरणम् । दिनमानं २७।४८  
तस्य त्रिभागः ९।१६ इष्टं १२।१७ एतत्कालीनं लग्नं आधानं चित्रवेशश्च  
दिनद्वितीयभागे वर्तते अतोस्य पतिः रविः लग्ने १।०।० तथा आधाने ०।  
३०।० अर्धबलं तथा चित्रवेशे ०।४५।० पादोनं एवं क्रमेण बलदो ज्ञेयः  
गुरोस्तु सर्वदा बलदत्वात्षष्टमुदाहरणम् एवं सर्वत्र ज्ञातव्यमिति॥१८॥१९॥  
अथ कालबलांतर्गतं चतुर्थं वर्षमासदिनहोरेशबलमाह वर्षादितिसार्धश्लोके-  
न । वर्षमासदिनेशानां वर्षमासदिनपतीनां क्रमात् तिथिः १५ त्रिशत् ३०  
शरार्णवाः ४५ कालहोराधिपस्य होरापतेः एवं पूर्णरूपं बलं उदाहृतं कथितं  
आधाने तु वर्णादीनां चतुर्णामपि त्रिशत् ३० अर्धबलं ग्राह्यम् तथा चित्र-

भाषा ।

| अथ दिनरात्रिभिभागचक्रम् |   |   |    |    |   |    | अथ वर्षमासादि चक्रम् |   |   |    |    |    |    |
|-------------------------|---|---|----|----|---|----|----------------------|---|---|----|----|----|----|
| सु                      | च | म | बु | शु | श | यो | सु                   | च | म | बु | शु | श  | यो |
| १                       | ० | ० | ०  | १  | ० | ०  | २                    | ० | ० | ०  | ०  | ०  | ०  |
| ०                       | ० | ० | ०  | ०  | ० | ०  | ३०                   | ० | ० | ०  | ४५ | १५ | ३० |
| ०                       | ० | ० | ०  | ०  | ० | ०  | ०                    | ० | ० | ०  | ०  | ०  | ०  |

भाग करके वे छः भागके छः अधिपति हैं. बुध, सूर्य, शनि, चंद्र, शुक्र, मंगल,  
ये छः ग्रह हैं, क्रमकरके जानना पीछे जिस भागमें लग्न होवे उस भागका जो अ-  
धिपति होवे वो ६० साठ कलात्मक बल देता है. और यही रीतिसे आधानका-  
लका विचार होवे, तो तीस ३० का बल ग्रह देता है. चैतन्यप्रवेशकालका विचार  
होवे तो पैंतालीस ४५ का बल देता है. अन्य ग्रहोंकी बलहीनता जाननी. गुरुका  
सदैव एक बल है ॥ १८ ॥ १९ ॥ अब वर्षपति, मासपति, दिनपति का बल कहते  
हैं. गणितका उदाहरण टीकामें दिखाया है. उस मार्गमें वर्षेश, मासेश, दिनेश,  
निकालके बल लेना. वर्षपतिके बलमें १५ पंधरा कलात्मक बल लेना. मासपतिके

स्यैवं पूर्णं बलमुदाहृतम् ॥ २० ॥ आधाने चित्रवेशे तु त्रिंश-  
टीका ।

वेशे शरजलाकराः ४५ पादोनं बलं ग्राह्यमिति । अथ वर्षादिपत्युत्पादनं  
श्लोकोक्तविषयोदाहरणं च अत्र केशव्युदाहरणोक्तश्लोकः । “द्विष्टोयं ग्रहला-  
घवद्युनिचयश्चक्राहतैः षट्शरैः ५६ षट्स्रै २६ श्र युतः सवाणतपनः १२५  
सेषु ५ श्र स्वांगाग्निभिः ३६० ॥ स्वाज्याशै ३० विहृतः फले गुणयम २ घ्ने  
चक्रनिघ्नाक्षखो ५१० एते द्वि २ त्रि ३ युते नगो ७ वर्तितकेऽस्तेर्कास्तमा-  
मासपौ ॥ ” ग्रहलाघवद्युनिचयः १८३२ चक्रं २९ अनेन हतैः गुणितैः षट्-  
शरैः ५६ जातैः १६२४ युतः ३४५६ सवाणतपनः १२५ एभिः युक्तः  
२५८१ स्वांगाग्निभिः ३६० भक्तं जातं फलं ९ गुण ३ घ्नं २७ एतत् चक्रं  
२९ अनेन निघ्नाऽक्षाः ५ जाताः १४५ एमिरुपेतं १७२ एतत् द्वि २ युतं  
१७४ इदं नगोर्वरितं सप्तभिस्तष्टं शेषं जातो रविः क्रमेण पष्ठो वर्षपः शुक्रः  
विद्यमानो वर्षपः शनिरिति । अथ मासेशानयनोदाहरणम् । द्युतिचयः  
१८३२ चक्रं २९ तेन हतैः षट्स्रैः २६ जातैः ७५४ युतः २५८६ सेषुः ५  
युतः २५९१ स्वाज्याशैः ३० एभिर्हतः फलं ८६ इदं यमघ्नं १७२ चक्रनि-  
घ्नखोपेतं नामार्कांतरयोगाभावः ततः त्रि ३ युतं १७५ नगोर्वरितं सप्ततष्टं  
शेषं गतो रविः क्रमेण सप्तममासपतिः शनिः वर्तमानो रविरिति । अत्र  
जन्मवारपतिर्गुरुः अस्मिन्विषये जन्मवारपतिरेव दिनेश इति बोध्यम् । अथ  
होरेशानयनोदाहरणम् मुहूर्तमार्तडोक्तम् । “द्विघ्नको व विलग्नके रविसितज्ञे-  
द्वार्किजीवासृजो होरेशाद्युपतेः खलेऽन्दि खलजा होरा शुभे मध्यमा ॥ ”  
अर्कः १०१४१४१२२ विलग्नं ०६१३४२ एतदर्केण ऊनं जातं २११४१२०  
द्वि २ घ्नं जातं ४१३१३८१४० एतत्सप्ताधिकामावाञ्च सप्ततष्टप्राप्तिः अस्य  
राशिस्थानांक ४ परिमितः द्युपतेः गुरोः सकाशात् रविसितज्ञेद्वार्किजीवासृ-  
ज इति क्रमेण चतुर्थ-शुक्रः गतहोरापतिः अर्थात् वर्तमानहोरापतिः पंच-  
मोऽज्ञः बुधः ज्ञेय इति एवं च अस्मिन्नुदाहरणे वर्षपतिः शनिः अस्य बलं १५

भाषा ।

बलमे ३० तीस कलात्मक बल लेना दिनपतिके विचारमे दिनपतिका पंतालीस ४५

छरजलाकराः॥सायनांशग्रहभुजराशीनिष्वब्धिभिः सुरैः

## टीका ।

भासपतिः रविः अस्य बलं ३० दिनपतिः गुरुः अस्य बलं ४५ होरापतिर्बुधः  
अस्य बलं १।०।० एवं च स्वेः नतोन्नतबलं ०।४८।४४ पक्षबलं ०।४७।५  
दिनरात्रिबलं १।०।० वर्षपत्यादिबलं ०।३०।० एतेषां चतुर्णां योगं जातं  
कालबलं सूर्यस्य ३।५।४९। एवं सर्वेषां ज्ञातव्यमिति ॥२०॥ अथ षड्बला-  
तर्गतं चतुर्थमयनचेष्टाबलद्वयात्मकं बलं तत्रादौ अयनांशेत्यादिसपादचतु-  
विंशतिश्लोकावधि अयनबलमाह । सायनांशग्रहभुजराशीन् अयनांशैः स  
हितस्य ग्रहस्य यो भुजः च्यल्पता तद्राशिपरिमितानि इष्वब्धिसुरसूर्यसं-  
ज्ञकानि खंडानि तैः हत्वा भागादि गुणयित्वा एवमुक्तं भवति सायनांश  
भुजराश्यंकज्ञेयानि ध्रुवांकरूपाणि तानि च इष्वब्धि ४५ परिमितं प्रथमं  
सुर ३३ परिमितं द्वितीयं सूर्य १२ परिमितं तृतीयं एवं त्रीणि खंडानि क-  
मादहभुजाराशिस्थानविद्यमानपूर्णेकद्विपरिमितस्थानविचारेण ४५।३३।१२  
इमानि अधस्ताद्वर्तमानभागादिगुणकानि ज्ञात्वा गुणयेत् तद्यथा उपरिष्ट-  
राश्यंके पूर्णे सति भागादिकं ४५ अनेन गुणयेत् तस्मिन्नेके सति भागादि-  
कं ३३ अनेन गुणयेत् तथा तस्मिन्द्विपरिमिते सति १२ अनेन भागादिकं  
गुणयेत् तस्माद्यत्रिंशद्भक्तफलं अंशकलाविकलात्मकं तत् गतखंडयुक्तं कार्यं  
गतखंडद्वये तद्वयैक्ययोगः ततश्च भागं त्रिंशद्भिर्भक्त्वा राशिस्थाने योजयेत्  
अनंतरं एवं राश्यादिके फले पूर्वकृतसायनग्रहे भेषादिपदकस्थे सति अर्का-  
रार्योशनःसु रविभौमगुरुशुक्रेषु बलार्थं गृह्यमाणेषु सत्सु राशित्रयं युज्यात्

## भाषा ।

कलात्मक बल लेना अन्य ग्रहोंका शून्य हैं. इष्टकालमें

जिस ग्रहकी होरा होवे वो ग्रहका होराबल एक लेना.

पीछे सब धरोंका ऐक्य करना. सो ग्रहोंका कलाबल

भया ॥ २० ॥ अब अयनबल कहते हैं. तात्कालिक

| अथ कालबलचक्रम्. |    |    |     |     |     |    |     |    |     |
|-----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|----|-----|
| सु.             | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | मि. | र. | गो. |
| ३               | ०  | ०  | १   | २   | २   | १  | १२  |    |     |
| ४५              | २४ | ५८ | ४७  | ४४  | १   | १३ | १५  |    |     |
| ४८              | ११ | २१ | ५   | ३८  | ३८  | २१ | ४   |    |     |

स्पष्ट ग्रह करके उन्हींमें अयनांश कला विकला मिलायके उसका भुज करके फेर  
भुजकी राशि देखना जो राशिके ठिकाने पूर्ण होवे तो दोषांका पैतालीससे गुणन



॥ २१ ॥ सूर्यैर्हत्वा क्रमाद्राशिभागः स्यादनुपाततः ॥ एवं राश्यादिके युंज्यादर्कारायांशनःसु च ॥ २२ ॥ राशित्रयमथो युंज्यान्मेषादिस्थेषु तेष्वथ ॥ तुलादिस्थेषु राश्यादींस्त्रिराशिभ्यस्तु वर्जयेत् ॥ २३ ॥ चंद्राक्योर्विपरीतं स्यात्सदा युंज्याद्बुधस्य तु ॥ भागीकृत्य त्रिभिर्मक्तं ग्रहाणामायनं बलम् ॥ २४ ॥ रवेर्द्विगुणमेवं स्याद्युध्यतोर्ग्रहयोरथ ॥ वि-

टीका ।

तेषु तुलादिषट्कस्थेषु सत्सु तु त्रिराशिभ्यः वर्जयेत् त्रिपरिमितराशौ पूर्वलब्धं राश्यादिकं हीनं कुर्यात् । अथ च चंद्राक्योः चंद्रशनैश्चरयोः विपरीतं विलोमं तद्यथा मेषादिषट्के त्रिराशिभ्यो वर्जनं, तुलादिषट्के राशित्रयसंयोजनं कार्यम् । बुधस्य तु बुधबलविचारे सदा द्वादशराशिष्वपि राशित्रयं युंज्यादेव न तु प्राग्बद्राशिविचारेण विलोमानुलोमतः अपि च भागीकृत्य राशिभागस्थाने संयोज्य त्रिभिर्मक्तं फलं अयनबलं भवति तत्र एवं लब्धबलं द्विगुणीकृतं रविबलं भवतीति रविविषये विशेषसंस्कारः । अत्रोदाहरणम् । रविः १०।४।१४ अयनांशाः २२।१ एतद्योगेन रविः १०।२६।१५ अस्य शुजः १।३।४५ अस्य राश्यंकः १ तत्परिमितं ४५ खंडं प्रथमं गतं एष्यखंडं द्वितीयम् ३३ अनेन शुजमागादि ३।४५ शुणितं जातं १२३।४५ एतस्मात् त्रिशङ्कलब्धांशादि फलम् ४।७।३० एतद्भक्तखण्डेन ४५ अनेन युक्तं कृत्वा जाताः ४५।७।३० एतदंशत्रिशङ्कागलब्धम् राशिस्थानांकः अधःस्थमंशादिकं च १।१।७।३ एतत् सायनरवेस्तुलादिषट्कवर्तमानत्वात् त्रिराशिषु हीनं कृत्वा जातम् १।१०।५२।३० अस्य भागादि ४०।५२।३०

भाषा ।

| अथ अयनबलचक्रम्. |    |    |    |     |    |    |      |
|-----------------|----|----|----|-----|----|----|------|
| सु.             | च. | म. | व. | शु. | घ. | श. | योग. |
| ०               | ०  | ०  | ०  | ०   | ०  | ०  | ०    |
| २७              | ५७ | ३९ | ५५ | १८  | १८ | ५५ | २१   |
| १५              | ४० | ३२ | ९  | ५०  | ४५ | ५३ | ४    |

श्लेखबलयोश्चापि निर्जितस्य बलं भवेत् ॥ २५ ॥ अपनीते  
योजिते तु जितस्य च बलं भवेत् ॥ षष्टिर्वक्रगतेर्वीर्यमनु-

टीका ।

एतत् त्रिभिर्मक्त्वा जातं फलम् १३।३७।३० एतत्सूर्यबलत्वाद्दिगुणीकृतं  
जातम् ०।२७।१५।० एवमयनबलम् एवं रीतिः सर्वत्र ज्ञेयेति ॥ २१ ॥ २२॥  
॥ २३ ॥ २४ ॥ अथ चेष्टावलकमप्राप्तं भौमादिग्रहयुद्धबलमाह युध्यतोरि-  
त्यादिसार्धपंचविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । अथ ग्रहयोः भौमाद्यन्यतमयोर्द्वयोः  
युध्यतोः युद्धं कुर्वतोः सतोः । अस्यार्थः जन्मकाले ग्रहयोः समराश्यां क-  
लाविकलारूपयोः युद्धं ज्ञेयम् तद्वलं तु इत्थं युध्यतोर्ग्रहयोः प्रागुक्तबलैक्य-  
योः विश्लेषमंतरं कृत्वा निर्जितस्य पराभूतस्य ग्रहस्य बलैक्यमध्ये विश्लेषां-  
तरेऽपनीते हीने कृते सति निर्जितस्य बलं दक्षिणादिगतं भवेत् । अथ च  
जितस्य जेतुः बलैक्यमध्ये विश्लेषांतरे योजिते जितस्य जेतुः उत्तरदिगतं  
बलं भवेत् । अत्र कल्पितमुदाहरणम् । जन्मकाले बुधः ५।२।७।५ शुक्रः ५।  
२।७।५ बुधबलैक्यं ३।२।१ शुक्रबलैक्यं २।५।३ अनयोर्ंतरं ०।५६।५८  
एतन्निर्जितस्य न्यूनबलस्य शुक्रस्य बलमध्ये २।५।३० अपनीतं हीनं कृतं  
जातं १।८।५ शुक्रबलं तदेवांतरं ०।५६।५८ जितस्य जेतुः बुधस्य बलैक्ये  
३।२।१ योजितं ३।५८।५९ एतज्जातं जेतुर्बुधस्य बलमिति ॥ २५ ॥ अथ  
प्रसंगप्राप्तं गतिबलमाह षष्टिरितिसार्धसप्तविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । वक्रगतेः

भाषा ।

करना. एक होवे तो तैंतीस ३३ गुणन कराना दो होवे तो बारहसे गुणन करके  
तीससे भाग लेना. लब्ध अंशादिक फल आवे उसमें गतखंड जोड़ना पीछे रा-  
श्यादि करके तुलादि छः राशिमें होवे तो तीन घटाना मेपादि छः राशिमें होवे  
तो तीन मिलाना परंतु चंद्र शनि यह दोनोंकू उलटा जानना जैसा मेपादि छः  
राशिमें होवे तो तीन घटाना तुलादि छः राशिमें होवे तो मिलाना. और बुध ग्रह  
कू तो सर्वकाल १२ बारह राशिमेंसे कोई हो परंतु ३ मिलाना. और सूर्यके बल  
द्दिगुणित करना ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ अब ग्रहोंको युद्धबल कहते हैं. युद्धका  
लक्षण ऐसा कि जन्मकालकी राखत जो ग्रह राशि अंश कला विकलासे दूसरेके

वक्रगते दलम् ॥ २६ ॥ पादं विकलभुक्तेः स्याद्वलमेव समागमे ॥ पादं मंदगतेस्तस्य दलं मन्दतरस्य च ॥ २७ ॥ शीघ्रमुक्तेस्तु पादोनं दलं शीघ्रतरस्य तु ॥ मध्यमस्फुटवि-  
टीका ।

वक्रगतिर्यस्य तस्य ग्रहस्य वीर्यं बलं षष्टिः ६० रूपबलं अनुवक्रगतेः क्र-  
ज्जुगतेरित्यर्थः दलं त्रिंशत् ३० बलं विकलभुक्तेः विकला रविसाहचर्यान्नि-  
र्बला भुक्तिर्यस्य तस्य रविसहितस्येत्यर्थः पादं बलं १५ तथा समागमे समः  
आगमो गतिर्यस्य तस्य चंद्रसहितस्येत्यर्थः दलमेव ३० बलं मंदगतेः मंदा  
मध्यमा निरल्पा गतिर्यस्य तस्य पादं १५ बलं मंदतरस्य पूर्वतोऽपि अल्पत-  
रगतेः तस्य पादस्य दलं ७।३० बलं शीघ्रभुक्तेः शीघ्रा मध्यमाधिका भु-  
क्तिर्यस्य तस्य पादोनं ४५ बलं शीघ्रतरस्य पूर्वतः अतिशीघ्रगस्य ग्रहरय  
दलं ३० बलं एवं गतिबलं ज्ञेयमिति ॥ २६ ॥ २७ ॥ अथ क्रमप्राप्तं चेष्टा-

### भाषा ।

समान होवे तो वो दोनों ग्रहोंका युद्ध जानना. इसमें जित पराजितादिकोंका बल  
लानेका विधि बतलाते हैं. युद्ध करने वाले दोनों ग्रहोंका पहले कच्चा हुवा बलैक्य  
है उस दोनोंका अंतर करके जो बलमें हीन है वो यह निर्जित (हारा) जानना.  
उसके बलैक्यमें अंतरके अंक हीन करना वो दक्षिण दिशाका निर्जितबल जा-  
नना. और जिसका बलैक्यका अंक जादा है वो जीत हुवा ऐसा जानना. उ-  
सके बलैक्यमें अंतर मिलाना तो उत्तर दिशाका बल आया ॥ २५ ॥ अब  
गतिबल कहते हैं. जो ग्रह वक्री है उसका ६० साठ बल लेना, और जो सरल  
सीधी गति है, उसका ३० बल लेना. जो सूर्यके साथ है उसका पंधराका बल  
लेना. जो चंद्रके साथ है उसका बल ३० लेना. जो मंदगति है उसका १५ का  
बल लेना. पूर्वसे अल्पगति होवे उसका बल ७।३० लेना. शीघ्रगति ग्रहका बल  
४५ लेना. अति शीघ्रगति ग्रहका ३० का बल लेना ॥ २६ ॥ २७ ॥ अब  
चेष्टाबल कहते हैं. जिन ग्रहोंका चेष्टाबल करना है सो ऐसा कि पहले ग्रहोंको  
मध्यम करना, और स्पष्ट ग्रह करना पीछे मध्यम और स्पष्टका अंतर करके जो  
अंतर आवे उसको अर्ध भाग करके मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रहसे अधिक होवे तो मध्यम



त ॥ सूर्यचंद्रौ सत्रिराशी कृत्वा प्रोक्तविधिस्तथा ॥ ३० ॥

एवं चेष्टाबलं प्रोक्तं नैसर्गिकमथो शृणु ॥ षष्टिरेकेषवः सप्त-  
दश षड्विंशतिस्ततः ॥ ३१ ॥ चतुर्विंशत्रिवेदांकाः सू-

टीका ।

घोचात् १०।२।३२ अस्मात्पक्त्वाज्वलिष्टं ३।६।२ जातमेतद्भौमस्य चेष्टा-  
केन्द्रं अस्य भागान् ०।३।० त्रिभिर्विभज्य लब्धं ०।३।२० एतद्भौमचेष्टाबलो-  
दाहरणम् एवं सर्वत्र ज्ञेयम् । चंद्रसूर्ययोस्तु चेष्टाकेन्द्रे त्रिराशिमेलनमिति वि-  
शेषः अन्यत्सर्वं समानमिति ॥ २८ ॥ २९ ॥ अथ नैसर्गिकबलाबलमाह नै-  
सर्गिकमित्यादिसार्धैकत्रिंशत्पर्यंतम् । अथ अनंतरं हेमत्रेयेति शेषः नैसर्गि-  
कं निसर्गे विद्यमानं स्वाभाविकं बलमित्यध्याहारः शृणु । तत्र सूर्यस्य षष्टिः  
६०, चंद्रस्य एकेषवः ५१, भौमस्य सप्तदश १७, बुधस्य षड्विंशतिः २६,  
गुरोश्चतुर्विंशत् २४, शुक्रस्य त्रिवेदाः ४३, शनेः अंकाः ९, एते निसर्गजाः  
स्वाभाविकबलनियताः अंकाः क्रमात्सूर्यादीनां ज्ञातव्या इति ॥ ३० ॥ ३१ ॥  
अथ उक्तानां पंचविधानामपि बलानां दृष्टिवलेन संस्कारमाह शुभेत्यर्धक-

भाषा ।

हीन करना. पीछे उसकू शीघ्रीच्चफलमे कम करना जो  
अंक आवे वो चेष्टाकेन्द्र मया उसके अंश करके ३ से  
भाग लेना ओ फल जावे वो चेष्टाबल जानना. सूर्यचं-  
द्रकूं पूर्वसरीखा करके ३ राशि मिलानेसे चेष्टाबल  
होता है ॥ २८ ॥ २९ ॥ अब नैसर्गिक बल कहते हैं. निसर्ग कहिये जो स्वाभा-

| अथ नैसर्गिकबलचक्रम् |    |    |    |    |    |   |     |
|---------------------|----|----|----|----|----|---|-----|
| सु                  | च  | म  | बु | गु | श  | र | यो. |
| १                   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ० | ४   |
| ०                   | ५१ | १७ | २६ | २४ | ४३ | ९ | ०   |
| ०                   | ०  | ०  | ०  | ०  | ०  | ० | ०   |

| अथ षड्वलचक्रमाह. | ग्रह | स्था | दिक्-<br>ल | काल-<br>बल | वेदा-<br>बल | नैसर्ग-<br>िकबल | दृष्ट-<br>ल | एक-<br>बल |
|------------------|------|------|------------|------------|-------------|-----------------|-------------|-----------|
| सु               | ३    | १०   | १०         | १          | १           | ०               | ०           | १०        |
| च                | २    | ११   | ११         | २          | १           | ०               | ०           | ११        |
| म                | ३    | १२   | १२         | ३          | १           | ०               | ०           | १२        |
| बु               | ४    | १३   | १३         | ४          | १           | ०               | ०           | १३        |
| गु               | ५    | १४   | १४         | ५          | १           | ०               | ०           | १४        |
| श                | ६    | १५   | १५         | ६          | १           | ०               | ०           | १५        |
| र                | ७    | १६   | १६         | ७          | १           | ०               | ०           | १६        |
| यो.              | ८    | १७   | १७         | ८          | १           | ०               | ०           | १७        |

विक बल है. सो ह मैत्रेय ! तुम श्रवण करो सूर्यका ६० बल, चंद्रका ५१ निसर्गबल,

र्यादीनानिसर्गजाः ॥ शुभपापद्वगब्ध्यंशयुतहीनानि तानि च ॥३२॥ षड्बलानि ग्रहाणां स्युरेवमेकीकृतानि तु ॥

टीका ।

द्वयेन । तानि पूर्वोक्तानि स्थानादिपंचविधानि बलानि बलसमूहं शुभपापद्वगब्ध्यंशयुतहीनानि शुभाः चंद्रादयः पापाः रव्यादयः एषां दृशां दृष्टीनां यः अब्ध्यंशः चतुर्थांशः तेन युतहीनानि युक्तानि हीनानि वा पूर्वोक्तं समूहं तद्ग्रहोपरि शुभदृष्टियोगे पापदृष्टियोगादधिके सति दृक्चतुर्थांशेन युक्तं कृत्वा तथैव पापैर्दृष्टियोगे शुभदृष्टियोगादधिके सति पूर्वोक्तं समूहं पापदृष्टिचतुर्थांशेन हीनं कुर्यात् । एवं रीत्या एकीकृतानि तानि पूर्वोक्तानि ग्रहाणां षड्बलानि स्युरिति । अत्रोदाहरणम् । रवेः स्थानबलं ४।१८।४ दिग्बलं ०।४९।१ कालबलं ३।५।४९ चेष्टाबलं ०।२७।१५ नैसर्गिकबलं १।०।० एषां योगः ९।४०।९ अयं सूर्योपरि शुभदृष्टियोगात् ०।४।२२ एवंपाप्तेतोः अस्य चतुर्थांशः ०।१।५ अनेन युक्तः कृतो जातः ९।४१।१४ जातमेतत्सूर्य-षड्बलं एवं सर्वत्र ज्ञेयमिति ग्रहाणां षड्बलविचारः ॥ ३२ ॥ अथ भावबलानयनमाह शुभदृष्टीत्यादिसार्द्धत्रयस्त्रिंशत्पर्यंतम् । स्वामिबलं यस्य भावस्य यः स्वामी तस्य पूर्वोक्तरीत्या आनीतं षड्बलं शुभदृष्टिचतुर्थांशयुतं भावोपरि प्राप्तशुभदृष्टिचतुर्थांशेन युक्तं तथा भावोपरीत्यत्राप्यध्याहारः पा-

भाषा ।

भौमका, १७, बुधके, २६, गुरुके ३४, शुक्रके ४३, शनिके ९ ग्रहस्वाभाविक निसर्गबल जानना ॥ ३० ॥ ३१ ॥ अब छट्टा बल कहते हैं । पहिले जो लाये ग्रहोंके पांच बल ( स्थानबल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिकबल ) यह पांचोंका एक बल करना पीछे शुभग्रहका दृष्टियोग करना, और पाप ग्रहका दृष्टियोग करना. पीछे दोनोंका अंतर करके उसका चतुर्थांश लेके पापग्रह दृष्टियोग जादा होवे तो षड्बलयोगमें हीन करना शुभग्रहदृष्टियोग होवे तो वो फल षड्बलयोगमें मिलाना उसकूं षड्बल कहते हैं ॥ ३२ ॥ अब भावबल कहते हैं. जिस भावका जो स्वामी होवे उसका पहिले लाया हुआ जो षड्बल है उसमें शुभपापग्रहदृष्टिका अंतर करके अंतरका चतु-

शुभदृष्टिचतुर्थांशं युतं स्वज्ञार्यदर्शनैः ॥ ३३ ॥ हीनपाप-  
टीका ।

पटमब्ध्यंशैः पापानां दृष्टिचतुर्थांशः हीनं कृतितम् । ततः स्वज्ञार्यदर्शनैः

| अथ भावदृष्टिचक्रमिदम्. |               |               |               |               |               |               |               |               |               |               |               |               |
|------------------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|
|                        | त.            | घ.            | स.            | सु.           | स.            | रि.           | जा.           | मृ.           | घ.            | क.            | आ.            | व्य.          |
| सु.                    | ०<br>१६<br>४९ | ०<br>३७<br>५३ | ०<br>३७<br>४९ | ०<br>३२<br>२५ | ०<br>५७<br>१८ | ०<br>४४<br>५३ | ०<br>२९<br>३  | ०<br>१४<br>५३ | ०<br>०<br>४९  | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>७   |
| च.                     | ०<br>३९<br>४३ | ०<br>२९<br>९  | ०<br>१४<br>२८ | ०<br>५७<br>५  | ०<br>४९<br>१८ | ०<br>२५<br>३१ | ०<br>९<br>४३  | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>४<br>४२  | ०<br>२३<br>५९ |
| मं.                    | ०<br>०<br>०   | ०<br>३<br>४३  | ०<br>३३<br>४४ | ०<br>५५<br>४५ | ०<br>२४<br>१९ | ०<br>१४<br>४८ | ०<br>३<br>०   | ०<br>५२<br>३६ | ०<br>२७<br>६  | ०<br>१२<br>५३ | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   |
| कु.                    | ०<br>४०<br>२९ | ०<br>३३<br>३  | ०<br>७<br>४९  | ०<br>४९<br>३० | ०<br>४८<br>५९ | ०<br>३<br>३३  | ०<br>१७<br>१६ | ०<br>३<br>३   | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>११<br>५७ |
| गु.                    | ०<br>१०<br>१२ | ०<br>३३<br>४९ | ०<br>५३<br>३७ | ०<br>२८<br>४० | ०<br>३४<br>२८ | ०<br>५०<br>३६ | ०<br>५५<br>१२ | ०<br>३९<br>४६ | ०<br>३<br>२३  | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   |
| श.                     | ०<br>०<br>०   | ०<br>१३<br>३७ | ०<br>४०<br>३९ | ०<br>३३<br>५८ | ०<br>५<br>९   | ०<br>५४<br>२८ | ०<br>४५<br>३६ | ०<br>२८<br>३९ | ०<br>१७<br>१९ | ०<br>२<br>५८  | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   |
| श.                     | ०<br>४६<br>७  | ०<br>३९<br>५५ | ०<br>५<br>२४  | ०<br>४६<br>४  | ०<br>४७<br>४२ | ०<br>३९<br>५५ | ०<br>५४<br>१४ | ०<br>७<br>३८  | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>०<br>०   | ०<br>५२<br>२२ |
| गु.                    | १<br>३०<br>२८ | १<br>४९<br>३० | १<br>५६<br>२५ | २<br>४०<br>१३ | २<br>९<br>३८  | २<br>१४<br>१० | २<br>७<br>४७  | १<br>३<br>२०  | ०<br>१७<br>३४ | ०<br>२<br>५८  | ०<br>३<br>४२  | १<br>५<br>४६  |
| पा.                    | १<br>२<br>५६  | १<br>१३<br>३० | ०<br>५९<br>४५ | १<br>४४<br>१४ | २<br>९<br>५९  | १<br>३०<br>३६ | २<br>२९<br>२७ | १<br>१५<br>७  | ०<br>२७<br>४७ | ०<br>१२<br>५३ | ०<br>०<br>०   | ०<br>५२<br>५९ |
| इत.                    | ०<br>२७<br>३२ | ०<br>२८<br>०  | ०<br>५६<br>४० | ०<br>५५<br>५९ | ०<br>०<br>१३  | ०<br>४३<br>३४ | ०<br>१३<br>३७ | ०<br>१९<br>५३ | ०<br>१०<br>१३ | ०<br>९<br>५५  | ०<br>३<br>४२  | ०<br>१३<br>१७ |
| हयबलं                  | ०<br>६<br>५३  | ०<br>७<br>०   | ०<br>१४<br>१० | ०<br>१३<br>५९ | ०<br>३<br>३   | ०<br>१०<br>५३ | ०<br>३<br>२३  | ०<br>२<br>५८  | ०<br>२<br>३३  | ०<br>२<br>२९  | ०<br>१५<br>१५ | ०<br>३<br>१९  |

दृग्बध्यैर्युतं स्वामिवलं बलम् ॥ गुरुज्ञाम्यांतु युक्तस्य  
पूर्णमेकं तु योजयेत् ॥ ३४ ॥ मंदाररवियुक्तस्य बलमेकेन

टीका ।

स्वस्मिन् भावे एव यानि ज्ञार्यदर्शनानि बुधगुरुदृष्टयः तैश्च युतं ईदृशं य-  
त्स्वामिवलं भावाधिपबलं तदेव भावबलं ज्ञेयमिति ॥ ३३ ॥ अथात्र  
ग्रहविशेषयोगेन विशेषसंस्कारमाह गुरुज्ञाम्यामित्यादिसार्धचतुस्त्रिंशच्छ्लो-  
कपर्यंतम् । पूर्वसंस्कारेण संस्कृतभावस्य गुरुज्ञाम्यां युक्तस्य एतदन्यतरे-  
ण वा युक्तस्य प्राप्तबलमध्ये एकं योजयेत् मेलयेत् । मंदाररवियुक्तस्य ए-  
तदन्यतमेन वा युक्तस्य भावस्य तु बलं भावबलं एकेन वर्जितं कृत्वा पूर्णब-  
लं भवति अत्रोदाहरणं । तनुभावः ०।६।३।४२ मेघाख्यः अस्य स्वामिनो  
भौमस्य षड्वलैक्यं ५।५९।१६ तनुपरि शुभदृष्ट्यैक्यं १।३।०।२४ अस्य चतु-  
र्थीशः ०।२२।३६ भावोपरि पापदृष्टिः १।२।५६ अस्य चतुर्थीशः ०।१५।४४  
चतुर्थीशद्वयस्य क्रमाद्योगन्हासत्वात् चतुर्थीशद्वयस्य अनंतरं ०।६।५२ एत-  
च्छुभदृष्ट्यवशेषत्वात्स्वामिवलं युक्तं जातं ६।६।८ ज्ञेयदृष्टियोगः ०।५।०।४१  
अनेनापि युक्तं जातं ६।५६।४९ भावे गुरुज्ञयोगाभावात्त्रैकयोगः तथा  
मंदाररवियोगाभावात्त्रैकहानिरिति दृग्बलग्रहयोगबलसंस्कृतभावबलोदा-  
हरणम् ॥ ३४ ॥ अथ भावविशेषे तु कालविशेषेण बलाधिक्यमाह दिवेत्या-  
दिसार्धपंचत्रिंशच्छ्लोकपर्यंतं । शीर्षोदयाः मिथुनतुलासिंहकन्यावृश्चिककुंभाः  
दिवाबलाः दिनकाले सबला भवन्ति उभयोदयाः मीनः संध्यायां प्रातः सार्यं  
भाषा ।

शीश फल निकालके शुभग्रहदृष्टि जादा होवे तो युक्त करना. पापाधिक्य होवे तो  
हीन करना. उसकुं भावबल कहना ॥ ३३ ॥ अब भावबलमें विशेषे संस्कार  
कहते हैं. जिस भावमें गुरु बुध युक्त होवे तो पूर्वोक्त भावबलमें एक मिलाना.  
शनि और मंगल इसमेंसे कोईभी मिलाया होवे तो भावबलमें एक कम करना  
॥ ३४ ॥ अब भावका कालबल कहते हैं. दिवसका जन्म होवे तो मिथुन, तुला,  
सिंह, कन्या, वृश्चिक, कुंभ यह भाव बलवान् जानना. वाकीके निर्वल जानना.  
रात्रिका जन्म होवे तो मेष, वृष, कर्क, मकर, धन, यह भाव बलवान् जानना.



वर्जितम् ॥ दिवा शीर्षोदयाश्चैव संध्यायामुभयोदयः ॥ ३५ ॥  
नक्तं पृष्ठोदयाश्चैव बलाधिक्य उदीरिताः ॥ न्युग्मजूक-  
पाथोनचापपूर्वार्द्धकुंभभात् ॥ ३६ ॥ मृगचापपरार्धाख्य-  
मेषसिंहवृषादपि ॥ अलेः कर्कटकाच्चापि मृगांत्यार्धाच्च  
मीनभात् ॥ ३७ ॥ अस्तं सुखं क्रमाल्लग्नं खं हित्वांगाधिके  
सति ॥ चक्राद्विशोध्य रामैश्चमजेद्भागीकृतं बलात् ॥ ३८ ॥

### टीका ।

संध्याद्वयकाले बली तथा पृष्ठोदयाः मेषवृषकर्कमकरधनुंषि नक्तं रात्रौ बला-  
धिक्ये बलबाहुल्ये उदीरिताः कथिताः इति ॥ ३५ ॥ अथ भावानां दिग्ब-  
लमाह न्युगमित्यादिअष्टत्रिंशत्पर्यन्तम् । अस्तं सप्तमभावं न्युग्मजूकपाथो-  
नचापपूर्वार्द्धकुंभभात् अयं समाहारद्वंद्वः मिथुनतुलाकन्याधनुःपूर्वार्द्धकुंभरा-  
शिभ्यः सकाशाद्वित्वा तथा सुखं चतुर्थभावं मृगचापपरार्धाख्यमेषसिंहवृषा-  
त् अत्रापि समाहारः मृगपूर्वार्धधनुःपरार्धमेषसिंहवृषेभ्यः हित्वा तथा लग्नं  
अलेः वृश्चिकात् कर्कटकाच्च हित्वा तथा खं दशमभावं मृगांत्यार्धात् मकरो-  
त्तरार्धान्मीनभान्मीनराशेश्च सकाशात् हित्वा क्रमात् एवं क्रमेण सप्तमचतुर्थ-  
लग्नदशमभावैः ऊनिताः ये सर्वे राशयः तेषां शेषेऽंगाधिके सति षडधिके  
सति चक्राद्वादश राशिभ्यः विशोध्य ऊनयित्वा शेषं भागीकृतं भागान्कृत्वा  
रामैः त्रिभिर्मजेत् एवं लब्धफलं तत्तद्वाशीनां दिग्बलं भवति । अथोदाहरण-

### भाषा ।

अन्य निर्बल हैं। प्रातःकाल और सायंकालकूं जन्म होवे तो मीन बलवान् जानना।  
बाकी सर्व निर्बल हैं ऐसा जानना ॥ ३५ ॥ अब भावका दिग्बल कहते हैं। मिथुन,  
तुला, कन्या, धनका पूर्वार्ध, कुंभ यह राशीभावमें सप्तम भाव कम करना शेष अंक  
जो आवै वह छःसे जावा होवे तो बारामें शेषके शेषांकका भाग करके तीनसे  
भाग लेना जो लब्ध आवे वो दिग्बल जानना। ऐसा मकरका पूर्वार्ध और धनका  
उत्तरार्ध, मेष, सिंह, वृषभ, यह राशिमें चतुर्थ भावकूं कम करके ऊपर लिखी हुई  
रीतिसे लाना। वैसा वृश्चिक कर्क राशिमें लग्नकूं कम करके फल लाना। वैसा मक-



रामाश्च खान्निः करजलाकराः ॥ ३९ ॥ नवाग्रयः सुराः  
खान्निर्दशसंगुणिताः क्रमात् ॥ रव्यादयः सुबलिनो रा-  
शीनांस्वामिनो वशात् ॥ ४० ॥ अधिकं पूर्णमेवं स्याद्वलं

टीका ।

सूर्यस्य अंकाग्रयः ३८ दशसंगुणिताः ३९० षष्टिभाजिताः ६।३० एतावत्सं-  
ख्यापर्यन्तं षड्वलैक्ये सुबली भवति अतोऽधिके रविः पूर्णबली ज्ञेयः अर्था-  
त् अतोऽल्पे केवलं बली एव । एवमग्रे सर्वत्र । तदित्यं चंद्रस्य अंगरामाः ३६  
दशसंगुणिताः ३६० षष्टिभाजिताः ६।० एतत्पर्यंतं सुबली अतोऽधिके चंद्रः  
पूर्णबली ज्ञेयः । तथा भौमस्य अंकाः खान्नयः ३० दशसंगुणिताः ३०० ष-  
ष्टिभाजिताः ५।० एतत्पर्यंतं सुबली अतोऽधिके भौमः पूर्णबली । एवं बुध-  
स्य करजलाकणः ४२, सुरोः नवाग्रयः ३९, शुक्रस्य सुराः ३३, शनेः खा-  
न्नयः ३०, एते दशसंगुणिताः प्राग्वत्षष्टिभाजिताः ७।६।०।० एतावतो बुधा-  
दीनामंका भवन्ति तत्तदंतसंख्यापर्यन्तं बुधादयः ०।३०।६०।० सुबलिनः  
तत्तदधिके पूर्णबलिनः एवं क्रमाद्रव्यादयः सुबलिनः अर्थादतो न्यूने ब-  
लिन एव पूर्णबलिनो वा ज्ञेयाः । राशीनां सुबलिनो वा ज्ञेयाः । सुबलं पू-  
र्णबलं च स्वामिनो वशात् अधिपबलानुसारतो ज्ञेयम् । एवं च बलं षड्व-  
लैक्यं एवं पूर्वोक्तसंख्यातः अधिकं अतिरिक्तं चेद्रव्यादयः पूर्णबलिनो मताः  
इत्यन्वयः अथोक्तसंख्यान्यूनत्वे बलिन एवेत्यर्थः । ननु दशसंगुणिताः इत्ये-  
वोक्ते षष्टिभाजिताः कार्याः इति भवता कथमुच्यत इति चेद्वलस्य षष्ट्यति-  
रेकानुपपत्तेरिति ज्ञेयम् ॥ ३९ ॥ ४० ॥ नन्वाचार्येण षड्वलसमुच्चयविषये  
पूर्णबलज्ञानाय अंकाग्रय इत्यादिसंख्योक्ता, तथा स्थानाद्यवांतरवलविशे-

भाषा ।

जानना जो कमी ध्रुवांकसे कम होवे तो बली जानना । राशिके बल स्वामीके  
आधीन है. सो स्वामीके निमित्तसे सुबल पूर्णबल जानना । पहिले कहे हुवे अं-  
कसे कमी होवे तो बली और अधिक होवे तो सुबली । इसका चक्र आगे स्पष्ट दिखाया  
है ॥ ३९ ॥ ४० ॥ अब गुरु, बुध, सूर्यका सुबलत्वादिक बताते हैं. गुरु, बुध, सूर्य  
इनका मुख्य क्षेपक १६५ हैं उसकूं साठसे भाग लिया तो फल लब्ध २ शेष

चेद्वलिनो मताः ॥ गुरुसौम्यरवीणां तु भूतषट्केंदवो द्विज  
॥ ४१ ॥ पंचाग्नयः खभूतानि करभूमिसुधाकराः ॥ खाग्न-  
यश्च क्रमात्स्थानदिक्चेष्टासमयायने ॥ ४२ ॥ सिनेन्द्रो-  
ख्यग्निचंद्राश्च खेषवः खाग्नयः शतम् ॥ चत्वारिंशत् क्र-

## टीका ।

पस्य पूर्णत्वं कथं वा ज्ञेयमिति चेत्समाधानायावांतरस्थानादिपंचबलानां  
पृथक्संख्यामाह गुरुसौम्येत्वादित्रिचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यन्तत् । हे द्विज मैत्रेय !  
गुरुसौम्यरवीणां त्रयाणां भूतषट्केन्द्रवः १६५ षष्टिमत्तया २।४५ स्थानबले  
सुबलत्वमतोधिके पूर्णत्वम् तेषां पंचाग्नयः ३५ दिग्बले सुबलत्वम् अतो-  
धिके पूर्णत्वम् तेषां खभूतानि ५० चेष्टाबले सुबलत्वं अतोऽधिके पूर्णत्वं ते-  
षां करभूमिसुधाकराः ११२ षष्टिमत्तया १।५२ कालबले सुबलत्वं अतोऽ-  
धिके पूर्णत्वत्वम् तेषां खाग्नयः ३० अयनबले सुबलत्वम् अतोधिके पूर्ण-  
बलत्वं एवं सिनेन्द्रोः शुकचंद्रयोः स्थानबले अग्निचंद्राः १३३ षष्टिमाजिते  
२।१३ दिग्बले खेषवः ५० चेष्टाबले खाग्नयः ३० कालबले शतं १०० षष्टि-  
भक्ते १।४० अयनबले चत्वारिंशत् ४० क्रमात्सुबलत्वम् पूर्णबलत्वं ज्ञेयम्  
एवं च भौममंदयोः कुजशन्योः स्थानबले षण्णवति ९६ षष्टिमत्तया १।३६  
दिग्बले त्रिंशत् ३० चेष्टाबले खेपदाः ४० कालबले सप्तांगाः ६७ षष्टिभक्ते  
१।७ अयनबले नखाः २० एतत्संख्यायां सुबलत्वम् अधिके पूर्णत्वं अर्थात्  
उक्तसंख्यान्यूनत्वे बलवत्त्वमेवेति । ननु अत्र षड्वलैक्यांकनियमे पंचबला-  
नामेव भिन्नतया संख्योक्ता षष्ठस्य दृग्वलस्य नियत संख्या कुतो नोक्ता वे-  
ति चेत्तस्य स्थानविशेषोदलब्ध्याऽनियतत्वाद्दण्डनसाधनीभूतत्वाच्चेतिज्ञा-

## भाषा ।

४५ ऐसा २।४५ स्थानबलमें सुबलत्व जानना इस अंकसे जादा होवे तो पूर्ण  
बल जानना वैसा दिग्बलमें इनोका मुख्य अंक ३५ है साठसे भाग लिया तो  
लब्ध ० शेष ३५ दिग्बलमें सुबलत्व जानना. इससे अधिक होवे तो पूर्ण बली जा-  
नना ऐसा आगे सब बलमें जानना. इसका स्पष्ट चक्र आगे दिखाया है ॥ ४१ ॥

माद्रौममन्दयोः षण्णव क्रमात् ॥ ४३ ॥ त्रिंशत्खवेदाः  
सप्तांगा नखाश्च बलिनोविदुः ॥ भावस्थानग्रहैः प्रोक्तयो-  
टीका ।

नव्यम् । अथास्यसुगमतया परिज्ञानाय नियतांकचक्रमग्रे लिख्यते ॥ ४१ ॥  
४२ ॥ ४३ ॥ अथ प्राप्तेषु बहुषु योगहेतुषु विशेषयोगकर्तृतया फलप्रदज्ञान-  
माह भावस्थानेत्यादिपंचचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यन्तम् । भावस्थानग्रहैः भावाः  
तन्वादयः स्थानानि स्वक्षेत्रोच्चत्रिकोणादीनि तेषु वर्तमानाः ये ग्रहाः तैः

| अथ ग्रहाणां भावानां च बलसुबलपूर्णबलत्वज्ञापकनियतांकचक्रमिदम्. |           |           |           |           |           |           |             |
|---|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-------------|
| स्व.  | चंद्रस्य. | भौमस्य.   | बुधस्य.   | शुक्र.    | शुक्रस्य. | शनि.      | ग्रहाणाम्   |
| पंचाग्रः  | भगवताः    | स्वाम्यः  | करजलाः    | नग्राग्रः | सुगः      | स्वाम्यः  | षड्वलेक्षप. |
| ३९  | ३३        | ३०        | ५२        | ३९        | ३३        | ५३        | सुबलपूर्णव  |
| ३९  | ३०        | ३०        | ५२        | ३९        | ३०        | ३०        | लांकाः      |
| म. प. द.  | अग्निच.   | पण्णव.    | म. प. द.  | म. प. द.  | अग्निच.   | पण्णव.    | स्थानबले.   |
| १६५   | १३३       | १६        | १६५       | १६५       | १३३       | ९६        | सुबलपूर्ण   |
| २   | २         | १         | २         | २         | २         | १         | बलांकाः     |
| ४५  | १३        | ३६        | ४५        | ४५        | १३        | ३६        | दिग्बले     |
| पंचाग्र.  | खेपवः     | त्रिंशत्  | पंचाग्रयः | पंचाग्र.  | खेपवः     | त्रिंशत्  | सुबलत्वादि  |
| ३५  | ५०        | ३०        | ३५        | ३५        | ५०        | ३०        | द्यौनकांकाः |
| समूताः  | ख.प्राः   | खवशः      | खमृताः    | खमृताः    | खप्रायः   | खवेदाः    | षष्टाबले.   |
| ५०  | ३०        | ४०        | ५०        | ५०        | ३०        | ४०        | सुबलत्वादि  |
| क. म. म.  | शनि.      | सप्तांगाः | करमृ. म.  | क. म. म.  | शनि.      | सप्तांगा. | द्यौनकांकाः |
| ११२   | १००       | ६७        | ११२       | ११२       | १००       | ६७        | सुबलत्वादि  |
| १   | १         | १         | १         | १         | १         | १         | द्यौनकांकाः |
| ५२  | ४०        | ७         | ५२        | ५२        | ४०        | ७         | अथनवने.     |
| ग्राग्रयः   | चत्वारि.  | नवाः      | ग्राग्रयः | ग्राग्रयः | चत्वारि   | नवाः      | सुबलत्वादि  |
| ३०  | ४०        | २०        | ३०        | ३०        | ४०        | २०        | द्यौनकांकाः |
| ६   | ५         | ४         | ६         | ६         | ५         | ४         | षड्वलेक्षप- |
| ३२  | ५३        | १३        | ३२        | ३२        | ५३        | १३        | निः         |

भाषा ।

॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अब अनेक बली ग्रहोंमें मुख्य योगफल देनेवाला कोन है, उ-  
सका लक्षण कहते हैं. पहिले स्वक्षेत्र मुलत्रिकोणोद्यादिकके होयके तनुधनादिक

गे ये योगहेतवः ॥ ४४ ॥ तेषां बलीयः कर्तासौ स एवा-  
स्य फलप्रदः ॥ योगेष्वामेषु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्तितः  
॥ ४५ ॥ गणितेषु प्रवीणश्च शब्दशास्त्रे कृतश्रमः ॥ न्या-  
यविद्वद्धिमान् होरास्कंधश्रवणसम्मतः ॥ ४६ ॥ दैवविदे-  
शिको देवसंमतो देशकालवित् ॥ ऊहापोहपटुः प्राज्ञः प-

### टीका ।

साधनीभूतेरित्यर्थः प्रोक्तयोगे कथितफलविषये ये ग्रहाः योगहेतवः फलहे-  
तुभूताः बहव इत्यध्याहारः तेषः मध्ये यः बली षड्बलाधिक्यवान् स एव  
च असौ ग्रहः अस्य उक्तयोगस्य कर्ता संपादकः अतः स एवास्य योगस्य  
फलप्रदो ज्ञेयः इति षड्वले विशिष्टफलदत्वं ध्वनितम् एवं बहुषु योगेषु आ-  
मेषु प्राप्तेषु एवमुक्तप्रकारकन्यायः प्रकीर्तित इत्यन्वयः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अथ  
एतच्छास्त्राधिकारिलक्षणमाह गणितेष्वित्यादियावदध्यायसमाप्ति । गणितेषु  
गणितविषयेषु प्रवीणः कुशलः च परं न्यायविस्त्रे व्याकरणशास्त्रे कृतश्रमः  
कृतः श्रमो दृढाभ्यासो येन सः च परं न्यायवित् न्यायशास्त्रं वेत्तीति स त-  
था न केवलं शाब्दिक एव शब्दव्युत्पत्त्या केवलं शब्दग्रहेण दुरुद्धार्थाग्रहण-  
संगदोषापाकरणस्य शाब्दिकाशक्त्यादित्यर्थः बुद्धिमान् बुद्धिरस्यास्तीति स  
तथा न केवलं अधीतशास्त्रोपि जडधीरिति तत्तात्पर्यम् । एतादृशसाहित्य-  
वान् सन् होरास्कंधश्रवणसम्मतः होरास्कंधः होराशास्त्रसमूहः तस्य श्रवणं  
तद्विषये संमतः संमान्यः दैववित् दैवं वेत्तीति तथा देशिकः शिक्षणसमर्थः  
देवसंमतः देवाः संमता यस्य देवताराधक इत्यर्थः देशकालवित् देशकालज्ञः

### भाषा ।

स्थानोंमें बैठे जो ग्रह उसमेंसे जो ग्रह ग्रहबलमें अधिक बलवान् होवे वो वक्ष्यमा-  
ण योगफलकूं देनेवाला जानना ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अब इसका फल कहनेकूं कौन  
योग्य है सो कहतेहैं. गणितविद्यामें कुशल, व्याकरणमें निपुण, न्यायकूं जाननेवा-  
ला, बुद्धिमान्, साहित्य शास्त्रमें कुशल, देवताराधन नित्य करनेवाला, देशकालकूं  
जाननेवाला, तर्क समाधान करनेकूं समर्थ, स्वजनसे मिलापी रहनेवाला, ऐसा

दुः स्वजनसंमतः ॥ ४७ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामु-  
त्तरभागे भावषड्बलादिवर्णने द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥  
नीचोनं तु ग्रहं भार्वाधिक्ये चक्राद्विशोधयेत् ॥ उच्चरश्मि-

### टीका ।

होराशास्त्रीयफले देशकालतारतम्येन विचारशील इत्यर्थः ऊहापोहपटुः ऊहः  
तर्कः अपोहः समाधानं तयोः पटुः कुशलः प्राज्ञः प्रकर्षेण उक्तार्थेष्वपि वि-  
शेषतया जानातीति तथा विशेषकल्पक इत्यर्थः पटुः सर्वप्रकारेण कुशलः  
स्वजनसंमतः स्वजनाविरोधी एतादृशः पुरुषः एतच्छास्त्रेऽधिकारी भवती-  
ति ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ एवं पराशरोक्तेस्मिन् द्वितीयेऽध्यायके मया ॥ यथामति  
कृता टीका गणेशायार्पितास्तु सा ॥ १ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे  
श्रीमद्ध्यङ्गुः न्वयवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्योतितदिग्मंडलजटाशंकरसूनु-  
ज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनीटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

उच्चरश्म्यादीष्टकष्टविचारमुपदिष्टवान् ॥ अध्याये तु तृतीयेऽस्मिन्स्वशि-  
ष्यायर्षिराण्मुदा ॥ १ ॥ अथ श्रीपराशरमहर्षिर्भगवानस्मिन्तृतीयाध्याये इ-  
ष्टकष्टं विशदयन्नादौ नीचोनमित्येकेनोच्चरश्म्यानयनमाह । नीचोनं नीचेन  
ऊनं हीनं तथोक्तं कृतमिति शेषः ग्रहं ख्याद्यन्यतमं भार्वाधिक्ये भानां द्वा-  
दशराशीनां अर्धं पण्डितं भार्धं तस्माद्राशिस्थानीयांकपटसंख्यायाः आधि-  
क्यम् अधिकस्य भाव आधिक्यं विशेषत्वम् तस्मिन् सति चक्राद्राशिसमूहात्  
द्वादशराशिभ्य इत्यर्थः विशोधयेत् अवशेषयेदित्यर्थः । ततः राशिः राशिस्था-

### भाषा ।

दैवज्ञ पुरुष इस शास्त्र पढनेकू और फलादेश कहनेकू समर्थ होवेंगे ॥ ४६ ॥ ४७ ॥  
इति श्रीबृहत्पाराशर होरायां श्रीधरकृतभाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अब उच्चरश्मिका बल कहते हैं- स्पष्ट राश्यादि-  
क ग्रहमेसे अपना अपना नीच राशि अंशहीन करके  
शेष अंकमे राशि छःसे जादा होवे तो बारहमे शुद्ध  
करके पीछे राशीके ठिकाने एक मिलाना. अश कला

| अथोच्चरश्मिचक्रम्. |    |    |    |    |    |    |    |    |  |
|--------------------|----|----|----|----|----|----|----|----|--|
| सु                 | च  | म  | बु | शु | श  | रा | यो |    |  |
| ४                  | ०  | ५  | ३  | २  | ६  | ४  | ०  |    |  |
| ४८                 | ४४ | १  | ८  | ०  | १  | २० | २३ | ४५ |  |
| १८                 | ५८ | ५२ | ५२ | १८ | २८ | २६ | ०२ |    |  |

विकलाकू दुगनी करके साठसे ऊपर चढाना ओ उच्चरश्मि आया ॥ १ ॥

भवेद्वाशिः सैको द्विघ्नांशसंयुतः ॥ १ ॥ सायनांशार्क इंदु-  
श्च सत्रिभो भानुवर्जितः ॥ चेष्टाकेन्द्रं कुजादीनां पूर्वाध्या-  
ये समीरितम् ॥ २ ॥ उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मिं द्वयो-  
टीका ।

नीयांकः सैकः एकसंख्यया सहितः द्विघ्नांशसंयुतः द्वाभ्यां हन्यते गुण्यते ते  
द्विघ्नाः ते च ते अंशाः लक्षणया अंशकलाविकलाः द्विघ्नांशाः तै संयुतः रा-  
श्यंक इत्यर्थः उच्चरश्मिः भवेदिति अथोदाहरणम् सूर्यः १०।४।१४।० अस्त्य  
नीचं ६।१०।० अनेन हीनः सूर्यः ३।२४।१४ अयं राशौ सैकः १ जातो रा-  
श्यंकः ४ ततः अवशिष्टाः अंशादयः २४।१४।० एते द्विगुणिताः ४८।२८।०  
एतैर्युक्तो राशिः ४ जात उच्चरश्मिः सूर्यः ४।४८।२८।० एवं सर्वेषु ग्रहेषु उ-  
च्चरश्मिसंस्कारो ज्ञेय इति ॥ १ ॥ अथ शुभाशुभरश्म्यानयनार्थमादौ चेष्टार-  
श्मीन्कथंयस्तत्साधनं चेष्टाकेन्द्रमाह सायनेत्येकश्लोकेन । सायनांशार्कः अय-  
नांशैः सहितः सायनांशः स चासावर्कः रविः इंदुः निरयन एव चंद्रश्च चकारः  
क्रमद्योतनाय ज्ञेयः स त्रिंशः त्रीणि च तानि भानि राशयश्च त्रिभानि तैः स-  
हितः सत्रिभः भानुवर्जितः भानुना रविणा वर्जितः हीनश्च क्रमात् सूर्यकेन्द्रं  
चंद्रकेन्द्रं च भवति कुजादीनां भौमादिपंचग्रहाणां तु पूर्वाध्याये 'मध्यमस्फुटे'  
त्यादिभिः समीरितं स्पष्टीकृतं बोध्यमिति ॥ २ ॥ अथ चेष्टारश्मीन्शुभाशुभ-

भाषा ।

| अथ शुभरश्मिचक्रम्. |    |    |     |     |     |    |     | अथ शुभरश्मिचक्रमिदम्. |    |    |     |     |     |    |     |
|--------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|-----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| रा.                | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | गो. | सु.                   | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | गो. |
| ३                  | २  | ४  | २   | ४   | ५   | ५  | २८  | ८                     | ५  | ३  | ५   | ३   | २   | २  | २६  |
| ५०                 | ११ | ५  | ५   | ६   | २४  | ३४ | १८  | ४१                    | ९  | २८ | ५४  | ३   | ५   | २० | ११  |
| २९                 | १४ | १६ | २३  | २८  | ५१  | ५८ | ३९  | ३१                    | ४६ | ४४ | ३०  | ३८  | ९   | २  | २१  |

अव चेष्टारश्मी कहते हैं. सूर्यकू सायन करके उसमें  
तीन राशि जोड़के जो राश्यादि अंक मये उरूकू सूर्य-  
केन्द्र कहना, और चंद्रकू सूर्यमें हीन किया सो चंद्र-  
केन्द्र भया मंगलादि पांच ग्रहोंका चेष्टाकेन्द्र द्वितीया-  
ध्यायमें पहिले स्पष्टीतिसे बताया है ॥ २ ॥ अब चेष्टारश्मि, शुभरश्मि और अ-

| अथ चेष्टारश्मिचक्रम्. |    |    |     |     |     |    |     |
|-----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सु.                   | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | गो. |
| २                     | २  | ३  | २   | ६   | ४   | ६  | २८  |
| १२                    | १७ | ८  | १३  | २७  | ४९  | ४  | २१  |
| ३०                    | ३० | ४० | ५४  | ३८  | १४  | ३० | ५६  |



युतेः ॥ दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टम्यो वर्जितोऽशुभः॥३॥  
उच्चचेष्टाकरौ व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत् ॥ दलयेदि-  
टीका ।

रश्मींश्चाह उच्चेति । चेष्टारश्मिं तु उच्चरश्मिवदेव प्रागुक्तरीत्या भार्वाधिके च-  
क्राद्विशोधयेत् इत्यादि ज्ञेयम् । नात्र नीचोनमित्युक्तसंस्कारः । आनीय सं-  
पाद्य तं चेष्टारश्मिं जानीयात् । अथ शुभाशुभरश्मीनाह । द्वयोर्युतेः द्वयोः  
चेष्टारश्म्युच्चरश्म्योः युतेः योगस्य दलमर्धं शुभरश्मिर्भवति स एव शुभरश्मिः  
अष्टम्यो वर्जितः अशुभरश्मिर्भवति । अथ चेष्टारश्म्युदाहरणम् । सूर्यः  
१०।४।१४ अयनांशाः २२।१ एभिर्युक्तो जातः १०।२६।१५ अयं राशित्रयेण  
युक्तो जातः १।२६।१५ जातमेतद्विचेष्टाकेन्द्रं एतच्चेष्टाकेन्द्रं सैकं २।२६।१५  
एतदंशकलाविकलाद्विगुणितं २।५२।३० जातोऽयं चेष्टारश्मिः । अथ शुभ-  
रश्म्युदाहरणम् । सूर्योच्चरश्मिः ४।४८।२८ सूर्यचेष्टारश्मिः २।५२।३० अन-  
योर्योगः ७।४०।५८ अस्यार्धम् ३।५०।२९ जातोऽयं शुभरश्मिः । अथाशुभ-  
रश्म्युदाहरणम् । सूर्यः शुभरश्मिः ३।५०।२९ अयमष्टवर्जितः जातः ४।९।३१  
जातोयमशुभरश्मिरिति ॥३॥ अथ केवलं ग्रहाणां इष्टकष्टमाह उच्चेति । उच्च-  
चेष्टाकरौ उच्चं च चेष्टा च उच्चचेष्टे ते च ते करौ रश्मी च तथोक्तौ “ किरणो-  
भाषा ।

शुभरश्मि उसके लानेकी रीति कहते हैं. चेष्टारश्मि जो उच्चरश्मि पहिले कही है  
उस रीतिसे लाना चेष्टारश्मि उच्चरश्मि इन दोनोंकूं मिश्रित करके उसका अर्ध क-  
रना ओ शुभरश्मि होती है. उसकूं आठसे घटाया तो अशुभरश्मि भई ॥ ३ ॥  
अब इष्टकष्ट कहते हैं. उच्चरश्मीमें एक हीन करके उसकूं दशगुणित करना, और  
चेष्टारश्मीमेंभी एक हीन करके उसकूं दशगुणित करना पीछे दोनोंकूं जोड़के उसकूं

| अथ इष्टचक्रम्. |    |    |     |     |     |    |     | अथ कष्टचक्रम्. |    |    |     |     |     |    |     |
|----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सु.            | च. | म. | नु. | गु. | शु. | श. | यो. | सु.            | च. | म. | नु. | गु. | शु. | श. | यो. |
| २८             | १५ | ३० | १९  | ३४  | ४५  | ४३ | २१  | ३१             | ४४ | २९ | ४०  | २५  | १४  | १६ | २०  |
| ५४             | १२ | ५२ | २३  | ४   | ४८  | १९ | ५६  | ३५             | ४७ | ७  | ३६  | ५५  | ११  | ४० | ५३  |
| १०             | २० | ५० | ५०  | ४०  | ३०  | ४० | ४०  | १०             | ४० | १० | ४०  | १०  | ३०  | २० | १०  |

अर्ध करना सो इष्टवल जानना उसकूं साठमें पाडे तो कष्टवल हुवा जानना॥ ४॥

ष्टमन्यत्स्यात्षष्टिभ्यो वर्जितं फलम् ॥ ४ ॥ स्वोच्चे मूल-  
त्रिकोणे च स्वर्क्षेऽधिसुहृदि क्रमात् ॥ मित्रर्क्षे च समर्क्षे च  
शत्रुभे चातिशत्रुभे ॥ ५ ॥ नीचे च षष्टिरिष्वब्धिः खाग्निः  
करकरास्तिथिः ॥ नागावेदाः करौ शून्यं शुभमेतत्फलं  
विदुः ॥ ६ ॥ षष्टिभ्यो वर्जिताश्चैते शिष्टं स्यादशुभं फलम् ॥

### टीका ।

समयूखांशुगभस्तिवृणिरश्मयः । भानुःकरोमरीचिस्त्री ” इत्यमरः । द्वंद्वान्ते  
श्रूयमाणपदस्य प्रत्येकमभिसंदध्यादेतदर्धलाभः उच्चराश्मिश्चेष्टारश्मिश्चेत्यर्थः  
व्येकौ विगतः एको बाभ्यां तौ तथा दिग्भिः हत्वा दशभिर्गुणयित्वा तु यो-  
जयेत् मिश्रयेदित्यर्थः पुनः दलयेत् दलं कुर्यात् द्वाभ्यां विभजेदित्यर्थः । एवं  
कृते तत्फलमिष्टं स्यात् इष्टसंज्ञकं भवति तदिष्टं षष्टिभ्यो वर्जितं षष्टितो हीनं  
फलमवशेषरूपं अन्यत् इष्टेतरत् कष्टसंज्ञकमित्यर्थः स्यात् इष्टशब्देन शुभम्  
कष्टशब्देन अशुभं ज्ञेयमिति । अथास्योदाहरणम् सूर्योच्चराश्मिः ४।४८।२८  
व्येकः ३।४८।२८ अयं दशगुणितः ३०।४८०।२८० तथैव सूर्यचेष्टार-  
श्मिः २।५२।३० व्येकः १।५२।३० दिग्घतः १०।५२०।३०० व्येकदिग्घ-  
तसूर्योच्चचेष्टारश्म्योर्योगः ४०।१०००।५८० अस्य दलं २०।५००।२९०  
तत् षष्ट्यधिकत्वात् षष्ट्यंशोद्धृतं जातं २८।२४।५० एतदिष्टम् । अथ  
कष्टोदाहरणम् । इष्टं २८।२४।५० एतत् षष्टिवर्जितं ३१।३५।१० जातमेतत्क-  
ष्टमिति ॥ ४ ॥ अथेष्टकष्टफलसप्तवर्गेषु स्वोच्चादिस्थानविशेषवर्तमानतत्तत्प-  
तिवशाज्ज्ञेयमित्याह स्वोच्चइत्यादिसप्तमश्लोकपर्यंतम् । स्वोच्चे स्वोच्चादिस्थान-  
विचारो द्वितीयाध्याये नवमश्लोकटीकायां विशदीकृतो बोध्यः । स्वस्वउच्चं  
तस्मिन् ग्रहवर्तमानराशिवर्गपतिश्चेत् तदिष्टं फलं षष्टिः ६० कलापरिमितं  
ज्ञेयं अयमुच्चध्रुवांकः ६० एनं षष्टिभ्यो ६० वर्जयित्वा शिष्टं ०।०।० अशुभं  
कष्टसंज्ञकं ज्ञेयमिति सप्तमश्लोकपूर्वाधिनान्वयः इति अग्रिमेष्वध्रुवांकेषु कष्टाव-

### भाषा ।

अब-बृहत् इष्ट कष्ट चल कहते हैं. उच्चराशिका ग्रहका चल ६०, मूलत्रिकोणका ४५,

## टीका ।

गमे षष्टिवर्जनावशेषो ज्ञेयः यथा मूलत्रिकोणे वर्तमानराशिर्वर्गपतिश्चेत् तदिष्टं इष्टाब्धिः ४५ कलात्मकं अयं १० वांकः एनं षष्टिम्यो ६० वर्जयित्वा शेषं १५ कष्टं एवमेव स्ववर्गे वर्तमानराशिर्वर्गपतिश्चेत् तदिष्टध्रुवांकः स्वाग्निः ३० आस्मिन्षष्टिवर्जिते शेषं ३० कष्टं तथा अधिसुहृदि अधिमित्रक्षेत्रे ग्रहवर्तमानराशिर्वर्गपतिश्चेत्तदिष्टध्रुवांकः कर्कराः २२ एतत् षष्टिवर्जावशेषस्तु ३८ कष्टं ज्ञेयं तथा मित्रक्षेत्रे मित्रक्षेत्रे ग्रहवर्तमानराशिर्वर्गपतिश्चेत् तदिष्टं तिथिः १५ अयं ध्रुवांकः षष्टिवर्जितः कृतः शेषं ४५ कष्टं तथा समक्षे उदासीनक्षेत्रे ग्रहवर्तमानराशिपतिश्चेत्तदिष्टध्रुवांकः नागाः ८ एनं ६० एषु वर्जयित्वा शेषं ५२ कष्टं तथा शत्रुमे शत्रुक्षेत्रे वर्गपतिश्चेत्तदिष्टध्रुवांकः वेदाः ४ एनं ६० एषु वर्जयित्वा शेषं ५६ कष्टं तथा अति शत्रुमे अतिशत्रुक्षेत्रे वर्गपतिश्चेत्तदा ध्रुवांकः २ षष्टिवर्जनावशेषं ५८ कष्टं नीचे नीचस्थिते ऽवर्गपतौ तदिष्टध्रुवांकः शून्यं० षष्टिवर्जनावशेषः ६० एतत्कष्टं एवं उच्चादिस्थानस्थिततत्तद्गर्गपतिवशात् सप्तवर्गेष्टकष्टं ज्ञेयम् । ननु वर्गपतिवशादिति मूलेनोक्तत्वात् तत्तद्गर्गदृष्ट्यैवेष्टकष्टं कुतो न ग्राह्यमिति चेन्न । केशवदैवज्ञैः “ग्रहाधिपवशात् खेटस्य सप्तैक्यजम्” इति स्पष्टमुक्तत्वात् । अपि च प्रौढमनोरमाकारेण सोपपत्तिकं “स्वगृहादिगतानां यद्ग्रहाणामुदितं बलम् । तदेव सप्तवर्गेपि नदीशस्य वशान्नवेत्” इति श्रीधराचार्यादिवचनप्रमाणसहितं च प्रपञ्चितं तद्बोध्यम् । अत्रानावश्यकत्वाद्ग्रन्थविस्तारमभिया न प्रतिपादितं एतत्सर्वफलं केवलं गृहवर्गजमेव बोध्यम् । न होराद्रेष्काणादिवर्गजं होरादिवर्गेषु तु तदर्थं त्विति अन्यवर्गे होरादिरूपे तु तदर्थं तस्य स्वोच्चादिविहितपूर्वोक्तस्य अर्थं उक्तध्रुवांकार्थं शुभाशुभं इष्टकष्टसंज्ञकं फलं प्रोक्तं कथितमिति न तु अन्यशब्देन होरादिस्थानग्रहेण किं मानमिति चेत् श्रीपतिपद्धतौ “तद्वलं भवति शेषवर्गजम्” इति । अत्र शेषशब्देन ग्रहेतरहोरादिवर्ग एव स्वीकृतः “इष्टे गेहे तदूनैकमसदथ दलं पदसु कार्ये तदैके” इति केशवदैवज्ञोक्तेः । मनोरमादिटीकाप्रमाण्यात् युक्तियुक्त-

## भाषा ।

स्वराशिका ३०, अधिमित्रका २२, मित्रक्षेत्रका १५, समराशिका ८, शत्रुराशिका

## . टीका ।

त्वात् शिष्टानुमतेश्चेतिदिक् । अथास्योदाहरणमाह । सूर्यः १०।४।१४ शनिः  
क्षेत्रगः गृहवर्गपतिः शनिः ५।८।११ स्वस्थानगः अतः तद्वलं स्वक्षेत्रोक्तं ०।  
३०।० इष्टवलं प्राप्तं तत् पष्टिवर्जितमवशिष्टं ०।३०।० इति क्षेत्रजकष्टोदाहर-  
णम् । अथ होरादिषट्कोदाहरणम् । सूर्यः १०।४।१४ रविहोरायां वर्तमानः  
अतो होरापतीरविः शत्रुक्षेत्रस्थः तत्रत्यमिष्टं ०।४।० षष्ट्यूनं ०।५६।० एत-  
न्मूलध्रुवांकतः प्राप्तमपि “तदर्धं तु फलं प्रोक्तमन्यवर्गे” इति विशेषोक्तेः सा-  
मान्योक्तिप्राप्तेष्टाः ०।२।० कष्टं तु ०।२८।० एतद्धोराबलोदाहरणम् । अथ द्रे-  
ष्काणोदाहरणम् । सूर्यः १०।४।१४ शनिद्रेष्काणस्थः अतस्तत्पतिः शनिः ९।

| अथ अशुभसप्तकवर्गकष्टवलचक्रम्. |    |     |     |     |     |    |            | अथ शुभसप्तकवर्गइष्टवलचक्रमिदम्. |     |     |     |     |     |    |            |
|-------------------------------|----|-----|-----|-----|-----|----|------------|---------------------------------|-----|-----|-----|-----|-----|----|------------|
| सू.                           | च. | मं. | डु. | गु. | शु. | श. | ग्रहाः     | सू.                             | चं. | मं. | डु. | गु. | शु. | श. | ग्रहाः     |
| ३०                            | ४५ | ४५  | ३०  | ३०  | ४५  | ३० | ग्रह.      | ३०                              | १५  | १५  | ३०  | ३०  | १५  | ३० | ग्रह.      |
| ०                             | ०  | ०   | ०   | ०   | ०   | ०  |            | ०                               | ०   | ०   | ०   | ०   | ०   | ०  |            |
| २८                            | २२ | २२  | २६  | २२  | २२  | २२ | होरा.      | ३                               | ७   | ७   | ७   | ७   | ७   | ७  | होरा.      |
| ०                             | ३० | ३०  | ०   | ३०  | ३०  | ३० |            | ०                               | ३०  | ०   | ३०  | ३०  | ३०  | ३० |            |
| १५                            | २६ | १२  | २२  | २८  | २२  | १५ | द्रेष्काण. | १५                              | ४   | ११  | ७   | २   | ७   | १५ | द्रेष्काण. |
| ०                             | ०  | ३०  | ०   | ३०  | ०   | ०  |            | ०                               | ०   | ३०  | ०   | ३०  | ०   | ०  |            |
| १५                            | ०  | २२  | २८  | ०   | ०   | २६ | सप्तांश.   | १५                              | ३०  | ७   | २   | ३०  | ३०  | ४  | सप्तांश.   |
| ०                             | ०  | ३०  | ०   | ०   | ०   | ०  |            | ०                               | ३०  | ०   | ३०  | ०   | ०   | ०  |            |
| १५                            | १५ | २२  | १८  | १६  | २८  | २२ | नवांश.     | ११                              | ११  | ७   | ११  | १५  | २   | ७  | नवांश.     |
| ०                             | ०  | ३०  | ०   | ०   | ०   | ३० |            | ०                               | ३०  | ०   | ०   | ०   | ०   | ३० |            |
| २२                            | ०  | १५  | ०   | २६  | ०   | १५ | द्वादशांश. | ७                               | ३०  | १५  | ३०  | ४   | ३०  | ११ | द्वादशांश. |
| ३०                            | ०  | ०   | ०   | ०   | ०   | ०  |            | ०                               | ०   | ०   | ०   | ०   | ०   | ०  |            |
| १५                            | ०  | १५  | २८  | २२  | २८  | २८ | त्रिंशांश. | ११                              | ३०  | ११  | २   | ७   | २   | २  | त्रिंशांश. |
| ०                             | ०  | ०   | ३०  | ०   | ०   | ०  |            | ०                               | ०   | ०   | ३०  | ०   | ०   | ०  |            |
| २                             | १  | ०   | २   | २   | २   | २  | ऐक्य.      | १                               | २   | १   | १   | १   | १   | १  | ऐक्य.      |
| ३०                            | ३० | ०   | ०   | ०   | ०   | ०  |            | ३२                              | ७   | ११  | ३०  | ३६  | ४४  | १७ |            |

तदर्थं तु फलं प्रोक्तमन्यवर्गे शुभाऽऽशुभम् ॥ ७ ॥ पंचस्वि-  
ष्टफलं चादौ षष्ठं सममुदाहृतम् ॥ अशुभास्तु त्रयः प्रो-

## टीका ।

८।११ स्वक्षेत्रगः अतः द्रेष्काणकष्टबलं मूलध्रुवांकतः प्राप्तं स्वक्षेत्रजं  
०।३०।० पष्ट्यूनं कष्टं तु ०।३०।० अस्यार्थं ०।१५।० इष्टं पष्ट्यूनं कष्टं  
०।१५।० एवं रीत्या होरादित्रिंशांशपर्यंतं ध्रुवांकार्थं ज्ञेयम् न तु गृहवर्गवत्  
समग्रमिति सर्वत्र बोध्यम् ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ एवं स्वोच्चादिनीचांतनवस्थानव-  
र्तमानवर्गपतितारतम्येन नवविधं सर्ववर्गेष्टफलमुक्तं तन्मध्ये शुभाशुभं विभ-  
जते पंचस्वित्येकेन । आदौ पंचसु प्रथमोक्तस्वोच्चत्रिकोणस्वर्क्षाधिमित्रमित्रसं-  
ज्ञकेषु पंचसु स्थानेषु वर्तमानवर्गपतेः प्राप्तमिष्टं इष्टफलं शुभफलकं ज्ञेयम् तत  
उक्तसमसंज्ञकषष्ठस्थानगतवर्गपतेः इष्टं सममुदाहृतं तुल्यशुभाशुभफलकं ज्ञे-  
यम् तत उक्तास्त्रयः शश्वधिशत्रुनीचसंज्ञकस्थानत्रयवर्तमाना इष्टप्रदवर्गपतयः  
अशुभाः इष्टफलसूचकाः प्रोक्ताः कथिताः अर्थात् शश्वधिशत्रुनीचस्थानत्र-  
यवर्गपतिसमुद्भूतं इष्टं कष्टं च द्वे अपि अशुभफले एव तेन तेषां ग्रहवर्गेष्ट-  
मितं होरादिवर्गेषु तदर्थं संभावितं अशुभमेवेति तात्पर्यम् इति एवं प्रकारकः

## भाषा ।

४, अतिशत्रुका २, नीचका० यह शुभका बल कह्या यह बलमें अंकोंकू साठमें  
घटायै तो अशुभकष्ट बल होता है. और होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश,  
त्रिंशांश, इनकी राशियोंमें स्वाच्चादिक हेवे तो साठ आदि जो बल कह्या है उसका  
अर्थ फल लेना वैसा पापवर्गमें जानना उसका अन्यवर्ग नाम है उसका बलका  
निर्णय ऐसा है कि शुभइष्टमें होवे तो शुभका अर्थ लेना पापमें पापका अर्थ लेना  
॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ अब पहिले जो उच्चादि नव प्रकारका बल कह्या है उसका  
शुभाशुभ कहते हैं. जो उच्च, मूल, त्रिकोण, स्वग्रह, मित्रक्षेत्र, अधिमित्रक्षेत्र, यह-  
पांच स्थानोंके ग्रहोंका बल शुभ जानना, और समक्षेत्रगत ग्रहका बल सम जान-  
ना. नीच, शत्रु आदिशत्रु, राशिगतग्रहका बल अशुभ जानना. ऐसा इस शास्त्र-

क्ता इति शास्त्रेषु निश्चयः ॥ ८ ॥ दिग्बलं दिक्फलं तस्य  
तथा दिनफलं भवेत् ॥ तयोः फलं शुभं प्रोक्तं षष्ठ्या व-  
र्ज्यं तथेतरत् ॥ ९ ॥ शुभाधिके शुभं नेष्टमशुभे चाधिके  
शुभात् ॥ बलैरेव हते स्यातां दृष्टिं हन्यात्स्फुटैव सा ॥ १० ॥  
बलैः षड्भिः समेधित्वा समानीतैः पृथक् पृथक् ॥ बलि-

## टीका ।

शास्त्रेषु ज्योतिःशास्त्रेषु निश्चयः निर्णय इति ॥ ८ ॥ अथ दिग्बलं दिनफलं  
च शुभाशुभफलसहितमाह दिग्बलमिति द्वाभ्याम् । अथ विवक्षितग्रहस्य दि-  
ग्बलं उक्तरीत्या प्राप्तं तदेव दिक्फलं तथा ग्रहस्य दिनबलं उक्तरीत्या आनीतं  
तदेव दिनफलं भवेदिति । नन्वेवं प्राप्ते दिग्दिनफले शुभे अशुभे वा ज्ञेये इति  
चेदाह तयोः प्राप्तदिग्दिनफलयोः फलं शुभं कल्याणकरं ज्ञेयम् तत्षष्ठ्या व-  
र्ज्यं वर्जितं कार्यं एवं कृते यच्छेषं तत् दिग्बलं दिनफलं वा इतरत् शुभादन्यत्  
अशुभमित्यर्थः एवं संपादितं उभयरूपं फलम् अशुभात् शुभेऽधिके शुभं ज्ञेयं  
तथैव शुभात् अशुभेधिके नेष्टं अशुभमित्यर्थः अथानयोः दृष्टेश्च स्पष्टीकर-  
णमाह उभे फले बलैः षड्बलैर्हते गुणिते स्फुटं स्यातां तथैव बलैर्दृष्टिं हन्यात्  
सापि स्फुटा भवति ॥ ९ ॥ १० ॥ अथ पूर्वोक्तं शुभाशुभदिग्दिनफलानय-  
नम् दृष्टिशुभाशुभफलानयनं च विस्तरेण स्फुटमाह बलैरिति सार्धद्वयेन ।  
बलिन इति बलमस्यास्तीति बली तस्य विवक्षितग्रहस्येत्यर्थः पृथक् पृथक्

## भाषा ।

का निश्चय है ॥ ८ ॥ अब दिग्बलादिकके ऊपरसे बृहत् इष्टकष्ट लानेकी रीति क-  
हते हैं. दिग्बलका दससे भाग लेके फल लेना, वैसा दिग्बलका पंधरासे भाग लेके  
फल लेना, और दिनोंकू एकट्टे करके जो अंक होवे वो बलकू शुभ जानना.  
उसकू साठसे कम किये तो अशुभ बल जानना शुभ जादा होवे तो शुभ जान-  
ना, शुभसे अशुभ जादा होवे तो अशुभ जानना. अब इष्ट कष्ट दृष्टी कहते हैं.  
पहिले जो चार पांचवें श्लोकमें इष्टबल कष्टबल कखा है उससे दृष्टीकू गुणन क-  
रनेमें इष्टदृष्टी कष्टदृष्टी होती है ॥ ९ ॥ १० ॥ पहिले जो हांग द्रेष्काणादि छः

नश्चोक्तसंज्ञैश्च बलैरेव हरेत्ततः ॥ ११ ॥ तत्तद्वलफलानि  
स्युरशुभानि शुभानि च ॥ शुभपापफलाभ्यां च दृष्टिं ह-  
न्याद्वलं तथा ॥ १२ ॥ दृष्टेश्च शुभपापोत्थे बले'स्यांतां  
तथैव च॥भावानां च फले प्रोक्ते पतीनां च फले उभे॥१३॥

## टीका ।

स्थाने पदस्थाने इत्यर्थः दिग्बलं दिनबलं च संस्थाप्य समानीतैः पूर्वोक्तरीत्या  
संपादितैः पृथक् पड्वलैः समेधित्वा सम्यग्वर्धयित्वा गुणयित्वेत्यर्थः उक्तसंज्ञैः  
एकीकृतैः पड्वलैः पूर्वोक्तपृथग्गुणितं पदस्थानस्थं हरेत् पृथग्भाजयेत् । ततः  
षट्फलानामेकीकृतं फलं बलफलं जातं एवं शुभानि अशुभानि बलफलानि  
नाम दिग्बलफलानि दिनबलफलानि च स्युः । अथैवं दृष्टिशुभाशुभफलानि  
यथा शुभपापफलाभ्यां पूर्वश्लोकसंपादिताभ्यां दृष्टिं हन्याद्गुणयेत् कथं यथा-  
बलं प्रागुक्तदिग्दिनबलं सर्वबलपिंडेनापहत्य तत्तत्फलं कृतं तथैवैतत् कार्यं  
एवं सति दृष्टेश्च शुभपापोत्थे शुभपापग्रहोत्पन्ने बले इष्टानिष्टबले स्यातां क-  
थं तदाह तथैव चेति तथैव दिग्दिनबलशुभाशुभफलवत् दृष्टिशुभाशुभबल-  
फले स्यातामिति ॥ ११ ॥ १२ ॥ अथोक्तमनूद्य सग्रहराशिफलसाधनमाह  
भावानामिति सार्द्धद्वयेन । भावानां तन्वादीनां फले इष्टानिष्टसंज्ञके प्रोक्ते  
तथैव पतीनां भावस्वामिनामपि उभे इष्टानिष्टे द्वे फले प्रोक्ते । अथ सः फल-  
विवक्षितो राशिः ग्रहयुक्तः सग्रहश्चेत् भावसाधनसंगुणे भावफलसाधनविषये  
इत्यर्थः शुभे शुभग्रहे भावस्थे सति तस्य भावस्य फले फलमध्ये युंज्यात् शुभ-  
ग्रहफलं मिश्रयेत् कदा शुभे फले सति अशुभे भावफले सति वर्जयेत् शुभे

## भाषा ।

बल जुदा जुदा लाये हैं उसकू एकठा करके ओ पिडांक भया. उसका पूर्वोक्त इ-  
ष्ट कष्ट बलके अंकसे भाग लेना जो फल आवे वो बृहत् इष्ट बृहत्कष्ट बल भया  
जानना, इष्टबलकू शुभ, कष्टबलकू अशुभ जानना, और शुभपापफलांसे दृष्टिकू  
गुणन करना, ऐसा बलकू गुणन करना ॥ ११ ॥ १२ ॥ जो फल आवे वो दृष्टि-  
का और बलका शुभाशुभ फल जानना पहिले जो भावबल कहा है और ग्रहबल

सराशिग्रहयुक्तश्चेद्भावसाधनसंगुणे ॥ फले तस्य शुभे युं-  
ज्यादशुभे वर्जयेच्छुभे ॥ १४ ॥ पापश्चेदन्यथा चैवं बले  
दृष्ट्यां च तेऽत्र तु ॥ युंज्यादुच्चादिषु फलममित्रादिषु वर्ज-  
येत् ॥ १५ ॥ स्थानेचैवंक्रमात्प्रोक्तं करणे चान्यथा क्रमः ॥  
राशिद्वयगते भावे तद्वाश्यधिपतेः क्रिया ॥ १६ ॥ स्थाना-  
धिकस्तु भावेन लाभभावः प्रकीर्तितः ॥ तत्समाने च त-

### टीका ।

ग्रहफले शुभे वर्जयेत् । अथ पापश्चेत् पापग्रहो भावस्थो यदि भवति तदा  
अन्यथा वैपरीत्यं कार्यम् पापस्य अशुभफलं मिश्रयेत् पापस्य शुभफलं वर्ज-  
येदित्यर्थः एवं भावस्थग्रहे भावबलग्रहफलविचारमुक्त्वा भावस्थे ग्रहे बल-  
दृग्बलविचारमाह । अत्र तु भावस्थग्रहविषये बले बलफलविचारे दृष्ट्यां दृ-  
ष्टिफलविचारे तु भावस्थे ग्रहे उच्चादिषु उच्चत्रिकोणस्वामित्रस्थानवर्तमाने फलं  
ग्रहे युंज्यात् अमित्रादिषु भावस्थे ग्रहे अमित्राधिशत्रुनीचस्थानवर्तमाने सति  
वर्जयेत् भावफलं ग्रहफले वर्जयेदिति ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथ स्थानकर-  
णविचारमाह स्थानइत्याद्यध्यायसमाप्तिपर्यंतम् । एवं क्रमात् उक्तक्रमात्  
स्थाने स्थानविचारेऽपि कर्तव्यं प्रोक्तं करणे करणविषये तु कर्तव्यस्य अन्यथा  
क्रमः स्थानापेक्षया विपरीतः क्रमो ज्ञेयः । अथ भावे राशिद्वयगते संधिगते

### भाषा ।

कहा है उसमें जो भाव राशियुक्त होवे और जो ग्रहका क्षेत्र ग्रहयुक्त होवे तो भा-  
वसाधन करके उससे गुणन करना. भाव साधनका प्रकार द्वितीयाध्यायके प्रथम श्लो-  
कमें कहा है. शुभ होय तो फल जोड़ना, अशुभ होय तो फल हीन करना, और  
बलका जो फल है उसको अन्यथा जानना, जैसा शुभ होवे तो हीन करना, पाप  
होवे तो युक्त करना, दृष्टिमें भी ऐसा जानना, यह फल उच्चादिकका होवे तो युक्त  
करना, शत्रुआदिका होवे तो हीन करना ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अब अष्टक वर्ग-  
में रेखाका फल कहा है ओ बिन्दुमें विपरीत जानना. और भावमें दो राशिका  
स्वामी कहते हैं. भाव और संधिका स्वामी होवे जो लाभदायक जानना. जिस



द्वावे तदानीं स्थानदान् ग्रहान् ॥ १७ ॥ संयोज्य स्थान-  
संख्यायां दलमेतत्समं भवेत् ॥ १८ ॥ इति श्रीवृहत्पाराश-  
रहोरायामुत्तरभागे इष्टकष्टवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥  
विधातुलिखिता या सा ललाटाक्षरमालिका ॥ तस्याः श-  
टीका ।

इत्यर्थः तद्वाश्यधिपतेः भावराशिद्वयस्वामिनः क्रिया पूर्ववत् कर्तव्यं बोध्यम्  
भावेन सहितः ग्रहः स्थानाधिकश्चेत् स लाभभावः लाभदायको भावः प्रकी-  
र्तितः तत्समाने ग्रहसमाने तद्भावे तस्य ग्रहस्य भावे सति तदानीं स्थान-  
दान् ग्रहान् संयोज्य स्थानसंख्यायां यद्वलमर्थं तत्समं भावफलं ज्ञेयमिति  
॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

तृतीयेऽध्यायके चारिमन्कृतया व्याख्याया मया ॥

गणेशः प्रीयतां देवः सर्वज्ञो बुद्धिचालकः ॥ १ ॥

इति श्रीमद्वृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे श्रीमद्वेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्यो-  
तितदिग्मंडलज्योतिर्विज्जटाशंकरात्मजश्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनीटी-  
कायामिष्टकष्टवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

द्वादशानां तु भावानां ज्ञेयं फलमथो मुनिः ॥ चतुर्थे रश्मिसंभूतिं तत्फलं  
चाब्रवीत्स्फुटम् ॥ १ ॥ अथ भगवान् पराशरमहर्षिः मैत्रेयं प्रति चतुर्थोऽध्याये  
भावाऽवलोकनीयविषयं रश्म्यानयनं तत्फलं च विशदयति । तत्रादौ पूर्वा-  
र्जितकर्मानुरूपविधिलिखितशुभाशुभफलसूचकललाटाक्षरफलं जन्मकाली-  
नभावसाधनेन वक्तुं प्रतिजानीते विधात्रिति । सा पूर्वोपार्जितकर्मसमुद्भवा-  
भाषा ।

भावका अधिपति होवे वो भावका लाभ करेगा, और जो भावका बल जो है वो  
भावकी राशि संख्यामें मिलायके उसका आधा करना, जो फल आवे वो भावफल  
जानना ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ इति वृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे श्रीधरकृतभाषा-  
टीकायां इष्टकष्टवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अब तनू आदि करके बारह भावोंका निर्णय कहते हैं, विधाता जो ब्रह्मा उनोंने संपू-  
र्ण प्राणिमात्रके ललाटमें जो प्रारब्धभोगकर्मकी अक्षरपंक्ति लिखी है उसमें मनुष्यका

शरीरकथनं वक्ष्यामि च पृथक् पृथक् ॥ १ ॥ लग्नाच्छरीर-  
चिंता च द्वितीयात्स्वं च पैतृकम् ॥ भरणीयं कुटुंबं च  
पश्वादि च वदेद्बुधः ॥ २ ॥ तृतीयात्सोदरं बुद्धिं दुःपूर्वा  
विक्रमं विदुः ॥ चतुर्थात्पितरं वेश्म सुखं लालित्यमेव च  
॥ ३ ॥ सौमनस्यमपत्पानि प्रज्ञां मेधां च पंचमात् ॥

### टीका ।

अनिर्वाच्या विधातृलिखिता विधात्रा विश्वसृजा ब्रह्मणा लिखिताऽकिता ल-  
लाटे भाले अक्षराणां शुभाशुभज्ञापकवर्णानां मालिका पंक्तिः याऽस्ति तस्याः  
शरीरकथनं शरीरस्य स्वरूपस्य कथनं वर्णनप्रकारं पृथक्पृथक् तन्वादिद्वाद-  
शभावभेदेनेत्यर्थः वक्ष्यामि कथयिष्यामि ॥ १ ॥ अथ द्वादशभावस्थाने किं  
किं विचारणीयं तदाह लग्नादित्यादिसार्धपंचश्लोकपर्यंतम् । लग्नात् तनुभावात्  
सकाशात् शरीरस्य देहस्य चिंता विचारः कार्यादि गौरत्वादि विवेक इत्य-  
र्थः । द्वितीयात् धनभावात् स्वं स्वीयं पैतृकं पितृसंबन्धि च धनं द्रव्यं तथा  
भरणीयं पोषणीयं भृत्यादीत्यर्थः, तथा कुटुंबं स्यादिवश्यमित्यर्थः, तथा  
पश्वादि पशवः आदयो यस्मिंस्तत् गोश्वपक्षिवृक्षादीत्यर्थः वदेत् कथयेत्  
बुधः ज्योतिर्वित् ॥ २ ॥ तृतीयात्सहजभावात् सोदरं समानमुदरं यस्य  
तत् साक्षात् भ्रात्रादि तथा दुःपूर्वा बुद्धिं दुरिति उपसर्गः पूर्वः प्रथमो यस्याः तां  
दुर्बुद्धिं दुष्टमनीषां तथा विक्रमं पराक्रमं च विदुः बुबुधुः । चतुर्थात् सुहृद्भावात्  
पितरं स्पष्टं तथा वेश्म गृहं तथा सुखं स्पष्टं तथा लालित्यं ललितस्य सुंदरस्य  
भावः तथोक्तं च ॥ ३ ॥ पंचमात् भावात् सौमनस्यं सुष्ठु च तन्मनश्च तस्य

### भाषा ।

विशेषकरके फल है. वो अक्षरपंक्ति प्रत्यक्ष दिखपडती नहीं है. वास्ते वो अक्षरपंक्ति के  
देहका वर्णन पृथक् पृथक् कहते हैं. तन्वादिक चारह भावोंका फल कहताहूँ ॥ १ ॥  
लग्नसे शरीरसंबन्धि सब विचार देखना, धन भावसे स्वउपार्जित द्रव्य और पितृसंबन्धी  
द्रव्यका सेवकका, स्त्री आदि कुटुंबका, पशुओंका, पक्षी वृक्षादिकोंका, विचार दे-  
खना ॥ २ ॥ तीसरे भावसे भाइयोंका, दुष्टबुद्धिका, पराक्रमका, विचार देखना.  
चौथे भावमें घरोंका, सुखका, सुंदरताका, पितरका, विचार देखना ॥ ३ ॥ पंच-

हानिं व्याधिमरिं षष्ठान्मैथुनं स्त्रीं जयं ततः ॥ ४ ॥ मृतिं  
पराजयं दुःखं हानिं व्याधिं तथाष्टमात् ॥ सौशील्यभा-  
ग्यधर्माश्च नवमादशमात्तथा ॥ ५ ॥ मानास्पदाज्ञाकर्माणि  
आयादर्थं व्ययाद्व्ययम् ॥ दिग्भवेष्विषुसप्ताष्टशराःस्वो-  
टीका ।

भावः मनःप्रसन्नतामित्यर्थः तथा अपत्यानि पुत्रादीनि तथा प्रज्ञां प्रकर्षेण  
ज्ञायते अनयेति विशेषबुद्धिं तथा मेधां धारणावतीं बुद्धिं च विचारयेत् । षष्ठात्  
रिपुभावात् हानिं द्रव्यादिनाशं तथा व्याधिं रोगं अरिं शत्रुं च वदेत् । ततः  
नाम सप्तमभावात् मैथुनं मिथुनीभावं तथा स्त्रीं भार्यां तथा जयं उत्कर्षं च वदेत्  
॥ ४ ॥ अष्टमात् मृत्युभावात् मृतिं मरणं तथा पराजयं पराभवं तथा दुःखं  
व्यसनं तथा हानिं नाशं तथा व्याधिं रोगं च वदेत् । नवमात् भाग्यभावात्  
सौशील्यं सुशीलतां च भाग्यं वैभवं धर्मो विध्युक्ताचरणं चेति द्वंद्वसमासः ता-  
न्वदेत् तथा तेन प्रकारेण दशमात् कर्मभावात् ॥ ५ ॥ मानास्पदाज्ञाकर्माणि  
मानं सत्कारं तथा आस्पदं स्थानं तथा आज्ञां भृत्यादिप्रेरणाम् तथा कर्माणि  
शुभाऽशुभाचरणानि च द्वंद्वः तानि वदेत् । आयादेकादशभावात् अर्थं द्रव्या-  
दमीष्टलाभं वदेत् । व्ययात् द्वादशभावात् व्ययः द्रव्यादिव्ययं चेति कथयेत् ।  
एवं भावविचारणीयमुक्त्वा फलविशेषं वक्तुं रस्मीन्साधयति दिगित्यादिसार्ध-  
सप्तमश्लोकपर्यंतम् । तत्रादौ सर्वरास्मिसाधनाय उच्चरास्मिध्रुवांकानाह । स्वोवे  
उच्चस्थे ख्याद्यन्यतमे ग्रहे सति खेः सूर्यात्सकाशाद् ग्रहाणां क्रमात् दिशः

भाषा ।

म भावसे मनप्रसन्नताका, पुत्रादिकोंका, सुनुद्धिका, धारणाशक्तिका विचार देख-  
ना. षष्ठ भावसे हानिका, द्रव्यादिनाशका, व्याधिरोग, शत्रु, इनोंका विचार दे-  
खना. सप्तम भावसे मैथुनका, भार्याका, जयका, उत्कर्षताका विचार कहना ॥ ४ ॥  
अष्टमभावसे मरण, पराजय, (हारना.) दुःख, व्यसन, हानि, व्याधि, रोग, कह-  
ना. नवम भावसे सुशीलता, भाग्य, वैभव, धर्म इसका विचार करना ॥ ५ ॥ द-  
शम भावसे सत्कार, स्थान, आज्ञा, शुभाऽशुम कर्म, इसका फल कहना. ग्यार-  
हवें भावसे इच्छित द्रव्यादि प्राप्तिका विचार करना. बारहवें भावसे उत्तम नीच

च्चे करा रवेः ॥ ६ ॥ नीचेन चांतरा प्रोक्ता रश्मयस्त्वनुपा-  
तजाः ॥ नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके चक्राद्विशोधयेत्  
॥ ७ ॥ स्वीयरश्मि हतं षड्भिर्भजेत्सूरश्मया स्वकाः ॥

टीका ।

१०, भवाः ११, इषवः ५, सप्त ७, अष्टौ ८, शरः ५, द्वंद्वसमासः एते क्रमाद्रविचंद्रभौमबुधगुरुशुक्रशनीनां कराः रश्मिध्रुवांका बोध्याः ॥ ६ ॥ नीचे तु न ध्रुवांका न संति अंतरे उच्चनीचमध्यवर्त्यारोहाऽवरोहमूलत्रिकोणादिसर्वस्थले तु अनुपातजाः अनुपाताद्वक्ष्यमाणाज्जायन्ते ते तथा रश्मयो बोध्याः । अथानुपातरितिमाह । ग्रहं रश्मिचिकीर्षमाणं रव्याद्यन्यतमं तु नीचोनं नीचेन हीनं कृत्वा भार्धाधिके षड्राश्यधिकेऽवशिष्टे सति चक्राद्राशिसमूहात् द्वादशराशिभ्य इति यावत् विशोधयेत् ॥ ७ ॥ ततः स्वीयरश्मिहतं स्वस्य विहिताः स्वीयाः अत्र स्वस्य चेति वार्तिकेन कुकाभावं परमार्पत्वे दोषप्रसंगाभाव इति वेदितव्यं । पूर्वोक्ता दिग्भवेत्यादयः ये रश्मयः तैः हतं कृत्वा षड्भिः ६ अंकैः भजेत् एवं स्वकाः स्वीयाः रश्मयः स्युः भवेयुः । अथास्योदाहरणम् । रविः १०।४।१४।० रविनीचं ६।१०।०।० अनेन हीनो जातः ३।२४।१४।० रव्युच्चध्रुवांकाः १० एभिर्गुणनेन जाताः ३०।२४०।१४०।० अंशादिपरिमाणाधिक्यात्पष्ट्युद्धृता जाताः ३४।२।२०।० एते षड्भक्ताः जाताः ५।४०।२३।० जातोऽयमनुपातजोरविरश्मिः एवं सर्वत्र ज्ञेयम् ॥ ७ ॥ एवं स्वोच्चादिराशिस्थितानां ग्रहाणां रश्म्यानयनमुक्त्वा

भाषा ।

मार्गसे द्रव्यखर्चका विचार देखना. अब ग्रहोंका उच्चरश्मिसाधन कहते हैं. उसमें पहले उच्चके ध्रुवांक कहते हैं. सूर्यके १०, चंद्रके ११, मंगलके ५, बुध ५, गुरु ७, शुक्र ८, शनिके ५, यह रश्मिके ध्रुवांक कहे ॥ ६ ॥ नीचके ध्रुवांक नहीं हैं. उच्च नीचादि स्थलोंमें अनुपातसे रश्मि जानना. स्पष्ट ग्रहकूं नीचमें हीन करके छः राशिसे जादा होवे तो वारहमें शोधन करके ७ शेषकूं अपने रश्मि ध्रुवांक जो पहले कहे हैं उस अंकसे गुणन करना पीछे छःसे भाग लेना. जो लब्ध आवे वो रश्मि जानना ॥ ७ ॥ अब पद्वर्ग उच्चरश्मिका विशेष

| अथ रश्मिचक्रम्. |     |     |     |     |     |     |     |
|-----------------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|
| सु.             | च.  | म.  | बु. | ग.  | शु. | श.  | रा. |
| ५.              | २.  | ३.  | १.  | १.  | ६.  | २.  | ४.  |
| ४०.             | ३१. | ४५. | ४३. | २०. | १३. | २६. | ३३. |
| २३.             | १२. | ४६. | ४१. | २५. | ३८. | २६. | ३२. |

उच्चस्वर्क्षसुहृत्सूर्यभागेऽगाब्धद्विसंगुणाः ॥ ८ ॥ नीचारि-  
द्वादशांशे तु नृपांशोनाः कराश्च ते ॥ मूलत्रिकोणस्वर्क्षा-

टीका ।

तेषां स्वोच्चादिराशिर्वर्तमानानामेतदन्यराशिर्वर्तमानानामपि द्वादशांशे-  
शवक्ष्यमाणस्वोच्चादिस्थितानां विशेषसंस्कारांतरेण रश्म्यानयनमाह उच्चस्वे-  
त्यादिसार्धाष्टमश्लोकपर्यंतम् । अथ कस्मिन्नपि राशौ उच्चस्वर्क्षसुहृदां स्वोच्च-  
स्वक्षेत्रस्वमित्राणां सूर्यभागे द्वादशांशे सति क्रमात् अंगानि ६, अवधयः ४,  
द्वौ २, एभिः सम्यग्गुण्यंते ते संगुणाः गुणिताः कार्या इत्यर्थः । अपि च नी-  
चार्योः स्वनीचस्वशत्रोः द्वादशांशे सति तु नृपांशोनाः षोडशांशहीनाः  
कार्याः । एवमुच्चाद्युक्तपंचकद्वादशांशवर्तमानानां विशेषसंस्कारेण ते पूर्वो-  
क्ताः कराः रश्मयः स्पष्टा भवेयुः । अथास्योदाहरणम् । रविः १०।४।१४।०  
अयं मीनद्वादशांशे वर्तमानः द्वादशांशपतिर्गुरुः स्वेः पंचधा मैत्र्यां समः अ-  
तोऽस्य स्वोच्चाद्युक्तद्वादशांशामावात् द्वादशांशोपलक्षितविशेषसंस्काराभा-  
वः । अथ चंद्रः ८।२५।२९।० अयं तुलाद्वादशांशे वर्तमानः द्वादशांशप-  
तिः शुक्रः चंद्रस्य पंचधा मैत्र्यां मित्रं अतोऽस्य द्वादशांशोपलक्षितमित्र-  
द्वादशांशसंस्कारे यथा मूलरश्मिः २।३१।१३ अयं द्विगुणितः ५।२।२६  
एवं सर्वत्र द्वादशांशोपलक्षितविशेषसंस्कारो बोध्य इति ॥ ८ ॥ अथ नवां-  
शादिवक्ष्यमाणानां मूलत्रिकोणादिवक्ष्यमाणस्थानस्थितानां विशेषरश्मिसं-

भाषा ।

संस्कार कहते हैं, जो ग्रह द्वादशांशमें होवे वहां राशि  
द्वादशांशकी उच्चकी होवे तो ६ से गुणना, स्वक्षेत्र होवे  
तो ४ से गुणन करना, स्वमित्र राशि होवे तो २ से गु-  
णन करना, नीच शत्रु राशिका द्वादशांश होवे तो सोल-  
हका अंश हीन करना, इस रीतिसे उच्चादि पूर्व कहे हुये पंचक, द्वादशांशोंमें वर्त-  
मान विशेष संस्कारसे पूर्वोक्त कर और रश्मि स्पष्ट होते हैं ॥ ८ ॥ अब नवमांश,  
द्रेष्काण, होरा, त्रिंशांश, उच्चरश्मिका विशेष संस्कार कहते हैं, जो कोई स्पष्ट ग्र-  
हका पहिले उच्चरश्मि फल लाये हैं उसमें संस्कार करना, वो ग्रहकी राशि अंश

| यद्वादशांशरश्मिचक्रमिदं |    |    |    |    |    |    |    |
|-------------------------|----|----|----|----|----|----|----|
| सु                      | च  | म  | बु | गु | शु | श  | वा |
| ०                       | ५  | २२ | ०  | ०  | २५ | २  | १५ |
| ०                       | २  | ३४ | ०  | ०  | ३४ | १५ | २८ |
| ०                       | २६ | २६ | ०  | ०  | ३० | १५ | ४१ |

## टीका ।

स्कारांतरमाह मूलत्रिकोणेत्यादिसार्धदशश्लोकपर्यंतम् । मूलत्रिकोणस्वर्क्षा-  
धिमित्रमित्राणां मध्ये प्रत्येकं मित्रेति लुप्तविभक्तिकं पदं तेनात्र पष्ठीबहुवच-  
नं बोध्यं नवांशके वा द्रेष्काणे वा होरायां वा त्रिंशांशे वा सति मूलरश्मयः  
अष्टघ्नाः अष्टाभिर्हन्यन्ते गुण्यन्ते ते तथोक्ताः पश्चात् क्रमात् यथाक्रमं द्व्यब्धि-  
षट्सप्तभिः भक्ताः भाजिताः तथोक्ताः पश्चात् अनेन भागेन युक्ता मिलिता-  
स्ते मूलरश्मयः तु स्पष्टं रश्मयो भवन्ति । एतदुक्तं भवति नवांशद्रेष्काणहोरात्रिं-  
शांशान्यतमवर्गे मूलत्रिकोणस्थितस्य ग्रहस्य उक्तध्रुवांकोत्पन्नमूलरश्मयः  
अष्टघ्नाः कृत्वा द्वाभ्यां भागमाहृत्य ध्रुवांकोत्पन्नरश्मिषु योजयेत् एवं क्रमात्  
नवांशाद्युक्तान्यतमवर्गे स्वर्क्षाधिमित्रमित्रान्यतमस्थानस्थितस्य ग्रहस्य ध्रुवां-  
कोत्पन्नमूलरश्मयः अष्टघ्नाः क्रमात् गृहीताब्धिषट्सप्तांशेन युक्ता मूलरश्मय  
एव स्पष्टा भवेयुरिति । अथ नवांशद्रेष्काणहोरात्रिंशांशान्यतमवर्गे अरौ अ-  
रिस्थाने 'अध्यरि' अत्र विभक्त्यर्थे "अव्ययं विभक्ति" इत्यादिना समास-  
स्याव्ययत्वात् 'अव्ययादाप्सुप' इति विभक्तिलुक् अध्यरिस्थाने अथ वा  
नीचे स्वनीचस्थाने वर्तमानग्रहस्य मूलध्रुवांकोत्पन्नरश्मयः क्रमात् वेदद्वय-  
खिलहीनकाः यथाक्रमं चतुर्भिः द्वाभ्यां सर्वेण अंशमाहृत्य स्वस्मिन्नेव ऊनये-  
त् । ते स्पष्टा रश्मयो भवेयुः । अत्रेदं तत्त्वं नवांशाद्युक्तान्यतमवर्गे अरिस्थान-  
स्थितस्य ध्रुवांकोत्पन्नरश्मयः स्वचतुर्थांशहीनाः तथा अध्यरिस्थानस्थितस्य  
मूलरश्मयः अर्धावशेषिताः तथा नीचस्थानस्थितस्य सर्वेण हीनाः शून्यरू-  
पाः स्पष्टा भवेयुरिति तात्पर्यम् । अत्रोदाहरणम् । रविः १०।४।१४ वृश्चिकन-  
वांशे वर्तमानः तत्पतिर्भौमो रवेः पंचधामेभ्यां अधिमित्रं अतः रविध्रुवोत्पन्न-  
रश्मयः ५।४०।३३ एते अष्टघ्नाः ४०।३२०।१८४ पष्ट्युद्धृताः ४५।२३।४  
अधिमित्रमाजकांकाः ६ एभिर्भाजिताः ७।३३।५० एते मूलरश्मिषु योजिताः  
१३।१४।१३ जातोयं नवांशेनाधिमित्रस्थानस्थितस्य रवेः विशेषसंस्कारतः  
स्पष्टरश्मिः । एवं मूलत्रिकोणस्वर्क्षामित्रस्थानेषु सर्वत्र बोध्यम् । अयं नीच-  
स्योदाहरणम् । चंद्रः ८।२५।२९।० अयं वृश्चिकनवांशे वर्तमानः तत्पतिर्भौ-  
मः स च पंचधामेभ्यां चंद्रस्य मित्रं । अत्र मित्रस्थानविहितसंस्कारः, मूलर-  
श्मयोऽष्टघ्नाः तत्सप्तांशयोजिताः स्पष्टा भवेयुः तथापि चंद्रस्य स्वनीचनवांश-

धिमित्रमित्रनवांशके ॥ ९ ॥ द्रेष्काणेऽपि च होरायां त्रि-  
शांशे च क्रमात्तथा ॥ अष्टव्वा द्व्यब्धिषट्सप्तभक्ता युक्ता-  
स्तुरश्मयः॥१०॥अरावध्यरिनीचे च वेदद्वयखिलहीनकाः॥

टीका ।

स्थितत्वात् द्वितीयो नीचांशसंस्कारोपि प्राप्तः तस्मिन्सति रश्म्यभावः शून्य-  
फलकत्वादिति एवं अरावध्यरि च बोध्यम् ॥ ९ ॥ १० ॥ अथ रश्मीन्प्रकारा-  
न्तरेण स्पष्टयति उच्चेत्यादित्रयोदशश्लोकपर्यन्तम् । अंशपताबुद्धे सति प्राग्धु-  
वांकोत्पादितरश्मयः त्रिगुणं तत्सर्वं त्रिगुणं प्रोक्तं त्रिगुणिताः स्पष्टास्स्युस्त्य-  
र्थः । रश्मिपतौ स्वत्रिकोणे मूलत्रिकोणे सति मूलध्रुवांकोत्पादितं सर्वं द्विसं-

भाषा ।

कलादिकमें देखके नवमांश, द्रेष्काण, होरा, त्रिशांशमे देखना कि मूलत्रिकोणमें  
राशि है, या स्वक्षेत्र है, या अधिमित्रकी राशि है, मित्रकी राशिहै, पीछे पहिलेका  
उच्चरश्मिफलकूं अठगुणाकरके मूल त्रिकोणका नवमांशादिक वर्ग होवे तो दोसे भा-  
ग लेना, स्वक्षेत्रका वर्ग होवे तो चारसे भाग लेना, अधिमित्रका वर्ग होवे तो छःसे  
भाग लेना, मित्रका होवे तो सातसे भाग लेना, मूलरश्मिमें मिलाना तो अपने अ-

| अ न मा मू त्रिकोणर च मि मा |    |    |    |    |   |    |    | अथ द्रेष्काणरश्मिचक्रम्. |    |    |    |    |   |   |    |
|----------------------------|----|----|----|----|---|----|----|--------------------------|----|----|----|----|---|---|----|
| सू                         | च  | म  | बु | गु | श | श  | यो | सू                       | च  | म  | बु | गु | श | श | यो |
| १३                         | ०  | ८  | ५  | २  | ० | ५  | ३३ | ०                        | ५  | ११ | ४  | ०  | ० | ० | २१ |
| १४                         | ०  | २  | १० | ५६ | ० | १३ | ३८ | ०                        | ५५ | १७ | १० | ०  | ० | ० | २७ |
| १३                         | ०  | ४७ | ४३ | ३६ | ० | ४७ | ६  | ०                        | ३० | १८ | २२ | ०  | ० | ० | १० |
| अथ होराशमिचक्रम्.          |    |    |    |    |   |    |    | अथ त्रिशांशरश्मिचक्रम्.  |    |    |    |    |   |   |    |
| सू                         | च  | म  | बु | गु | श | श  | यो | सू                       | च  | म  | बु | गु | श | श | यो |
| १७                         | ७  | ८  | ०  | ०  | ० | ०  | ३४ | ०                        | ५  | ११ | ०  | ६  | ० | ० | २२ |
| १                          | ३३ | ४६ | ०  | ०  | ० | ०  | २१ | ०                        | ५४ | १७ | ०  | ५२ | ० | ० | ३३ |
| ९                          | ३९ | ४७ | ०  | ०  | ० | ०  | ३५ | ०                        | २  | १८ | ०  | ५  | ० | ० | २५ |

पने वर्गकी उच्चरश्मी आती है. जो कभी पूर्वोक्त ग्रहोमे, नवमांशादि वर्गोंमें शत्रु-  
राशि होवे तो चारका भाग लेके मूलरश्मिमें हीन करना, अति शत्रु राशि होवे  
तो दोका अंश हीन करना, नीच राशि होवे तो शून्य मांडना ॥ ९ ॥ १० ॥ अब  
पूर्वोक्त रश्मिफलकूं विंशपकरके स्पष्ट करते हैं. अंशपति उच्चका होवे तो ध्रुवांकोसे

उच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् ॥ ११ ॥ स्व-  
क्षेत्रे त्रिघ्ना द्विसंभक्तास्त्वधिमित्रगृहेपि च ॥ वेदघ्ना रामसं-  
भक्ता मित्रभे षड्गुणास्ततः ॥ १२ ॥ पंचभक्तास्तथा श-  
त्रुगृहे द्विघ्नाश्चतुर्हताः ॥ अतिशत्रोः करघ्नाश्च पंचभक्ता

टीका ।

गुणं द्वाभ्यां सम्यग्गुणिताः स्पष्टाः स्युः रश्मिपतौ स्वक्षेत्रे स्वक्षेत्रगे सति मूल-  
ध्रुवांकसाधिता रश्मयः त्रिघ्नाः त्रिभिर्गुणिताः द्विसंभक्ताः द्वाभ्यां भाजिता  
अर्धावशेषिता इत्यर्थः अपि च अधिमित्रगृहे रश्मिपतौ मूलरश्मयः वेदघ्नाः  
चतुर्भिर्गुणिताः रामसंभक्ताः त्रिभिर्भाजिताः तृतीयांशावशेषिता इत्यर्थः  
स्पष्टाः स्युः रश्मिपतौ मित्रभे मित्रक्षेत्रगे मूलरश्मयः आदौ षड्गुणाः षड्-  
भिर्गुणिताः ततः पश्चात् पंचभक्ताः पंचभिर्भक्ताः पंचावशेषिता एव स्पष्टाः  
स्युः तथा तेन प्रकारेण रश्मिपतौ शत्रुगृहे शत्रुक्षेत्रस्थे द्विघ्नाः द्विगुणिता  
मूलरश्मयः चतुर्हताः चतुर्भिर्भाजिताः चतुर्थांशावशेषिताः स्पष्टाः स्युः  
अतिशत्रुगृहे अतिशत्रुक्षेत्रस्थे रश्मिपतौ सति मूलरश्मयः करघ्नाः द्विगुणि-  
ताः च पश्चात् पंचभाजिताः पंचांशावशेषिताः स्पष्टाः स्युरिति । अथास्यो-  
दाहरणम् । चंद्रः ८।२५।२९ अयं धनूराशिवर्तमानोऽस्य पतिर्गुरुश्रंद्रस्य  
पंचधा मैत्र्यां मित्रं अतोऽस्य मित्रक्षेत्रे विहितं संस्कारो यथा मूलध्रुवांकानी-  
लश्रंद्ररश्मयः १।३।१।३ एते षड्गुणिताः ११।१८६।७८ षट्गुहृताः १५।

भाषा ।

करी हुई रश्मिकू त्रिगुणित करनेसे स्पष्ट होती है. रश्मिपति मूल त्रिकोणमें होवे  
तो पूर्वरश्मिकू द्विगुणित करनेसे स्पष्ट होती है. रश्मिपति स्वराशिका होवे तो पूर्व  
रश्मिकू द्विगुणित करके इसका अर्ध भाग करना. सो स्पष्ट रश्मि होती है. रश्मि-  
पति अधिमित्र घरमें होवे तो पूर्वरश्मिकू चतुर्गुणित करके तीनसे भाग लेना, जो  
लब्ध आवे वो रश्मिबल स्पष्ट जानना. रश्मिपति मित्रराशिमें होवे तो पूर्वरश्मिकू  
छः गुणित करके पांचका भाग लेना, लब्ध जो आवे वो स्पष्टरश्मि जानना. रश्मि-  
पति शत्रुराशिका होवे तो पूर्वरश्मिकू दुगुनी करके चारका भाग लेके जो लब्ध  
आवे वो स्पष्ट रश्मि जानना. रश्मिपति अति शत्रुके राशिमें होवे तो पूर्वरश्मिकू



न नीचमे ॥ १३ ॥ शनिं सितं विना ताराग्रहा अस्तंग-  
ता यदि ॥ विरश्मयो भवत्येवं वक्रादौ द्विगुणास्ततः ॥ १४ ॥  
अनुपातोऽतरे वक्रं त्यागेऽष्टांशविहीनकाः ॥ मंदायां द-  
शभागोना वस्वंशोनाः कराः स्मृताः ॥ १५ ॥ तथा शी-  
टीका ।

७।१८ एते पंचभक्ताः ३।१।२७ जातोऽयं विशेषसंस्कृतश्चंद्ररश्मिः स्पष्टइ-  
ति ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ अथ मतांतरेण गतिवशाद्रश्मीनां न्हासवृद्धी आह शनि-  
मित्यादिषोडशश्लोकपर्यंतम् । यदि यर्हि शनिं सितं विना शनिशुक्राव्यतिरे-  
केण ताराग्रहाः भौमादयः अस्तंगताः रविरश्मिल्लक्षकिरणाश्चेत् तर्हि भौम  
बुधगुरुवः विरश्मयः रश्मिहीनाः भवेयुः एवं प्रकारेण वक्रादौ वक्रारंभे द्वि-  
गुणाः मूलरश्मयः द्विगुणिताः स्पष्टाः स्युः वक्रत्यागे वक्रांते अष्टांशविही-  
नकाः अष्टभागोनाः स्पष्टाः स्युः अंतरे वक्रं वक्रत्यागमध्यभागे अनुपातः  
त्रैराशिकगणितेन वक्राद्यं वक्रत्यागांकानां मध्यांकोत्पादनं तेन मध्यरश्म-  
यः स्पष्टाः स्युः मंदायां रश्मिपतिगतौ दशभागोनाः स्वदशांशहीनाः मू-  
लरश्मयः स्पष्टाः स्युः मंदतरायामित्यध्याहारः गतौ तु वस्वंशोनाः स्वाष्टांश-  
हीना मूलरश्मयः स्पष्टाः स्युः तथा तेनैव प्रकारेण शीघ्रायां गतौ अंगाशोनाः  
स्वषष्टांशोनाः तथा शीघ्रतरायां तु वेदांशोनाः स्वचतुर्थांशहीनाः स्पष्टा  
रश्मयो भवन्ति इति केचिद्वदन्तीति केचिच्छब्देन नैतन्मुख्यमतमिति ध्वनि-

भाषा ।

दुगुनी करके पांचसे भाग लेना, लब्ध जो आवे वो स्पष्ट रश्मि जानना. रश्मिपति  
नीचका होवे तो विशेष संस्कार नहीं है ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ अब मतांतरसे  
रश्मियोंका हानिवृद्धिका लक्षण कहते हैं. जो कभी शनि शुक्र यह दोनों विना  
मंगल, बुध, गुरु यह तीनों ग्रह अस्तंगत होवे तो उन्नोंका रश्मि हीन जानना. रश्मि-  
पति वक्रारंभमें होवे तो पूर्व रश्मि द्विगुणित करनेसे स्पष्ट होती है. वक्कीके अंतमें  
रश्मिपति होवे तो पूर्व रश्मिकूं ८ आठसे भाग लेना जो लब्ध आवे वो स्पष्ट रश्मि  
होती है. वक्रागतिसे मध्यभागसे होवे तो त्रैराशिकके गणितमार्गसे फल लायके

घतरायां च वेदांशोनाः कराः स्मृताः ॥ अंगांशोनाश्च  
शीघ्रायां केचिदेवं वदन्ति हि ॥ १६ ॥ वक्रानुवक्रा विक-  
ला शीघ्रा शीघ्रतरा गतिः ॥ वृद्धिहीने तु शिष्टे द्वे वर्जनी-  
ये समासमा ॥ १७ ॥ योगेषु ये ग्रहाः प्रोक्तास्तेषां यो-

टीका ।

तत् ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ अथैकविंशतितमश्लोके रश्मीनां ग्रहगतिसंज्ञारूपतः फ-  
लानि निर्णयिष्यन्नादौ अष्टविधसंज्ञा आह वक्रेति । वक्रा १, अनुवक्रा २,  
विकला ३, शीघ्रा ४, शीघ्रतरा ५, अपि च इमे शीघ्रे शीघ्रतरे एव वृद्धि-  
हीने सत्यौ तु वृद्ध्या वर्धनेन हीने रहिते तयोक्ते तु शिष्टे नाम मंदमंदतरे  
६।७ भवतः अथाष्टमी समा तु द्वे वर्जनीये वर्जितुं योग्ये कृते तु समासमा  
द्विप्रकारकसमा भवति । अत्रेत्यं तत्त्वांशीघ्रतरा वृद्धिहीना जाता सती मंदसं-  
ज्ञका षष्ठी गतिः भवति तथा शीघ्रा वृद्धिहीना सती मंदतरा सप्तमी गतिर्भ-  
वति तथा च मंदया शीघ्रा हीना कृता समा तथैव मंदतराया शीघ्रतरा ही-  
ना कृता सती समैव एवं द्विप्रकारेण समत्वं समासमा इति द्विरुक्त्योपल-  
भ्यते इति अष्टमी समा संज्ञका ज्ञेयेति अष्टविधा गतिरुपदिष्टा । एतल्लक्षणानि  
सूर्यसिद्धांतादिष्ववगंतव्यानि ॥ १७ ॥ अथ प्राप्तरश्मिषु योगविशेषेण न्हासवृ-

भाषा ।

पूर्वरश्मिकू स्पष्ट करना. रश्मिपतिकी गति मंद होवे तो  
पूर्वरश्मिका दशांश लेके पूर्वही रश्मिमें हीन करना तो  
स्पष्ट होती है. रश्मिपतिकी गति बहुत मंद होवे तो अ-  
ष्टमांश हीन करना. शीघ्र गति होवे तो छठ्ठा भाग हीन

| अथ मर्तातररश्मिचक्रम्. |   |   |    |    |    |   |    |  |  |
|------------------------|---|---|----|----|----|---|----|--|--|
| स                      | च | म | बु | शु | शु | श | मो |  |  |
| ०                      | ३ | ५ | ०  | १  | ०० | ३ | १४ |  |  |
| ०                      | १ | १ | ५  | ३  | ४  | २ | ५  |  |  |
| ०                      | २ | १ | ५  | ५  | ४  | ३ | ४  |  |  |

करना. शीघ्र तर गति होवे तो चतुर्थांश हीन करना. ऐसा कितनेक ऋषि कहते  
हैं ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ अब गतिके अठ भेद कहते हैं. वक्रगति १, अनुवक्रा  
गति २, विकला गति ३, शीघ्रगति ४, शीघ्रतरा गति ५, मंदगति ६, मंदतर-  
गति ७, समासमा गति ८, वो वर्ज करनेयोग्य हैं. शीघ्रतरगति वृद्धिहीन भई इसकूं  
मंदगति कहना. वैसी शीघ्रगति वृद्धिहीन भई तो अनिमंदतर गति कहना. विशेष  
टीकामें स्पष्ट है ॥ १७ ॥ अब राजयोग दृष्टिद्वययोग होवे तब रश्मिका विशेष संस्कार

गे च रश्मयः ॥ पापसौम्यारिमित्राणां योगे हानिश्च की-  
र्तिताः ॥ १८ ॥ उच्चादिषु च पूर्वोक्तः पापो बलवशाद्भ-  
वेत् ॥ १९ ॥ चतुर्गुणा राजयोगे पूर्वन्यायेन बोधिताः ॥

टीका ।

द्धी आह । योगेष्विति योगेषु राजयोगदारिद्र्यादिसंज्ञकेषु ये योगकर्तारो ग्रहाः  
प्रोक्ताः तेषां योगे सति दृष्टशुभयोगकारकसंबंधतारतम्येन रश्मयः स्पष्टाः स्युः ।  
एतदुक्तं भवति राजयोगकारकग्रहस्य दारिद्र्ययोगकारकग्रहेण योगे एकरा-  
शिसंबंधे सति दारिद्र्यकारकग्रहात्तरश्मिमीराजयोगकारकग्रहरश्मीन्संशो-  
ध्यावशिष्टा राजयोगकारकग्रहरश्मयो ज्ञेयाः एवं राजदारिद्र्ययोगकारकयो-  
रेव द्वयोस्त्रयाणां वा संयोगे तयोस्तेषां वा रश्मिमीलनेन स्पष्टरश्मयस्तयोस्तेषां  
वा ज्ञेया इतिदिक् । एवमेव शुभाशुभग्रहयोगेन रश्मीनां ऋासबृद्धी विशद-  
यत्युत्तरार्धेन । पापः खलः सौम्यः शुभः अरिः शत्रुः मित्रं सुहृत् एतेषां  
योगे एकराशिसंबंधे सति हानिः पापरश्मिभिः शुभरश्मीनां अरिरश्मिभिः  
मित्ररश्मीनां हानिः ऋासः एवमर्थात्सौम्यानां मित्राणां च योगे एव रश्म-  
यः कीर्तिताः कथिता इति ॥ १८ ॥ अथोच्चादीनां पापानां च रश्मीनाह  
उच्चेति । उच्चादिषु नीचांतपूर्वोदितनवस्थानेषु पापानां च रश्मीनाह उच्चा-  
दिषु उच्चत्रिकोणस्वर्क्षादिनीचांतनवलक्षणेऽपि पूर्वोक्तो रश्मिः बोध्यः पापः  
पापग्रहरश्मिस्तु दलवशात् मूलरश्मिः बलतारतम्येन न्यूनातिरिक्तो भवेत्  
॥ १९ ॥ अथ राजयोगकारकग्रहाणां ध्रुवांकैः प्राग्वत् रश्मीनाह चतुर्गुणाइ-

भाषा ।

कहते हैं. राजयोग करनेवाले ग्रह और दारिद्र्ययोग करनेवाला ग्रह यह दोनोंका  
एकराशिसंबंध होवे. दारिद्र्य करनेवाले ग्रहकी रश्मिकू राजयोग करनेवाले  
रश्मिमें न्यून करके जो राजयोग ग्रहकी शेष रहै वो स्पष्ट जानना. ऐसा शुभा-  
शुभ शत्रुमित्रादिक ग्रहोंका एकराशिसंबंधसे ऊपर लिखे हुवे प्रकारसे कहना  
॥ १८ ॥ अब पहिले जो उच्चादिक नव स्थान कहे हैं उसमें पापग्रहोंकी  
रश्मिका निर्णय कहते हैं. उच्चादि नव स्थानोंमें रश्मि पहिले सरिखे जानना. पापग्रह  
रश्मिको बलवान्पना देखके कमजास्त करना ॥ १९ ॥ अब पहिले जो रश्मिबल

पंचाष्टषण्णवाष्टांकवेदाः स्यूरश्मयः स्वकाः ॥२०॥ द्विग्र-  
हादिषु योगेषु ग्रहभावफलाहताः ॥ गतिसंज्ञानुरूपेण

टीका ।

ति । राजयोगे राजयोगकारकग्रहे पूर्वन्यायेन नीचोनमिति सप्तमश्लोकोक्तेन  
रश्मयो बोधिता ज्ञापिताः तत्र विशेषस्तु दिगित्यादिषष्ठश्लोकोक्तध्रुवांकस्था-  
नापन्नानन्यध्रुवांकान्नव्यादिसप्तग्रहविहितानाहोत्तरार्धेन पंच ५ रवेः, अष्टौ  
८ चंद्रस्य, षट् ६ भौमस्य, नव ९ बुधस्य, पुनरष्टौ ८ गुरोः, अंकाः ९ शुक्र-  
स्य, वेदाः ४ शनेः इति ध्रुवांकैः प्राग्वद्दर्शनीयानीय चतुर्गुणाः कार्याः स्व-  
काः तत्तद्ग्रहाणां स्वीया रश्मयः स्युः ॥ २० ॥ अथ द्विग्रहादियोगे रश्मी-  
न्संक्षेपतः फलनिर्णयं चाह द्विग्रहेति । द्विग्रहादिषु द्वौ च तौ ग्रहौ च द्विग्रहौ  
तौ आदिर्येषां ते द्विग्रहचतुर्ग्रहादयः तेषु योगेषु पंचाष्टेत्यादय उक्तरश्मयः  
ग्रहभावफलाहताः ग्रहाणां संयुक्तानां यो भावः संयोगवर्तमानभावः तद्रूपं  
यत्फलं तेन हता युजिताः तेषां द्रव्यादीनां युक्तग्रहाणां स्पष्टा रश्मयो भवन्ति  
अत्रोदाहरणम् । रविः १०।४।१४ गुरुः १०।१५।३९ अनयोर्भावः १०।२।५३  
रव्युक्तरश्मयः ५ एभिर्गुणितो भावः ५०।२।२६५ पृथुद्धृताः ५०।१४।२५  
ऊर्ध्वांकोशस्थानापन्नः त्रिशद्दीनो जातः २०।१४।२५ अयं रविस्पष्टरश्मिः  
एवं गुरोरपि रश्मयः । एवंत्रिग्रहादियोगेषु ज्ञेयम् । अथैषां रश्मीनां फलानां  
निर्णयः निश्चयः गतिसंज्ञानुरूपेण गतीनां याः संज्ञाः प्रागुक्ताः वक्रानुवक्ते-  
त्यादयः तासां अनुरूपेण सादृश्येन स्मृतः यस्य ग्रहस्य या वक्राद्यन्यतमा-

भाषा ।

लये हैं उसमें जो राजयोगकारक ग्रहकी रश्मि हैं, वहां विशेष कहते हैं, सोलह  
राजयोग जो हैं वो पूर्वभागमें कहे हैं, सो वे ग्रहोंके अब रश्मि संस्कारमें क्षेपक  
कहते हैं, सूर्यके ५, चंद्रके ८, मंगलके ६, बुधके ९, गुरुके ८, शुक्रके ९, श-  
निके ४, यह ध्रुवांकोसे पूर्वरीतिप्रमाणसे रश्मि लयके चतुर्गुणित करना अपनी  
अपनी ग्रहकी रश्मि होवे ॥ २० ॥ अब द्विग्रह, त्रिग्रह, चतुर्ग्रहयोग ग्रहोंकी र-  
श्मिके वहां वे ग्रह रश्मिसे ग्रहान्वित भावांक गुणन करके माठमें भाग लेना, लब्ध

फलानां निर्णयः स्मृतः ॥ २१ ॥ इष्टकष्टफलसंगुणास्तत-  
स्तत्करानथ च संयुतास्तुतान् ॥ निश्चितार्थमखिलं स-  
मीक्ष्यतत्प्रस्तुतं तु सकलं वदेद्बुधः ॥ २२ ॥ एकादि पंच-  
कं यावदरिद्रा भृशदुःखिताः ॥ नीचानां दासतां याता अ-

## टीका ।

गतिः तत्सादृश्येन वक्राद्यन्यतमं फलं रश्मीनां ज्ञेयमित्याशयः ॥ २१ ॥  
एवमिष्टकष्टं रश्मींश्चोक्त्वा एषां प्रयोजनमाह इष्टेति । ततः रश्म्युत्पादनानंतरं  
इष्टकष्टफलसंगुणानिष्टफलगुणितान् कष्टफलसंगुणितांश्च कृत्वा तानिष्टसंगु-  
णितान्सर्वान्संयुतान्कृत्वा तान् कष्टसंगुणितांश्च सर्वान्पृथक् संयुतांश्च करान्  
राशीन् कृत्वा अखिलं सर्वं ग्रहजं भावजं राजयोगपरिव्राड्योगादिजं नाना-  
विधं शुभाशुभफलं निश्चितार्थं निश्चितः अर्थः इष्टकष्टरश्मिसंयोगसमुद्भवं  
फलं यस्मिन्कर्मणि यथा तथा प्रस्तुतं तत्कालीनं पूर्णं समीक्ष्यावलोक्य वि-  
चार्येत्यर्थः । बुधो विद्वान् वदेत् कथयेदिति । अथेष्टकष्टवलगुणितरश्म्युदा-  
हरणम् । यथा सूर्येष्टवलं ०।२८।२५ सूर्यरश्मयः ५।४०।२३ इमे गोमूत्रिका-  
रीत्या गुणितांकाः ०।०।०।१४०।११२०।६४४।१२५।१०००।५७५ जातं अ-  
स्यां संख्यायां षष्ट्युद्धृतायां २।४१।१२ अयं सूर्येष्टरश्मिः एवं सूर्यकष्टवलं  
०।३१।३५ एते सूर्यरश्मयः ५।४०।२३ इमे गोमूत्रिकारीत्या गुणितांकाः  
।०।०।०।१५५।१२४०।७३३।१७५।१४००।८०५ जातं अस्यां संख्यायां ष-  
ष्ट्युद्धृतायां २।५९।१० अयं सूर्यकष्टरश्मिः एवं सर्वत्रानुक्तस्थलेषु बोध्यम्  
॥ २२ ॥ अथ फलं वदेदित्युक्तं तदेकादिरश्मिसंख्यातारतम्येन स्फुटयति  
त्रयोविंशतिश्लोकमारम्यद्विचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । तत्र तु एकादित्या-

## भाषा ।

जो हैं ओ उच्चरश्मि फल आया. रश्मिका फल गतिके अनुसारसे कहना ॥ २१ ॥  
इष्टकष्टफलसे रश्मिकू गोमूत्रिकान्यायसे गुणन करके जो फल आवे उसकू इष्टर-  
श्मिकष्टरश्मि होवे पीछे उस ऊपरसे शुभाशुभ फल कहना ॥ २२ ॥ अब रश्मिका  
फल कहते हैं. एकसे पांचतक रश्मिका योग होवे तो वो मनुष्य दरिद्री दुःखी होवे.

पि जाताः कुलोत्तमे ॥ २३ ॥ परतो दशकं यावत्केवलं ज-  
ठराय वै ॥ निःस्वाः कदाचिद्दासाश्च भारवाहाः कदाचन  
॥ स्त्रीपुत्रग्रहहीनाश्च वंशायोग्यक्रियारताः ॥ २४ ॥ एका-  
दशोऽल्पपुत्राः स्वल्पधनाः स्त्रीविमानिता मनुजाः ॥ विं-  
टीका ।

| अथ इष्टवलचक्रमाह. |    |    |     |     |     |    |     | अथ कष्टवलरश्मिचक्रम्. |    |    |     |     |     |    |     |
|-------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|-----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू.               | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | यो. | सू.                   | च. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | यो. |
| २                 | ०  | १  | ०   | ०   | ५   | १  | १३  | २                     | १  | ४  | १   | ०   | १   | ०  | १०  |
| ४१                | ३८ | ५६ | ३३  | ४६  | १५  | ४५ | ३७  | ५५                    | ५२ | ४५ | १०  | ३५  | ३७  | ४० | ४५  |
| १२                | १८ | १० | ३१  | ४७  | ४४  | ४३ | २७  | १०                    | ५१ | २३ | ९   | ३६  | ४७  | ४० | ४६  |

दिषड्विंशतिश्लोकपर्यंतमशुभफलं विवृणोति । एवं प्रागुक्तरीत्या संस्कृत-  
रश्मयः एकादि एकमारभ्य यावत्पंचकंपंचांकपर्यंतं प्राप्ताश्चेत्तद्रश्मिवंतो नराः  
दरिद्रः रंकाः अपि च मृशदुःखिताः अतिव्यथिताः संतः कुलोत्तमे सत्कुले-  
पि जाताः उत्पन्नाः नीचानां हीनानां दासतां दासस्य भावस्तां नीचभृत्य-  
त्वमित्यर्थः याताः यास्यंतीत्यर्थः किं पुनर्नीचजातीया नीचसेवकाः स्युरिति  
वक्तव्यम् ॥ २३ ॥ ततः परतो यावद्दशकं पंचप्रभृति दशपर्यंतं प्राप्ताश्चेत्तेषां जन्म  
जठराय वै केवलमुदरभरणार्थमेव ज्ञेयं तदेवविशदयति ते निःस्वाः दरिद्राः  
अतः कदाचिद्दासाः कदाचिदुदरपोषणार्थं भारवाहका भारं वहति धरंतीति  
तथाभूताः स्त्रीपुत्रग्रहहीनाः भार्यासुतवेश्मरहिताः च परं वंशायोग्यक्रियार-  
ताः स्ववंशानुचितकर्मसक्ताश्च भवेयुरिति ॥ २४ ॥ एकादशे रश्मौ सति म-  
नुजाः अल्पपुत्राः अल्पसंतानाः अल्पधनाः अल्पद्रव्याः अतः स्त्रीविमानिताः  
अवलावमानयुक्ताः संतः तदा स्वल्पमपि निजं कुटुंबं कृच्छ्रेणैव कष्टेनैव वि-  
भाषा ।

और जो कभी उत्तम कुलमें पैदा हुवा होवे तथापि नीचकी चाकरी करेगा ॥ २३ ॥  
छसे दसतक योग होवे तो केवल उदरपोषण करेगा, कोई बखत द्रव्यहीन, कोई  
बखत दास्य, कोई बखत भारवाहक होवेंगे, स्त्रीपुत्रघरसे हीन रहेंगे, वंश कुल  
जावे, ऐसे कर्ममें रत रहेंगे ॥ २४ ॥ ग्यारहरश्मिका योग होवे तो अल्पपुत्रवान्  
स्त्रियोंसे अपमानित होवेगा, और अपने स्वल्प कुटुंबकाभी पालन बड़े कष्टसे करे-

भ्रंति कृच्छ्रेण निजं स्वल्पं च कुटुंबमेव तदा ॥ २५ ॥  
द्वादशे निर्धना मूर्खा धूर्ताः सत्वविनाशकाः ॥ त्रयोदशे  
च चोराः स्युर्निर्धनाः कुलपांसनाः ॥ २६ ॥ विद्वांश्चतुर्द-  
शे धर्मे रतो मर्षी धनार्जकः ॥ कुटुंबभरणे सक्तः कुलयो-  
ग्यक्रियो भवेत् ॥ २७ ॥ रश्मिभिः पंचदशभिरेवं गुणयु-  
तोऽपि सन् ॥ स्ववंशमुख्यो धनवानित्याह भगवान्मुनिः  
॥ २८ ॥ आविंशतेः कुलेशाना बहुभृत्याः कुटुंबिनः ॥

### टीका ।

भ्रति पालयंतीति ॥ २५ ॥ अथ द्वादशपरिमिते रश्मौ जाताः निर्धना दरि-  
द्राः मूर्खा बुद्धिहीनाः धूर्ताः परवंचकाः सत्वविनाशकाः सतो भावः सत्त्वं  
उत्तमत्वं तस्य नाशकाः गुणाद्युत्तमत्वत्यागशीला इत्यर्थः । अथ त्रयोदश-  
मिते रश्मौ जनाः चोराः तस्कराः निर्धनाः स्पष्टं कुलपांसनाः कुलाधमाश्च  
स्युरिति ॥ २६ ॥ अथ विद्वानित्यादित्रयस्त्रिंशच्छ्लोकावधि शुभत्वं कथयति  
तत्र विद्वानिति । रश्मिभिरिति च । चतुर्दशपरिमिते रश्मौ विद्वान्ज्ञाता धर्मे  
पुण्यकर्मणि रतः तथा मर्षी मर्षः सहनशक्तिः तद्वान् धनार्जकः धनसंपाद-  
कः कुटुंबभरणे सक्तः कुटुंबपालनपरः कुलयोग्यक्रियः स्ववंशोचिताचरण-  
शीलश्च भवेत् ॥ २७ ॥ अथ पंचदशपरिमितैरश्मिभिस्तु एवं गुणयुतो-  
ऽपि सन् पूर्वोक्तफलसंपन्नोऽपि सन् स्ववंशमुख्यः स्वकुलश्रेष्ठः धन-  
वांश्चेति भगवान्पराशरमुनिराहेत्यन्वयः ॥ २८ ॥ अथ षोडशरश्मिमार-

### भाषा ।

गा ॥ २५ ॥ बारह रश्मिका योग होवे तो मनुष्य निर्धन मूर्ख धूर्त सत्यहीन हो-  
वेगा. तेरह रश्मिका योग होवे तो चोर निर्धन कुलपांसक होवेगा ॥ २६ ॥  
चौदह रश्मिका योग होवे तो वो मनुष्य धर्मी क्रोवराहित रहै, द्रव्योपार्जन कर-  
नेमें तत्पर रहे, कुटुंबपालन करे, कुलयोग्य कर्म करे ॥ २७ ॥ पंद्रहरश्मिका  
योग होवे तो सताईसवें श्लोकका फल जो है वो फलसहित होयके और अपने  
वंशमें मुख्य होवेगा, धनी होवेगा, ऐसा पराशरमुनि कहते हैं ॥ २८ ॥ सोलहसे

कीर्तिमंतश्च पूर्णाश्च स्वजनेन च षोडश ॥ २९ ॥ एकविं-  
शतिविख्यातः पंचाशज्जनपोषकः ॥ दानशीलः कृपायुक्तो  
द्वाविंशो लोभसंयुतः ॥ ३० ॥ धनवानल्परिपुश्च प्रभुः स्व-  
ल्पगुणो भवेत् ॥ त्रयोविंशे तु मुख्यश्च विद्याहीनो धनी  
सुखी ॥ ३१ ॥ आत्रिंशत्परतः श्रीमान्सर्वसत्त्वसमन्वितः ॥

### टीका ।

अथ विंशतिरश्मिपर्यंतं फलानि कथयति आविंशतेरिति । षोडशाद्रश्मेः  
सकाशात् आविंशतेः विंशतिरश्मिपर्यंतं जनाः कुलेशानाः कुलपाल-  
का बहुभृत्याः प्रचुरसेवकाः कुटुंबिनः कुटुंबवंतः कीर्तिमंतश्च स्व-  
जने पूर्णाश्च भवेयुरिति ॥ २९ ॥ एकेत्यादित्रयत्रिंशत्पर्यंतं फलान्याह । ए-  
कविंशति विख्यातः एकविंशतिसंख्याप्रसिद्धो रश्मिश्चेत् नरः पंचाशज्जन-  
पोषकः शतार्धनरपालकः च परं दानशीलः वितरणस्वभावः कृपायुक्तो द-  
यालुः स्यात् । अथ द्वाविंशे रश्मौ लोभसंयुतः अतिलुब्धः ॥ ३० ॥ धन-  
वान् संपन्नः अल्परिपुः अल्पशत्रुः प्रभुः स्वामी स्वल्पगुणो भवेदिति । म-  
ध्यमं शुभाशुभमिश्रफलमुक्तम् त्रयोविंशे रश्मौ तु मुख्यः जातिश्रेष्ठः विद्या-  
विहीनः सामान्यविद्यावान् धनी द्रव्यवान् सुखी सौख्यसंपन्नश्च भवेत् ॥ ३१ ॥  
अथ चतुर्विंशतिरश्मिमारभ्य परतः अग्रे आत्रिंशत् त्रिंशत् त्रिंशद्रश्मिपर्यंतं  
श्रीमान् लक्ष्मीवान् सर्वसत्त्वसमन्वितः अश्वगोगजादिप्राणियुक्तः राजप्रियः

### भाषा ।

लेके बीसतक रश्मियोग होवे तो कुलकू पालन करनेवाले बहुत सेवक बहुत कुटुंब  
जिनका और कीर्तिमान् अपने संबंधि लोकोंसे पूर्ण होवेगे ॥ २९ ॥ एकवीस रश्मिका  
योग होवे तो पचास मनुष्यका पालन करेगा, दानशील दयावंत होवेगा, और  
बावीस रश्मिका योग होवे तो लोभी होवेगा, और धनवान्, शत्रुहीन, समर्थ, अ-  
ल्पगुणी होवेगा ॥ ३० ॥ तेवीस रश्मिका योग होवे तो विद्याहीन हो जावेगा  
तथापि सब ठिकाने प्राधान्यताकू पाव धनवान् सुखी होवे ॥ ३१ ॥ चोवीससे  
लेके तीसपर्यंत रश्मिका योग होवे तो लक्ष्मीवान् सर्वबलयुक्त होवे राजप्रिय प्र-



राजप्रियश्च चंडश्च जनश्च बहुभिर्वृतः ॥ ३२ ॥ एकत्रिंशो  
च सचिवो द्वात्रिंशो वाहिनीपतिः ॥ पूर्वभागे समुद्दिष्टफ-  
लानि परतो विदुः ॥ ३३ ॥ पंक्तिः सूर्या तिथिनृपात्यष्टिर्धृ-  
तिश्च विंशतिः ॥ नखा मूर्च्छा जिनास्तत्वं त्रिंशद्वात्रिंश-  
टीका ।

नृपप्रीतिपात्रः चंडः उग्रस्वभावः चपरं बहुभिः असंख्यातैर्जनैर्वेष्टितः ॥ ३२ ॥  
एकत्रिंशे च रश्मौ सचिवः मंत्री प्रधान इत्यर्थः । द्वात्रिंशत्परिमिते रश्मौ  
वाहिनीपतिः सेनारक्षकः अतः परतः त्रयस्त्रिंशद्रश्मिप्रभृतिफलानि पूर्वभागे  
समुद्दिष्टफलानि विदुः ज्योतिषिका इतिशेषः । एवं एकरश्मिमारम्य यावत्  
षट्पंचाशद्रश्मिसमागमे सामान्यतः शुभाशुभफलानि कथितानि ज्ञेयानि  
विशेषतस्तु अग्रे वक्ष्यतीति ॥ ३३ ॥ अथारंभतो यावद्रश्मिसमापनं संतति-  
विचारमाह पंक्तिरित्यादिसार्धश्लोकेन । पंक्तिः दश “द्वात्रिंशे वाहिनीपतिः”  
इति द्वात्रिंशद्रश्मिपर्यंतं प्राक्सामान्यफलान्युक्तानि तावत्संख्यारश्मिपर्यंतं  
नवसंख्याकसंततिर्ध्वन्यते, सा च एकरश्मितो द्वात्रिंशद्रश्मिपर्यंतं अनुपाततो  
ज्ञेया । द्वात्रिंशद्रश्मिषु नवसंततिश्चेत्तद्व्यूनामुक्तरश्मिषु कियती संततिरिति-  
ततः परं क्रममाप्तद्वात्रिंशद्रश्मीनामग्रे भागे त्रयस्त्रिंशद्रश्मिषु सत्सु पंक्तिः द-  
शसंख्याः सुतादयः, चतुस्त्रिंशद्रश्मिषु सूर्याः द्वादश संततिः, पंचत्रिंशद्रश्मि-  
षु तिथयः पंचदश संततिः, षट्त्रिंशद्रश्मिषु नृपाः षोडश, एवं ३७ रश्मिषु  
भूयः पुनः नाम प्रागुक्ताः नृपा एव, ३८ रश्मिषु अत्यष्टिः सप्तदश, ३९ र-  
भाषा ।

तापी और बहुत लोक उसके संग रहाकरे ॥ ३२ ॥ एकत्र्तीस रश्मिका योग  
होवे तो प्रधान पदवीकू पावे, बर्तीस रश्मि होवे तो सेनापति होवे वहांसे  
आगे जो रश्मिका फल हैं सो पूर्वभागमें कहा है ॥ ३३ ॥ अब रश्मि ऊपरसे  
संतानविचार कहते हैं. तेहेतीस रश्मिका योग होवे तो दश पुत्रादिक होवे,  
चौतीस रश्मियोग होवे तो बारा संतान होवे, पैंतीस रश्मिसे पंधरा संतान  
होवे, छैतीस रश्मिसे सोलह संतान होवे, सैंतीस रश्मिसे सोलह संतान होवे, अ-  
डतीस रश्मिसे सतरा संतान होवे, ओगनवालीस रश्मिसे अठारा संतान होवे,

देव च ॥ ३४ ॥ पंचाशच्चैव षष्टिश्च शतं चैव सुतादयः ॥

आरभ्य विश्वसंख्यायाः क्रमात्स्वजनपोषकः ॥ ३५ ॥ अतः

ऊर्ध्वं नृपे श्रांतं आपंचत्रिंशतः क्रमात् ॥ शतपंचकमारभ्य

टीका ।

श्मिषु घृतिः अष्टादश, ४० रश्मिषु घृतिः अष्टादशैव, ४१ रश्मिषु नखः विंशतिः, ४२ रश्मिषु मूर्च्छाः एकविंशतिः, ४३ रश्मिषु जिनाः चतुर्विंशतिः ४४ रश्मिषु तत्त्वं पंचविंशतिः, ४५ रश्मिषु त्रिंशत् संततिः, ४६ रश्मिषु द्वात्रिंशत्, ४७ रश्मिषु पंचाशत्, ४८ रश्मिषु षष्टिः, ४९ रश्मिषु शतं सुतादयः, अग्रे अनुक्तत्वात् शत संख्यातोऽधिकाः संख्याता ज्ञेयेत्याशयः ॥ ३४ ॥ अथैश्वर्यविचारो रश्मिषु कथ्यते आरभ्येत्यर्थेन । तत्र प्राक्सर्वसामान्यविचारे त्रयोदशरश्मिपर्यंतमशुभमेव फलमुक्तम् । तावद्रश्मिपर्यंतं दारिद्र्यदुःखाद्यशुभफलत्वादेश्वर्याभाव एव । ततः विश्वसंख्यायाः पुरतः चतुर्दशरश्मिमारभ्य सामान्यफलनिर्णीतद्वात्रिंशद्रश्मिसंख्यापर्यंतं क्रमाद्रश्म्यंकसंख्यापरिमितस्वजनपोषकाः जना ज्ञेयाः ॥ ३५ ॥ अथ द्वात्रिंशद्रश्म्यूर्ध्वं प्राग्वद्रश्मिसंख्यां संत्यज्य बहुपोषकत्वं कथयति अत ऊर्ध्वमिति । अत ऊर्ध्वं द्वात्रिंशद्रश्म्यूर्ध्वं आपंचत्रिंशतः पंचत्रिंशद्रश्मिपर्यंतं शतपंचकं पंचशतान्यारभ्य सहस्रावधि सहस्रं अवधियैस्मिन्कर्मणि तत्तथा पोषकाः सहस्रपर्यंतं पालका इत्यर्थः । कया रीत्या पोषकास्तत्साधनं कथयति नृपे राज्ञि राजकर्मणोत्यर्थः श्रांतः जातश्रमः

भाषा ।

चालीस रश्मिसे अठारा संतान होवे, एकेचालीस रश्मि होवे तो बीस संतान होवे, विंशालीस रश्मि होवे तो एकईस संतान होवे, तियालीस रश्मि होवे तो चौबीस संतान होवे, चौवालीस रश्मि होवे तो पचीस संतान होवे, ४५ रश्मि होवे तो ३० संतान होवे ४६ रश्मि होवे तो ३२ संतान होवे ४७ रश्मि होवे तो ५० संतान होवे, ४८ रश्मि होवे तो साठ संतान होवे, ओगनपचास रश्मि होवे तो सौ संतान होवे. आगे कछा नहीं है वास्ते इसमें अधिक रश्मि होवे तो १०० से अधिक संतान वृद्धि जानना ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ अब रश्मिके मानसे बहुपोषकयोग कहते हैं ३२ रश्मिका योगसे ४५ पर्यंत, ५०० सांस १००० पर्यंत मनुष्यको

सहस्रावधि पोषकः ॥ ३६ ॥ अत ऊर्ध्वं तु देशानां संख्याः  
स्युः पंचविंशतिः ॥ षट्त्रिंशतिश्च भानि स्युस्त्रिंशत् षट्-  
त्रिंशदेव च ॥ ३७ ॥ अत ऊर्ध्वं नृपाः क्षात्रधर्मिणः क्ष-

टीका ।

राजाधिकारक्रमेणेति यावत्कमात् त्रयस्त्रिंशच्चतुस्त्रिंशत्पंचीत्रशद्रश्मिषु फलं  
ज्ञेयमिति ॥ ३६ ॥ अथ पंचत्रिंशद्रश्मिभ्यः परतो देशाधिपत्यं कथयति अत ऊर्ध्व-  
मिति । अत ऊर्ध्वं षट्त्रिंशदंशादारभ्य क्रमादेशानामाधिपत्ये संख्याश्चत्वारिंशद्रश्मिपर्यंतं पंचविंशत्यादयः स्युः एतदुक्तं भवति षट्त्रिंशद्रश्मिषु पंच-  
विंशतिः २५, सप्तत्रिंशद्रश्मिषु षट्त्रिंशतिः २६, अष्टत्रिंशद्रश्मिषु भानि २७,  
एकोनचत्वारिंशद्रश्मिषु त्रिंशत् ३०, चत्वारिंशद्रश्मिषु षट्त्रिंशत् ३६, एवं दे-  
शानामाधिपत्यं ज्ञेयमिति ॥ ३७ ॥ अथ रश्मीनां राजफलमाह अत इति । अत  
ऊर्ध्वं चत्वारिंशद्रश्म्यूर्ध्वं क्षत्रियः जात्येकवचनं क्षत्रियजातीयाः नृपाः राजा-  
नो भवेयुः । अथ च अन्यजातीयाश्चत्वारिंशदधिकरश्मिवंतश्चेत् क्षात्रधर्मि-  
णः क्षत्रधर्मवंतः संतः नृपाः स्युः । तत्र क्रममाह एकचत्वारिंशद्रश्मिमारभ्य  
सप्तचत्वारिंशद्रश्मिपर्यंतं क्रमात् श्रू १, द्वि २, त्र्य ३, वधी ४, पु ५, षट् ६,  
सप्त, ७, संख्यानां श्रुतां राज्ञां ये जनपदाः देशाः तेषामधिपाः स्वामि-  
नो भवेयुः । एतदुक्तं भवति । एकचत्वारिंशद्रश्मिषु सत्सु श्रूपसंख्याकश्रु-  
भृज्जनपदानां अधिपः स्यात् तथा द्विचत्वारिंशद्रश्मिषु द्वि २ संख्याकनृप-  
देशपालकाः एवं क्रमेण त्रिचत्वारिंश ४३ चतुश्चत्वारिंशत् ४४, पंचचत्वा-

भाषा ।

पोषण करेगा ॥ ३६ ॥ छत्रीस रश्मिका योग होवे तो पचीस गांवोंका अधिपति  
होवे, सैंतीस रश्मिका योग होवे तो छवीस गांवोंका अधिपति होवे, अडतीस  
रश्मिका योग होवे तो सत्तावीस गांवोंका अधिपति होवे, ओगनचालीस रश्मिका  
योग होवे तो तीस गांवोंका अधिपति होवे, चालीस रश्मिका योग होवे तो छर्चीस  
गांवोंका अधिपति होवे ॥ ३७ ॥ एकेचालीस रश्मिका योग होवे तो एक देशका  
राज्य करे, वैयालीस रश्मिका योग होवे तो दो देशोंका राज्य करे, तिर्यालीस रश्मि-  
का योग होवे तो तीन देशोंका राज्य करे, चैमाळीस रश्मियोग होवे तो चार

त्रियोऽथ वा ॥ भूद्वित्र्यब्धीषु षट्सप्तभूमृज्जनपदाधिपाः  
॥ ३८ ॥ पंचाशद्रश्मिसंयोगे सम्राट् स्यादनुपाततः ॥ अ-  
त ऊर्ध्वं तु देवेन्द्रतुल्याः स्युरिति पद्मभूः ॥ ३९ ॥ उच्चचे-  
ष्टोत्थयोगार्धगुणिताः षष्टिभाजिताः ॥ नरादीनां तु सं-  
टीका ।

रिंशत् ४५, षट्चत्वारिंशत् ४६, सप्तचत्वारिंशत् ४७, रश्मिषु क्रमात् त्र्य ३  
ब्धी ४ पु ५ षट् ६ सप्त ७ भूमृज्जनपदानामाधिपत्यं ज्ञेयमिति ॥ ३८ ॥  
अथ सप्तचत्वारिंशद्रश्म्यूर्ध्वं सार्वभौमपदाप्तिमाह पंचाशदित्यर्धेन । पंचाश-  
त्संख्याकरश्मिषु सम्राट् सम्यक् राजतेऽसौ तथा सार्वभौम इत्यर्थः स्यात्  
ननु मध्यावशिष्टरश्मिद्वयस्य का गतिस्तत्राह । अनुपाततः ५० रश्मिषु पूर्णं  
साम्राज्यं चेत् एकोनेषु ४९ द्व्युनेषु ४८ कियत्साम्राज्यमिति त्रैराशिकेन  
तद्वैगुण्यं ज्ञेयमिति विवेकः । अथ पंचाशदूर्ध्वं साक्षादिन्द्रतुल्यत्वमेवाह अत  
इति । अत ऊर्ध्वं पंचाशद्रश्म्यूर्ध्वं रश्मिसमागमे तु देवेन्द्रतुल्या भुवि साक्षा-  
दिन्द्रतुल्या एव ते नराः स्युरिति पद्मभूर्ब्रह्मा आहेति शेषः ॥ ३९ ॥ अथ  
नरादिषोऽप्यसंख्यामाह उच्चैति । उच्चचेष्टोत्थयोगार्धगुणिताः रश्मय इत्यनु-  
वृत्तं उच्चं उच्चबलं चेष्टाचेष्टाबलं च उच्चचेष्टे ताम्यां उत्थः संभूतः यो योगः  
मिश्रणं तस्य यदर्थं द्विभागोपलब्धिः तेन गुणिताः कृतगुणाकाराः ये  
मकरगणास्ता रश्मयः ते षष्टिभाजिताः षष्टिभिः भक्ताः कार्यः एवं कृते ये  
लब्धांकाः ते एव नरादीनां नरा मनुष्याः आदयो येषां ते अश्वगजगो-  
भाषा ।

... देशोंका राज्य करे. पैतालीस रश्मियोग होवे तो पांच देशोंका राज्य करे. छँयाली-  
स रश्मिका योग होवे तो छः देशोंका राज्य करे, सैंतालीस रश्मिका योग होवे तो  
सात देशोंका राज्य करे ॥ ३८ ॥ पचास रश्मिका योग होवे तो सार्वभौम राजा  
होवे. अडतालीस रश्मिका और ओगनपचास रश्मिका फल वोही जानना. पचासके  
उपर रश्मिका योग होवे तो इंद्रके तुल्य होवे, ऐसा ब्रह्मार्जीने कहा है ॥ ३९ ॥ अब  
रश्मिमें विशेष फल कहते हैं. उच्चरश्मि चेष्टारश्मिका योग करके उसका अर्थ  
करना पाँछे वो अर्थ जो अंक हैं उससे पूर्व योगकू गुणना गोमूत्रिकान्यायसे पाँछे

ख्याः स्युः स्पष्टा इत्याह पद्मभूः ॥ ४० ॥ शूद्रादयः कलौ  
राजधर्मिणो म्लेच्छधर्मिणः ॥ विप्राश्चेच्छ्रीधनैर्युक्ता यज्ञ-  
कर्मक्रियारताः ॥ ४१ ॥ योगरश्मिसमायोगे तदानीं

टीका ।

प्रभृतिपोष्याः तेषां स्पष्टाः स्फुटाः संख्याः स्युरिति एवं प्रकारकनरा-  
दिज्ञानं पद्मभूर्ब्रह्माऽऽह उक्तवानिति ॥ ४० ॥ एवमुक्तराजयोगाः कलौ  
शूद्रादीनामेवेत्याह शूद्रादय इति । कलौ कलियुगे शूद्रादयो हीनजा-  
तीयाः म्लेच्छधर्मिणः म्लेच्छानां धर्मोस्त्येषामिति ते यवनाश्च राजधर्मिणः  
राज्यकर्तारः स्युः न ब्राह्मणादयः अर्थात् रश्म्युक्तराजयोगः शूद्रादीनां म्ले-  
च्छानां च ज्ञातव्य इति भावः । ननु अष्टचत्वारिंशत्प्रभृतिसंख्याकरश्मिसमा-  
गमे ब्राह्मणादीनां फलाभाव एवेत्याशंकायामाह । राजधर्मे सूचकसंख्याक-  
रश्मिवंतो विप्राश्चेच्छ्रीधनैर्युक्ताः श्रीमंतः धनवंतश्च स्युः अपि च राजयोग-  
घटकरश्मियोगात् यज्ञकर्मक्रियारताः स्युः तेन किं राज्यप्राप्तिक्रियाचरणेन  
उत्तरजन्मनि स्वर्गराज्यभोक्तारः स्युरिति ध्वनितार्थः । “ज्योतिष्टोमेन स्वर्ग-  
कामोयजेत” इति श्रुतिप्रामाण्यात्स्वर्गराज्यप्राप्तिकामस्य यस्य साधननिबंध-  
नत्वादितिदिक् । ननु क्षत्रियवैश्ययोः राजयोगः स्यान्नवेति चेन्महर्षिणा त-  
त्फलानुक्त्या शुकभागवतोक्त्या च तज्जातिद्वयस्य कलौ राज्यसत्तानिर्वाह-  
कत्वाभाव एव सूचित इति मंतव्यम् ॥ ४१ ॥ ननु रश्मिभिरेव राज्यफलाव-  
गमे “भाग्येशात्कारके लब्धे पंचमे सप्तमेपि वा । राजयोगप्रदातारो गजवा-  
भाषा ।

साठसे भाग लेना जो लब्ध आवे वो संख्या नर, अश्व, गज, गौ आदि पोष्य-  
वर्गकी जानना इतने जीवोंका पालन करेगा, ऐसा जानना, ऐसा ब्रह्मार्ज्जिने क-  
ह्ना है ॥ ४० ॥ वे जो पूर्व राजयोग कहे हैं वे कलियुगमें शूद्रादिक म्लेच्छ धर्मि-  
योंके जानना. और जो यह राजयोग और उत्तम रश्मियोग ब्राह्मणकू होवे तो  
यज्ञयागकर्मनिष्ठ होयके उस पुण्यप्रतापसे स्वर्गराज्य भोगेंगे ऐसा जानना ॥ ४१ ॥  
पूर्व जो राजयोग कहे हैं और रश्मियोगका फल कहा है, परंतु केवल राजयोग-  
से राज्यफल प्राप्ति नहीं होनेकी किंतु राजयोग होयके बाद रश्मियोग राज्यफल-

तत्फलं विदुः ॥ नामसादिषु योगेषु राजयोगे स्थितं तु  
तत् ॥ ४२ ॥ योगकर्तारमारभ्य बलिनं च विनिर्णयेत् ॥  
पूर्वे भागे समुद्दिष्टभाग्यकर्मफलानि तु ॥ ४३ ॥ अनुपातेन

टीका ।

जिधनैरपि" इत्यादिग्रहयोगादिना उक्तराजयोगस्य वैफल्यप्रसंगः स्यादिति चेन्न किंतु उभयमपि कारणतया ज्ञेयमित्याह योगेति । योगरश्मिसमायोगे सति योगाः स्थानकारकादिग्रहसमुद्भवा योगाः अष्टचत्वारिंशदादिसंख्या-कराजयोगसूचकरश्मयश्च योगरश्मयः तेषां समायोगे संप्राप्तौ सत्यां तदानी-मेव तत्फलं उक्तरश्मिराजयोगफलं विदुः बुबुधुः कथयामासुरित्यर्थः आचा-र्या इति शेषः अर्थात् न केवलं उक्तग्रहयोगैः न चापि केवलमुक्तरश्मिभिरेव किंतु राजयोगकारकग्रहयोगरश्मिसमागमेनैव राजयोगफलं ज्ञेयमिति भावः । अथ नामसादियोगेषु अनेकग्रहोपलब्धौ आरंभादिक्रमेण योगकर्तृन्विचि-नोति नामसादिष्विति श्लोकार्धकाभ्याम् । नामसादिषु नामसः आदिर्येषां ते आश्रयादयः रज्जादयश्च तेषु राजयोगे च यत्स्थितं उक्तफलं तत्तु योगका-रकानेकग्रहेषु बलिनमधिकबलवंतं ग्रहं योगे नामसादौ राजयोगे च कर्तारं मुख्यं कारकं विज्ञाय तं पूर्णापूर्णहीनाहीनरश्मिवन्तं विचार्य तादृशतारतम्येन फलं विनिर्णयेन्निश्चिनुयात् ॥ ४२ ॥ अथ पूर्वभागोक्तभाग्यादिफलानां व्य-वस्थामाह पूर्वत्यादिना अन्वित्यादिना च । पूर्वभागेसमुद्दिष्टभाग्यकर्मफ-लानि सम्यगुद्दिष्टानि कथितानि यानि भाग्यफलानि कर्मफलानि च तानि तु अनुपातेन शुभानि विज्ञाय योजयेत् मेलयेत् अनुपातेन अशुभानि वि-ज्ञाय वर्जयेत् घटयेत् अर्थात् एतत्संस्कारनिर्णीतं सिद्धं फलमिति विजानी-यादित्यभिप्रायः ॥ ४३ ॥ अथैवमेव अनुपाततः पङ्चबलव्यवस्थानमाह स्था-

भापा ।

दायक होवेगा, तब उक्त फल यथार्थ होवेगा, और नामसादिक जो योग हैं उसमेंभी रश्मियोगका फल मिलानेसे यथार्थ मिलेगा ॥ ४२ ॥ पहिले भागमें जो भाग्यभाव कर्मभावका फल कला है उसका शुभाशुभ यहांके रश्मि अनुपातसे शुभाशुभ फलकू जोड़ना घटाना ॥ ४३ ॥ अब सप्त बलमें जो अधिक बल होवे उसमें उ-

विज्ञाय योजयेद्वर्जयेद्बुधः ॥ स्थानवीर्याधिके देशे मुख्यः  
स्यादनुपाततः ॥ ४४ ॥ दिग्बले विजयश्चेष्टा वीर्यं  
तु प्रभुता भवेत् ॥ कालवीर्याधिके कार्ये सदात्साही तथा-  
यने ॥ ४५ ॥ स्ववंशोत्कर्षता स्वोच्चे नैसर्गे जातिनिर्णयः ॥

### टीका ।

नेत्यादिश्लोकद्वयेन । अत्र अनुपाततः सप्तबलमध्येऽधिकावशिष्टस्य स्थाना-  
दिकस्य पृथक् सप्तविधं फलं विशदयति । तदित्थं स्थानबलं दिग्बलाच्चेष्टाबला-  
त्कालबलादयनबलादुच्चबलान्नैसर्गिकबलाच्च अनुपाततः पृथक् संस्कृत्य सर्व-  
भ्योऽप्यधिके स्थानबले देशे मुख्यः स्यादिति स्थानबलाधिक्यफलम् । एवं  
स्थानचेष्टादिग्बलैक्यं प्राग्वदनुपाततः पृथक् संस्कृत्य सर्वभ्योऽप्यधिकतयाव-  
शिष्टे दिग्बले सति विजयः फलं ज्ञेयं एवमेव सर्वबलेभ्योऽनुपाततः चेष्टावीर्यं  
चेष्टाबलबले सति प्रभुता प्रभुत्वं भवेत् एवं प्रागुक्तीत्या कालवीर्याधिके सर्व-  
बलेभ्यः कालबले अधिके सति कार्ये कर्तव्यकर्मणि सदा सर्वदा उत्साही  
भवेत् तथा पूर्वोक्तमेव फलं अयने अयनबलेऽपि ज्ञेयं न भिन्नं० अथ स्वोच्चे उ-  
च्चबलेऽधिके सति स्ववंशोत्कर्षता निजकुलोन्नतता ज्ञेया तथा नैसर्गे निसर्ग-  
बलाधिक्ये जातिनिर्णयः स्वजातिविशेषत्वनिश्चयो बोध्य इति ॥४४॥४५॥  
एवं बलाधिक्यफलमुक्त्वा कथयित्वा इत्युपसंहारेणाध्यायं समापयति राशी-  
नामित्यर्धकद्वयेन । मया संहिताकारेण अत्र संहितायां ये के चन राशीनां  
मेषादीनां ग्रहाणां रव्यादीनां च स्वभावाः स्वानां भावाः याथातथ्येन वर्त-  
मानत्वमित्यर्थः कथिता वर्णिताः ते दैवज्ञेन ज्योतिर्विदा सुबुद्धिना

### भाषा ।

चरारिमका फल कहते हैं. स्थानबल १, दिग्बल २, चेष्टाबल ३, कालबल ४, अय-  
नबल ५, उच्चबल ६, नैसर्गिकबल ७, यह सातोंका फल कहते हैं. स्थानबल  
अधिक होवे तो देशमें मुख्य होवे, दिग्बल अधिक होवे तो विजयी होवे, चेष्टाबल  
अधिक होवे तो प्रभुताई भोगे, कालबल अधिक होवे तो सर्वकार्यमें कुशल होवे,  
अयनबल अधिक होवे तो सर्वकाल आनंदमे रहे ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ उच्चबल अधि-  
क होवे तो अपने वंशमे मुख्यत्व पावे, नैसर्गबल अधिक होवे तो अपना स्वजाति-

राशीनां च ग्रहाणां च स्वभावाः कथिता मया ॥ ४६ ॥  
 ये चात्र योजनीयाश्च दैवज्ञेन सुबुद्धिना ॥ ४७ ॥ इति  
 श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरार्धे रश्मीष्टकष्टादिशासने च-  
 तुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

मूलस्थानाधिके स्थाने स भावः शुभ इष्यते ॥ न्यूने शु-  
 टीका ।

अतिकुशलपक्षेन योजनीयाः कथनीया इत्यर्थः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ श्री-  
 मत्पाराशरोक्तायां संहितायां परार्धके । टीकाचतुर्थोऽध्यायस्य रचितेश्वरतुष्टये  
 ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे श्रीमद्वध्यङ्गन्वयवेदशास्त्राविद्याविद्यो-  
 तितदिङ्मंडलजटाशंकरसूनुना ज्योतिर्विदा श्रीधरेण विरचितायां सुबो-  
 धिनीटीकायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पंचमे ऋषिराहास्मिन्नध्याये ग्रहजं फलम् । तथा रेखावर्गणादिफलान्यपि  
 सविस्तरम् ॥ १ ॥ अथ श्रीमत्पाराशरमहर्षिर्मगवानस्मिन् पंचमेऽध्याये भाव-  
 गतग्रहविचारेण रेखास्थानादिविचारेण शुभाशुभफलान्युपदिशति तत्रादौ  
 रेखाविचारेण भावविचारः क्रियते मूलेति । यस्मिन्कस्मिंश्चिद्भावे मूलस्थाना-  
 धिके मूलस्थानानि द्वादशभावानां प्रथमाध्याये उक्तानि ननु “स्वायुस्त्रि-  
 रिण्फेष्टु पंच कामे सुखेर्णवा” इत्यादीनि तेभ्यः अधिके बहुले स्थाने रेखा-  
 यां सति सप्तमी स भावः शुभः शुभफलक इष्यते पूर्वैरित्यध्याहारः अथ च  
 न्यूने उक्तमूलस्थानतोऽल्पे स्थाने सति स भावः अशुभः तथा समे उक्तप-  
 रिमिते स्थाने सति स भावः सम इति शेषः एवं भावानां शुभाशुभसमत्वं

भाषा ।

धर्मका विशेष प्रतिपादन करे ॥ ४६ ॥ यह संहितोत्तरभागमें राशिका और ग्रहोंका  
 स्वभाव मैंने कहा सो जहां जैसा चाहिये वैसा कहना ॥ ४७ ॥ ॥ इति श्रीमद्बृह-  
 त्पाराशरहोराशास्त्रे श्रीमद्वध्यङ्गन्वयवेदशास्त्राद्यनवविद्यावि-  
 शंकरसूनुज्योतिर्विद्युधरेण विरचितायां भाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अब इस अध्यायमें अष्टकवर्गका फल कहते हैं, जिस ग्रहकी जो भावमें रेखा  
 कही है उसमें रेखा जादा होवे तो शुभ फल जानना, कम होवे तो अशुभ फल



भः समे मातृपितृबंधून्वादिष्यते ॥ १ ॥ स्ववेश्मधर्मकर्मा-  
यलग्नैर्द्युम्नं पतिं वदेत् ॥ मृतिव्ययारिभिस्तेषां व्ययं हानिं  
पृथग्वदेत् ॥ २ ॥ ये योगाः पूर्वभागे तु द्विग्रहाद्या नभा-  
दयः ॥ राजयोगादयः सर्वे यथान्यायं प्रयोजयेत् ॥ ३ ॥  
भरणीयकुटुंबस्य द्वितीयेन शुभाशुभोऽन्येषां चैव भावानां

टीका ।

ज्ञात्वा तदनुरूपं मातृपितृबंधून् मातृपितृबंध्वादिविषयकमित्यर्थः तत्तद्भाव-  
विहितफलं वदिष्यते वद्धातोरात्मनेपदे लुङ् रूपमार्थम् “प्रयोगश्चाद्रेण वा उ-  
भयपदी” इति ॥ १ ॥ अथ भावफलानां बलहानिपालननाशानाह स्वेति ।  
स्ववेश्मधर्मकर्मायलग्नैः षड्भावैः स्थानानुरूपं द्युम्नं बलं “द्युम्नं वित्ते बले-  
पि च” इति मेदिनी । तत्तद्भावफलस्य बलातिशयमित्यर्थः । तथा पतिं रक्षकं  
पालनमित्यर्थः । एवं मृतिव्ययारिभिः त्रिभावैः स्थानानुरूपं तत्तद्भावफलानां  
व्ययं नाशं हानिं न्हासं च वदेत् । अर्थादवशिष्टस्त्रिपंचसप्तमैः साम्यं स्थान-  
तुल्यं भावफलं बोध्यमिति ॥ २ ॥ अथ पूर्वभागोक्तयोगानां व्यवस्थामाह  
यइति । पूर्वभागे तु पूर्वार्धे तु द्विग्रहाद्याः तथा नमादय इत्यार्षप्रयोगः ना-  
भसादयः तथा राजयोगादयः ये अनेकप्रकारकाः योगाः मया कथिता इ-  
ति शेषः सर्वास्तान् यथान्यायं बलेष्टकष्टरश्मिभावस्थानकरणादिविचारन्याय-  
मनतिक्रम्य यथा स्यात्तथा प्रयोजयेत्कथयेदित्यर्थः ॥ ३ ॥ अथ भावविचार-  
माह भरणीयइति । तद्यथा द्वितीयेन द्वितीयभावेन कुटुंबस्य कुटुंबवर्तिना-  
मित्यर्थः भरणीये भर्तुं योग्यं पोषणीयं तस्मिन्विषये शुभाऽशुभे पूर्वोक्तरीत्या  
स्थानकरणविचारेण इष्टानिष्टे वदेदिति शेषः । एवमेव अन्येषां मूर्तिसहजा-

भाषा ।

जानना, समकू सम फल जानना ॥ १ ॥ दूसरा, चौथा, नववां, दशवा, ग्यारहवा,  
लभ, यह छः भाव अपने स्वभावसे उत्तम फल देनेवाले हैं । और आठवां, बारहवां,  
यह भाव खर्च हानि करनेवाले हैं ॥ २ ॥ पूर्वभागमें जो नामसादि योग राजयोग  
कहे हैं, उन्नोंका इष्ट कष्ट रश्मि अष्टवर्ग बलावल देखके फल कहना ॥ ३ ॥ दूसरे  
भावसे रेखाशून्यका न्यूनाधिक्यका बल देखके कुटुंबपोषणका शुभाशुभ देखना ।

स्वनामसदृशं फलम् ॥४॥ सूर्येण वेश्मस्थानेन पितुर्मृतिप-  
दं वदेत् ॥ चंद्रेण पंचमेनैव मातुर्मृतिपदं वदेत् ॥५॥ सूर्ये चंद्रे  
सपापे च तयोश्च मरणं भवेत् ॥ तयोरंतरलिप्ताश्च शतद्वय-

टीका ।

दिभावानां सर्वेषामपि स्थानादिविचारेण शुभाशुभं स्वनामसदृशं भावना-  
मानुरूपं फलं वदेत् । एतदुक्तं भवति । मूर्तो रेखादिविचारेण देहसौंदर्योच्च-  
पुष्टत्वादिविषये इष्टानिष्टं फलं वदेत् एवमेव सहजादिभावेषु बंध्वादिविषये  
इष्टानिष्टं रेखादिविचारेण वदेदिति ॥ ४ ॥ अथ पितृमात्ररिष्टविचारमाह  
सूर्येणेति । सूर्येण तथा वेश्मस्थानेन चतुर्थभावेन च पितुः मृतिपदं मृत्यु-  
समयं वदेत्कथयेत् तथैव चंद्रेण तथा पंचमेन पंचमभावेन च मातुः मृति-  
पदं मृत्युरथानं वदेदिति ॥ ५ ॥ ननु कया रीत्या सूर्यवेश्मचंद्रपंचमैः पि-  
तृमातृमरणविचार इति चेत्तत्राह सूर्य इति त्रिभिः । सूर्ये चंद्रे च चकारात्  
वेश्मस्थाने पंचमस्थाने च सपापे पापसहिते सति क्रमात् तयोः पितृमातृश्च  
मरणं मृत्युर्भवेत् । ननु कस्मिन्काले इति चेदब्दादीन् कथयति । तयोः सूर्य-  
पापयोः चंद्रपापयोर्वा अंतरलिप्ताः अंतरस्य राश्यादिरूपस्य लिप्ताः कलाः  
कृत्वा ताः शतद्वयविभाजिताः द्विशतैर्भक्ताः अब्दादयः वर्षादिसमयो ज्ञेयः  
अंरिपापे समबले एव अथ न्यूनातिरिक्तसहचारिपापग्रहतारतम्येन विशेष-  
संस्कारं कथयन्नादौ सहचारिपापबलाधिक्यसंस्कारमाह । तस्मात् सूर्यात्  
चंद्राद्वा पापे बलोत्तरे सहचारिपापबलाधिक्ये सति ये अब्दादयः संभाप्ताः

भाषा ।

दूसरे भाषांका अपने नामसरीखा फल जानना ॥४॥ सूर्यसे और चौथे घरमें पिताका  
मरणयोग कहना ॥ ५ ॥ कौनसी रीतिसे मरणयोग कहना, सो कहते हैं, सूर्य चंद्र  
चतुर्थ पंचम भाव यह पापग्रहोंसे युक्त होवे तो दोनोंका मरण कहना, परंतु कब होवे-  
गा सो कहते हैं, सूर्यादिक और पापग्रह इनका यथाक्रमसे अंतर करके उनकी कला  
करके दोसांसे भाग लेना, वर्षादिक फल लाना, सो मरणकाल जानना ये समबल होवे  
तब जानना, न्यूनाधिक्य बल होवे तो उसका निर्णय कहते हैं, सूर्यसे चंद्रसे पापग्रह  
बलवान् होवे तो उस फलकू पापग्रहदृष्टीमें गुणन करना, पीछे मातृमे भाग लेक

विभाजिताः॥६॥अब्दादयोऽशुभस्यापि दृष्ट्या संगुणयेत्त-  
तः॥ षष्ठ्या विभज्याब्दाद्याश्च तस्मात्पापे बलोत्तरो॥७॥तदा  
मृतिर्भवेन्न्यूने तद्वलेनैव वर्धयेत् ॥ तदा मृत्युस्तयोर्मृत्यु-  
स्थाने पापग्रहे सति ॥८॥ तस्याशुभस्य विन्यस्य चाष्टवर्गं

### टीका ।

ते शुभस्य सहचारिणः पापस्य दृष्ट्या गुणयेत् ततः षष्ठ्या विभज्य अब्दा-  
दयो ज्ञेयाः चपरं तदा मृतिर्ज्ञेया । अथ सहचारिपापबलाल्पत्वे विशेषसं-  
स्कारमाह । न्यूने सहचारिपापबलेऽल्पे सति तु ये समबलप्राप्ताब्दादयः तान्  
तद्वलेन सूर्यबलेन चंद्रबलेन वा वर्धयेत् गुणयेत् तदा मृतिः तयोः पितुर्वा  
मातुर्वा मृतिर्ज्ञेया एवं सपापसूर्यचंद्रसंभूतं तथैवानुवृत्तत्वात् सपापचतुर्थभा-  
वपंचमभावाभ्यामिति पितृमात्ररिष्टं वेदितव्यम् । एवं सपापग्रहभावेभ्यः पि-  
तृमात्ररिष्टमुक्त्वा सूर्यचंद्राभ्यां चतुर्थपंचम भावाभ्यां च अष्टमपापग्रह सू-  
चकपितृमात्ररिष्टकालविचारमाह । तयोः सूर्यचंद्रयोश्चतुर्थपंचमभावयोश्च  
संबंधेन अष्टमस्थाने पापग्रहे सति तु पितृमात्ररिष्टविचरमुत्तरश्लोकैर्विशदय-  
ति ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ स्थानकरणतारतम्येन नवमश्लोकमारभ्य पंचदशश्लो-  
कपर्यंतं तस्येत्यादिभिः तत्रादौ त्रिकोणशोधनमाह तस्येति सार्धद्वयेन । त-  
स्य पूर्वोक्तसूर्यचंद्रचतुर्थपंचमभावाष्टमस्थानवर्तिनः अशुभस्य पापस्य अ-  
ष्टवर्गं विन्यस्य क्रमात् वक्ष्यमाणप्रकारेण अब्दादयो बोध्याः । तत्प्रकारमे-  
वाह त्रिकोणैकाधिपत्यस्य त्रिकोणप्रथमपंचमनवमस्थानरूपं एकाधिपत्यं  
एकः अधिपतिः ययोस्ते एकाधिपतिनी तयोर्भावः एकाधिपत्यं मेपवृश्चिक-  
वृषतुलादिरूपं तच्च तच्च समाहृत्य त्रिकोणैकाधिपत्यं तस्य कृपात् नवमपंच-

### भाषा ।

वर्षादिक फल लाना. और जो कमी पापग्रह अल्पबली होवे तो सूर्यबलसे चंद्रब-  
लसे पूर्वोक्त वर्षादिककू गुणन करके ६० से भाग लेके वर्षादि लायके फल क-  
हना. और अष्टम भावमें पापग्रह होवे तो उसके संबंधसे मातापिताका अरिष्ट  
कहना ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ अब आगे स्पष्ट दिखाते हैं. सूर्य चंद्र चतुर्भाव पंचम  
भाव अष्टम भाव यहां सहचार्ति जो पापग्रह हैं उनका अष्टवर्ग स्थापन करके उस-

ततः क्रमात् ॥ त्रिकोणैकाधिपस्यास्य कुर्याच्छोधनकं बुधः

॥ ९ ॥ त्रिषु द्वयोर्वा न्यूनमितरच्च समं भवेत् ॥ एक-

टीका ।

मात् बुधः विद्वान् शोधनकं कुर्यात् । एतत्कूर्प शोधनं तु ॥ ९ ॥ त्रिकोणस्यैव संभ-  
वति नत्वेकाधिपत्यस्येति बोध्यम् । शोधनप्रकारमाह त्रिषु द्वयोर्वा प्रथम-  
पंचमनवमेषु त्रिषु चतुर्थपंचमयोः पंचमनवमयोः नवमप्रथमयोर्वा द्वयोः  
मध्ये यत्स्थानं करणं वा रेखाविंदुर्वेत्यर्थः न्यून अल्पं स्यात् तदितरस्थानयोः  
समं तुल्यं भवेत् । एतदुक्तं भवति त्रयाणां मध्ये एकस्मिन्स्थाने स्थानद्वया-  
पेक्षया या न्यूनसंख्याका रेखा विंदुर्वा सा स्वस्मिञ्छोधिता सती नष्टा स्यात्  
एवमेव अन्यस्थानयोः प्राप्तरेखासु शोधिता चेत् स्वसंख्याया न्यूनीकुर्यात्  
एवं समत्वं बोध्यम् नतु स्वयमेका चेत्सर्वत्र एकत्र स्थितिरिति । अथ च  
एकस्मिन्त्रयाणां स्थानानां मध्ये एकस्मिन् भवने स्थले शून्यं चेत् रेखाभा-  
वश्चेत् तत्रिकोणं रेखाशोधनविषये न शोधयेत् न शोध्येत्किं तु यथास्थितमे-  
व स्थाप्यम् तस्य शोधनाभाव इति यावत् एवमेव करणविषये बोध्यम् अथ  
च सर्वगृहेषु त्रिष्वपि स्थानेष्वित्यर्थः समत्वं रेखासाम्यं चेद्बुधः विद्वान् सर्व  
स्थानत्रयरूपमपि संशोधयेत् वर्जयेत् तुल्यशोधनेन शेषाभावात् सर्वं शून्य-  
रूपमेव स्थापनीयमित्यर्थः । एवं त्रिकोणशोधनं बोध्यम् । अथोदाहरणम् ।  
सूर्याष्टकवर्गविचारे मेपे रेपे २, सिंहे रेपाः ३, धनुषि रेपाः ४, अत्र न्यूनं मे-  
पस्थं रेपाद्वयम् तन्मेपसिंहधनुःस्थरेपासु संशोध्य अवशिष्टं जातं मेपाधः ०,  
सिंहाधः १, धनुरधः २, एवं सर्वत्र बोध्यम् । एकन्यूनत्वोदाहरणम् । अथ  
त्रिकोणस्थैकभवने रेपाभावोदाहरणम् । मेपे रेखा १, सिंहे रेपा ५, धनुषि  
रेखाभावः अत्र शोधनाभावात् यथास्थितमेव स्थाप्यं अथ त्रिकोणस्थानत्र-  
येपि समत्वोदाहरणं यथा मेपे रेखाः ४, सिंहे रेखाः ४, धनुषि रेखाः ४, अथ  
सर्वसमत्वात् सर्वत्र रेखाभाव एव । एवं सर्वभावत्रिकोणेषु त्रिप्रकारेण शोधनं

भाषा ।

का त्रिकोण शोधन करना और एकाधिपत्यका शोधन करना ॥ ९ ॥ त्रिकोणशो-  
धनमें तीन ठिकाने दोठिकानेसे जो कम होवे उससे शोध और जो त्रिकोणमें

स्मिन् भवने शून्यं तत्रिकोणं न शोधयेत् ॥ १० ॥ समत्वे  
सर्वगोहेषु सर्वं संशोधयेद्बुधः ॥ क्षीणेन सहचान्यस्मि-  
टीका ।

बोध्यम् ॥१०॥ अथैकाधिपत्यशोधनप्रकारमाह क्षीणेनेत्यादि सपादपंचदश-  
श्लोकपर्यंतम् । अत्रादौ त्रिकोणशोधनेन पूर्वोक्तरीत्या सर्वभावेषु रेखाः संशोध्य  
अवशिष्टासु अयमेकाधिपत्यविचारः कर्तव्यः स यथा एकाधिपत्यशोधनं  
नाम राशिद्वयस्य मेषवृश्चिकरूपस्य वृषतुलारूपस्य मिथुनकन्यारूपस्य धनु-  
र्मीनस्य मकरकुंभरूपस्य अन्योन्यरेषाभिः सग्रहत्वाग्रहत्वतया संस्कारः, क-  
र्कसिंहयोस्तु चंद्रसूर्ययोः एकक्षेत्रत्वाच्चैकाधिपत्यसंस्कारप्राप्तिः किंतु मौमा-  
दिक्षेत्राणामेवेति तत्प्रकाराणां पदशः टीका तु विस्तरभयान्नलिखिता किंतु  
कल्पितोदाहरणैरेव स्पष्टीक्रियते । तत्रादौ सग्रहरेषासाम्यैकाधिपत्यराशिद्व-  
योदाहरणम् यथा मेषत्रिकोणे प्राप्ते रेषाः ॥, वृश्चिके च रेषाः ॥, एतद्वाशिद्वयं  
प्राप्तसमरेषं सग्रहं च अतः “उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन” इति  
वचनेन शोधनाभावाद्यथास्थितिरेव मेषे रेषाः ॥, वृश्चिके रेषाः ॥, इत्येकः  
प्रकारः । अथ सग्रहराशिद्वये रेषावैषम्योदाहरणम् यथा मेषे त्रिरेषाः ॥, वृ-  
श्चिके त्रिकोणशोधनप्राप्तरेषे ॥ अथोभयत्र सग्रहत्वेपि रेखावैषम्यात् न्यूनरे-  
खा अधिकारेखासु संशोध्य शिष्टं मेषे वृश्चिके “ग्रहयोगेन हानिः स्यात्”  
इति न्यूनेनाधिकस्य हानिः सग्रहत्वान्न सर्वहानिरिति द्वितीयः प्रकारः ।  
अथ उभयत्र सग्रहत्वेपि एकत्र त्रिकोणशोधनप्राप्तरेषासहितत्वं एकत्र रेषा-

भाषां ।

एक जगमें शून्य होवे वो त्रिकोणका शोधनही करना ॥ १० ॥ तीन ठिकाने  
समान होवे तो सर्व ठिकाणे शून्य रखना इसका विस्तार टीकामें है ॥ १० ॥ अब  
एकाधिपत्यशोध कहते हैं एक ग्रहकी दो राशि हैं वहां एक राशिमें रेखा कम  
हैं दूसरी राशिमें रेखा जास्ती हैं और दोनों राशिमें ग्रह नहीं हैं तो अधिक  
रेखासंख्या राशिकी रेखामें कमरेखा संख्याकू न्यून करके शेष रखना कम जो  
हैं वहां शून्य रखना उदाहरण मेषराशी नीचे रेखा तीन हैं, वृश्चिकके नीचे रेखा  
दो हैं और दोनों ग्रहरहित हैं वो तीनमेंसे दो हीन किये तो मेषके नीचे १

## टीका ।

हितत्वं चेदुभयत्र शून्योदाहरणम् यथा मेपे त्रिरेषाः ॥३॥, वृश्चिके त्रिरेषाः ॥३॥, मेपे कश्चिद् ग्रहोऽस्ति वृश्चिके ग्रहाभावः अतः “ एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तिता ” इतिवचनात् मेषस्य सग्रहत्वेऽपि वृश्चिके रेषाभावाद्-  
 भयत्रापि हानिः इति तृतीयः प्रकारः । अथ उभयोस्संग्रहत्वेऽपि उभयत्र रेषा-  
 भावेशून्यमेवेति नात्रोदाहरणम् इति चतुर्थः प्रकारः । अथ ग्रहरहितफलसा-  
 म्योदाहरणम् यथा मेपे रेषाः ॥३॥, वृश्चिके ॥३॥, उभयत्रापि ग्रहाभावः अत्र उ-  
 भयोर्ग्रहहीनाभ्यां “ समत्वं सकलं त्यजत् ” इति उभयत्र समफलशोधनेन  
 फलाभाव एव इति पंचमः प्रकारः । अथ ग्रहरहितोभयविषमरेषोदाहरणम्  
 यथा मेपे रेषाः ॥३॥, वृश्चिके रेषे ॥, अत्रोभयत्रापि ग्रहरहितत्वं फलवैषम्ये च  
 अतः “ क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जितम् ” इति हीनमधिकात्सं-  
 शोध्य शेषमधिकस्थले स्थापितं मेपे रेषा । वृश्चिके० इति षष्ठः प्रकारः अथ  
 अग्रहं सरेषाकं सग्रहं रेषारहितं यथा मेपे रेषाः ॥३॥, अत्र ग्रहाभावः वृश्चिके  
 रेषाभावः अत्रापि “ एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तिता ” इति उभ-  
 यत्रापि सर्वहानिः मेपे० वृश्चिके इति सप्तमः प्रकारः । अथ उभयत्र ग्रहरा-  
 हित्यं रेषाऽभावोऽपि चेदार्थिकमेव फलाभावत्वं नात्रोदाहरणप्रयोजनम्  
 इत्यष्टमः प्रकारः । अथ रेषाधिकसंग्रहं न्यूनरेषाकाग्रहे च उदाहरणम् यथा  
 मेखे रेषाः ॥३॥, एतत्संग्रहे वृश्चिके रेषे ॥, एतद्ग्रहं अत्र “ फलाधिके ग्र-  
 हैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ” इति फलाधिकं यथा पूर्वं स्थितं बलहीनं  
 ग्रहराहित्याद्रेषाशून्यमेव मेपे रेषाः ॥३॥, वृश्चिके रेषाः ॥३॥ इति नवमः प्रका-  
 रः । अथ सग्रहाग्रहफलसाम्योदाहरणम् यथा मेपे रेषाः ॥३॥, सग्रहं वृश्चिके  
 रेषाः ॥३॥, अग्रहं अत्र “ सग्रहाग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् ” इति तुल्यफ-  
 लत्वेऽपि सग्रहाग्रहतयोभयत्रापि फलाभावः मेपे० वृश्चिके० इति दशमः प्रका-  
 रः । अथ सग्रहन्यूनरेषाकाग्रहाधिकरेषाकोदाहरणम् यथा मेपे रेषाः ॥३॥, ए-  
 तत्संग्रहं वृश्चिके रेषाः ॥३॥, एतद्ग्रहं अत्र “ ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फ-  
 लाधिके । अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जितम् ” इति ग्रहवर्जिताधिकरे-  
 षासु सग्रहन्यूनरेषाः संशोध्य शिष्टामग्रहस्थलस्थरेषां सग्रहस्थलमाचर्ष्य  
 मेपे रेषा ।, वृश्चिके रेषाभावः इत्येकादशः प्रकारः । अथ सग्रहाग्रहद्वयरेषा-

उल्लोधयेद्ग्रहवर्जितम् ॥ ११ ॥ ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहा-  
भावे फलाधिके ॥ अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते  
॥ १२ ॥ फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ॥ उ-  
भयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन ॥ १३ ॥ उभयोर्ग्रह-  
हीनाभ्यां समत्वं सकलं त्यजेत् ॥ सग्रहाग्रहतुल्यत्वात्सर्वं  
संशोध्यमग्रहात् ॥ १४ ॥ एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र  
कीर्तिता ॥ कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्  
॥ १५ ॥ ग्रहयोगेन हानिः स्यात् वर्गणाघ्नं पृथक् ततः ॥

### टीका ।

भावे तु आर्थिकशून्यत्वान्नात्रोदाहरणम् इति द्वादशतमः प्रकारः । अथ उ-  
भयत्र सग्रहत्वे एकत्र रेपासहितत्वं एकत्र रेपाभावत्वं अत्रापि “एकत्र ना-  
स्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तिता” इति त्रयोदशतमः प्रकारः । अथ च कर्क-  
सिंहयोः एकेशस्थानैकत्वात् यथास्थितिरिति शोधनाभावः प्रागेव लिखितः  
इति एकाधिपत्यशोधनप्रकारः वृषादिसर्वराशिषु ज्ञेयः एवमेव करणशोधन-  
प्रकारः अथ प्रकृतमेवं प्रकारेण सूर्यचंद्रचतुर्थभावपंचमभावेभ्यः अष्टमे पापे  
त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनेन रेपाः करणं च संपाद्याग्रिमसंस्कारः कर्तव्य इति  
॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथ त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनप्राप्तेरेपासु क-  
रणेषु च विशेषसंस्कारेण अब्दाद्यानयनं बलावलतारतम्येन स्थानकरणादि-  
कं चाह वर्गणाघ्नमित्यादि एकोनविंशतिश्लोकपर्यंतम् । वर्गणाघ्नं वर्गणया ह-  
न्यते तथोक्तं वर्गणा तु प्रथमाध्यायावसाने “मुनिदिग्बसुवेदादिगिष्वब्ध्य-

### भाषा ।

रेखा लिखना. वृक्षिकके नीचे शून्य लिखना. यह एकाधिपत्य शोधन मया. इस  
तरहके चौदा उदाहरण टीकामें दिखाये हैं. इसलिये यहां विस्तारके लिये लिखते  
नहीं ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अब एकाधिपत्यके ऊपरसे मातापिताका  
स्पष्ट मरणकाल बताते हैं. एकाधिपत्यके जो अंक मेपादिकमें आये हैं उनोंकू  
मेपादि घुवाकोंसे गुणन करके जहां ग्रह बैठे होवे तो वे एकाधिपत्यके अंकोंकू

संयोज्य सप्तभिर्हत्वा सप्तविंशतिभाजिताः ॥ १६॥ अब्दा-  
दयस्तदा देहनाशः करणदे सति ॥ तस्मिन्पापे ग्रहे त-  
स्माद्वलिन्येवं विधिः स्मृतः ॥ १७ ॥ बलहीने तु तं ह-  
न्यात्सप्तभिः पंचभिर्भजेत् ॥ आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य  
प्रदे चेदशुभे सति ॥ १८ ॥ मुनिभक्तं वसुध्नं स्यान्नैवं चे-

टीका ।

एनवेषवः । स्द्दार्क वर्गणा मेपाद्विषयेष्वष्टवायवः । पंक्तिस्वरेषवः सूर्याद्वर्गणा  
प्रोच्यते बुधैः" इत्युक्तध्रुवांकैः पृथक् पृथक्करणं स्थानं वा गुणयेत् ततः राशिफलं  
ग्रहफलं च पृथक् पिंडीकृत्य उभे अपि संयोज्य सकलं पिंडीभूतं सप्तभिर्हत्वा  
सप्तविंशतिभाजिताः लब्धं फलं अब्दादयः भवेयुः तदा तस्मिन्नब्दादिकाले  
देहनाशः पित्रोर्मरणं ज्ञेयम् अयं विधिः तस्मिन्करणे पापग्रहे बालानि सति  
स्मृतः अत्रोदाहरणम् चतुर्थभावादष्टमस्थो रविः पापः चक्रे द्रष्टव्यः अस्य  
बलं ९।४१।१४ चतुर्थभावादष्टमभावबलं ८।१४।४१ अस्मात्पापबलमधिकं  
अतः चतुर्थभावादष्टमस्थबलोत्तरकरणादपापग्रहसंभूतपित्ररिष्टाब्दाद्युदाह-  
रणं यथा त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनावशिष्टराशिकरणांकाः कुंभे १, कर्के १,  
सिंहे १, मकरे ३, अर्कक्रमाद्राशिर्वर्गणांकाः ११।४१।०।५ एभिः क्रमात्पृथ-  
ग्गुणितांकाः ११।४।१०।१५ एतेषां पिंडः ४० अथ पापग्रहाणां त्रिकोणै-  
काधिपत्यशोधनावशिष्टग्रहकरणांकाः रवेः १, शनेः ३, सपापबुधस्य ३,  
एषां ग्रहाणां वर्गणांकाः ५।५।५ एमिर्गुणिताः करणांकाः ५।१५।१५ एतेषां

भाषा ।

वो वो ग्रह ध्रुवांसे गुणन करना पीछे दोनोंके योग करके दोनोंका एक योग  
करना. सात अंकसे गुणन करके सत्तावीससे भाग लेना तो लब्धांक वर्षादिक  
मातापिताके आयुष्यका मान जानना. ५ बिंदूसे मृत्युबल कक्षा परंतु वो पापग्रह  
बलवान् होवे तो पूर्वकी बात जो कही है ओही रीति जानना और बलहीन होवे तो  
योगकू सातसे गुणन करके पांचसे भाग लेना. वर्षादिक लब्ध जो वो माता  
पिताका आयुष्य जानना. और रेखाप्रद पापग्रह बलवान् होवे तो पूर्व पिंडकू अष्ट-  
गुणित करके सातसे भाग लेना. लब्ध वर्षादिक दोनोंका आयुष्यप्रमाण जानना.



नैतयोर्मृतिः ॥ वक्ष्यमाणेन विधिना वदेदाह पराशरः  
॥ १९ ॥ सूर्यादायुःकरा भूपा मनवोर्का नवार्णवाः ॥ वेदो-  
क्षीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैव तत् ॥ २० ॥ स्वोच्चे

टीका ।

पिंडः ३५ पिंडद्वयैक्यं ७५ एतत्सप्तगुणितं ५२५ सप्तविंशतिभाजनलब्धाद-  
यः वर्षाणि १५ मासाः ५ दिनानि १० घट्यः ० पलानि ० अयं पित्ररिष्टका-  
लो वेदितव्य इति अर्थात् रेषाप्रदे पापिनि बलिनि सति उक्तविधिना प्राप्ता-  
ब्दादिकाले आयुर्वेदितव्यमिति भावः अथ च करणदे बलहीने तु पूर्वोक्तं  
सकलं पिंडं सप्तभिर्हत्वा पंचभिर्भजेत् न सप्तविंशतिभिरिति पितृमरणकाली-  
नाब्दादयः स्पष्टाः स्युः अथ च स्थानस्य प्रदे रेषाप्रदे अशुभे बलिनीति  
पूर्वान्वयेनाध्याहारः सति प्रागुक्तसर्वपिंडं वसुध्नं अष्टगुणितं मुनिभक्तं सप्त-  
भाजितं कृत्वा प्राप्ताब्दादयः तयोः पित्रोः आयुः सिद्धं स्यात् एवं स्थानप्र-  
दात् आयुर्ब्दाधिके चेदेतयोर्न मृतिः एवं सूर्याच्चतुर्थभावाद्वा अष्टमस्थपाप-  
स्यायुः कथितं एतत् वक्ष्यमाणचतुर्थभावसूर्यरश्म्यायुःसंपादनेन न्यूनातिरिक्तं  
परमावयुर्ध्वमिति मूलकार एवाह वक्ष्यमाणेन विधिना वक्ष्यमाणप्रकारेण  
वदेदिति पराशरः आहति ॥ १६॥१७॥१८॥१९ एवं स्थानकरणतारतम्येन  
सूर्यचतुर्थभावाष्टमस्थपापायुस्त्वा केवलं सूर्यचतुर्थभावाभ्यामेवायुः कथय-  
ति तत्रादौ ग्रहलग्नायुर्ध्रुवांकानाह सूर्यादिति । सूर्याद्रवेः सकाशात् क्रमशो  
ग्रहाणां आयुरंकाः क्रमशो ज्ञातव्याः कराः २, भूपाः १६, मनवः १४, अर्काः  
१२, नवः ९, अर्णवाः ४, वेदः ४, इति । अथ लग्नस्य तु अक्षिणी २ इति आयुः  
तथैव स्थानकरणवदेव वक्ष्यामि ॥ २० ॥ एवमुक्तायुर्ध्रुवांकाः स्वोच्चस्थ एव ग्रहे

भापा ।

अथ रवेस्त्रिकोणैकाधिपत्यशोधितकरणचक्रम्.

| र. गु. | गु म. | ल.  |     |     |     |     |     |     | च. श. व. |    |
|--------|-------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|----------|----|
| कं.    | मी.   | मे. | वृ. | मि. | रु. | सि. | रु. | तृ. | घ.       | म. |
| ३      | ४     | ६   | ५   | ४   | ५   | ५   | १   | २   | ४        | ५  |
| १      | ०     | २   | ४   | २   | १   | १   | ०   | ०   | ०        | ४  |
| १      | ०     | ०   | ०   | ०   | १   | १   | ०   | ०   | ०        | ३  |

राशयः ।

मूलप्राप्तकरणवैदवः ।

त्रिकोणशोधनेनावशिष्टाः ।

एकाधिपत्यशोधनावशिष्टाः ।

नीचे तु पातः स्याद्धरणादिविधिस्ततः ॥ आयुस्तयोः  
स्यात्तौ तस्मिन् भवने तु तथा स्थितौ ॥ २१ ॥ न कश्चि-  
त्स्थानदः स्याच्चेत्तत्काले च मृतिर्भवेत् ॥ शुभयोगे शुभाः

टीका ।

ज्ञेया इत्याह स्वोच्चे इत्यादिपादोनद्वाविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । स्वोच्चे स्वकीयोच्चस्थे  
ग्रहे सति उक्तध्रुवांकपरिमितमायुर्ज्ञातव्यं नीचे तु ग्रहे नीचस्थानगे सति तु  
हरणादिविधिः आयुःस्वीकरणादिप्रकारः पातः अनुपातो ज्ञेयः तदित्यं उच्चे चै-  
त्पूर्वोक्तमिति यदायुस्तर्हि उच्चारोहे उच्चच्युते च कियत् ततोपि क्रमशः उच्चाग्नि-  
मराशिषु कियत् एवं नीचे कियदिति अनुपातः एवं तयोः रविचतुर्थभावयोः  
आयुः स्यात् तौ तथा स्वोच्चनीचादौ भवने स्थाने स्थितौ वर्तमानौ संतो तयो-  
रनुपातादायुर्ज्ञेयमित्यर्थः । एवं सत्यपि तत्र न कश्चिदपि ग्रहः स्थानदः स्थान-  
दाता स्याच्चेत्तत्काल एव मृतिः भवेत् स्थानदायुर्विशेषालाभात् सा मृतिस्तु  
शुभयोगे शुभासुखेनेत्यर्थः अर्थात् अशुभयोगेन पातराजदंडाग्निजलादि-  
दुःखादित्यर्थः ॥ २१ ॥ अथ सूर्यानीतसूर्यचतुर्थभावसामान्यायुषः रश्मि-  
विचारेण परमावधितया स्पष्टत्वं मातृपित्ररिष्टं चाह तयोरित्यादिपादसहितार्थ-  
श्लोकेन । तयोः सूर्यचतुर्थभावयोः रश्मिसंभवः रश्म्युत्पत्तिः स्याच्चेत्तान्  
रश्मीन् अष्टभिर्गुणयेत् ततः षड्भिः विभज्य परं आयुः परमायुर्दाय इति  
यावत् भवेत् । अथास्योदाहरणम् । चतुर्थ भावः कर्कः रविः कुंभे वर्तमानः  
चतुर्थभावो शुक्तः ३।१।१५ भोग्यांशाः २८।४१ तदायुरभावः भोग्यत्वात्  
शुक्तांशाः १।१९ त्रिंशद्भागात्मकलग्नस्याक्षिणीत्युक्तत्वाद्द्विपद्वयमायुश्चेत्लग्नं

भापा ।

शून्यमतके आयुष्यसे रेखाका आयुष्य अधिक आवे तो मरण नहीं है ऐसा पराशर  
कहते हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ पाहिले सूर्य चतुर्थभाव अष्टम भावसे आयुर्दाय  
कहके आगे सूर्यचतुर्थभावमे आयुर्दाय कहते हैं. उसमें सूर्यादि लग्नांतके आयुर्ध्रुवां-  
क कहते हैं. सूर्यादिकके ध्रुवांक २।१६।१४।१२।१०।८।६।४।२ यह जानना ॥ २० ॥  
उधका ग्रह होवे तो ध्रुवांकका आयुष्य स्पष्ट जानना, और नीचका ग्रह होवे तो  
अनुपातसे आयुष्य लाना ॥ २१ ॥ और वहां कोई रेखा देनेवाला ग्रह न होवे तो

प्रोक्तास्तयोः स्याद्रश्मिसंभवः ॥ २२ ॥ अष्टभिर्गुणयेत्षड्-  
भिर्विभज्यायुः परं भवेत् ॥ वेश्मनि स्थानदा न स्युर्जन्म-  
टीका ।

क्तस्य अंशः १ कलाः १९ एवरूपस्य कियदादिरित्यनुपातेन प्राप्तं चतुर्थभा-  
वलग्नभुक्तायुः ०।१।२ अथ उच्च इत्युक्तत्वात् उच्चत्वाभावत्वात् तत्पतिश्रंद्रस्य  
उच्चत्वोपलक्षितायुर्गृह्यते तदित्यं चतुर्थभावस्य कर्काख्यस्य पतिश्रंद्रः स च  
८।२५।२९ एवं वर्तमानः अस्य उच्चे ग्रहायुःप्रकरणोक्तध्रुवांकाः १६ एवं सं-  
ख्याकाः परमोच्चे वृषत्रिमितेशे चेत् अनुपातेन धनराशिपंचविंशतितमांशे  
वर्तमानस्य चंद्रस्य कियद्वर्षाद्यायुरितित्रैराशिकेन प्राप्तं चंद्रायुर्वर्षादि ४।५।१४  
अथ रविः १०।४।१४ एवं वर्तमानः अस्य ग्रहायुःप्रकरणोक्तपरमोच्चायुर्ध्रुवां-  
काः करौ इत्युक्तत्वात् मेषराशिदशमांशे वर्तमानस्य रवेः वर्षद्वयं चेत् अनु-  
पातेन कुंभराशिपंचमांशे वर्तमानस्य कियदिति प्राप्तं रव्यायुर्वर्षादि १।३।१५  
एवं चतुर्थभावायुः तत्पतिश्रंद्रायुः रव्यायुश्च संयोज्य जातं ५।१०।१ एतत्सा  
मान्यायुः । अथ रश्म्यायुरित्यं स्वेरश्मयः ५।४०।२३ भावस्य रश्म्यभावात्  
चतुर्थभावपतिश्रंद्रस्य रश्मयः २।३।१।३ अनयोर्योगः ८।११।३६ अष्टसंगु-  
णितः जातं ६।५।३२।४८ अयं षड्भिर्भक्तः लब्धफलं १४।७।२८ जातमेत-  
द्रश्म्यायुः एतत्सामान्यायुर्योगेन जातं वर्षादि २०।५।२९ एतत्परमायुर्वो-  
ध्यं एतद्वीकाकर्तुरनुभवसिद्धं पित्ररिष्टमिति ॥ २२ ॥ एवं सपापचतुर्थभाव-  
सूर्यायुः तत्तत्सृष्टपापानामस्थानायुः केवलं चतुर्थभावसूर्यायूरश्मिसमुद्भूत-  
परमायुश्च कथयित्वा अथ वेश्मस्थाने रेखाभावे कथमायुर्विचार इत्याह वे-  
श्मनि चतुर्थस्थाने स्थानदाः रेखाप्रदाः ग्रहा न स्युः तत्र केवलं रेखाभावश्चे-  
त् जन्मकाले स चतुर्थभावः स्फुटीकृतः पश्चात्कलीकृतः कलारूपतां प्रापि-  
तः खनखैः २०० तं विभज्य क्रमात् अब्दादयः वर्षमासादयः क्रमेण वर्ष-

भाषा ।

उसी वख्त मृत्युकाल जानना. शुभयोग होवे तो मरण उत्तम रीतिसे होवेगा. पा-  
पाधिक्य होवे तो दंडपातादिकसे होवेगा ॥ २२ ॥ अब रश्मी ऊपरसे आयुष्य क-  
हते हैं. सूर्य चतुर्थभावकी रश्मीका संभवकुं अष्टसे गुणन करके छःसे भाग लेना.

काले स्फुटीकृतः ॥ २३ ॥ कलीकृतश्च खनखैर्विभज्याब्दा-  
दयः क्रमात् ॥ एवं शुभाशुभं ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तम  
॥ २४ ॥ करणस्थानदातारः पापपुण्यफलप्रदाः ॥ पुन-  
श्चोच्चादिषु तथा त्रिगुणाद्यास्तु पूर्ववत् ॥ २५ ॥ शत्रुनी-  
टीका ।

मासदिनानीत्यर्थः स्युरित्यध्याहारः ॥ २३ ॥ एवमित्युपसंहरति । हे द्वि-  
जोत्तमे ! द्विजवर्य मैत्रेय । एवमुक्तपंचप्रकारकं मातापित्रोः जननीजनकयोः  
शुभाशुभं समाहारः शुभमायुः अशुभं मृत्युः समाहृत्य तद्व्यादिति ॥ २४ ॥  
अथ करणादिविचारेण भावविचारमाह करणइत्यादियावदध्यायसमाप्ति ।  
करणस्थानदातारः भावेषु करणानि विंदवः स्थानानि रेखाः ताः ददति ते  
करणस्थानदातारः यथासंख्यं पापपुण्यफलप्रदाः पापं अशुभं पुण्यं शु-  
भं ते च ते फले च प्रददतीति पापपुण्यफलप्रदाः करणदा अशुभफलप्रदाः  
स्थानदाः शुभफलदा इत्यर्थः पुनश्चेति प्रकारांतरं तथा तेन प्रकारेण उच्चा-  
दिषु उच्चत्रिकोणस्वमित्रादिराशिषु भावफलानि त्रिगुणादीनीति पूर्ववत्  
त्रिगुणाद्याः त्रिगुणादिफलदातारा भावेषु ग्रहाः बोध्याः शत्रुनीचाधिश-  
त्रूणां स्थानेषु वर्तमानानां ग्रहाणां चापि पूर्ववदेव ज्ञातव्यम् तादित्थं पूर्वं र-  
श्मिप्रकरणे “ उच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणद्विसंगुणम् ” ॥ स्वर्क्षे त्रिघ्नादिसं-  
भक्तास्त्वधिमित्रग्रहेऽपि च ॥ वेदघ्ना रामसंभक्ता मित्रमेष्टुगुणास्ततः ॥ पंचम-  
क्तास्तथा शत्रुग्रहे द्विघ्नाश्चतुर्हताः ॥ अधिशत्रोः करघ्नाश्च पंचमक्ता न नीचभो ॥ ”  
इत्युक्तप्रकारो बोध्य इति ॥ २५ ॥ अथ वक्ष्यमाणभावविचारक्रिया अंशा-

### भाषा ।

लब्ध परमायुष्य जाननी. टीकामें स्पष्ट है ॥ २३ ॥ चौथे घरमें जो रेखाप्रद ग्रह  
नहीं होवे तो चतुर्थ भावकूं स्पष्ट करके उसी कला करके २०० से भाग लेना. व-  
र्षादि आयुष्य आवे ऐसा मातापिताका शुभाशुभ योग कहना ॥ २४ ॥ शून्यके दे-  
नेवारे जो ग्रह हैं वे पापफल देनेवाले जानना, और रेखाके देनेवारे जो जो ग्रह हैं  
वे पुण्यफल देनेवारे हैं उससे उच्चनीचमूलत्रिकोणादिकके होवे तो त्रिगुणादिक फल  
पूर्वसरीखा जानना ॥ २५ ॥ जहां भावपरसे आयुष्यका विचार देखना होवे वहां

चाधिशत्रूणां स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ॥ राशिं हित्वा तु भावानां सर्वत्रैवं क्रिया भवेत् ॥ २६ ॥ द्वितीयभावलिप्ता-  
श्च राशिलिप्ता विभाजिताः ॥ स्ववर्गणाहतास्तत्स्थखेटा-

टीका ।

दिग्रहणेनैवेत्याह राशिमित्यर्थेन । राशिं राश्यंकं विहाय त्यक्त्वा क्रिया व-  
क्ष्यमाणा भवेदित्येवं सर्वत्र सर्वभावेषु वक्ष्यमाणेषु बोध्यमित्यध्याहारः ॥ २६ ॥  
अथ तन्वादिद्वादशभावेषु भावोक्तफलविचारे संस्कारविशेषेण विचाररीतिं  
कथयन् द्वितीयभावमुदाहरति द्वितीयेत्यादिसार्धैकोनविंशच्छ्लोकपर्यन्तम् ।  
द्वितीयभावलिप्ताः द्वितीयश्चासौ भावश्च तस्य लिप्ताः कलाः अत्र “राशिं  
हित्वा तु भावानां सर्वत्रैवं क्रिया भवेत्” इति द्वितीयभावस्य राश्यंकं विहाय  
शिष्टांशलिप्ताः कृत्वेत्यर्थः राशिलिप्ता विभाजिताः राश्याः याः लिप्ताः एक-  
राश्यंकस्य अंशान्विधाय ३० षष्ट्युणनसंपादिताः १८०० ताभिः विभा-  
जिताः भक्ताः ततः स्ववर्गणाहताः स्वस्य द्वितीयभावस्य वा उक्ता वर्गणा  
प्रथमाध्यायाग्रे “मुनिदिग्वसुवेदादिगिष्वंच्यष्टनवेष्टवः ॥ रुद्रार्का वर्गणा मे-  
षात्” इति द्वितीयभावस्य वर्गणा दिक्संख्याका १० तथा हताः गुणिताः  
तथा तत्स्थखेटानां तस्मिन् द्वितीये भावे तिष्ठन्ति ते च ते खेटाः ग्रहाश्च तेषां  
वर्गणा तत्रैवोक्ता “विषयेष्वष्टवायवः ॥ पंक्तिः स्वरेष्टवः सूर्याद्वर्गणा प्रोच्यतेबु-  
धैः” इति तथा हताः च हताः गुणिताः तस्मिन् भावे ग्रहसत्त्वे इति भावः  
ततः भावरश्मिभिः आहन्यात् भावस्य रश्म्यभावात्तदधिपस्य रश्मिभिर्गुणये-  
दित्यर्थः । ततः सप्तभिः ७ विभाजयेत् भागमाहरेदित्यर्थः तत्र लब्धांकसं-

भाषा ।

राशिकूँ छोडके अंशादिकका जैसा संस्कार कहा है वैसा करना ये क्रिया राशि  
छोडनेकी सब ठिकानें जानना ॥ २६ ॥ भावफलमें पहिले द्वितीय भावका उदाह-  
रण बताते हैं, द्वितीय भावके अंशादिककी लिप्ता करके पाँछे द्वितीय भावकी रा-  
शिकी लिप्ता करके उससे भाग लेना, लब्ध जो कलादिक फल उसकूँ द्वितीय भा-  
वके ध्रुवांकसे गुणन करना द्वितीय घरमें ग्रह होवे तो ग्रहध्रुवांकसे और गुणन क-  
रना न होवे तो नहीं करना, पाँछे द्वितीयभावस्वामीकी रश्मिसे गुणन करना, सा-

नां वर्गणाहताः ॥ २७ ॥ भावरश्मिभिराह्न्यात्सप्तभिश्च  
विभाजयेत् ॥ मूलरश्मिसमूहेन शिष्टं हन्यात्तथैव तान्  
॥ २८ ॥ इष्टानिष्टफलाभ्यां च हत्वांतरमथ द्वयोः ॥ सप्त-

टीका ।

ख्याकाः भरणीयकुटुंबानां पुमांसः बोध्याः अथ तथैव तेन प्रकारेण शिष्टं  
अवशिष्टांकाः तन्मूलरश्मिसमूहेन मूलाः प्रथमोत्पादिताः ये सर्वग्रहाणां र-  
श्मयः तेषां यः समूहः संहतिर्मेलनमित्यर्थः तेन हन्यात् गुणयेत् ततः तान्  
मूलरश्मिगुणितान् इष्टानिष्टफलाभ्यां इष्टं च अनिष्टं च ते एव फले ताम्यां  
हत्वा गुणयित्वा एकत्र कष्टेन हत्वेत्यर्थः । अथानंतरं द्वयोः उभयोः अंतरं  
विवरं कृत्वा सप्तविंशतिभिः गुणयित्वा सप्तभिर्विभाजयेत् । एवं रीत्या ये मा-  
प्तांकाः तत्समाः तत्तुल्याः भरणीयकुटुंबानां पोषणीयकुटुंबानां संबंधे षष्ठी स्त्रीः  
अबलाः विदुः पूर्वाचार्या इत्यध्याहारः इति एवमेव सर्वभावफलानयनरीति-  
बोध्या । अथास्योदाहरणम् । द्वितीयभावः १।४।२८।५० अस्य राश्यंकं  
विहाय ४।२८।५० अस्य लिप्ताः २६९ राशिलिप्ताः १८०० आमिर्मक्ताः  
जातं कलारूपं फलम् ०।९ द्वितीयभाववर्गणांकाः १० एभिर्हत्वा जातं ०।  
९० एतत् विकलास्थमधिकृत्वा षष्ट्युद्धृतं १।३० द्वितीयभावे ग्रहाभावाद्ग्र-  
हवर्गणागुणनसंस्काराभावः द्वितीयभावेशरश्मिः ६।५३।३८ अनेन गोमू-  
त्रिकया गुणिता जाताः कलाः १०।२० एताः सप्तभाजिताः सत्यः लब्धं ०।  
१।२८ जातेर्यं भरणीयकुटुंबपुरुषसंख्या । अथ शेषांकाः ४ एते मूलरश्मिस-  
मूहेन २४।२३।३२ एवं श्रूतेन हताः जाताः ९७।१४ कलाधिक्यात्षष्ट्यु-  
द्धृताः १।३७।१४ भावस्वामिनः इष्टफलं ०।४५।४८ अनेन गुणिताः ०।  
७४।१३ कलास्थानाधिक्यात् षष्ट्युद्धृताः १।१४।१३ जातमेतादिष्टगुणितं  
फलम् तथा ते एव मूलरश्मिसमूहांकाः १।३७।१४ भावस्वामिनः कष्टं ०।१४।११

भाषा ।

तसे भागलेना, लब्ध जो अंक होवे वो भरणीय कुटुंबकी संख्या जानना. शेषकूं  
मूलरश्मिसमूहसे गुणन करके भावस्वामीके इष्टफलसे गुणन करके उसी प्रकारसे  
भावस्वाभिकष्टबलांकोसे मूलरश्मिसमूहकू गुणन करके दोनोंका अंतर करके २७,

विंशतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विभाजयेत् ॥ २९ ॥ भरणीय-  
कुटुंबानां पुंस्त्रियस्तत्समा विदुः ॥ राशीन् हित्वा तु लग्ना  
दि भावभागादिकान् पृथक् ॥ ३० ॥ गुणयेद्रश्मिभिः स्वैः  
श्च भावभागादयोविदुः ॥ कलीकृत्य भलिप्ताभिर्विभज्याप्तं

### टीका ।

अनेन हता जाताः ०।२३।० अनयोरिष्टकष्टफलहतयोः प्राप्तफलयो-  
रंतरं ०।५१।१३ एतत्सप्तविंशतिभिर्गुणितं जातं कलादि फलम् ०।  
१३८२।५१ एतदधिकत्वात् षष्ठ्युद्धृतं २३।३।० सप्तभिर्भक्तं जातं ३।९ एते  
भरणीयकुटुंबस्त्रीसंख्या इति ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ एवं भावगतपुंस्त्रीसंख्या-  
नयनरीतिमुक्त्वा अग्रिमाध्याये तेषां कालपरिज्ञानं विवक्षुरादौ भावसाधन-  
प्रकारांतरेण संख्यानयनं चाह राशीन् हित्वेत्यादिश्लोकद्वयेन । लग्नादिभा-  
वभागान् राशीन् हित्वा राश्यंकं विहाय भावभागादय एव फलज्ञापका  
इति शेषः इति विदुः ते भागादयः भावानां स्वैः स्वैः निर्जेर्निजेः रश्मि-  
भिः तत्तद्भावपतिरश्मिभिरित्यर्थः गुणयेत् । ततः कलीकृत्य षष्ठ्यु-  
णनेन कलास्थाने संयोज्य पृथक् द्विधा स्थापयित्वा एकत्र भलिप्ताभिः  
१८०० विभज्य यत् आप्तं तत्फलं भावफलसंज्ञकं फलं बोध्यम् । ततः अन्यत्र  
स्थापितं फलं सूर्यभक्तावशिष्टं द्वादशभागेन उर्वरितं तद्भावानां लग्नादीनां  
साधनं साधनसंज्ञकं विदुरिति अग्रिमाध्यायविषयार्थं साधितं ज्ञेयम् । अ-  
थात्रोदाहरणम् । तृतीयभावः २।२।५३।५९ राश्यंकं विहाय जातः २।५३।  
५९ अस्य स्वामिनो बुधस्य रश्मयः १।४३।४९ एभिर्गोमूत्रिकागुणितो जा-  
तः ५।०।३९ अस्य कलाः ३००।३० एताः पृथक् स्थापिताः एकत्र भ-

### भाषा ।

से गुणित करनेसे जो कलादिक फल आवे उसकूं ७ से भाग लेना, जो फल आवे  
वो स्त्रियोंकी संख्या जाननी ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ राशीकूं छोड़के लग्नादिकोंके  
जुदे जुदे भावके अंशादिकोंकूं अपने अपने स्वामीकी रश्मियोंसे गुणन करना उस-  
कूं भावभागादिक कहते हैं, कला करके दो ठिकाने रखना, राशीकी लिपिकासे  
भाग लेना जो फल आवे उसकूं भावफल कहना, और दूसरे समूहका बारहसे भाग

फलं ततः ॥ ३१ ॥ सूर्यभक्तावशिष्टं तु भावानां साधनं  
 विदुः ॥ राशीन् हित्वा ततो लिप्ताः खखनेत्रविभाजिताः  
 ॥ ३२ ॥ साधनघ्ना विभक्ताश्च वर्गणाभिः फलाहताः ॥  
 उच्चादि वृद्धिहानिं च कुर्यात्तत्संख्यका भवेत् ॥ ३३ ॥  
 इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे लोकयात्रावर्णनं  
 नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

### टीका ।

लिप्ताभिः १८०० आभिर्विभज्य लब्धं जातं फलं ०।१० एतद्भावफलसंज्ञकं  
 ज्ञेयम् अन्यत्र स्थापिताः पूर्वोक्ताः कलाः ३००।३९ आसां द्वादशभक्तावशि-  
 ष्टं फलं ०।३ एतज्जातं भावसाधनसंज्ञकं ज्ञेयम् ॥ ३० ॥ ३१ ॥ अथाति-  
 सुलभतया प्रकारान्तरेण पूर्वोक्तसंख्यासाधनं स्थूलमानेनाह राशीनित्याद्य-  
 ध्यायांतम् । राशीन् हित्वा स्पष्टं ततः अवशिष्टस्य लिप्ताः कलाः कार्याः  
 ततः खखनेत्रैः २०० विभाजिताः भक्ताः ततः साधनघ्नाः साधनेन पूर्व-  
 संपादितभावसाधनेन घ्नाः गुणिताः ततः वर्गणाभिः विभक्ताः भाजिताः  
 ते एव फलाहताः पूर्वसंपादितफलेन गुणिताः पश्चादुच्चादिवृद्धिं उच्चत्रिको-  
 णादितारतम्येन वर्धनं हानिं नीचादि तारतम्येन ह्रासं च कुर्यात् । एवं कृते  
 समुच्चयेन पुंस्त्रीसंख्यका भवेदिति । अतिस्थूलमानमिति बोध्यम् ॥ ३२ ॥ ३३  
 अध्यायेऽस्मिन्पंचमे तु कृता टीका यथामति ॥ ज्योतिर्विद्भिः शोधनीया  
 कृपया दीनवत्सलैः ॥ १ ॥ श्रीगणेशप्रेरणया त्वाप्येऽध्याये तु पंचमे ॥ कृतया  
 व्याख्यया देवः स एव प्रीयतां मम ॥ २ ॥ इति श्रीमद्दृशास्त्रे श्रीमद्-  
 ध्यङ्गुन्वयवेदशांजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण वि० सु० टी० लोकयात्राव-  
 र्णनं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

### भाषा ।

लेना जो फल आवे वो भावसाधन फल जानना ॥ ३० ॥ ३१ ॥ अब पूर्वोक्त कला  
 उसकू सुलभ रीतिसे घताते हैं. राशिकू छोडके अंशादिककरी लितिका करके दोसो-  
 से भाग लेना. जा लब्ध हैं उसकू पूर्वसंपादित भावसाधनसे गुणन करना अपने



भाग्योत्कर्षं भाग्यहानिं कुटुंबं दुःखं हानिं शत्रुमायं व्य-  
यं च ॥ उद्वाहं स्त्रीपुत्रलाभादिकं च ब्रूयादेवं चाब्दचर्याक्र-  
मेण ॥ १ ॥ अब्दमासदिनचर्यविधानं वक्ष्यते खलु मया  
सुमते ते ॥ वक्ष्यमाणविधिना परमायुः सम्यगेव विद-  
धीत महात्मन् ॥ २ ॥ भावानां सावनं हत्वा दृष्टिभिश्च

### टीका ।

अथो परारारमुनिः षष्ठाध्याये प्रकीर्णकम् ॥ अब्दचर्यादिकं प्राह मैत्रेयाय  
सविस्तरम् ॥ १ ॥ अथास्मिन् षष्ठेऽध्याये भाग्याद्युत्कर्ष-हान्यादिकं प्रकीर्ण-  
कमुपदिदेश । तत्र प्रथमे अब्दचर्यया भाग्यादिकं ब्रूयादित्याह भाग्येति ।  
भाग्योत्कर्षं भाग्यवृद्धिं भाग्यहानिं कुटुंबं पोषणीयसमूहं दुःखं कष्टं हानिं  
हानिं शत्रुं रिपुं आयं लाभं व्ययं नाशं उद्वाहं विवाहं स्त्रीपुत्रलाभादिकं स्त्री-  
पुत्रयोः लाभः आदौ यस्मिंस्तत् स्त्रीपुत्रलाभप्रभृति सर्वमित्यर्थः । एवं सर्वं च  
अब्दचर्याक्रमेण वक्ष्यमाणवर्णगत्यनुक्रमशः ब्रूयात् गणकइत्यध्याहारः ॥ १ ॥  
अथ अब्दादिचर्यां वक्तुं प्रतिजानीते अब्देति । सुमते ! महात्मन् ! इति मैत्रे-  
यसंबोधनद्वयं ते अब्दमासदिनचर्यविधानं अब्दानि मासाश्च दिनानि च  
तेषां च चर्यस्य गतेः विधानं यथा वक्ष्यते खलु तदर्थमादौ वक्ष्यमाणविधि-  
ना परमायुः सम्यगेव सूक्ष्मतया विदधीत संपादयेत् इति ॥ २ ॥ अथ भाव-  
फलज्ञाने चित्तोद्यमं विषयः कात्प्रमाह भावानामपितित्रिभिः । भावानां लभ-  
भाषा ।

ध्रुवांकमे भाग लेना पूर्वसंपादित फलसे गुणन करना. जो अंक आवे वो कुटुंबपो-  
षणकी संख्या जानना ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे ज्योतिर्वि-  
ष्णूधरेण विरचितसुवोधिनीभाषाटीकायां लोकयात्रावर्णनं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अब छठे अध्यायमें वर्षचर्याके क्रमसे भाग्यका उत्कर्ष, भाग्यकी हानि, कुटुंब-  
का सुख दुःख, शत्रुचिंता, लाभ, खर्च, विवाह, स्त्रीपुत्रादिकोंका फल कहते हैं ॥ १ ॥  
हे मैत्रेय । तुमारेकू वर्षचर्या, मासचर्या, दिनचर्याका विधान निम्न करके कहताहूँ  
और परमायुर्भी उत्तम रीतिसे निकालना ॥ २ ॥ अब द्वादशमासोक्त फल कब होवेगा,  
उसका कालप्रमाण कहते हैं. स्पष्ट द्वादश भाव करके उसकू अपनी अपनी दृष्टिसे गु-

बलेन च ॥ षड्वर्गादिपतीनां च भावे भावे पृथक् पृथक्  
॥ ३ ॥ तेषां च दृग्बलानां च संहत्या भाजयेदथ ॥ स्वा-  
मिदृष्टिस्थितानां तु काले भावफलं विदुः ॥ ४ ॥ ज्ञानसं-  
भवकालस्तु जन्मकालाद्वला यदा ॥ लग्नादिव्ययपर्यन्ता  
भावाः काले तथा विदुः ॥ ५ ॥ लग्नषड्वर्गहोराणां भोक्ता-

## टीका ।

दीनां साधनं पूर्वाध्यायाग्रे कथितं दृष्टिभिः तत्तद्भावदृष्टिभिः बलेन तत्तद्भा-  
वबलेन च हत्वा गुणयित्वा भावे भावे प्रतिभावमित्यर्थः तेषां तेषां षड्वर्ग-  
पतीनां ग्रहहोराद्रेष्काणनवांशद्वादशांशत्रिंशांशपतीनां दृग्बलानां दृष्ट्यश्च  
बलानि च तेषां पृथक् पृथक् संहत्वा भाजयेत् तेन यल्लब्धं तत्काले तत्तत्फलं  
ज्ञेयम् । अथानन्तरं स्वामिदृष्टिस्थितानां स्वाधिपतिपूर्णदृष्टानां तु काले तत्त-  
त्संवाभिदशासमये भावफलं भावोक्तं फलं स्यादिति विदुः आचार्या इति शेषः  
पूर्वस्वामिदृष्टा न चेत् फलस्य जन्मकालात् सकाशाज्ज्ञानसंभवकालस्तु ल-  
ग्नादिव्ययपर्यन्ता भावाः ये विद्यन्ते तेषां मध्ये ये बलाः बलाधिकास्तेषां पति-  
दशाकाले क्रमात्तद्व्यूनतद्व्यूनबलानां पतिदशाकाले तथा भावसदृशं फलं  
विदुरित्यन्वयः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ अथ तत्र शुभग्रहपापग्रहभेदेन विशेषमाह  
लग्नेत्यादिसार्धत्रयेण । लग्नषड्वर्गहोराणां लग्नस्य संबन्धिनः ये षड्वर्गाः ग्रह-  
होराद्रेष्काणसप्तांशनवांशद्वादशांशत्रिंशांशाः तेषां ये होराः राशयः नाम  
लग्नस्य अमुकराशिः होराया अमुकराशिः द्रेष्काणस्य अमुकराशिः इत्या-  
दयः ये षड्वर्गवर्तमाना राशयः तेषां पतयः अधिपाः कृभात् भोक्ताः स्व-

## भाषा ।

गन करके पाले अपने भावबलसे गुणन करना, फिर प्रत्येक भावके जो षड्वर्गपति  
और उन्हींकी दृष्टि और बल इन्हींका योग करके भाग लेना जो लब्ध वर्षादिक  
आवे तो समयमें स्त्रीपुत्रधनादिकोंका फल जानना ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ लग्न षड्वर्गका जो  
फल है वो उसके पतियोंकी दशमें प्राप्त होता है सोभी ३।५।४।३ ०।७।७।३ यह  
संख्या अंशमें होवेगी। ग्रह जो हैं उन्हींकी दृष्टि शुभग्रहोंकी फल देती है। पापग्रह

रः पतयः स्मृताः ॥ त्रिपंचवेददिक्सप्तमुनिरामांशके फलम् ॥ ६ ॥ शुभग्रहास्तु द्रष्टारः स्थानदाः सकलग्रहाः ॥ युक्ताः सदा तु सद्भावाः संज्ञानुफलदास्तदा ॥ ७ ॥ पापान् हानिकरान्हित्वा स्वोच्चे कोणसुहृत्स्थितान् ॥ तद्भाशिर्यस्य शत्रुर्वा नीचयोर्वा ग्रहो यदि ॥ ८ ॥ हानिं कुर्यात्तदा तस्य

टीका ।

दशायां फलदा इत्यर्थः स्मृताः अत्र होराशब्देन राशिग्राह्यः न तु राश्यर्थ-  
भागः तस्य उक्तषड्वर्गगतत्वादिति ज्ञेयम् । अथ ते भोक्तारः स्वस्य सर्वद-  
शायां फलदा वा दशांशविशेषफलदा इति चेदाह त्रिपंचवेददिक्सप्तमुनि-  
रामांशके लग्नादिवर्गपतयः स्वदशायां क्रमात् त्रिपंचादि दशाविभागे फलं  
ददतीति शेषः । अथ द्रष्टारो ग्रहाः शुभा एव फलदा न पापाः स्थानदास्तु  
सकलाः शुभाः पापाश्च फलदाः युक्ताः शुभग्रहयुक्ताः सद्भावाः शुभभावा  
ज्ञेयाः सदा सर्वदा संज्ञानुफलदाः तनुधनसहजादिनामानुसारफलदातारः  
भवन्ति तद्वत् पापाः पापग्रहयुक्ताः हानिकराः तन्वादिनामानुसारहानिकर्ता-  
रो भवन्ति तथापि स्वोच्चकोणसुहृत्स्थितान्पापान्हित्वा अन्ये पापाः अथ भा-  
वस्थितग्रहस्य वर्तमानराशिर्यदि शत्रुः यदि वा यो ग्रहो नीचे भवति तदा  
तत्फलस्य दृष्टियोगानुपाततः दृष्टियोगानुरूपं पूर्णदृष्टेः पूर्णहानिश्चेत् अमुक  
दृष्टेः क्षियती हानिरिति त्रैराशिकेन हानिं फलस्येति शेषः कुर्यात् विदधीते-  
ति ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ अथ कारकसंज्ञकान् ग्रहानाह उद्गाहेति । उद्गाहकारकौ  
उद्गाहं विवाहं कुस्त इति उद्गाहकारकौ विवाहकारकसंज्ञौ चंद्रशुक्रौ ज्ञेयौ वा  
विकल्पेन ज्ञो बुधः तपो गुर्वा ज्ञेयः मृतिकरः मृतिं मरणं करोतीति तथा श-

भाषा ।

की नहीं और स्थानमें (रेखामें) शुभ पाप दोनों ग्रहोंका शुभाशुभ फल होता है।  
और जो जो भावमें जो जो ग्रह पाप या शुभ उच्च नीच मूल त्रिकोणादिकके  
होवे, शत्रुमित्रादिकके होवे, दृष्टियुक्त दृष्टिरहित होवे उस ऊपरसे वे भावोंका शुभा-  
शुभ फल कहना ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ अब कारक ग्रह कहते हैं। विवाहका कराने-  
वाला चंद्र शुक्र हैं, वास्ते चंद्र शुक्र विवाहकारक जानना, विकल्प मतांतरसे

दृष्टियोगानुपाततः ॥ उद्वाहकारकौ चंद्रशुक्रौ ज्ञो वा त-  
पोऽथ वा ॥ ९ ॥ शनिर्मृतिकरो भौमरवी नीचासतीपती ॥  
गुरुः शुभकरः पुत्रे कुजो भ्रातरि शत्रुमे ॥ १० ॥ मंदश्वाये  
शुभाः सर्वे स्वोच्चगौ भौमसूर्यजौ ॥ भाग्ये शुभाः शुभाः  
पापा अशुभाः स्वपतिं विना ॥ ११ ॥ पूर्वभागे समुद्दिष्ट-  
दृग्बलेन फलानि तु ॥ विरुद्धानि परित्यज्य समीचीनानि

### टीका ।

निः ज्ञेयः भौमरवी च नीचासतीपती नीचा कुलटा सती पतिव्रता ते पातः इ-  
ति तथा ज्ञेयाविति ॥ ९ ॥ अथ भावेषु शुभाशुमग्रहानाह गुरुरितिसार्धेन । पुत्रे  
पंचमस्थाने गुरुः शुभकरः शुभावहः पुत्रकारक इत्यर्थः भ्रातरि तृतीयस्थाने  
कुजः भौमः शुभकरः शत्रुमे षष्ठस्थाने मंदः शनिः शुभकरः शत्रुरोगादिनाशक  
इत्यर्थः आये एकादशस्थाने सर्वे शुभाः पूर्णचंद्रापपबुधगुरुशुक्राः शुभाः  
भाग्यकारका इत्यर्थः अथ च भाग्ये पापाः क्षीणचंद्रसपापबुधरविभौमश-  
निराहुकेतवः अशुभाः भाग्यनाशकाः किंतु स्वपतिं विना स्वस्य भाग्यभाव-  
स्य अधिपव्यतिरेकेण अशुभाः अर्थात् पापोपि भाग्यपतिः सन् भाग्ये स्थि-  
तश्चेत् भाग्यकारक एव ज्ञेयः तथा भौमसूर्यजौ कुजशनी स्वोच्चगौ मकरतुला-  
वर्तमानौ भाग्ये स्थितौ संतौ शुभकराविति ॥ १० ॥ ११ ॥ अथ पूर्वभागेऽक्तदृग्ब-  
लसिद्धफलव्यवस्थामाह पूर्वभागइति । पूर्वभागे पूर्वार्धे समुद्दिष्टदृग्बलेन क-  
थितदृष्टिवलेन यानि फलानि संति तन्मध्ये विरुद्धानि अनिष्टानि परित्यज्य

### भाषा ।

विवाहकारक बुध वा गुरु जानना, शनि मरणकारक है, मंगल कुलटाकारक है,  
सूर्य पतिव्रताकारक है ॥ ९ ॥ अब भावगत ग्रहोंका शुभाशुम फल कहते हैं, गुरु ५  
शुभ, मंगल ३ शुभ, शनि ६ शुभ, सर्व ग्रह ११ शुभ हैं, मंगल शनि उच्चके  
होवे तो उत्तम जानना, नवम स्थानमें शुभ ग्रहोंका फल उत्तम जानना, पापग्र-  
होंका फल अशुभ जानना, परंतु नवम स्थानमें भाग्यमें जो पापग्रह अपना पती  
होवे बैठा होवे तो भाग्यवृद्धि करनेवाला जानना ॥ १० ॥ ११ ॥ पूर्वभागमें

संग्रहेत् ॥ १२॥ ग्रहराशिस्वभावेन पुंस्त्रियोराशिमेव च ॥  
स्वभावं च वदेद्बुद्ध्या देशकालकुलानुगः ॥ १३ ॥ तेषा-  
मिष्टफले वृद्धिस्त्वशुभाख्यफलादयः ॥ अन्यथा त्वसदेव

टीका ।

त्यक्त्वा समीचीनानि शुभानि संग्रहेत् गृण्हीयात् यतः शुभानामेवात्र प्रकरणे  
उपयोगित्वादिति भावः ॥ १२॥ अथ स्त्रीपुंस्वभावविचारमाह ग्रहेति द्वाभ्यां ।  
ग्रहराशिस्वभावेन ग्रहाश्च ख्यादयः राशयः मेषादयश्च एतेषां यथा स्वभावः  
तेन तथा पुंस्त्रियोः नृनार्योः राशिं लग्नं विचार्य देशकालकुलानुगः देशाश्च  
कालाश्च कुलानि च अनुगच्छति अनुसरतीति तथा गणक इत्यध्याहारः पुं-  
स्त्रियोः नरनार्योः स्वभावं निसर्गं बुद्ध्याऽतिसूक्ष्मविवेकेनेत्यर्थः विचार्येति  
शेषः वदेत् कथयेत् एतदुक्तं भवति गुरुगौरः कस्य चिल्लग्रे वर्तमानः तदीयो-  
त्पत्तिदेशः बहुशः कृष्णवर्णनरप्रायः तर्हि देशतारतम्येन गौरत्ववैगुण्यम् तथा  
शनिः कृष्णः कस्य चिल्लग्रे वर्तमानः तदीयोत्पत्तिदेशो बहुशो गौरवर्णनर-  
प्रायः तर्हि देशतारतम्येन काष्ण्यवैगुण्यमिति देशानुसारवर्णविचारः एवमेव  
स्वभावादिविचारः तद्भदेव कालविचारः लग्ने शुभग्रहोपि जन्मकालो व्यतीपा-  
तग्रहणादिदुष्काले चेतारतम्येन सौशील्यदुःशीलत्वमिश्रणं वदेत् एवमेव कु-  
लविचारः शुक्रसौम्यादिशुभग्रहयुतेऽपि लग्ने म्लेच्छादिकूरस्वभावकुलोत्पन्न-  
स्य सौम्यत्वकौर्यादिमत्त्वं मिश्रणेन वक्तव्यमिति दिक् ॥ १३॥ अथ तत्तत्स्वभाव-  
स्य चासद्वृद्धी आह तेषामिति । तेषां सुखभावदुःखभावगौरत्वादीनां इष्टफले  
लग्नवर्तमानग्रहस्य कष्टाधिकेष्टफले वृद्धिः उत्तरोत्तरं वर्धनं अन्यथा एवं न  
चेदशुभाख्यफलात् कष्टफलाधिक्यात् असदेव स्वभाववर्णादीनामुत्तरोत्तरं

भाषा ।

दृष्टिबलसे फल कहा है उसमें अनिष्ट फल छोड़के शुभ फलका संग्रह करना ॥ १२॥  
अब मनुष्योंका जो स्वभाव गुण है सो ग्रहोंके और राशियोंके गुणानुसारसे तथा  
देश काल कुल देखके बहुत सूक्ष्म दृष्टिके विचारसे कहना, जो जो भावके फल  
सुख दुःखादिक कहे हैं उन्हींकी उत्तरोत्तर वृद्धि या हानि कैसी जानना सो कहते  
हैं, जिस भावका इष्ट बल अधिक होवे तो शुभ फल उत्तरोत्तर जादा होवेगा,

स्यात्तस्य तस्मान्मृतौ फलम् ॥ १४ ॥ रविस्तु पाचको  
ज्ञेयश्चंद्रमा बोधकः सदा ॥ पाचको बोधकश्चैव कारको  
वेधकः क्रमात् ॥ १५ ॥ रव्यादीनां च विज्ञेया मंदारेज्य-  
सितास्तथा ॥ शुक्रारमंदरवयो रवीन्दुशनिचंद्रजाः ॥ १६ ॥

टीका ।

हानिरेव स्यात् एवं तस्मादिष्टकष्टादेव मृतौ मृत्युस्थाने फलं स्यात् एतदुक्तं  
भवति मृत्युस्थानस्थितस्य तदधिपस्य वा कष्टादिष्टफले अधिके सति वक्ष्य-  
माणप्रकारेण प्राप्ताद्युपः इष्टफलाधिक्यतारतम्येन वृद्धिः न्यूनत्वतारतम्येन  
ऋासः स्यादिति भावः एवं सर्वभावेषु बोध्यम् ॥ १४ ॥ अथ शुभाशुभफल-  
विशेषज्ञानार्थं रव्यादीनां पाचकादिसंज्ञाः स्थानविशेषसंबंधेनाह रविरित्या-  
दित्रयोविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । तत्रादौ रविचंद्रयोः पाचकादिसंज्ञा निसर्गत  
एव रविरिति । रविस्तु पाचकः निसर्गत एव पाचकसंज्ञकः चंद्रमास्तु बोध-  
कः निसर्गत एव बोधकसंज्ञकः सदेति स्वभावत इत्यर्थः क्रमात् क्रमशः पा-  
चकसंज्ञयोक्तो रविः कारकः कारकसंज्ञः बोधकसंज्ञयोक्तश्चंद्रः वेधकसंज्ञक  
इति तयोरेव निसर्गसिद्धसंज्ञांतरमुक्तमिति ॥ १५ ॥ अथ रव्यादीनां स्थान-  
संबंधेन पाचकादिग्रहानाह रव्यादीनामित्यादित्रयोविंशतिश्लोकपर्यन्तम् ।  
रव्यादीनां सूर्यप्रभृतिसप्तग्रहाणां पीडक्षे शत्रुराशौ अपीडक्षेमित्रराशौ अपि वर्-  
तमानाः लग्नं विना लग्नव्यतिरेकेण जन्मलग्नात् केन्द्रे चतुर्थसप्तमदशमस्थाने  
गताः सर्वे ग्रहाः पाचकाद्या बलवन्तः स्युः अपि च लग्नादेव सकाशात् पद ६  
सप्त ७ धर्म ९ कर्मा १० य ११ मृतिः चतुर्थेऽपुष्टस्थानेषु गताः क्रमात् क्रमेण  
वर्तमानाः पाचकाद्याः सप्त रव्यादयो बलवन्तः स्युः अन्यथा पाचकाद्याः

भाषा ।

कष्टबल अधिक होवे तो अशुभ फल उचरोत्तर जादा होवेगा ॥ १४ ॥ सूर्यको  
पाचक जानना. चंद्र बोधक जानना. और सूर्य जो पाचक है उसकू कारकभी  
कहना. चंद्रमा बोधक है उसकू वेधक जानना ॥ १५ ॥ अब सूर्यादिकोंका  
स्थानसंबंधसे पाचकादिक भेद कहते हैं. सूर्यसे छठे सातवें नवमें ग्यारहवें यह रव्या-  
नोंमें क्रमसे शनि, मंगल, गुरु, शुक, बैठे होवे तो पाचक, बोधक, कारक, वेधक,

चंद्रेज्यसितभौमाश्च मंदारेन्दुदिनेश्वराः-॥ भौमज्ञसूर्यमं-  
दाः स्युः सितेन्दुगुरुभूमिजाः ॥ १७ ॥ षट्सप्तनवरुद्रेषु  
सप्तमंदभवत्रिषु ॥ द्विषडायव्ययेष्वेवं द्विवेदेन्द्रियवन्दिषु  
॥ १८ ॥ षट्पंचसप्तरिप्फेषु द्विषड्व्ययचतुर्ष्वपि ॥ त्रिरु-

टीका ।

सामान्याः एव स्युः तक्रममाह स्वेः मंदारेज्यसिताः रविस्थानात् षट्सप्तन-  
वरुद्रेषु ६।७।९।११ क्रमात् स्थानेषु स्थिताः क्रमात् पाचकबोधककारक  
वेधकसंज्ञकाश्चत्वारो भवन्ति एवं चंद्रस्य शुक्रारमंदरवयः चंद्रस्था-  
नात् सप्तमंदभवत्रिषु ७।९।११।३ स्थानेषु स्थिताः क्रमात् पाचक-  
बोधककारकवेधकसंज्ञकाश्चत्वारो भवन्ति एवं भौमस्य रवींदुशानिचंद्रजाः भौ-  
मस्थानात् द्विषडायव्ययेषु २।६।११।१२ स्थानेषु स्थिताः क्रमात् पाचका-  
दिसंज्ञकाश्चत्वारो भवन्ति एवं बुधस्य चंद्रेज्यसितभौमाः बुधस्थानात् द्विवेदे-  
न्द्रियवन्दिषु २।४।५।३ स्थानेषु स्थिताः क्रमात्पाचकादिसंज्ञकाश्चत्वारः एवं  
गुरोः मंदारेन्दुदिनेश्वराः गुरुस्थानात् षट्पंचसप्तरिप्फेषु ६।५।७।१२ स्थानेषु  
स्थिताः क्रमात्पाचकादिसंज्ञकाः एवं शुक्रस्य भौमज्ञसूर्यमंदाः शुक्रस्थानात्  
द्विषड्व्ययचतुर्षु २।६।१२।४ स्थानेषु स्थिताः क्रमात् पाचकादिसंज्ञकाः एवं

भाषा ।

जानना, जैसा सूर्यसे ग्यारहवे धरमे शुक्र होवे तो वेधक जानना, उसका फल यह  
है कि, जो भावमे बैठा होवेगा वो भावगत कार्यका विघ्न करेगा, ऐसा सब ग्रहोंका

| पाचकादि ग्रह बनानेका चक्र । |    |    |    |    |    |      |     | सूर्यादिपाचकादिचक्र |   |   |    |    |   |      |     |
|-----------------------------|----|----|----|----|----|------|-----|---------------------|---|---|----|----|---|------|-----|
| सू                          | च  | म  | बु | गु | श  | ग्र  | प्र | सू                  | च | म | बु | गु | श | ग्र  | प्र |
| ५                           | ५  | २  | २  | ६  | २  | पाचक | ०   | ०                   | ० | ० | ०  | ०  | ० | पाचक | ०   |
| ३                           | ३  | ६  | ४  | ५  | ६  | बोधक | ०   | ०                   | ० | ० | ०  | ०  | ० | बोधक | ०   |
| २                           | ११ | १३ | ५  | ७  | १० | कारक | ०   | ०                   | ३ | ० | ०  | ०  | ० | कारक | ०   |
| ११                          | ३  | १२ | ३  | १२ | ४  | वेधक | ५   | ५                   | ० | ० | ०  | ०  | ० | वेधक | ०   |

द्रष्टृसप्तमेषु स्थिताः स्थानेषु ते ग्रहाः ॥ १९ ॥ पाचका-  
द्यास्तु चत्वारः सूर्यादिभ्यः क्रमादिह ॥ पीडर्क्षं वाप्यपी-  
डर्क्षं केन्द्रे लग्नं विना तथा ॥ २० ॥ षट्सप्तधर्मकर्मयमृ-  
तिष्वेव गताः क्रमात् ॥ पाचकाद्याश्चतुर्थे च बलवन्तः  
समीरिताः ॥ २१ ॥ कारको मन्दफलदो वेधको विघ्नकृत्स्मृ-  
तः ॥ बोधकः शीघ्रफलदः पाचको विफलप्रदः ॥ २२ ॥  
तदंशकालस्यान्ते वा प्यादावंत्यांशकेऽपि च ॥ अंत्यांश-  
केऽपि फलदाः पाचकाद्याः क्रमादिह ॥ २३ ॥ आदौ फ-

## टीका ।

शनेः सितेन्दुगुरुभूमिजाः शनिस्थानात् त्रिरुद्रपट्सप्तमेषु ३।११।६।७ स्थानेषु  
स्थिताः क्रमात् पाचक बोधककारकवेधकसंज्ञकाश्चत्वारो ज्ञेयाः एते पाचका-  
द्यश्चत्वारः लग्नात् लग्नव्यतिरिक्ते केन्द्रराशित्रये वर्तमानाश्चेद्बलिनः स्युः तथा  
एते पाचकादिसंज्ञासंज्ञिताः रविचंद्रभौमबुधगुरुवः क्रमात् लग्नतः ६।७।९।१०  
।११।८।४ स्थानेषु स्थिताश्चेत्तेऽपि बलिनो ज्ञेया इति । अथैषां फलान्याह ।  
कारकः कारकसंज्ञकः स्वसंज्ञाप्रापकग्रहस्य मन्दफलदः न्यूनफलदः स्यात्  
तथा वेधकसंज्ञको ग्रहः स्वसंज्ञाप्रापकस्य विघ्नकृत् तदधिकारानुरूपफलविप-  
ये विघ्नकर्ता भवेत् तथा बोधकसंज्ञकः स्वसंज्ञाप्रापकस्य तदधिकारानुरूप-  
फलविषये शीघ्रफलदः स्यात् तथा पाचकसंज्ञकः स्वसंज्ञाप्रापकस्य ग्रहस्य  
विफलप्रदः तदधिकारानुरूपफलविषये वेफल्यकारक इति । अथैतत्फलदान-  
कालमाह तदिति । पाचकाद्याः पाचकबोधककारकवेधकाः तदंशकालस्य  
तस्य स्वसंज्ञाप्रापकग्रहस्य क्रमात् अन्ते अन्तिमनवमांशकाले आद्ये आद्यन-  
वांशे अंत्यांशके अंत्यनवांशके अंत्यनवांशके च अपि फलदाः फलदातारो  
ज्ञेयाः अपि शब्देन फलदाने सर्वदा त्वनियमः सूचितः इति ॥ १६ ॥ १७ ॥  
॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ अथ ख्यादीनां दशागोचरादि-

## भाषा ।

जानना, यह वार्ता टीकांमे स्पष्ट है, यहां चक्रमी स्पष्ट दिखाया है ॥ १६ ॥ १७ ॥  
॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ सूर्य मंगल आद्य प्रथम त्रिभागमें



लप्रदौ भौमरवी मध्ये सितार्यकौ ॥ सर्वदा ज्ञः शशी मंद-  
स्त्ववसाने फलप्रदौ ॥ २४ ॥ इति श्रीमद्वृहत्पाराशरहो-  
रोत्तरभागे लोकयात्रावर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

धनहानिभयानां च व्याधीनां दिवसांस्तथा ॥ शुभाशु-  
भानि कर्माणि यात्रादि विजयादि च ॥ १ ॥ मासचर्याविधा-

टीका ।

फलकालमाह आदाविति । भौमरवी कुजसूर्यो आदौ आद्यत्रिभागे स्वद-  
शागोचरादिफलप्रदौ भवतः सितार्यकौ शुक्रगुरु मध्ये मध्यत्रिभागे फलदौ,  
ज्ञो बुधः सर्वदा सप्तमदशादौ फलदः स्यात् शशी चंद्रः मंदः शनिश्च एतौ  
द्वौ अवसाने अंत्यत्रिभागे फलदौ स्यातामिति ॥ २४ ॥ एवं पराशरोक्तेस्मि-  
न् षष्ठाध्याये यथामति ॥ गणेशप्रीतये टीका कृता शोच्या मनीषिभिः ॥ १ ॥  
इति श्रीमत्पराशरहोराशास्त्रेश्रीमहर्ष्यङ्गव्यवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्योति-  
तदशदिङ्मंडलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनीटी-  
कायां षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

नत्वा श्रीमद्गणेशानं सप्तमेऽध्यायके मया ॥ क्रियते विशदा व्याख्या पं-  
रोपकृतये मुदा ॥ १ ॥ सप्तमेऽध्यायकेस्मिन् पराशरमहामुनिः ॥ व्याध्यादि-  
दिवसानाह रव्यादीनां यथाक्रमम् ॥ २ ॥ अथ भगवान्महर्षिः शिष्याय  
मासचर्यायां शुभाशुभदिवसज्ञानमाह धनेत्यादिचतुःश्लोक्या । धनहानिभ-  
यानां धनं द्रव्यलाभः हानिर्द्रव्यनाशः भयं शत्रुरोगाद्यनिष्टज तपां व्याधीनां  
शरीरे प्राप्तरोगाणां च दिवसान् वक्ष्यमाणान् जानीयादित्यव्याहारः । अथ

भाषा ।

फल देते हैं । शुक्र गुरु मध्य त्रिभागमे फल देते हैं । बुध सर्वकाल फल देता है ।  
चंद्र शनि अंतिम त्रिभागमे फल देते हैं ॥ २४ ॥ ॥ इति श्रीवृहत्पाराशरहो-  
राशास्त्रे भाषाटीकायां लोकयात्रावर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अब फलादेश कहते हैं । धनकी प्राप्ति, धनका नाश, शत्रुमय, रोग, इन्नोंकी  
प्राप्तिके दिन और शुभाशुभ कर्म जय पराजय उत्कर्ष इन्नोंका निर्णय मासचर्याके  
अनुसारसे कहना । और दूसरे जो कार्य हैं वे सब दिनचर्या के अनुसारसे वर्णन

(१२८)

बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे-

नेन ब्रूयादन्येन चैतरान् ॥ लग्नारिमृतिरिःफेषु वर्गणां च  
पतीस्तथा ॥ २ ॥ करणेशान्समालोच्य कथयेन्मुनिपुंगव ॥  
रसेषवो मुनिःखाष्टौ रविभूपा दिशस्तथा ॥ ३ ॥ द्विशतं च  
क्रमात्सूर्यादिवसाश्चाष्टमे स्थिताः ॥ द्वितीयेऽर्धे त्वंतरे च  
त्रैराशिकवशेन तु ॥ ४ ॥ इति बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे  
मासचर्यादिवसात्फलज्ञानकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

टीका ।

शुभाशुभानि इष्टानिष्टानि कर्माणि व्यापारान् यात्रादि गमनागमनादि वि-  
जयादि उत्कर्षादि सर्व मासचर्याविधानेन ब्रूयात् इतरानन्यान् उक्तावाशि-  
ष्टान् प्रकारान् अन्येन दिनचर्यावर्षचर्याविधानेन ब्रूयात् तथा लग्नारिमृति-  
रिःफेषु लग्नपष्ठभावमृत्तुभावव्ययभावेषु फलविषये वर्गणां प्रागुक्तान्यतीन्  
स्वामिनः करणेशान् करणपतींश्च कस्मिन् भावे कः कियान् फलद इति स-  
म्यग्विचार्य हे मुनिपुंगव ! कथयेत्फलमिति शेषः । अथ रव्यादीनां अष्टम-  
भावादिद्वितीयभावांत द्वितीयभावाद्यष्टमभावपर्यंत वर्तमानानां रव्यादीनां  
फलदाने दिवसानाह । अष्टमे भावे रसेषवः ५६ रवेः, मृनिः ७ विधोः,  
खाष्टौ ८० भौमस्य, स्वयः १२ बुधस्य, भूपाः १६ गुरोः, दिशः १० शुक्रस्य,  
द्विशतं २०० शनेः । एवमष्टमभावे सूर्यात् सकाशात् क्रमादिवसाः द्वितीय-  
भावे तु अर्धशुक्लदिवसार्ध अंतरे अष्टमद्वितीयभावयोर्मध्यभावेषु तु त्रैराशि-  
कवशेन द्वितीयाष्टमयोः अशुक्लदिवसाश्चेदशुक्लमध्यभावे कति दिवसा इ-  
ति त्रैराशिकरीत्या ज्ञेया इति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एवं प्रकारतोऽध्याये  
सप्तमेरिमन् यथामति ॥ कृता टीका ज्योतिषिकैः शोधनीया प्रयत्नतः ॥ १ ॥

भाषा ।

करना. उसमें १।६।८।१२ यह भावांक पति और चिंदुके अधिपनियोंक देवके  
अच्छा विचार करके फल कहना. अथ सूर्यादिकोंके फलदायक दिन कहते हैं. मृ०  
५६ घं० ७ मं० ८० घं० १२ गु० १६ गु० १० घं० २०० यह मंत्र्या अष्टम  
भावकी जामनी. और दूसरे भागमें पूर्वोक्त संख्याकी अर्ध संख्या जाननी. दूसरा

तेषां भंगमथो वक्ष्ये यथाह कमलासनः ॥ गर्गाय भ-  
गवान्सोपि ममाहाहं तव द्विज ॥ १ ॥ तथा च रिःफषष्ठा-  
ष्टस्थानानां करणाधिपाः। तत्तद्भावस्य भंगस्य कर्तारः सति  
संभवे ॥ २ ॥ तत्तद्भाववाष्टवर्गोत्थसंख्या तद्वर्गणाहता ॥ रवि-

टीका ।

इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहो० श्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनीटीकायां लोक-  
यात्रावर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ पूर्वोक्तयोगानां भंगमाह पराशरः ॥ अध्यायेस्मिन्नष्टमे च मैत्रेयाय  
महामुनिः ॥ १ ॥ एवं वर्षमासदिनचर्याभिर्भावफलान्युक्त्वा अथाष्टमाध्या-  
ये पूर्वोक्तयोगानां भंगं कथयति तत्र परंपरामाह तेषामिति । हे द्विज मै-  
त्रेय ! तेषां पूर्वोक्तयोगानां भंगं नाशं कमलासनो ब्रह्मा गर्गाय मुनये आह  
सोपि गर्गोऽपि मम मह्यं भंगमाह अहं तव तं भंगं वक्ष्ये कथयिष्ये ॥ १ ॥  
स्थानविशेषं करणाधिपसंभवेन भंगमाह तथेति । लग्नात् रिःफषष्ठाष्टस्थाना-  
नां द्वादशषष्ठाष्टसंज्ञकस्थलानां करणाधिपाः करणानां विदूनां स्वामिनः  
करणदातारो ग्रहा इत्यर्थः सति संभवे उक्तस्थानत्रयकरणसंभवे तथा स्था-  
नत्रयकरणसंभवेऽपि स्थानत्रयकरणेशानां संयोगसंभवे दृष्टिसंभवे सति वा  
तद्युतदृष्टभावस्य भावफलस्येत्यर्थः भंगकर्तारो नाशकर्तारः स्युः ॥ २ ॥  
अथ राश्यानयनेन भंगांतरमाह तत्तदिति १। तत्तद्भाववाष्टवर्गोत्थसंख्या त-  
त्तद्वर्गणाहता भाषा ।

और अष्टम यह भाव छोड़के जो अन्य भाव रहें वहां त्रैराशिकमतसे कहना ॥ १॥  
॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहो० भाषाटीकायां लोकयात्रावर्णनं  
नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अब योगभंग कहते हैं. हे मैत्रेय ! पूर्व जो योगभंग ब्रह्माजीने गर्गकू कहे, ग-  
र्गने मेरेकू कहे सो मैं अब तुमारेकू कहताहूं सो सुनो ॥ १ ॥ लग्नसे १२।६।८  
घरोंमें विंदु देनेवाले ग्रह वहां बैठे होवे या वे स्थानोंके आधिपतिके साथ विंदु  
देनेवाले ग्रहोंका संयोग होवे तो वो भावोंका भंग करनेवाले जानना ॥ २ ॥ जो  
जो भावके अष्टवर्गोंसे संख्या और जो कोई अष्टवर्गसमुत्पन्नक विंदु संख्याकू वर्ग-

भक्ता ततः शिष्टा राशिर्मेपादिका भवेत् ॥३॥ षष्ठाष्टरिः फे  
राशिश्चेद्भंग एष प्रकीर्तितः ॥ फलं च मुनिसंवृद्धं रविभक्तं  
तथा भवेत् ॥४॥ शिष्टमेवं यदि तदा शत्रुभं वाथ भंगदम् ॥

टीका ।

न्यायन्यतमविचारणीयभावस्य या अष्टवर्गसमुत्पन्नकरणांकसंख्या तद्गर्णाहता तस्यैव भावस्य वर्गणया गुणिता ततः रविभक्ता द्वादशभाजिता सती या शिष्टा स्यात् योऽङ्कः शिष्टः स्यादित्यर्थः सा मेषादिका राशिर्भवेत् एकादिशिष्टांकपरिमितेत्यर्थः ॥ ३ ॥ अथास्या राशेः प्रयोजनमाह षष्ठेत्यर्थेन । एषः पूर्वोक्तप्रकारोत्पन्नो राशिः षष्ठाष्टरिः फश्चेत् भंगः पूर्ववत्तद्भावभंगः प्रकीर्तितोऽवगंतव्य इति । अथ द्वादशभक्तावशिष्टांको राशिर्जातः लब्धांकस्य किं प्रयोजनं तदाह फलमित्यर्थेन । फलं प्रागानीतं द्वादशभागलब्धं यत् मुनिसंवृद्धं मुनिभिः सप्तभिः सम्यक् वृद्धं गुणितमित्यर्थः तथा रविभक्तं द्वादशभिर्भक्तं तथा भवेत् राशिरूपं भवेत् तत्रापि षष्ठाष्टरिष्फान्यतमत्वं चेद्भंगः स्यात् ॥ ४ ॥ ननु एवं मुनिगुणितं रविभागोपलब्धनंतरमपि अवशिष्टं चेत्किंकार्यं तत्राह शिष्टमित्यादिसप्तश्लोकांतम् । एवं नाम पूर्वप्रकारे कृतेऽपि शिष्टं यदि व्यवशिष्टं अवशिष्टोऽङ्को यदि राशिरूपः शत्रुभं लग्नेशस्य शत्रुराशिः स्यात् वा अथवा भंगदं सोऽङ्को राशिरूपः लग्नात् भंगदषष्ठाष्टरिः फरूपः स्यात् तदा तद्भावानिष्टफलकं यद्भावस्यायं संस्कारः कृतः तद्भावस्यानिष्टफलको बोध्यः । अथ पुनस्तस्याप्यवशिष्टस्य संस्कारं कथयति तत्

भाषा ।

णासे गुणकरके बारहसे भाग लेना जो शेषांक आवे वो राशि जानना ॥ ३ ॥ यह पूर्वश्लोकमे वही जो राशि वो ६।८।१२ घरमे आवे तो वो भावका भग करेगा, अब वो राशि जो शेषांकसे लाये परंतु लब्धांक जो आये उसकू सातसे गुणित करके बारहसे भाग लेना जो शेष रहे वो राशि जानना, वो राशि ६।८।१२ वे घरमे आवे तो वो भावका भंग जानना ॥ ४ ॥ अब दूसरी वखत भाग लेनेसे विशेष रहे तो पुनः सगुणन कहते हैं, पूर्वातीत राशि लग्नेशकी शत्रुराशि होवे अथवा लग्नसे भगसूचक होवे तो वो भावका अनिष्ट फल कहना, अब जो शेष है,

तद्भावानिष्टफलकं तच्छत्रुफलसंगुणम् ॥ ५ ॥-सप्ताष्टं  
शिष्टमेवात्र पापरश्मिगुणं ततः ॥ अर्कशिष्टं यदि भवेत्ष-  
ष्ठरिःषाष्टमेऽपि वा ॥ ६ ॥ शत्रुभं वापि भंगर्क्षं हानिस्त-  
स्य प्रकीर्तिता ॥ यथोत्तरमितीवाप्तं क्षयवृद्धिस्ततो भवेत्  
॥ ७ ॥ षष्ठ्यंशे च कलांशे च त्वप्रकाशग्रहोदये ॥ राहुका-

## टीका ।

यच्छत्रुभं वा भंगदं भं वावशिष्टं तत् तच्छत्रुफलसंगुणं सचासौ शत्रुश्च तच्छत्रुः  
तस्य यत्फलं कष्टफलं तेन संगुणं सम्यग्गुणितं सप्ताष्टं सप्तभिर्भक्तमपि अत्रा-  
वशिष्टमेवचेत्तदा पापरश्मिगुणं पापस्य शत्रोः ये रश्मयस्तैर्गुणयित्वा अर्क-  
शिष्टम् अर्कैर्द्वादशभिः अवशेषितं यद्यपि षष्ठरिः षाष्टमे लग्नात् षष्ठे वा रिः फे  
वा अष्टमे वा स्थाने तच्छत्रुभं वा भंगदं भं वा भवेच्चेत्तर्हि तस्य भावस्य भं-  
गोऽवर्गतव्यः । ननु एकप्रकारेण भंगे सिद्धेऽपि पुनः पुनः भंगप्रकारकथने  
किं प्रयोजनं तत्राह यथेत्यर्थेन । यथोत्तरं उत्तरोत्तरम् यथास्यात्तथा उक्तप्र-  
कारेषु एवमेव षष्ठरिः षाष्टमराशिः शत्रुराशिर्वा स्याच्चेत्ततः तदनुरूपं क्षयवृद्धिः  
क्षयस्य भावनाशस्य वृद्धिः वर्धनं एकद्वित्र्यादिप्राप्तप्रकारसंख्याकभंगवृ-  
द्धिरित्यर्थः भवेदिति ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ अथ प्रकारान्तरेण भावभंगमाह  
षष्ठ्यंशइति । षष्ठ्यंशे यस्य भावस्य भंगविचारस्तस्य षष्ठ्यंशे वा कलां-  
शे षोडशांशे अप्रकाशग्रहोदये अप्रकाशग्रहाः धूमपातपरिधिचापध्वजाः  
तदन्यतमग्रहस्य उदये सति राहुकालसमायोगे च सति तद्भावफलस्य

## भाषा ।

जिस भावका भग करता है उस भावके कष्टफलसे गुणन करके सात ७ से भाग  
लेना, यहां अवशेष रहे तो शत्रुकी रश्मिसे गुणना, बारहसे भाग लेना, शेष  
राशि ६।८।१२ में होवे तो वो भावका भग जानना, बारंबार भग कहते हैं, उस-  
का क्या कारण सो कहते हैं, उक्त रीतिसे जो भग आते हैं, उसकी क्षय वृद्धि  
एक द्वित्र्यादि आये जो प्रकार उस संख्यासे क्षय वृद्धि कहना ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥  
अब प्रकारांतरसे भागभग कहते हैं, जिस भावका भगविचार करता होवे उस

लसमायोगे तद्भावफलभंगदः ॥ ८ ॥ अनिष्टारख्यं च र-  
श्मिं च तद्भावफलसंगुणम् ॥ द्वादशाष्टावशेषं च पूर्ववत्फ-  
लमीरितम् ॥ ९ ॥ यद्यत्फलं प्रोक्तमथोत्तरत्र तत्सर्वमन्यत्र  
च योजनीयम् ॥ भंगं च भंगं च मुनिश्च गर्गः प्रोवाच

टीका ।

भंगदः भंगकारकयोगो ज्ञेयः । अपकाशग्रहोदयज्ञानं तु पूर्वार्धेज्ञेयं त-  
द्यथा उदयकालीनस्पष्टरवौ राशयः ४ अंशाः १३ कलाः २० संयोज्य  
यद्वाश्यादिकमुपलभ्यते तद्धूमोदयकालीनमवगंतव्यम् । यतः रविधूमयोस्त-  
त्पारमितांशाद्यंतरं पूर्वार्धे उक्तमिति । अथ च तदेव राश्यादिकं द्वाद-  
शराशितः शोधितं तत् पादोदयकालीनं राश्यादिकं ज्ञेयं तथैव तत्पादो-  
दयकालीनराश्यादिकं षड्.शियुक्तं परिध्युदयकालीनं ज्ञेयम् एवं तत्प-  
रिध्युदयकालीनराश्यादिकं द्वादशराशिशोधितं चापोदयकालीनं ज्ञेयं त-  
च्चापोदयकालीनं अंशाः १६ कलाः ४० एतद्युक्तं ध्वजोदयकालिकं  
राश्यादिकं ज्ञेयमिति । अथ राहुकालसमायोगस्तु “मेपादुक्तमतो राहुवृषा-  
त्कालः क्रमाच्चरेत्” इत्यादि अष्टादशाध्याये व्याख्यास्यामि ॥ ८ ॥ अ-  
पि च प्रकारांतरमाह अनिष्टारख्यमिति । भंगविचारणीयभावेशस्य अनिष्टा-  
ख्यं रश्मिं तद्भावफलं संगुणं तस्यैव भावस्य फलेन कष्टारख्येन संगुणितं  
द्वादशाष्टावशेषं द्वादशभागोर्वरितं फलं पूर्ववत् तद्भावभंगदं समीरितं कथित-  
मिति ॥ ९ ॥ अथास्योक्तभंगस्योत्तरत्र सर्वतो योजनामाह यदित्यर्थेन । अत्र  
यद्यत्फलं प्रोक्तं तत्तत् अथो अनंतरं उत्तरत्र वक्ष्यमाणभावविचारेऽपि अन्यत्र  
कापि भावविचारे योजनीयमिति । अथ स्वोक्तं प्रमाणयति भंगमित्यर्थेन ।

भाषा ।

भावके पष्ट्यंशमें या षोडशांशमें धूम, पान, परिधि, चापध्वज इनांमेंने कोई एक-  
कर्मी उदय होवे तो वो भावका भंगकारक योग जानना ॥ ८ ॥ और प्रकारांतर  
कहते हैं, जिस भावका भंग विचारणा है उनकी अरिष्टरश्मिकू आंही भावके  
इष्टरश्मिकसे गुणन करना, बारहमे भाग लेना शेष राशि जानना, राशिसंग्या-  
तुन्यभावका भंग जानना ॥ ९ ॥ ए जो मैंने भावभंगादिक कलविचार कहा है सो

यद्वन्मुनिपुंगवाहम् ॥ १० ॥ षष्ठ्यंशे च कलांशे च त्रिष्वे-  
कोऽपि यदा न चेत् ॥ अधिमित्रं च मित्रं च भंगभंगः  
प्रकीर्तितः ॥ ११ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोरायामुत्त-  
रभागे लोकयात्रायां भावभंगोपदेशोऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

### टीका ।

गर्गो मुनिः यं यं भंगं भंगमिति वीप्सायां द्विरुक्तिः मामिति शेषः प्रोवाच  
कथितवान् तं तं भंगं हे मुनिपुंगव! मैत्रेय! अहमपि तवोपदिष्टवानित्यन्वयः  
॥ १० ॥ षष्ठ्यंशइति । षष्ठ्यंशे स्पष्टं कलांशे षोडशांशे च त्रिषु शत्रुराशिं  
प्राप्त्यप्रकाशग्रहोदयकालराहुसमायोगेषु त्रिष्वपि योगेषु मध्ये यदा एकोपि  
योगो न चेत् अथ वा तत्राधिमित्रं मित्रं वा लग्नेशस्य अस्ति चेत् भंगभंगः  
भंगस्य रिपुरिः फषष्ठान्यतमोत्पादितराशिजनितस्य भंगो नाशः अपवाद इ-  
त्यर्थः प्रकीर्तितः कथितः इति । एवमुक्तं भवति पूर्वप्रकारेत्पादितराशिः  
लग्नात् द्वादशाष्टरिपुस्थानापन्नोऽपि लग्नेशस्य शत्रुषोडशषष्ठ्यंशेन तथा तत्र  
षोडशांशषष्ठ्यंशयोः अप्रकाशग्रहोदयोऽपि न तथा तत्र षोडशांशषष्ठ्यंशयोः  
राहुकालसमायोगोपि न तर्हि स भावराशिः लग्नात् षष्ठाष्टमद्वादशतमो भा-  
वभंगदोपि उक्तयोगत्रयाभावे भावभंगदो न भवेदिति भावः ॥ ११ ॥ एवं प-  
राशरे होराशास्त्रस्यास्योत्तरार्धके ॥ अध्यायेत्वष्टमे टीका कृतेयं तु यथामति  
॥ १ ॥ गणेशप्रोतये धीराः परोपकृतिहेतुना ॥ शोधनीया भवद्भिः सा प्रार्थयेहं  
पुनः पुनः ॥ २ ॥ सुमुहुः कालशास्त्रेस्मिन् दुर्गमत्वान्मनीषिणः ॥ किमहं मन्द-  
धीस्तत्र गगने मशको यथा ॥ ३ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे श्रीमद्ब-  
ध्यङ्गः न्वयवेदविद्याविद्योतितदशादिङ्मण्डलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण  
विरचितायां सुबोधिनीटीकायामष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

### भाषा ।

उत्तरोत्तर आगे जहां जहां उपयोग होवे वहां देखना. जो जो भंग गर्गमुनिने कहे वो-  
ही भंगोंका लक्षण मैंने कहा ॥ १० ॥ अब पहिले जो भंग कहे हैं उन्नोंका भंग-  
खंडन कहते हैं. जो अमीष्टभावके षष्ठ्यंशमें, या षोडशांशमें, शत्रुराशिमें अप्रकाश  
धूमादिक ग्रहोंका उदयकाल राहुसमायोगे इनोमेंसे कोईभी एक योग न होवे और

आत्मा शरीरं होरा च कल्पं लग्नं च मूर्तयः॥स्वं कुटुंबं  
च दुश्चिक्यं विक्रमं सहजं सहः ॥ १ ॥ पातालं हिवुकं  
वेश्म मित्रबंधूदकं सुखम् ॥ त्रिकोणं प्रतिभा बुद्धिमातृवि-  
द्यासुतास्ततः ॥ २ ॥ व्याधिक्षतारिभंगाश्च क्रोधो लो-

### टीका ।

विद्यानिधिं गणेशं च हृदि ध्यात्वा यथामति ॥ नवमाध्यायके टीकां  
कुर्वेऽज्ञोपकृतावथ ॥ १ ॥ अध्याये नवमेऽस्मिंस्तु मुनिः शिष्यं पराशरः ॥  
विचारे भावखेदानां शशास व्यासतो मुदा ॥ २ ॥ अथास्मिन्नध्याये द्वाद-  
भावविचारसिद्धये तत्तद्भावविचारणीयार्थसूचकान्येव तेषां नामानि कथ-  
यित्वा गृहस्थानादिविचारः क्रियते आत्मेत्यादियावदध्यायसमापनम् ।  
तत्रादौ आत्मेत्यादिसप्तश्लोकपर्यन्तम् द्वादशभावेषु सप्ततिसंख्या कार्या ।  
विचारभावनामभिः सूचयति । अथ लग्नसंज्ञा—आत्मा, शरीरं, होरा, कल्पं,  
लग्नं, मूर्तयः, पद ६ । अत्र मूर्तिशब्दस्य बहुवचनं छंदःसाधकम् । अथ द्वि-  
तीयभावसंज्ञे—स्वं, कुटुंबं चेति द्वे २ । अथ तृतीयभावसंज्ञा—दुश्चिक्यं, वि-  
क्रमं, सहजं, सहः इति चतस्रः ४ । अथ चतुर्थभावसंज्ञा—पातालं, हिवुकं,  
वेश्म, मित्रं, बंधुः, उदकं, सुखं, इति सप्त ७ । अथ पंचमभावसंज्ञा—त्रिको-  
णं, प्रतिभा, बुद्धिः, मात्राभिर्धं, विद्या, सुतः, इति षट् ६ । अथ षष्ठभाव-  
संज्ञा—व्याधिः, क्षतं, अरिः, भंगः, क्रोधः, लोभः, मत्सरः, इति सप्त ७ । अथ  
सप्तमभावसंज्ञा—अत्र भावे कामः, विवाहः, स्त्री, रतिः, दूनं, मदः, अज्ञता, ७।

### भाषा ।

अधिमित्र या मित्र होवे, तो लग्नका पूर्वोक्त भंगका परिहार जानना ॥ ११ ॥  
इति बृहत्पाराशरहोराभाषाटीकायां लोकयात्रावर्णनं नामाऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अब भावगत फलोंका निर्णय कहनेके लिये प्रथम भावके नाम कहते हैं:-  
अथ लग्नके नामः—आत्मा, शरीर, होरा, कल्प, लग्न, मूर्ति. अथ दूसरे भावके  
नामः—स्व, कुटुंब. अब तिसरे भावके नामः—दुश्चिक्य, विक्रम, सहज, सह. अब  
चौथे भावके नामः—पाताल, हिवुक, वेश्म, मित्र, बंधु, उदक, सुख. अथ पंचम  
भावके नामः—त्रिकोण, प्रतिभा, बुद्धि, मात्राभिद, विद्या, सुत. अष्टम भावके नामः—



भोऽथ मत्सरः ॥ कामो विवाहो यात्रा स्त्री रतिर्धूनं मदो-  
ज्ज्ञता ॥ ३ ॥ पराभवो मृतिर्विधो रंध्रायुर्निधनं च्युतिः ॥  
शुभं धर्मस्ततो भाग्यं त्रिकोणं च गुरुर्विभुः ॥ ४ ॥ व्या-  
पारास्पदमेधूरणमानाज्ञा च कर्म खम् ॥ भावाय लाभाय  
तपो रिःफं हानिर्व्ययः स्मृतः ॥ ५ ॥ यात्रायां दशमेनैव

## टीका ।

अथाष्टमभावसंज्ञा—पराभवः, मृतिः, बंधः, रंध्रः, आयुः, निधनं, च्युतिः,  
इति सप्त ७ । अथ नवमभावसंज्ञा—शुभं, धर्मः, भाग्यं, त्रिकोणं, गुरुः, विभुः,  
इति षट् ६ । अथ दशमभावसंज्ञा—व्यापारः, आस्पदं, मेधूरणं, मानः, आ-  
ज्ञा, कर्म, खं, इति सप्त ७ । अथैकादशभावसंज्ञा—भावः, आयः, लाभः, अ-  
यः, तपः, इति पंच ५ । अथ व्ययसंज्ञा—रिःफं, हानिः, व्ययः, इति तिस्रः ३ ।  
एवं सप्तषष्टि ६७ संज्ञानुरूपतावत्संख्या कार्या । अपि च दशमेन यात्रायां  
गमनविषये विचारः १ । सप्तमभावेन निवृत्तिः पुनर्निर्वतनविचारः २ । चतुर्थ-  
लंघनेन वृद्धिविचारश्च ३ । एतत्पुनः संप्रकीर्तितं त्रितयं च संयोज्य एवं ना-  
मानुरूपं सप्ततिः ७० अर्थाः विचारणीयाः कया रीत्या तदाह स्वोच्चमित्र-  
स्ववर्गस्थाः स्वानां उच्चानि पूर्वोक्तानि मित्राणि ग्रहमैत्रविचारोक्तानि स्वव-  
र्गाः ग्रहहोराद्रेष्काणादयः तेषु वर्तमानाः संतो यस्मिन् भावे ग्रहा भविष्यं-  
ति स भावः पुष्टं उक्तसंज्ञानुरूपं पूर्णं फलं दास्यतीत्यव्याहारः । अथ च येषु  
भावेषु नीचारिवर्गगाः नीचानि पूर्वोक्तानि अस्य ग्रहमैत्रविचारोक्ताः तेषां

## भाषा ।

व्याधि, क्षत, अरि, मंग, क्रोध, लोभ, मत्सर. सातवे भावके नामः—काम, विवाह,  
स्त्री, रति, धून, मद, अज्ञता. अष्टम भावके नामः—पराभव, मृति, बंध, रंध्र, आयु,  
निधन, च्युति. नवम भावके नामः—शुभ, धर्म, भाग्य, त्रिकोण, गुरु, विभु. अब  
दसवें भावके नामः—व्यापार, आस्पद, मेधूरण, मान, आज्ञा, कर्म, ख. अब ग्या-  
रहवें भावके नामः—भव, आय, लाभ, अय, तप. अब व्यय भावके नामः—रिःफ,  
हानि, व्यय. ऐसे सडसठ अर्थ भये, और दशम घरसे गमनविचार सप्तम भावसे

निवृत्तिः सप्तमेन तु ॥ वृद्धिश्चतुर्थलग्नेन त्रितयं संप्रकी-  
र्तितम् ॥ ६ ॥ स्वाच्चमित्रस्ववर्गस्था एवमर्थाश्च सप्ततिः ॥  
नीचारिवर्गगाश्चान्यत्पुष्टं चापुष्टमेव च ॥ ७ ॥ रविः श-  
रीरे होरायां स्वे च भ्रातरि वेश्मनि ॥ सुते व्याधौ क्षते  
शत्रौ मृतौ तपसि कर्मणि ॥ ८ ॥ आये व्यये फलं दद्या-

टीका ।

ग्रहोऽपि गच्छन्ति ते स्वनीचवर्गस्थाः स्वशत्रुवर्गस्थाश्च ग्रहाः वर्तन्ते स भावः अ-  
पुष्टं उक्तसंज्ञानुरूपं फलवैगुण्यं दास्यतीति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥  
एवं भावेषु विचारणीयमुक्त्वा सप्तग्रहेष्वेवमेव विचारमाह रविरित्यादिदश-  
श्लोकैः । तत्र रविरितिसपादेन रविविचारमाह । रविः सूर्यः शरीरे देहे  
होरायां लग्नविचारे स्वे द्वितीयभावे भ्रातरि बंधौ वेश्मनि चतुर्थभावे सुते  
पुत्रे व्याधौ रोगे क्षते क्षतविचारे शत्रौ अरौ मृतौ मृत्यौ तपसि तपस्यायां  
कर्मणि । कृत्ये आये लामे व्यये नाशे एवमर्थकभावेषु एवमुक्तफलेषु च फलं  
दद्यादिति ॥ ८ ॥ अथ चंद्रविचारमाह शीतगुरित्यादिसपादेन । विक्रमे  
प्रतापे सुखे कुटुंबे पोष्ये भ्रातरि क्रोधे प्रतिभायां बुद्धिविशेषे शुभे मृतौ  
भाग्ये त्रिकोणे पंचमनवमभावविचारे क्रयविक्रयादिरूपे लामे रिफे च इ-  
त्युक्तफलविचारे चंद्रात् उक्तफलदभावविचारेऽपि शीतगुश्चन्द्रः फलप्रदः ॥ ९ ॥

१ ॥ २ ॥

भाषा ।

पीछे फिस्तकी चौथे घरसे वृद्धि ऐसे ७० अर्थोंका विचार करना ॥ १ ॥ २ ॥  
॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ जो यह मित्र उच्च स्वक्षेत्रगत या पड़वर्गमे होवे तो पूर्वोक्त  
फल सर्व उत्तम देता है । शत्रु नीच शत्रुवर्गादिकका होवे तो अनुभवफल देता  
है ॥ ७ ॥ अब सूर्यका फलविचार कहते हैं । सूर्य शरीरमे लग्नके विचारमें फ-  
ल देता है । दूसरे भावमे भाईके घरमे चौथे घरमें पुत्रके घरमें रोग होवे क्षय  
विचार शत्रुका विचार मृत्युका विचार नवम घरमें तपस्याका दसवें कृत्यका  
लाभ खर्चका यह सब फल देता है ॥ ८ ॥ अब चंद्रमा प्रताप कुटुंब पोष्यवर्ग  
भाई क्रोध बुद्धि विशेष कर्म मृत्यु भाग्य पंचम नवमभावविचार क्रयविक्रयादि वि-

च्छीतगुर्विक्रमे सुखे ॥ कुटुंबे भ्रातरि क्रोधे प्रतिभायां शुभे  
मृतौ ॥ ९ ॥ भाग्ये त्रिकोणे व्यापारे लाभे रिःफे फलप्रदः ॥  
कुजः शरीरे होरायां कल्पविक्रमबंधुषु ॥ १० ॥ सहजे  
च सहे शत्रौ क्रोधलोभे च रंघ्रके ॥ क्रियायामायतौ हानौ  
जये भंगे फलप्रदः ॥ ११ ॥ बुधो मनसि विद्यायां बुद्धौ  
हिबुकवेश्मनि ॥ लोभे शिल्पे च गानादि प्रिये स्वे लाभ-  
रिःफयोः ॥ १२ ॥ गुरुर्यर्धमे च तपसि त्रित्रिकोणे त्रिकोण-  
के ॥ आज्ञायां च सुते हानौ कारागृहनिवेशने ॥ १३ ॥

टीका ।

अथ भौमविचारमाह कुजइतिसार्धेन । कुजो भौमः शरीरे होरायां लभे कल्पे  
शास्त्रविशेषे विक्रमे प्रतापे बंधौ भ्रातरि ॥ १० ॥ सहजे सहोत्पन्ने सहे तृ-  
तीयभावे शत्रौ क्रोधे लोभे रंघ्रे अष्टमभावे क्रियायां कर्मणि आयतौ प्र-  
भावे हानौ नाशे जये उत्कर्षे भंगे घाते इत्युक्तफलविचारे तस्मादुक्तफलभा-  
वविचारे च फलप्रदः ॥ ११ ॥ अथ बुधविचारमाह बुधेति । मनसि वि-  
द्यायां बुधौ हिबुके चतुर्थस्थानविचारे वेश्मनि गृहे लोभे शिल्पे गानादि-  
प्रिये स्वे धने लोभे भावे रिःफे च फलदः स्यात् ॥ १२ ॥ अथ गुरुविचा-  
रमाह गुरुरिति द्वाभ्यां । धर्मे तपसि त्रित्रिकोणे नवमर्क्षे त्रिकोणे पंचमनव-  
मस्थानयोः आज्ञायां सुते हानौ कारागृहनिवेशने अभिशापे प्रमादे व्या-  
धौ स्वे कल्पे मूर्तौ वेश्मनि गृहे विद्यायां बुद्धौ मुखे भावे चतुर्थभावे शां-

भाषा ।

चार लाभ व्यय यह पदार्थको फल देता है ॥ ९ ॥ अव मंगल शरीर लग्न शास्त्र-  
विशेष विचार प्रताप भाई तृतीय भाव शत्रु क्रोध लोभ अष्टम भाव कर्म प्रभाव  
हानि उत्कर्ष घात यह पदार्थको फल देता है ॥ १० ॥ ११ ॥-अव बुध  
मानसिक विचार विद्या चतुर्थभाव ग्रह लाभ शिल्प गानादिक विचार धन  
ग्याहवां भाव व्यय यह पदार्थको फल देता है ॥ १२ ॥ अव गुरु धर्म तप नवम  
भावन पंचम भाव आज्ञा पुत्र हानि कारागृहप्रवेश अभिशाप व्याधि स्वकल्प मूर्ति

अभिशापे तथा व्याधौ स्वे कल्पे मूर्तिवेश्मसु ॥ विद्याबु-  
द्धिसुखे भावे शांत्यादिषु फलप्रदः ॥ १४ ॥ कामान्य-  
स्त्रीविवाहेषु गीतनृत्यप्रियादिषु ॥ सुखे वेश्मनि दुश्चिक्ये  
स्वे कुटुंबे च वेश्मनि ॥ १५ ॥ आज्ञा क्रिया तपो भाग्ये  
लाभायव्ययहानिषु ॥ वदान्यत्वे दयायां च भार्गवः फ-  
लदः सदा ॥ १६ ॥ शनिर्मृतौ व्यये रिःफे दुश्चिक्ये क्ष-  
तचेतसि ॥ सहजे च सहे भावे बंधने फलदो भवेत् ॥ १७ ॥  
कालहोराष्टकाणेशाः क्षेत्रार्कनवभागपाः ॥ सप्तांशत्रिंश-

टीका ।

त्यादिषु शांतिपुष्ट्यादिषु च फलप्रदः ॥ १४ ॥ अथ शुक्रविचारमाह का-  
मेत्यादिद्वाभ्याम् । कामे अन्यस्त्रियां तत्संग इत्यर्थः । विवाहे गीते नृत्ये प्रिये  
सुखे वेश्मनि गृहे दुश्चिक्ये भावे स्वे धने कुटुंबे भावे वेश्मनि भावे आ-  
ज्ञायां क्रियायां तपसि तपस्यायां भाग्ये लाभे भावे आये व्यये हानौ नाशे  
वदान्यत्वे दातृत्वे दयायां भार्गवः शुक्रः सदा फलद इत्यन्वयः ॥ १५ ॥  
॥ १६ ॥ अथ शनिफलमाह शनिरिति । शनिः मृतौ व्यये नाशे रि-  
फे भावे दुश्चिक्ये भावे क्षते चेतसि चित्ते एकवचनं समाहारद्योतकं  
सहजे बंधौ सहे तृतीयभावे बंधने च फलदो भवेदिति एवं विचारस्तत्तद्ग्रहैः  
फलविचारे तथा तत्तद्ग्रहेभ्योपि तत्तद्भावसकाशादवगंतव्यः ॥ १७ ॥ अयो-  
क्तफलविचारः । कालहोरेशाद्यष्टभिर्बलिष्ठपूर्वकैर्ग्रहैः कर्तव्य इत्याह कालेति-

भाषा ।

गृह विद्या चतुर्थभाव शांति पुष्ट्यादि कर्म यह पदार्थोंका फल देता है ॥ १४ ॥  
अब शुक्र काम अन्यस्त्रीसमागम विवाह गायन नृत्य प्रिय सुख गृह तृतीयभाव  
धन द्वितीयभाव चतुर्थभाव आज्ञा क्रिया तप भाग्य लाभ ग्यारहवां भाव व्यय हानि  
दातृत्व दया यह पदार्थोंका फल देता है ॥ १५ ॥ १६ ॥ मृत्यु नाश व्ययभाव  
तृतीयभाव क्षत चित्त सहजभाव बंधु बंधन यह पदार्थोंका फल देता है ॥ १७ ॥  
अब यह पूर्वोक्त फलोंका विचार कहते हैं. काल होरेषा द्रेष्काणेश क्षेत्रादीश इति-

दशेशा होरेशश्चाष्टमो भवेत् ॥ १८ ॥ क्रमादावृत्तितः  
प्रोक्ता बलिष्ठः पूर्वतो यथा ॥ सूर्योदयो ग्रहा लग्नपति-  
श्चावृत्तितः क्रमात् ॥ १९ ॥ इति श्रीमद्वृहत्पाराशर-  
होरायामुत्तरभागे लोकयात्रायां ग्रहभावफलविचारे नव-  
मोऽध्यायः ॥ ९ ॥

## टीका ।

सार्धेन । कालहोरौ होरे विषमेऽर्केन्द्रोः समे राशौ चंद्रतीक्ष्णांश्चोरित्युक्ता त-  
दीशाः दृकाणेशाः दृकाणाः द्रेष्काणाः प्रथमपंचमनवमपानामित्युक्ताः त-  
दीशाः क्षेत्रेशाः स्थानपतयः “ भेशा मंशुबुचंरबृशुमगुशः शोरुः ” इत्युक्ताः  
अनर्कभागपाः स्वतो द्वादशांशा इत्युक्ता द्वादशांशपतयः नवभागपाः अ-  
जमकरतुलाकुलीराद्याः इत्युक्ता अधिपाः सप्तांशेशाः सप्तांशपास्त्वोजगृहे  
गणनीया निजेशतः “ युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकाः ” इत्युक्ताः  
त्रिंशांशेशाः कुजयमजीवज्ञासिताः पंचेंद्रियवसुमुनींद्रियांशानां विषमेषु सम-  
क्षेष्कमेण त्रिंशांशका ज्ञेया इत्युक्ताः होरेशाः होरा लग्नं तस्याधिपाः प्रागु-  
क्ताः एतेषु यो बलिष्ठः फलदः पूर्वं यथाकालहोरादीष्टपतीनां मध्ये बलिष्ठस्य  
प्रथमावृत्त्या फलं ज्ञेयम् । ततस्तदल्पबलस्य तृतीयावृत्त्या फलं ज्ञेयमित्या-  
द्यष्टावृत्तिभिरष्टानां क्रमात्फलकालो ज्ञेय इति दिक् ॥ १८ ॥ अथ प्रकारांतरे-  
णोक्तग्रहफलविचारमाह सूर्यादय इति । अथ वा अन्यरीतिः यथा सूर्यादयः  
सप्तग्रहाः लग्नपतिश्चाष्टमः तेषां मध्ये यो बलिष्ठः स पूर्वावृत्त्या फलद इति  
क्रमादष्टावृत्तितः फलविचारइति ॥ १९ ॥ एवं गणेशसंतुष्ट्यै नवमाध्यायके  
कृता ॥ टीका शिशूपकृतये शोधनीया मनीषिभिः ॥ १ ॥ ॥ इति बृहत्पा-  
राशरहोराशास्त्रे श्रीमद्वध्यङ्गुन्वयवे० श्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनीटीका-  
यां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

## भाषा ।

दशांशेश नवमांशेश सप्तांशेश त्रिंशांशेश होरेश यह क्रमसे गणनाक्रम कक्षा  
एकेकसे आगे आगे बलवान् हैं ॥ १८ ॥ सूर्यादि सात ग्रह अष्टम लग्नपति यह

वक्ष्येहमथ दायोत्थं नृणामायुः परं मुनेः ॥ पैंडयो द्वाद-  
शधाप्रोक्तो ध्रुवरश्मिसमुद्भवौ ॥ १ ॥ अंशकाष्टकवर्गोत्थौ  
प्रत्येकं तु चतुर्विधम् ॥ विषयोक्तौ द्विधा प्रोक्तौ नक्षत्रां-

टीका ।

श्रीगणेशपदे ध्यात्वा दशमाध्यायके मया ॥ विरच्यतेऽथ टीकेयं यथाम-  
ति सुबोधिनी ॥१॥ अथास्मिन्दशमेऽध्याये त्वायुर्दायं विचार्यते ॥ ग्रहाष्टका-  
द्यनेकैस्तु प्रकारैः श्रीपराशरः ॥ २ ॥ अथ श्रीमहर्षिः पराशरः भगवान्  
शिष्याय परमायुः कथयन् पिंडांशकादिद्वात्रिंशद्भेदविचारेणास्मिन् दश-  
माध्याये उपदेष्टुं प्रतिजानीते तत्र तावदादौ तद्भेदान् प्रकाशयति व-  
क्ष्यइत्यादिसार्धद्वयेन । हे मुने मैत्रेय ! दायोत्थं दायः हरणं रश्मि-  
ध्रुवादिना ग्रहेभ्यः उक्तीत्या यद्हरणं स दायः “दायः सोल्लुंठभाषणे ॥ वि-  
भक्तव्यपितृद्रव्ये तथा हरणदानयोः” इतिमेदिनी । दायोत्थं उत्पन्नं दायो-  
त्थं नृणां मनुष्याणां परमायुः परमत्यंतमायुः । अथानंतरमहं वक्ष्ये तवेति  
शेषः तमेव दायं विभजति पैंडयो द्वादशधा पिंडायुः द्वादशप्रकारकः (१२)  
प्रोक्तः ध्रुवरश्मिसमुद्भवौ अंशकाष्टकवर्गोत्थौ च प्रत्येकं तु चतुर्विधौ नाम  
ध्रुवोद्भवः ४ रश्म्युद्भवः ४ अंशोद्भवः ४ अष्टवर्गोद्भवश्च ४ एते चत्वारश्चतु-  
र्विधा इत्यर्थः विषयोक्तौ विषयशब्देन कथितौ नक्षत्रांशकसंभवौ प्रत्येकं द्वि-  
धा प्रोक्तौ नक्षत्रसमुद्भावो द्विप्रकारकः (२) अंशसमुद्भवो द्विप्रकारक इ-

भाषा ।

आठमें जो बलिष्ठ वो प्रथम फल देनेवाला जानना. आठ बखत पुनः पुनः चार-  
वार फलविचार कहना ॥ १९ ॥ ॥ इति वृ०भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अब आयुर्दायविभागका निर्णय कहते हैं. हे मैत्रेय ! अब तुमारेकूँ आयुष्यका  
निर्णय कहता हूँ, इसमें प्रथम पैंडयायुर्दाय कहते हैं. पैंडयायुर्दाय चारह प्रकारका है  
और ध्रुवायु इसका नामांतर निसर्गायु कहते हैं. रश्म्यायु १ इसका नामांतर स्व-  
रांशआयु कहते हैं. अंशायु १ अष्टक वर्गायु १ ऐसे चार भेद हैं. चारोंके चार  
चार भेद हैं. नक्षत्रायु अंशायु १ इसका नामांतर कलाचक्रायु कहते हैं. इनांके दो

शकसंभवो ॥२॥ द्वात्रिंशद्भेदभिन्नं स्यात्परमायुर्नृणामिह ॥  
 अतिघृतिरर्कस्येन्दोस्तत्त्वानि भूमिसुतस्य पंचदश ॥ ३ ॥  
 द्वादश बुधस्य च गुरोस्तिथिः कवेर्मूर्च्छना नखाश्वार्केः ॥  
 परमोच्चे नीचेऽर्धं परेषु भावेषु वा तथा प्रोक्ताः ॥ ४ ॥  
 अनुपातः कर्तव्यस्त्वंतःसंस्थेषु खेटेषु ॥ खखभूमेः खयु-  
 ग्मेन्द्रोः स्वांशाः पूर्ववत् कृतौ च विज्ञेयौ ॥ ५ ॥ कृतिरेको  
 टीका ।

त्यर्थः एवं प्रकारेण नृणामिह परमायुः द्वात्रिंशद्भेदभिन्नं द्वात्रिंशत्संख्याकैर्भे-  
 दैः भिन्नं विभक्तं स्यादिति ॥ १॥२ ॥ अथ पिंडायुर्ध्रुवांकानाह अतिघृतिरि-  
 त्यादिपंचमश्लोकपर्यन्तम् । अर्कस्य रवेः अतिघृतिः १९ इन्द्रोश्चंद्रस्य तत्त्वानि  
 २५ भूमिसुतस्य भौमस्य पंचदश १५ बुधस्य च द्वादश १२ गुरोः तिथिः १५  
 कवेः शुक्रस्य मूर्च्छनाः २१ आर्केः शनेः नखाः २०, एते ध्रुवांकाः रव्यादीनां  
 परमोच्चे ज्ञेयाः नीचे परमनीचे तु अर्धं उक्तध्रुवांकदलं वा इति निश्चयेन  
 परेषु अन्येषु अंतर संस्थेषु खेटेषु नीचोच्चमध्यस्थेषु ग्रहेषु अनुपातः कर्तव्यः  
 उक्तांकाः त्रैराशिकेन ग्राह्या इत्यर्थः एते पूर्ववत्कृतौ पूर्वोक्तावित्यर्थः  
 खखभूमेः १०० शतवर्षायुर्मानप्रकारस्य खयुग्मेन्द्रोः १२० विंशत्यधिकशत-  
 वर्षायुर्मानप्रकारस्य च विज्ञेयौ सप्तग्रहाणामपि पूर्वोक्तायुर्ध्रुवांकाः द्विप्रका-  
 रस्याप्यायुर्मानस्य ज्ञेया इत्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ अथ ध्रुवायुर्दायध्रुवांका-  
 नाह कृतिरिति । रवेः कृतिः २०, चंद्रस्य १ एकः, भौमस्य यमौ २, बुधस्य र-  
 त्नं ९, गुरोः अष्टादश १८, शुक्रस्य नखाः २०, शनेः सैकतानं ५०, एवं

भाषा ।

दो भेद हैं यह सब मिलायके ३२ भेद होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥ अब पिंडायुके ध्रुवांक  
 कहते हैं. सूर्यके १९, चं. २५, मं. १५, बु. १२, गु. १५, शु. २१, शनिके २०,  
 यह ध्रुवांक परमोच्चके जानना. नीचके अर्ध लेना. और त्रैराशिकके भेदसे लेना.  
 यह भेद शतायुका और एकसौं वांस वर्षका आयुष्यका प्रमाण जानना ॥ ३ ॥  
 ॥ ४ ॥ ५ ॥ अब ध्रुवायुर्दायके ध्रुवांक कहते हैं. सूर्यके २०, चं. १, मं. २, बु. ९,

यमौ रत्नमष्टादश नखाः क्रमात् ॥ सैकतानमिनादीनां  
दाये नैसर्गिके स्मृतम् ॥ ६ ॥ षोडश विंशतिरेको नवाष्ट-  
नवपंचविंशतिः क्रमशः ॥ षड्विंशतिस्तथोच्चे नीचे चार्ध  
त्वमेऽथ इतरे वा ॥ ७ ॥ कलीकृतं ग्रहं व्योमखाब्धिने-  
टीका ।

इनादीनां रव्यादीनां नैसर्गिके स्वाभाविकायुर्दाये स्मृतं उक्तं अनुक्रमसंबन्ध-  
त्वादितमेव ध्रुवायुर्दाये ग्राह्यमिति ध्वनितोऽर्थः ॥ ६ ॥ अथ रश्म्यायुर्दाय-  
ध्रुवांकानाह षोडशेति । रवेः षोडश १६, इंदोः २० विंशतिः, भौमस्य एकः  
१, बुधस्य नव ९, गुरोः ८ अष्ट, शुक्रस्य नव ९, शनेः पंचविंशतिः २५, ष-  
ड्विंशतिर्वा २६, इमे तु उच्चे ज्ञेयाः नीचे तु अर्ध उक्तांकार्धाः इतरे नीचोच्च-  
मध्ये तु अनुपातः कर्तव्य इत्यार्थिकं ज्ञेयम् ॥ ७ ॥ एवं ध्रुवांकानुक्त्वा पिंड-  
ध्रुवरश्मिसंज्ञकानां तेषां वर्षमासाद्यायुस्त्पादनप्रकारमाह कलीकृतमितिसा-  
धेन । ग्रहं रव्यादि राश्यादिवर्तमानं कलीकृतं कलारूपं कृत्वा खखाब्धिने-  
त्राश्वशेषितं चतुःशताधिकसहस्रद्वयेन २४०० चतुर्विंशतिसंख्याकांकेनेत्यर्थः  
अवशेषितं तष्टं शतद्वयेन २०० अभिमजेत् भागं गृहीत्वा शेषादवशिष्टात्  
सूर्यादिगुणितात् सूर्यादीनां उक्तत्रिप्रकारान्यतमध्रुवांकविवक्षितायुर्विहितसू-  
र्यादिध्रुवांकैः गुणितात् पुनः शतद्वयेन भागं गृहीत्वा प्रागल्भ्यभागं वर्धयेत्  
गुंज्यादित्यर्थः तानि अब्दानि भवेयुः पुनः शेषं द्वादशगुणितं द्विशतमर्कं  
मासाः स्युः पुनः शेषं त्रिंशद्गुणितं द्विशतमर्कं दिनानि स्युः पुनः शेषं षष्टि-  
गुणितं द्विशतमर्कं घटिकाः पुनः शेषं तथा कृतं पलानि स्युरिति । अथास्यो-

भाषा ।

गु. १८, शु. २०, शनिके ५०, यह सूर्यादिकोंका निसर्गायुर्दायका स्वाभाविका-  
युर्दाय कक्षा ॥ ६ ॥ अब रश्म्यायुर्दायके ध्रुवांक कहते हैं. सूर्य १६, चं. २०,  
मं. १, बु. ९, गु. ८, शु. ९, शनि २५, अथवा २६, यह ध्रुवांक उच्च ग्रहके जा-  
नना. नीच राशिके ग्रह होवे तो अर्ध कहे हैं. दूसरे जो हैं उन्नोंका अनुपात  
करना ॥ ७ ॥ अब ऊपर लिखी हुई तीनों आयुर्दायका वर्षादिक लावनेकी रीति  
कहते हैं. सूर्यको कलात्मक करके उसमें यह अंकका २४०० भाग लेकर



त्रावशेषितम् ॥ शतद्वयेनाभिभजेदब्दमासादयः क्रमात्  
॥८॥ सूर्यादिगुणिताच्छेषादृष्टिं कुर्याद्यथोत्तरम् ॥ स्वोच्च-  
टीका ।

दाहरणम् । रविः १०।४।१४।२२ अयं राश्यादिः अस्य कलाः १८।२५४।२२  
इमाः चतुर्विंशतिशतैः २४०० तष्टाः १४५४।२२ अवशिष्टाः इमाः शतद्वय  
२०० विभाजिताः तल्लब्धांकः ७ शिष्टांकः ५४।२२ अयं पिंडायुस्तरविभुवां-  
कैः १९ गुणितः १०३२।५८ अयं शतद्वयविभाजितः लब्धं ५ एतत् पूर्व-  
लब्धांके नियुक्तं जातं १२ अब्दानि जातानि अवशिष्टांकः ३२।५८ द्वाद-  
शकैर्गुणितो जातः ३९५।३६ शतद्वयविभाजितः लब्धं १ जातोऽयं मासां-  
कः पुनः शेषं १९५।३६ त्रिंशद्गुणिताः ५८६८ शतद्वयविभाजनेन लब्धम्  
२९ जाता दिवसाः पुनः शेषं ६८ षष्टिर्घ्नं ४०८० शतद्वयभागलब्धं २०  
जाता घटिकाः पुनः शेषं ८० षष्टिर्घ्नं ४८०० शतद्वयभागेन लब्धं २४ पला-  
नि एवं पिंडायुर्दाये जातः सूर्यायुर्दायः १२।१।२९।२०।२४ एवंचंद्रादीनां  
ज्ञातव्यः एवं प्रकारेणैव ध्रुवान् रश्म्यायुर्दायो बुध्यात् ॥ ८ ॥ अथ नवांशायु-  
र्दायोत्पादनप्रकारमाह स्वोच्चैत्यादिसपादेकादशश्लोकपर्यन्तम् । ग्रहं रव्यादिं

भाषा ।

| मध्यमपिंडायुश्चक्रमाह. |     |     |     |     |     |    |     | मध्यमध्रुवायुर्नमिसर्गायुश्चक्रम् |     |     |     |     |     |    |     |
|------------------------|-----|-----|-----|-----|-----|----|-----|-----------------------------------|-----|-----|-----|-----|-----|----|-----|
| सु.                    | चं. | मं. | बु. | गु. | शु. | श. | यो. | सु.                               | चं. | मं. | बु. | गु. | शु. | श. | यो. |
| १३                     | १९  | १२  | २   | १७  | ६   | २० | ९३  | १२                                | ७   | ११  | १   | २२  | ८   | ३५ | ९९  |
| १                      | ३   | ९   | ०   | ८   | ७   | ९  | ४   | ५                                 | ७   | २   | ६   | ६   | ५   | ४  | ३   |
| २९                     | १७  | १९  | १७  | ६   | २२  | ०  | २३  | ७                                 | २३  | २६  | १३  | २६  | २०  | १५ | ११  |
| २०                     | ४४  | ४८  | ३८  | ३   | ५५  | ०  | ३१  | १२                                | २   | ३८  | १३  | ९   | २४  | ०  | ३९  |
| २४                     | ३६  | ०   | २४  | ३६  | १३  | ०  | २   | ०                                 | २४  | २४  | ४८  | १८  | ०   | ५४ |     |

दोसोसे भाग लेना, लब्ध जो वर्ष आवे उसको जूदा  
मांडके शेषांकको अपने ध्रुवांकसे गुणन करके दोसोसे  
भाग लेके वर्षादिक फल लेना. पूर्व वर्षमें जोड़ देना सो  
मध्यमायु होवे. इसका उदाहरण टीकामें है, और चक्रमा  
दिखाया है. ये क्रमसे पिंडायु, ध्रुवायु, रश्म्यायु लाना॥८॥

| मसत्तायुर्नामरवरांशायुश्चक्रम्. |     |     |     |     |     |    |     |
|---------------------------------|-----|-----|-----|-----|-----|----|-----|
| सु.                             | चं. | मं. | बु. | गु. | शु. | श. | यो. |
| ११                              | १९  | १२  | १   | १५  | ६   | २३ | ९१  |
| ४                               | ११  | ५   | ६   | ७   | ६   | ८  | १   |
| ५                               | १०  | ९   | १३  | १   | २२  | ३  | ६   |
| ४५                              | ४८  | ५०  | १३  | ४०  | ४०  | ०  | ५९  |
| ३६                              | ०   | २४  | ४८  | ४८  | ४८  | ०  | २४  |

अब नवांशायुर्दाय कहते हैं. स्पष्ट ग्रहको नीचमें हीन करके उसका भुज करके

हीनं ग्रहं ज्ञात्वा कर्कादि च मृगादि च ॥ ९ ॥ गृहीत्वा  
तु भुजं कोटिं कृत्वा लिप्तिकृतं तु तम् ॥ हत्वा नवांशदा-  
येन भजेद्भ्रत्रयलिप्तिभिः ॥ १० ॥ वत्सराद्या भवंत्यते वर्ज-

### टीका ।

विवक्षितं स्वोच्चहीनं स्वर्कायोच्चेन हीनं वर्जितं कृत्वा तत्केन्द्रं भवति तत्कर्का-  
दि कर्कसिंहकन्यातुलावृश्चिकधनुसन्यतमराशिवर्तमानं मृगादि मकरकुम्भी-  
नमेषवृषमिथुनान्यतमराशिवर्तमानं वा ज्ञात्वा तस्य भुजं गृहीत्वा नाम त्रि-  
भोनं कृत्वेत्यर्थः तस्य कोटिं कृत्वा प्राप्तभुजो राशित्रये वर्जयित्वेत्यर्थः तथा-  
भूतं तं तं कोटिं लिप्तीकृतं गणितरीत्या कलास्थाने संपादितं तं नवांशदायेन  
नवांशदायस्तु पंचमूर्छेत्यादिना वक्ष्यमाणः तेन हत्वा गुणयित्वा भ्रत्रयलिप्ति-  
भिः टाबंतलिप्ताशब्दस्य इकारांतत्वमार्षं छंदोभंगमभिया वेति ज्ञेयमराशित्रय-  
लिप्ताभिः ५४०० आभिः भजेत् तेन लब्धांका वत्सराद्या भवंति। एते वत्सरा-  
द्याः प्रागानीतकेन्द्रे मकरादिके मकराद्यन्यतमपद्माशिस्ये सति त्रिघ्ने त्रिगुणिते  
स्वे स्वकीये नवांशदाये वक्ष्यमाणनवांशध्रुवांके वर्जयेदूनयेत्। अथ तस्मिन्केन्द्र-  
कर्कटकादिके कर्काद्यन्यतमराशिस्ये सति तस्मिन् ध्रुवांके अर्धाकृते अर्धावशे-  
पिते युंज्यात् मेलयेत् तेन पृष्ठनवांशायायुर्दायो भवतीति । अथास्योदाहरणम् ।  
रविः १०।४।१४।२२ अरयोच्चं ०।१० अनेन हीनः १।२४।१४।२२ जातमेतद्र-  
विकेंद्रं मकरादि अस्य भुजः २।५।४५।३८ अस्य कोटिः ०।२४।१४।२२ अस्य  
कलाः १४५४।२२ एताः नवांशध्रुवांकेन ५ अनेन गुणिताः ७२७।५० एताः  
भ्रत्रयलिप्ताभिः ५४०० आभिः भाजिताः लब्धं १ एतन्नवांशायायुर्वर्षं अवशि-  
ष्टम् । १७७।५० द्वादशगुणितं २१२६२ एतत् ५४०० आभिर्भाजितं लब्धं  
३ एते मासाः अवशिष्टं ५०६२ एतन्निशत्रम् १५१८६० एतत् उपरिष्टमाज-  
ककलाभिर्मितं लब्धं २८ एते दिवसाः शेषं ६६० षष्टिघ्नं ३९६०० उपरिष्ट-

### भाषा ।

पीछे कोटि करके कला करना पीछे नवांशके ध्रुवांकेसे गुणन करके इसका ५४००  
से भाग लेना, लब्ध आठे घं वर्ष जानना, बाकी जो शेष है उसको बाराने गुणन  
करके इस ५४०० से भाग लेना, लब्ध मास जानना, मसा दिन घटी पल जानना,

येन्मकरादिके ॥ केन्द्रे नवांशदाये स्वे त्रिघ्ने कर्कटकादिके  
॥ ११ ॥ युंज्यादर्धाकृते तस्मिन् प्रक्रमानुगतो मतः ॥  
द्विघ्ने त्वपनयेत्तस्मिन् युज्यादेव दलीकृते ॥ १२ ॥ निक्षि-  
प्याष्टकवर्गं तु राशिचक्रे तु पूर्ववत् ॥ त्रिकोणैकपशुर्द्धि  
टीका ।

भाजकेन भक्तं लब्धं ७ एता घटिकाः शेषं १८०० एतत्षष्टिघ्नं १०८०००  
भाजकेन भक्तं लब्धं २० एतानि पलानि एवं संपादितो वर्षादिसमूहांकः  
११३२८७२० अयं मकरादिकेन्द्रत्वात् मूलध्रुवांकः ५ त्रिगुणितः १५ अ-  
स्मिन्वर्जयित्वा १३८१५२१४० जातोऽयं स्पष्टरविनवांशायुर्दायः एवं चंद्रा-  
दिनवांशायुर्दायो बोध्यः इति ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ अथ प्रक्रमानुगतायुर्दाय-  
मुत्पादयति प्रक्रमेत्यादिसंपादार्थेन । प्रक्रमानुगतो मतः प्रागुक्तनवांशायु-  
र्दाय एव प्रक्रमानुगतसंज्ञकः तत्र विशेषस्तु मकराद्यन्यतमपङ्काशस्थे केन्द्रे  
सति मूलध्रुवांको द्विघ्नः कार्यः न त्रिघ्नः कर्कादिकेन्द्रे सति दलीकृते युंज्या-  
दिति प्राग्वत् अन्यत्सर्वं समानमिति ॥ १२ ॥ अथाष्टकवर्गायुर्दायोत्पादन-  
रीतिमाह निक्षिप्येत्यादिपंचदशश्लोकपर्यंतम् । पूर्ववत् पूर्वं पंचमाध्याये उ-  
क्तवत् राशिचक्रे राशिकुंडलिन्यां अष्टकवर्गं स्थानकरणरूपं निक्षिप्य उद्धृत्य  
त्रिकोणैकपशुर्द्धि त्रिकोणशोधनं एकाधिपत्यशोधनं च पूर्वोक्तरीत्या कृत्वा  
भाषा ।

इसकू मकरादि कर्कादि केंद्र देखके ऋण धन करना.

ध्रुवांकमें कैसा. जो मकरादि केंद्र होवे तो ध्रुवांककू

तीन गुणा करके पूर्व जो लाये वर्षादिक लब्ध उसकू

घटा देना. और कर्कादि केंद्र होवे तो ध्रुवांककू अर्ध करके

जोड देना. सो नवमांशमध्यायु भया ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

| मध्यम अंशायुध्वक्रमः |     |    |     |     |     |    |     |
|----------------------|-----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू.                  | चं. | म. | बु. | गु. | शु. | श. | यो. |
| ३                    | १५  | १८ | ७   | १०  | २५  | ११ | ११६ |
| ८                    | ३   | ७  | ०   | ५   | ६   | ५  | ०   |
| १                    | ०   | १  | २५  | २३  | ४   | २३ | १६  |
| ५२                   | ४४  | ५३ | ५   | ३२  | ७   | २० | ५   |
| ४०                   | ४८  | ५२ | २४  | ०   | ४   | २  | ८   |

अब प्रक्रमानुगतायुर्दाय कहते हैं. पूर्व जो नवांशायुर्दायका प्रकार बताया उतीकू

मकरादि छः राशिमें होवे तो मूल ध्रुवांकको दुगुना करके हीन करना. कर्कादि छः—

राशिमें होवे तो मूल ध्रुवांकको अर्ध करके जोड देना आयुर्दाय भया ॥ १२ ॥

अब अष्टकवर्गायु कहते हैं. प्रथम अष्टकवर्ग सिद्ध करके उसका त्रिकोण शोधन

च कृत्वा तु गुणयेद्गुणैः ॥ १३ ॥ खवन्हिभक्तमब्दाद्याः  
 क्रमाद्भिन्नाष्टवर्गजाः ॥ एवं कृत्वा तु संयोज्य भाप्तमब्दा-  
 दयः स्मृताः ॥ १४ ॥ कृत्वा करणदैरेवं स्वोत्पन्नौ दायसं-  
 जितौ ॥ प्रत्येकं भिन्नदायोत्था एवं त्रिंशद्भिदा मताः ॥ १५ ॥  
 पंच मूर्च्छा सप्त रत्नं दश षोडश वारिधिः ॥ नवांशा

### टीका ।

तेषां भावानां गुणैः प्रथमाध्यायोक्तवर्गणारूपैः पृथक् गुणयेत् तथा प्रायुक्तं  
 सप्तांकगुणकेन च गुणयेत् ततः खवन्हिभक्तं खवन्हिभिः ३० एभिर्भक्तं यत्फलं  
 तत् अब्दरूपं शेषं द्वादशादि गुणितं त्रिंशद्भक्तं मासादि स्यात् एवं क्रमात्  
 भिन्नाष्टवर्गजाः भिन्नाष्टवर्गसमुद्भूताः अब्दाद्या भवन्ति एवं प्रकारेण तान्  
 भिन्नान् कृत्वा विधाय ततः संयोज्य एकीकृत्य भाप्तं सप्तविंशतिभागलब्धं  
 फलं अब्दादयः सामुदायिकाष्टवर्गीयवर्षादयः स्मृताः उक्ता इत्यर्थः । एवं  
 रेषाशोधनायुर्दायवत् करणदैरपि करणात्रिकोणैकाधिपत्यशोधनाद्यायुर्दायं  
 संपादयेदित्यर्थः । एवं स्वोत्पन्नौ स्वयोर्दायसंज्ञितौ भवतः नामरेखोत्पन्नौ  
 रेखाष्टवर्गायुर्दायसंज्ञकः करणोत्पन्नः करणायुर्दायसंज्ञक इत्यर्थः प्रत्येकं प्रति-  
 ग्रहम् भिन्नदायेन उत्पन्नाः त्रिंशद्भिदाः त्रिंशत्प्रकारका मताः तदित्यं पिंडा-  
 युर्दायः भिन्नसप्तग्रहोत्पन्नः सप्तकारकः ७ ध्रुवायुर्दायः भिन्नसप्तग्रहोत्पन्नः  
 सप्तप्रकारकः ७ रश्म्यायुर्दायः भिन्नसप्तग्रहोत्पन्नः सप्तप्रकारकः ७ अंशायुर्दा-  
 यः भिन्नसप्तग्रहोत्पन्नः सप्तप्रकारकः ७ रेखाष्टवर्गोत्थः १ करणाष्टवर्गो-  
 त्थश्चे १ त्वेवं त्रिंशद्भेदाभिन्न इति तात्पर्यम् ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथ

### भाषा ।

करके एकाधिपत्य शोधन करके वो संख्याकू राशिगुणकसे गुणन करके उसकर  
 पिंड त्याना पिंडकू ३० तीससे भाग लेना वर्षादिक भिन्नाष्टक वर्गायु भया अब  
 सामुदायाष्टकायुर्दाय कहते हैं. इसआयुर्दायकी रीति ऊपर बताई है या रीतसूँ ला-  
 ना परंतु विशेष इतना है कि भागके तीसके ठिकाने २७ का देना इसी तरहसे  
 करणायुधी जानना इस रीतिसे यह दशमं तीस ३० भेद बताये हैं सो टीकामें  
 स्पष्ट है ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अब नवांशायुर्दायके ध्रुवांक कहते हैं. इसकू का-

विधितः प्रोक्ता अंत्यात्प्रोक्तास्तु भादितः ॥ १६ ॥ रवीन्द्रा-  
राहिजीवार्किबुधसेतुसिताः क्रमात् ॥ आग्नेयाद्भगणेशाः

टीका ।

नवांशायुर्दायं ध्रुवांकथनसहितमाह पंचेति । अथ नवांशायुर्दाये ध्रु-  
वांकाः रवेः पंच ५, इंदोः मूर्छा २१, भौमस्य सप्त ७, बुधस्य रत्नं ९, गुरोः  
दश १०, शुक्रस्य षोडश १६, शनेः वारिधिः ४, एते ध्रुवांकाः । नवांशग-  
णनाप्रकारमाह । अंत्यात् प्राप्तनवांशतो नवमनवांशमारभ्य विलोमतः आ-  
दितः प्राप्तनवांशमारभ्य नवमनवांशांतं अनुलोमतः नवांशविधितः पूर्वार्धो-  
क्तविधिना नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशक इत्यादि एकोनपंचाश-  
दध्याये क्रमो ज्ञेयः ॥ १६ ॥ अथ नक्षत्रायुर्दायमाह रवीत्यादि एकोनविंश-  
तिश्लोकपर्यन्तम् । आग्नेयात् अग्नेः इदमाग्नेयं अग्निदेवताकं “अग्निकलिभ्यां  
ढक्वक्तव्यः” इति ढक् । कृत्तिकाख्यं तस्मात् भगणेशाः मानां नक्षत्राणां  
गणः सप्तविंशतिसंख्याकसमुदायः तस्य ईशाः क्रमात्पतयः स्युः के ते “र-  
वीन्द्राराहिजीवार्किबुधकेतुसिताः” एतदुक्तं भवति रविः कृत्तिकापतिः इंदु  
रोहिणीपतिः आरो भौमो मृगपतिरिति क्रमेण पूर्वापर्यन्तम् क्रमात् पतयः ते  
एव रव्यादयः पुनर्द्वितीयपर्याये उत्तरादिनवनक्षत्रेषु पतयो गणनीयाः त एव  
पुनरुत्तराषाढादिभरण्यंतं नव नक्षत्रपतयो भवंति स्वामिनः जात्येकवचनं  
तेषां स्वामिनां क्रमादायुषो वत्सराः वर्षाणि षट् रवेः, आशा दश चंद्रस्य, सप्त  
भौमस्य, धृतयोऽष्टादश राहोः, नृपाः षोडश गुरोः, एकोनविंशतिः शनेः, अ-  
त्यष्टिः सप्तदश बुधस्य, सप्त केतोः, नखा विंशतिः शुक्रस्येति वर्षाणि । अ-

भाषा ।

ल चक्रभी कहते हैं. सूर्यका ध्रुवांक ५, चंद्रका २१, मं. ७, बु. ९, गु. १०, शुक्र  
१६, शनि ४, यह सूर्यादि ग्रहोके ध्रुवांक हैं ॥ १६ ॥ अब नक्षत्रायुर्दाय कहते हैं.  
उसमें ग्रहका क्रम नक्षत्रक्रम वर्षक्रम कहते हैं. कृत्तिका नक्षत्र आदि लेके तीन  
वखत भ्रमणसे सूर्यादि वर्षसहितग्रह जानना. सूर्य ६, चंद्र १०, मं. ७, राहु  
९८, गुरु १६, शनि १९, बुध १७, केतु ७, शुक्र २०, यह ध्रुव उच्चके कहै  
नीचका ग्रह होवे तो पूर्वोक्त ध्रुवांका अर्ध लेना बाकीकी राशिमें होवे तो अनुपात-

स्युः स्वामिनो वत्सराः क्रमात् ॥ १७ ॥ षडाशाः सप्त  
 धृतयो नृपा एकोनविंशतिः ॥ अत्याष्टिः सप्त च नखा उच्चे  
 नीचेऽर्धमुच्यते ॥ १८ ॥ अस्मिंस्तु हरणं तस्मात्पूर्वस्मिं-  
 स्तु द्वयं हितम् ॥ अनयोः पापदायादावन्ते स्युरपमृत्यवः  
 ॥ १९ ॥ द्वात्रिंशद्भेदभिन्नोयमायुषो निर्णयः कृतः ॥  
 लोकयात्रापरिज्ञानहेतवे दायनिर्णयः ॥ २० ॥ भावानां  
 संप्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुंगव ॥ आयुश्च परमं हत्वा

टीका ।

स्मिन्नक्षत्रेशसमूहे उच्चे सति ज्ञेयानि अस्मिन्नक्षत्रेशसमूहे नीचे सति तु तस्मा-  
 त्पूर्वोक्तांकजातात् अर्धं हरणं नाश उच्यते नाशः कार्य इत्यर्थः । अथोक्तेषु  
 सप्तस्वप्यायुर्दायेषु शुभाशुभत्वं विभजते । पूर्वस्मिन् पेंडचश्रुवरश्म्यंशाष्टकवर्गा-  
 णामायुर्दाये द्वयं शुभाशुभग्रहजनितफलद्वयं हितम् शुभं ज्ञेयम् । अनयोः  
 नवांशनक्षत्रायुर्दाययोस्तु पापदायादावन्ते पापानां रविक्षीणेंद्रुभौमसपापबुध-  
 शनिराहुकेतूनां यो दायः आयुर्दायः तस्य आदौ आयुर्दायारंभे अन्ते  
 आयुर्दायावसाने अपमृत्यवो ज्ञेयाः अर्थात् पूर्णचंद्रबुधगुरुशुक्रायुर्दायाः  
 शुभे इति विशेषो ज्ञेयः इति ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ अस्यायुर्दायकय-  
 नस्य हेतुमाह द्वात्रिंशदिति । अयं द्वात्रिंशद्भेदभिन्नः आयुषो निर्णयः  
 मया कृतः कृतः यतः अयमिति शेषः दायनिर्णयः लोकयात्रापरिज्ञान-  
 हेतवे लोकयात्रायाः परिज्ञानस्य हेतवे हेत्वर्थं भवतीति ॥ २० ॥ एवं  
 सप्तविधमायुर्दायमुक्त्वा अष्टमं भावायुर्दायमाह भावानामिति सार्धेन । हे

भाषा ।

से लेना उसमें पाप ग्रहोंका जो दाय है उसके आदि अंतमें अपमृत्यु देनेवाला  
 है, और शुभ ग्रहोंका दाय शुभ फल देता है ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ अब आयु-  
 र्दाय कहनेका हेतु कहते हैं, मैंने लोकके सुख दुःख जाननेके हेतुसे यह वचीस  
 भेदसे आयुष्यका निर्णय कहा ॥ २० ॥ ऐसा वचीस भेदयुक्त जो मात प्रकारका  
 आयुर्दाय सो कहके आगे आठवां भावायुर्दाय कहते हैं, हे भैत्रेय ! भावोंका आयु-

स्वेन स्वेन बलेन च ॥ २१ ॥ विभजेद्वलयोगेन भावानां  
दाय एव सः ॥ अथ वांशक्षदायेन वर्गेशानां बलेन तु  
॥ २२ ॥ स्थानाद्यैश्च समुद्भूतः षड्विधो दाय उच्यते  
॥ २३ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे आयुर्दायिक-  
थने दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

## टीका ।

मुनिपुंगव ! मैत्रेय ! भावानामायुर्दायं संप्रवक्ष्यामि कथयिष्यामि तं शृणु-  
ष्व परमं आयुः प्रागुक्तसप्तान्यतमविवक्षितं आयुर्गृहीत्वा स्वेन स्वेन विव-  
क्षितभावबलेन हत्वा बलयोगेन सर्वभावबलसमूहेन विभजेत् तेन यल्लब्धं  
वर्षादि स एव भावानां दायो ज्ञेय इति ॥ २१ ॥ अथ प्रकारान्तरेण भावायु-  
र्दायमाह अथवेत्यर्थेन । अथवेति प्रकारान्तरसूचनम् । नवांशक्रक्षदायेन पर-  
मायुर्दायं हत्वा वर्गेशानां षड्वर्गपतीनां बलेन भजेत् लब्धं वर्षादि भावा-  
युर्दाय इति ॥ २२ ॥ एवमवांतरभेदेन द्वात्रिंशद्विधोऽपि मुख्यतया षड्विध  
एवेत्याह स्थानाद्यैरित्यर्थेन । स्थानाद्यैः स्थानशब्देन भावो गृह्यते भावदा-  
यः १, नक्षत्रदायः २, नवांशदायः ३, अष्टकवर्गदायः ४, अंशदायः ५, पै-  
ण्ड्यदायश्चेति षट्प्रकारैः समुद्भूतः दायः अनेकविधोऽपि षड्विध एव षट्प्र-  
कारान्तरगत एवेति उच्यते कथ्यते इति ॥ २३ ॥ एवं दशमोऽध्याये कृता  
टीका यथामति ॥ श्रीकृष्णप्रीतये सा तु संशोध्यैव मनीषिभिः ॥ १ ॥  
इति श्रीमद्बृ०शास्त्रे श्रीमद्द्व्यङ्मन्वयवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्योतितदशदि-  
ङ्मंडलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितसुबो०टी०आयुर्दायिकथने  
दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

## भाषा ।

दाय कहता हूँ. पूर्वोक्त सात आयुष्यमेंसे कोईभी येक आयुर्दाय लेके अपने अपने  
भावबलसे गुणन करके सर्व भावबलसमूहसे भाग लेना लब्ध जो वर्षादि आवे वो  
आयुर्दाय जानना । अब प्रकारान्तरसे भावायुर्दाय कहते हैं. नवांशायायुर्दायसे परमा-  
युष्यकं गुणन करके षड्वर्ग पतियोंके बलसे भाग लेना लब्ध वर्षादि भावायु

आराकीं वक्रिणौ मृत्युश्चान्योन्यभवनस्थितौ ॥ वेश्म-  
षण्मृत्युरिःफस्थाः क्षीणेन्दूत्पत्तिपाष्टपाः ॥ १ ॥ अष्टमस्था  
ग्रहाः सर्वे पापदृष्टियुतास्तु वा ॥ भौममंदर्क्षगाश्चेत्तु शुभ-  
दृष्टिविवर्जिताः ॥ २ ॥ केन्द्रत्रिकोणे च शुभाश्च पापाः षष्ठे

## टीका ।

अथैकादशकेऽध्याये ऋसावृद्धिविधिं मुनिः ॥ उक्तायुर्दायविषये तद्योगा-  
द्याह विस्तरात् ॥ १ ॥ अथ भगवान् पाराशरः एकादशाऽध्याये प्रायुक्तायुर्हानि-  
तद्वृद्धिमारकयोगायुर्दायादिविषयानुपदिशति तत्रादौ मारकयोगमाह आरे-  
त्यादिश्लोकद्वयेन । आराकीं भौमशनी वक्रिणौ संतौ अन्योन्यभवनस्थिताः  
अन्योन्ययोः परस्परयोः भवनवर्तमानौ चेन्मृत्युः मृत्युकारकयोगो ज्ञेयः ।  
क्षीणेन्दूत्पत्तिपाष्टपाः क्षीणेन्दुः कृष्णदशम्यादिशुक्लपंचम्यंतं वर्तमानश्चंद्रः,  
उत्पत्तिपः उत्पत्तेर्जन्मलग्नस्याधिपतिः, अष्टपो लग्नादष्टमभावेशश्च, एते त्रयः,  
वेश्मषण्मृत्युरिःफस्थाः लग्नाच्चतुर्थषष्ठाष्टमद्वादशस्थानगताः मृत्युकारकाः ।  
वा अथवा अष्टमस्थाः सर्वेऽपि मृत्युकारकाः । वा सर्वे ग्रहास्तु भौममंदर्क्षगा  
मेपवृश्चिकमकरकुंभसंस्थाः शुभदृष्टिविवर्जिताः शुभग्रहदृष्टिरहिताः संतः पा-  
पदृष्टियुताः स्युस्तदाऽपि मारकयोगो ज्ञेयः इति ॥ १ ॥ २ ॥ अथायुर्योगमाह  
केन्द्रेति । शुभाः शुभग्रहाः केन्द्रत्रिकोणे ४।७।१०।५।९ स्थाने वर्तमानाः

## भाषा ।

जानना ॥ २२ ॥ ऐसा स्थानादिक क्रमसे छः प्रकारका आयुर्दायभेद कहा ॥ २३ ॥  
इति श्रीवृ० भाषाटी० दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अब मृत्युकारक योग कहते हैं. मंगल शनी वक्री होवे, परस्पर स्थानमें बैठे होवे, तो  
मृत्युकारक योग जानना. क्षीण चंद्र, जन्मलग्नपति, अष्टमभावेश यह तीनों ग्रह लग्न-  
से ४।६।८।१२ स्थानोंमें होवे तो मृत्युकारक योग जानना अथवा अष्टम घरमें सब  
मृत्युकारक जानना, अथवा सब ग्रह मेप वृश्चिक मकर कुंभराशियोंमें बैठे होवे और  
शुभ ग्रहकी दृष्टि न होवे पापदृष्टि होवे तो मारकयोग जानना ॥ १ ॥ २ ॥ अब आयु-  
र्दाय योग कहते हैं. शुभ ग्रह केन्द्रत्रिकोणमें होवे तो १०८ वर्षका आयुष्य, पापग्रह



तृतीये न च मृत्युसंस्थाः ॥ अष्टोत्तरं जीवति वर्षमायुर्नरो  
गुणाढ्यो नवतिः सुशीलः ॥ ३ ॥ लग्ने गुरौ दैत्यगुरौ च-  
तुर्थे बुधे सुते षष्ठगते च सूर्ये ॥ स्थानं च शत्रोश्च मृतिं  
च हित्वा त्वन्ये स्थिताश्चेन्नवतिश्च षट् च ॥ ४ ॥ सुखा-  
दिकेंद्रेषु गुरुः स्थितश्चेत्तत्पंचमे ज्ञे तु भृगौ तु षष्ठे ॥ षडु-  
त्तरा सप्ततिरष्टयुक्ता त्वशीतिरेकोत्तरतः प्रदिष्टा ॥ ५ ॥

### टीका ।

अथवा पापाः पापग्रहा षष्ठे तृतीये भावे स्थिताः तदा मृत्युसंस्थाः अष्टमस्थाः  
केपि ग्रहा न चेत् नरः सः सुशीलः सुस्वभावः गुणाढ्यः सुगुणसंपन्नः सन्  
क्रमेण अष्टोत्तरं वर्षम् जात्येकवचनं क्रियाविशेषणं वा प्रथमयोगे नवतिः १०  
द्वितीययोगे क्रमाजीवति इति ॥ ३ ॥ अथ पुनर्योगांतरमाह लग्नेति । लग्ने  
गुरौ सति चतुर्थे दैत्यगुरौ सति सुते पंचमभावे बुधे सति षष्ठगते सूर्ये च सति  
नवतिः नवति १० वर्षाणि आयुः स्यात् अन्ये गुरुशुक्रबुधराविरहिताः चंद्र-  
भौमशनय इत्यर्थः शत्रोः स्थानं स्वशत्रुक्षेत्रं मृतिमष्टमभावं च हित्वा अन्य-  
स्थानवर्तिनश्चेत् तत् १६ आयुर्मानंबोध्यम् ॥ ४ ॥ अथ गुरुबुधशुक्रयोगा-  
युर्मानमाह सुखादीति । सुखादिकेंद्रेषु चतुर्थसप्तमदशमभावेषु लग्नव्यति-  
रिक्तोष्वित्यर्थः लग्नस्थगुरुर्योगफलस्य पूर्वश्लोके कथितत्वादितीभावः गुरुः  
स्थितश्चेत्तर्हि तस्मात्पंचमगो बुधः तस्माद्गुरोः षष्ठो भृगुश्च यदि स्यात्तर्हि  
क्रमात् चतुर्थकेन्द्रस्थगुरोः षडुत्तरासप्ततिः षट्सप्ततिः ७६ आयुर्मानं तथा

### भाषा ।

छठे तीसरे होवे आठवेंमें कोई न होवे तो १० वर्षका आयुष्य जानना और सु-  
शील सुस्वभाव गुणसंपन्न होवे ॥ ३ ॥ और लग्नमें गुरु, चौथे घरमें शुक्र, पांचवें  
घरमें बुध, छठे घरमें सूर्य, होवे तो १० वर्षका आयुर्मान जानना और चंद्र,  
मंगल, शनि, यह तीन ग्रह अपनी अपनी शत्रुराशिकू और अष्टम भावकू छोड़के  
बाकीके कोईभी स्थानमें होवे तो १६ वर्षका आयुष्य जानना ॥ ४ ॥ अथवा ल-  
ग्नसे चौथे घरमें गुरु होवे, गुरुसे पांचवे घरमें बुध, छठे घरमें शुक्र होवे तो ७६  
वर्षका आयुष्य जानना, अथवा लग्नसे सातवें घरमें गुरु होवे, गुरुसे ५ बुध, ६

केन्द्रादिस्थाः शतं दद्युर्नवाष्टादींश्च दिग्गुणान् ॥ मिश्रं  
संयुज्य दलिता अनुपातेन वत्सराः ॥ ६ ॥ शत्रुनीचस-  
मांशेषु दिग्विधेषु न चेत् स्थिताः ॥ शतायुर्योगहीनास्तु

टीका ।

सप्तमकेन्द्रस्थगुरोः उक्तस्थानगतयोर्बुधशुक्रयोः सतोः अष्टयुक्ता अशीतिः  
आयुर्मानं तथा दशमकेन्द्रस्थगुरोः उक्तस्थानस्थबुधशुक्रयोगे एकोत्तरतः अ-  
शीतिः एकाशीति ८१ रित्यर्थः आयुर्माने संख्या प्रदिष्टेति ॥ ५ ॥ केन्द्रादी-  
तिश्लोकद्वयेन पुनर्योगांतरमाह । केन्द्रादिस्थाः सर्वे ग्रहाः केन्द्रादिस्थाः के-  
द्राणि आदीनि येषां तानि पणफराणि आपोक्लिमानि च तेषु स्थिताश्चेत्  
क्रमात् शतं १०० नवदिग्गुणान् ९० अष्टौ दिग्गुणान् ८० आयुर्ददति ।  
ननु स्थानत्रये स्थानद्वये च ग्रहाणां मिश्रीभावे कियत्परिमाणकमायुरितिवे-  
दाह । मिश्रं संयुज्य योगद्वयमिश्रणे दलं अनुपातेन अर्थात् योगत्रयमिश्रणे  
त्रयं संयुज्य अनुपातेन तृतीयांशायुर्दायमानं बोध्यं एवं दशयोगजन्यमायु-  
र्मानं कथितं तत्र विशेषविचारमाह शश्वितिह्याभ्याम् । दिग्विधेषु दशप्रका-  
रेषु ते दश प्रकारास्तु तृतीयश्लोके १०८।९० द्विविधाः, चतुर्थश्लोके ९०।९६  
द्विविधाः, पंचमश्लोके ७६।८८।८१ त्रिविधाः षष्ठश्लोके केन्द्रपणफरापोक्लिम-  
योगोद्भवाः १००।९०।८० एतेषु दशविधेषु ग्रहाः शत्रुनीचसमांशेषु शत्रुक्षे-  
त्रनीचस्थानोदासीनक्षेत्राणां ये अंशा नवमांशास्तेषु न स्थिता न वर्तमाना-  
श्चेदुक्तदशविधायुर्मानं उक्तत्रयनवांशे वर्तमानाः चेदंगो ज्ञातव्य इति । अथ

भाषा ।

शुक्र, होवे तो ८८ वर्षका आयुष्य जानना. अथवा लग्नसे दसवें गुरु होवे, गुरु  
से ५ वें बुध और ६ शुक्र होवे तो ८९ वर्षका आयुष्य जानना. ॥ ५ ॥ अब  
केन्द्रादि आयुष्य कहते हैं. सब ग्रह केन्द्रस्थानमें होवे तो सौ वर्ष १०० का आयुष्य,  
सब ग्रह पणफरमें होवे तो ९० वर्षका आयुष्य, सब ग्रह आपोक्लिममें होवे तो ८०  
वर्षका आयुष्य जानना और दोनों स्थानोंमें ग्रह होवे तो दोनोंका योग करके  
अर्ध भाग लेना. तीनों स्थानमें ग्रह हों तो तीनोंका योग करके तृतीयांश आ-  
युर्मान जानना. और शत्रु नीच तथा नवांशादि सब तरहसे दशाविध जो कथा

सर्वे प्रोक्ताः कलौयुगे ॥ ७ ॥ दायानां हरणं वक्ष्ये शृणुष्व  
मुनिपुंगव ॥ आयुर्दाये तु हरणं षड्विधं संप्रकीर्त्यते ॥ ८ ॥  
व्ययादिहरणं पूर्वमस्तारिहरणे तथा ॥ क्रूरोदयस्थहरणं  
चंद्रयुक्तमस्तथा ॥ ९ ॥ पापो व्ययस्थो हरति सर्वदायं

### टीका ।

कलौ आयुर्वधिमाह । सर्वे नराः कलौ युगे शतायुर्योगहीनाः शतवर्षपरि-  
मितायुर्योगादल्पायुषो ज्ञेया इति ॥ ६ ॥ ७ ॥ अथोक्तदायहरणं वक्तुं प्रति-  
जानीते दायानामित्यर्थेन । हे मुनिपुंगव मैत्रेय ! दायानां पूर्वकथितानां  
षड्विधानामपि हरणं न्हासं वक्ष्ये तच्छृणुष्वेत्यन्वयः तदेवाह आयुरित्यादि-  
सार्धनवमश्लोकपर्यंतम् । अस्मिन्नायुर्दाये हरणं न्हासस्तुषड्विधं वक्ष्यमाणं  
षट्प्रकारकं संप्रकीर्त्यते कथ्यते व्ययादिहरणं व्ययादिसप्तमानं वामचारेण व-  
क्ष्यमाणरीत्या हरणं पूर्वं प्रथमम् १ अस्तारिहरणे अस्तगतग्रहहरणं २ अरिक्षे-  
त्रस्थग्रहहरणं ३ क्रूरोदयस्थहरणं लग्नगतपापहरणमित्यर्थः ४ चंद्रयुक्तमोग्रह-  
हरणं सचंद्रराहुहरणं ५ व्ययस्थः पापस्तु हे द्विजोत्तम ! सर्वदायं हरति ६ एवं ष-  
ड्विधं भवति ॥ ८ ॥ ९ ॥ अथ प्रथमप्रकारोक्तव्ययादिहरणप्रकारमाह पापो व्यय-  
स्थ इत्यादिपादनैकादशश्लोकपर्यंतम् । पापः पापग्रहः व्ययस्थः द्वादशस्थः  
सर्वदायं हे द्विजोत्तम ! हरति नाशयति अथेति येऽवशिष्टा लामादयः पंच  
तत्र कर्तव्यविशेषसूचना तदेवाह लामादिसंस्थिताः एकादशभावादिपंच-  
भावपर्यन्तं वर्तमानाः ग्रहाः वामतः विलोमतः क्रमेण द्वित्रिचतुःपंचषडंशो-  
नं आयुः कुर्वन्ति एतदुक्तं भवति लामस्थो ग्रहः द्व्यंशोनमायुर्हरति

### भाषा ।

योगायु नहीं बनै तब गुणितायु जानना ॥ ६ ॥ ७ ॥ अब पूर्वोक्त जो आयुष्य दि-  
खाया है उसमें हानि कितनी करना सो कहते हैं. उसके छ भेद हैं. उसमें पहिला  
हानिका पहिला भेद बारहवें घरसे सातवे घरतक वाम मार्गसे १ अस्तगत ग्रहका  
हरण २ शत्रुक्षेत्रगत ग्रहका हरण ३ क्रूरोदयस्थ ग्रहका हरण ४ चंद्रसहित राहु-  
का हरण ५ बारहवें घरका पापग्रहका हरण ६ ऐसे छ भेद हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ अब आयु-  
ष्य कितना हरण करता है सो कहते हैं. बारहवे घरमें पापग्रह होवे तो संपूर्ण आ-

द्विजोत्तम ॥ अथ द्वित्रिचतुःपंचषडंशोनं क्रमादमी॥१०॥

लाभादिसंस्थिताः खेटा वामतः प्रक्रियां शृणु ॥ हरन्ति

टीका ।

अर्थात् अर्धमवशेषयतीत्यर्थः तथा दशमस्थो ग्रहः तृतीयांशोनमायुः करो-  
ति तथा नवमस्थो ग्रहः चतुर्थांशोनमवशेषयति तथाष्टमभावस्थः पंचमांशो-  
नमवशेषयति तथा सप्तमभावस्थः षडंशोनमवशेषयति इति बोध्यम् । एवं  
वामतः विलोमतः लाभभावात् उक्तां प्रक्रियां शृणु जानीहीत्यर्थः । इयं प्र-  
क्रिया पापग्रहविषय एव । शुभग्रहविषये तु सौम्या शुभग्रहास्तु प्रोक्तार्थ उ-  
क्तार्थ मितसंख्यांशमायुर्हरन्ति । अथायुर्दायहान्युदाहरणम् । अंशायुश्चकार्थ-  
हानिः रविः एकादशस्थाने वर्तमानः अत एव प्राप्तमायुः १३।८।१।५२।४०  
अर्धहानिः ६।१०।०।५६।२० पुनः भौमो व्ययस्थाने स्थितः अतः स सर्वायु-  
हानिकरः अत एव भौमस्यायुः १८।७।१।५३।५२ अत्र च भौमस्यायुरभावः  
०।०।०।०।० शनिर्दशमस्थानस्थः अतस्तस्यायुः ११।५।२३।२० तस्य तृती-  
यांशश्च ३।९।२।७।४७ अयं यथागतायुष ऊनीकृतश्चेत् ७।७।२।५।३३ एवं जा-  
तम् परं गुरुबुधभृगवादीनां अशुभग्रहाः संयुक्ताः अतोऽर्धहानिसंस्कारः चंद्रो  
नवमस्थः अतस्तस्य प्राप्तमायुः १९।३।०।४।४८ अस्याष्टमांशः २।४।२६।२०।  
३६ अयं यथागतायुषो हीनः कृतश्चेदुर्वारितं १६।१०।४।२४।१२ इदं चंद्रायुः  
स्पष्टं एवं पिंडाद्यायुर्हानिसंस्कारो बोद्धव्यः ॥१०॥ अथ भावसंधिगतग्रहायुर्द-

भाषा ।

युप्यका हरण करता है, ग्यारहवें घरमें ग्रह होवे तो अर्ध आयुप्य हरण करता है  
दशवें घरमें ग्रह होवे तो आयुप्यका तृतीय भाग हरण करता है. नव घरमें ग्रह हो-  
वे वो आयुप्यका चतुर्थांश हरण करता है. आठवें घर-

में ग्रह होवे वो आयुप्यका पांचवां भाग हरण करता  
है, ७ वें घरमें ग्रह होवे तो आयुप्यका छठा अंश हरण  
करता है यह पापग्रहकी रीति कही शुभग्रह होवे तो  
उक्त संख्या आयुप्यका अर्ध भाग हरण करते हैं और

| स्पष्टांशायुश्चक्रम्. |    |     |    |    |    |      |    |     |  |
|-----------------------|----|-----|----|----|----|------|----|-----|--|
| गु                    | च  | मं. | बु | शु | शु | ग्र. | ल. | या. |  |
| १                     | १६ | ०   | ३  | ५  | १७ | ७    | १  | ५५  |  |
| १०                    | १० | ०   | १  | २  | ९  | ७    | ५  | ८   |  |
| ०                     | ४  | ०   | १४ | २६ | २  | २५   | ७  | ८   |  |
| ५६                    | ७४ | ०   | ३४ | ४६ | ३  | ३३   | १५ | ३७  |  |
| २०                    | १२ | ०   | ४२ | ०  | ३२ | ०    | ३६ | ३७  |  |

लभका आयुप्य त्यागनेकी रीति आगे अठरहवे श्लोकमें कहेंगे ॥ १० ॥ अब संधि-

सौम्याः प्रोक्तार्थं लग्नद्वादशसंधिषु ॥ ११ ॥ पापश्चेत्सकलं  
हन्ति शुभो दलमथोत्तरम् ॥ लग्नाद्वादशसंधौ च ग्रहान्  
पापान्विवर्जयेत् ॥ १२ ॥ राश्यभावे तु भागादीन् दाय-  
घ्नान् षष्टिभाजितान् ॥ दाये द्विघ्ने तु सौम्यस्य राशिरेको  
दलं यदि ॥ १३ ॥ अधिकेनापहत्तत्तु क्रमाद्राशिं विना

टीका ।

रणमाह लग्नेतिसपादार्धेन । अथेति विषयांतरं उत्तरे । अनंतरोक्तायुर्विषयेऽपि  
पापः पापग्रहश्चेत्सकलं वक्ष्यमाणपरिमितं हरति शुभश्चेद्वलमर्थं हरतीति ज्ञे-  
यम् ॥ ११ ॥ अथास्य प्रक्रियामाह लग्नादित्यादिचतुर्दशश्लोकपर्यंतम् । ल-  
ग्नान्नादाभ्य द्वादशसंधौ जात्येकवचनं संधिषु पापान्वर्तमानपापग्रहान् विव-  
र्जयेत् त्यजेत् सौम्यग्रहेष्वप्येवमेव कुर्यात् शेषान् षष्टिभाजितान् कृत्वा लब्धं  
हरसंज्ञं फलं ज्ञेयं अयं विचारो राशिसत्त्वे एव, राश्यभावे तु पापशुभयोः कृ-  
तिभेदः तदित्यं पापस्य राश्यभावे भागान् अंशादीन् दायघ्नांस्ततद्ग्रहोक्त-  
दायगुणितान् कृत्वा षष्टिभाजितांश्च कृत्वा लब्धमंशादि यत् तत्संधौ विव-  
र्जयेत् ततोऽवशिष्टं आयुर्हरणफलं स्यात् शुभग्रहस्य राश्यभावे तु दावे द्वि-  
निघ्ने दायं द्विगुणितं कृत्वा तेन दायान् भागान् भागकलाविकलाः संगुण्य  
षष्ठ्य विभज्य लब्धमंशादि संधौ विवर्जयेत् शिष्टं आयुर्हरणफलं स्यात् त-  
त्रैकत्रराशिर्वा एकत्र दलं वा संधौ आनीतफले वा स्याद्यदि तर्हि अधिके  
न्यूनमपहत्तवर्जितं कृतं आयुर्हरणफलं भवति एवं क्रमात् राशिं विना कृतं  
राशिव्यतिरिक्तविषये कृतं केवलदायगुणनेन पापस्य दायद्विगुणया सौम्य-  
स्य च ये लब्धांकाः ते अपचये आयुर्हरणे समाः वर्षाणि बोध्यानि ॥ १२ ॥

भाषा ।

गत ग्रहोंका आयुर्हरण भेद कहते हैं। पापग्रह होवे तो जो मान लिखा है उतना  
हरण करते हैं शुभग्रह होवे तो अर्थ हानि करते हैं ॥ ११ ॥ लग्नसे लेके बारह  
संधितक पापग्रह या शुभग्रह होवे उन्नोंके अंशादिकोंकू अपने अपने दाय वर्षसे  
गुणन करके साठसे भाग लेके जो लब्ध अंशादिक आवे वो संधिमें कमी करके  
जो शेष रहे सो आयुष्यका हरण फल भया इसमें जो और विशेष कृति है सो टी-

कृतम् ॥ दायद्विगुणया सौम्यो लब्धा वाऽपचये समाः  
॥ १४ ॥ बहवश्चेद्वली हन्ति समाश्चेत्प्रथमो मतः ॥ अंशकं  
ग्रहयोगे च द्वयोः पापे हरत्युत ॥ १५ ॥ सौम्योपि पाप-  
वर्गे च स्थितो रिःफादिषट्सु चेत् ॥ त्रिषु भावगतानां च  
पापानां करणं स्मृतम् ॥ १६ ॥ कुटुंबभरणं चापि दुश्चित्तं

टीका ।

१३ ॥ १४ ॥ अथात्रानेकग्रहयोगे किं कार्यमित्यत्राह बहव इत्यर्थेन । एतदु-  
क्तभावसंधिषु एकग्रहयोगे उक्तं अथात्र बहवो ग्रहाश्चेत्तर्हि बली अधिकबल-  
वान् ग्रहः हन्ति आयुर्हारको भवति अथात्र समाः सर्वे समबलिनश्चेत्तत्र प्रथ-  
मो ख्याद्यन्यतमः क्रमप्राप्तः प्रथमगणनीयो ग्रहो हरति हारकः स्यादिति ।  
अथ ग्रहद्वययोगे विशेषमाह अंशकमित्यर्थेन । अंशकं एतत् उक्तायुर्हरणं  
अंशकायुर्दायविषयकं अथ प्राग्बहुयोगे व्ययस्थानुक्त्वा अत्र द्विग्रहयोगे स-  
त्याह द्वयोः शुभाशुभयोः योगे समागमे तत्रस्थः पाप एव आयुर्हरति न शुभ  
इति ज्ञेयं उत अपि इति शुभहरणं कचिद्वक्ष्यमाणस्थले स्यादिति ध्वनिः  
॥ १५ ॥ अथ शुभद्वययोगे विशेषमाह सौम्य इति । सौम्योऽपि शुभग्रहद्वय-  
योगे सौम्यः शुभः सन्नपि पापवर्गे स्थितश्चेत् रिःफादिषट्सु व्ययादिषट्स्था-  
नेषु आयुर्हारको भवति एवं भावगतानां व्ययादिषट्भाववर्तमानानां पापानां  
रविक्षीणेन्दुभौमसपापबुधशनीनां पंचानां मध्ये त्रिषु रविभौमशनिष्वेव हरणं  
स्मृतं उक्तं सर्वेष्विति भावः । अथात्र व्ययादिषट्भावेषु पापानां करणं वक्ष्य-  
माणफलानां उत्पादनमपि स्मृतमिति ॥ १६ ॥ तदेवाह कुटुंबेति । तथा ना-

भाषा ।

कार्मे स्पष्ट है ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ यह संधिगत ग्रह एकका विधि पहिले कहा  
अब जो संधिमें बहुत ग्रहोंका समागम होवे तो जो बलवान् होवे वो हरण करे  
और दो ग्रह होवे तो पापग्रह आयुष्य हरण करे शुभग्रह नहीं करे ॥ १५ ॥ शुभ-  
ग्रह दोका योग होवे तो जो पापवर्गमें होवे वारहवें घर आदि छः घरमें होवे तो  
आयुष्यका हारक होता है और पूर्वोक्त १२।११।१०।९।८।७।६ घरमें रवि मंगल  
शनिका हरण कहा है ॥ १६ ॥ अब पूर्व जैसी आयुष्यहरणकी बात कही वैसी

लाभमेव च ॥ मेधां च प्रतिभां शांतिं मंदक्रोधं करि-  
ष्यति ॥१७॥ अस्तंगतानां सर्वेषां दलं दायः स्मृतस्तदा॥  
राशिसंख्यासमाश्वाब्दा लग्नेऽब्जे बलवत्तरम् ॥ १८ ॥  
अंशान् लिप्ताहतान् कृत्वा खखाक्षिभ्यां समाहृताः ॥ शे-  
टीका ।

म व्ययादिवर्तमानः पापो भवेच्चैव यथा आयुर्हरणमुक्तं तथैव कुटुंबभरणादी-  
नां षण्णां करणं स्यात् तदित्यं पापो व्ययस्थश्चेत् कुटुंबभरणं करणं नाम कु-  
टुंबभरणकर्तास्यादित्यर्थः । एवमग्रे सर्वत्र पापो लाभस्थश्चेद्बुद्धिं तथा सः  
दशमस्थश्चेत् लाभं करिष्यति तथा नवमस्थः मेधां धारणावतीं बुद्धिं प्रतिभां  
प्रत्यक्षज्ञानजनकबुद्धिं करिष्यति तथा सः अष्टमस्थः शांतिं तथा सः सप्तम-  
स्थः मंदक्रोधं अल्पक्रोधं करिष्यतीति करणं बोध्यम् ॥ १७ ॥ अथास्तंगत-  
ग्रहाणां दायहरणमाह अस्तमित्यर्थेन । सर्वेषां चंद्रादिशुभपापानां अस्तंग-  
तानां सतां तदा दायः प्राप्तायुर्भागः दलं अर्धं अवशिष्टः स्मृत उक्त इति । अथ  
लग्नायुर्दायमाह राशीत्यादिसार्धेन । लग्नायुर्दायेऽस्मिन् लग्ने लग्नस्थाने अजे  
चंद्रे बलवत्तरे सति राशिसंख्यासमाः राश्यंकपरिमितवर्षाणि ब्राह्माणि यदि  
च लग्ने बलहीनचंद्रः स्यात् वा लग्ने चंद्रो न स्याच्चेत्तदा तु अंशान् लग्नराश्यंकं  
त्यक्त्वा अंशांकान् लिप्ताहतान् लिप्ताभिः षष्टिपरिमितांकैः हतान् गुणितान्  
कृत्वा खखाक्षिभ्यां शतद्वयेन समाहृताः भाजिताः संतः लब्धाः वर्तमाना-  
ब्दयोजने राश्यंकमेलने सति समाः स्युः । एवं बलवत्तरचंद्रयुतलग्ने निर्वलचं-  
द्रयुतलग्ने चंद्ररहितलग्ने च सति लग्नायुर्वर्षाणि कथयित्वा प्रकारत्रयेऽपि मासा-  
द्यानयनमाह शेषाः अब्दानयनानंतरमवशिष्टांकान् द्वादशगुणितान् द्विश-

भाषा ।

करणकी बात कहते हैं. पापग्रह १२ घरमें होवे तो कुटुंबका पोषण कर्ता होवे.  
पापग्रह ११ घरमें होवे तो दुश्चित्त करे. पापग्रह १० वे घरमें होवे तो लाभ करेगा.  
पापग्रह ९ वें घरमें होवे तो धारणावती बुद्धि ज्ञानबुद्धिकूं देवे. पापग्रह ८ वें घर-  
में होवे तो शांति देवे. ७ वें घरमें होवे तो थोड़ा क्रोध करे ॥ १७ ॥ अथ लग्नायु-  
र्दाय कहते हैं. लग्नस्थ चंद्र बलवान् होवे तो वो राशिसमान वर्ष लेना. अथवा

षा मासादयः प्रोक्ता वर्तमानाब्दयोजने ॥ १९॥ क्रूरेक्रूरो-  
दयघ्नं तमष्टोत्तरशतैर्हृतम् ॥ लब्धं चापनयेद्दाये स्वे तथा  
परमायुषि ॥ २० ॥ स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च लब्धस्यार्धं  
विवर्जयेत् ॥ मित्रेऽधिसुहृदि प्रोक्तं पादोनेनापनायनम्  
॥ २१ ॥ भावेष्वेवं विधिः प्रोक्तो वर्गाणामधिपेषु च ॥

### टीका ।

तमक्तान् कृत्वा लब्धफलं मासाः एवं शेषं त्रिंशद्गुणनेन षष्टिगुणनेन च द्वि-  
शतभागलब्धं क्रमाद्दिनघटीपलादिरूपं स्यात् । अथ लग्नायुर्दाहरणम् । ल-  
ग्नम् ०।६।३।४२ अत्र राशिं विहायांशान् कलीकृत्य जातम् ३६३।४२ इदं  
शतद्वयम् २०० विभाजितं सलब्धं वर्षं १ शेषं १६३।४२ इदं द्वादशभिर्गु-  
णितं सज्जातं १९६४।२४ इदं शतद्वय २०० विभाजितं सलब्धं ९ मा-  
साः शेषं १६४।२४ इदं त्रिंशद्भिर्गुणितं सलब्धं ४९३२ इदं शतद्वय २००  
विभाजितं सलब्धं २४ दिवसाः शेषं १३२ इदं षष्टि ६० घ्नं सत् ७९२०  
जातं तच्छतद्वयविभाजितं विधाय लब्धं ३९ एता घटयः शेषम् १२० इदं  
षष्टि ६० घ्नं कृत्वा जातं ७२०० एतच्छतद्वय २०० विभाजितं कृत्वा लब्धं  
३६ एतानि पलानि स्युः एवं च लग्नायुर्वर्षादि १।९।२४।१९।३६ एतद्वर्षा-  
दिमध्ये लग्नराश्यंकसंख्यां योजयेत् । अत्र तु लग्नराश्यंकसंख्यां योज्य जातं  
१।९।२४।१९।३६ एवं जातमिति सुधीभिरधिगंतव्यम् ॥ १८ ॥ १९ ॥ अथ  
लग्ने क्रूरग्रहसमागमे उक्तायुर्हानिसंस्कारमाह क्रूरे इत्यादिद्वाविंशतिश्लोकप-  
र्यंतम् । क्रूरे पापग्रहे लग्नस्थे सति तमंशादिरूपं भावं क्रूरोदयघ्नम् क्रूरोदयेन  
क्रूरोदयवर्तमाननवांशराशिपरिमितेनांकेन घ्नं गुणितं कृत्वा अष्टोत्तरशतैः  
हृतं १०८ एतैः विभाजितं तेन यलब्धं वर्षादि तत् स्वे दाये लग्नदाये तथा

### भाषा ।

लग्नमें चंद्र बलहीन होवे या चंद्र न होवे तो लग्नके अंशोंकूँ षष्टिगुणित करके दो सौ  
२०० से भाग लेके लब्ध वर्षादिक जानना ॥ १८ ॥ १९ ॥ लग्नमें पापग्रह होवे  
तो लग्नके अंशादिरूप भावकूँ पापग्रहके वर्तमान नवांशराशितुल्य अंकसे गुणन  
करके १०८ से भाग लेना, जो वर्षादि लब्ध आवे वो लग्नदायमेंसे निकालना, सो



तिष्ठंतौ शुभपापौ चेत्पापोदयविधिः स्मृतः ॥ २२ ॥ कू-  
रेऽष्टमेष्टमांशेन भावस्याप्यनुपाततः ॥ लग्नाधिपेतराष्टांशं  
पापो हरति मृत्युगः ॥ २३ ॥ बहवश्चेद्वली सौम्यपापेष्वेवं  
टीका ।

परमायुषि परमायुर्दाये च अपनयेत् वर्जयेत् । एवं कृते स्पष्टदायः स्यात् ।  
अथ च स्वोच्चे कूरे स्वोच्चभूतलग्ने वर्तमाने सति स्वमूलत्रिकोणभूतलग्ने च  
वर्तमाने सति तु लग्नस्यार्थं प्रागुक्तरीत्या नयनेन यल्लब्धं तस्यार्थं स्वे तथा  
परमायुषि च वर्जयेत् । तथा कूरे मित्रे मित्रक्षेत्रे भूतलग्ने वा अधिसुहृदि अधि-  
सुहृक्षेत्रभूतलग्ने वर्तमाने सति तु पादोनेन प्रागुक्तरीत्या लग्नं चतुर्थांश-  
न्यूनं कृत्वा शेषेण अपनायनं वर्जनं कुर्यादिति प्रोक्तं आचार्यैरिति शेषः ।  
एवं विधिः हरणप्रकारः भावेषु लग्नेषु वर्तमानकूरहरणप्रकारः तथा वर्गाणां  
पण्णामपि कूरेषु अधिपेषु सत्सु लग्ने कूराभावेऽपि अयं हरणसंस्कारः कथितः ।  
ननु शुभपापग्रहद्वययुतलग्ने किमिति चेदाह शुभपापौ च लग्ने तिष्ठंतौ व-  
र्तमानौ चेत् पापोदयविधिरेव कर्तव्यः न शुभस्येति । ननु लग्नस्थकूराधिक्ये  
सति चेद्बहवश्चेद्वली हंतीति अनुवृत्तो न्यायो ग्राह्य इति ॥ २० ॥ २१ ॥  
॥ २२ ॥ अथाष्टमभावे केंद्रभावेषु वा पापयोगे तथा शुभपापमिश्रयोगे च  
हरणविधिमाह कूर इत्यादिचतुर्विंशतिश्लोकपर्यंतम् । अष्टमेष्टमभावे प्राग्वल-  
्नस्याभावस्य भावायुषोऽनुपाततः त्रैराशिकेन संपादिताष्टमांशेन हरणं  
कुर्यात् । तत्र विशेषस्तु मृत्युगोऽष्टमस्थः पापः लग्नाधिपेतराष्टांशम् लग्नेशायु-  
भापा ।

स्पष्ट आयुर्दाय होवे. लग्नमें पापग्रह अपने उच्चराशिका होवे तो या मूलत्रिकोणका  
होवे तो पूर्वोक्त रीतिसे जो लग्नांक है उसका अर्ध करके परमायुष्यमें कमी करना  
और जो वो पापग्रह मित्रराशिका अधिमित्रका होवे तो पूर्वोक्त रीतिप्रमाणसे लग्न  
चतुर्थांश न्यून करके शेष आयुष्य जानना. यह पापग्रहोंका हरणप्रकार कदा  
अब पापग्रह शुभग्रहयुक्त लग्न होवे तो पापग्रहका विधि करना. पापग्रह बहुत  
होवे तो बलवान् ग्रहसे पूर्वोक्त विधि करना ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ आठवें भा-  
वमें पापग्रह होवे तो लग्नपतिविना दूसरेका आयुष्यका अष्टमांश हरण करताहै

विधिः स्मृतः ॥ तयोर्दायांतरं दायः केन्द्रस्य च विधीयते  
॥ २४ ॥ सेन्दौ राहौ दशा राहोरानीता मूलदायवत् ॥  
चंद्रायुः पिंडतः शोध्या तद्राहुकरणं स्मृतम् ॥ २५ ॥ अंश-  
दायक्रमेणैव तमसोऽब्दाः समीरिताः ॥ तस्मिन्सचंद्रे त-

टीका ।

दायव्यतिरिक्त्यायुर्दायाष्टमांशं हरतीति ॥ २३ ॥ तत्र बहवः पापाश्चेद्वली  
बलाधिको ह्येति । अथ च तत्र सौम्यपापेषु सत्सु तयोर्दायांतरं सौम्यपापयोः  
दायद्वयस्यांतरं विवरं कृत्वा दायः स्यात् एवं विधिः स्मृतः एवमेव केन्द्रस्य  
पापसहितस्य पापसौम्ययुतस्य च प्रकारो विधीयते संपाद्यत इति ॥ २४ ॥  
अथ सचंद्रराह्यायुर्दायमाह सेन्दावित्यादिसार्धेन । सेन्दौ चंद्रयुते राहौ स-  
ति मूलदायवत् प्रागुक्त्यायुर्दायवत् दशा आनीता सा पिंडीकृता चंद्रायुः-  
पिंडतः चंद्रायुषः पिंडं गृहीत्वा तस्माच्छोध्या वर्जनीया अवशिष्टं राहुकरणं  
स्मृतं तेन करणेन अंशदायक्रमेणैव प्रागुक्तांशायुर्दायरीत्या एव तमसो  
राहोऽब्दाः आयुर्वर्षाणि समीरिताः कथिताः ॥ २५ ॥ अथ लग्नगतसचं-  
द्रराह्यायुर्दायमाह तस्मिन्नितिसार्धेन । तस्मिंलग्ने सचंद्रे चंद्रयुते राहौ सति  
तल्लग्नभावसाधनतः तच्च तल्लग्नं च तस्य भावायुर्दायवत् साधनं कृत्वा त-  
त्तद्वृष्टितं तस्य तस्य राहोश्चंद्रस्य च दृष्ट्या गुणयित्वा पष्ट्याप्तं पष्टि ६० भा-  
गलब्धं धनशोधने धनकरणे प्रागुक्तवत् मकरादौ कर्कादौ कल्पनीयमिति ।

भाषा ।

॥ २३ ॥ वहां बहुत पापी होवे तो जो बलवान् पापी होंवे वो आयुष्य हरण  
करे अथवा पाप शुभ दोनों होवे तो दोनों ग्रहोंका आयुष्यका अंतर करके जो  
रहे वो आयुष्य जानना, ऐसा केन्द्रस्थानमेंभी शुभ पापाधिक ग्रहोंका पूर्वोक्तवत्  
फल जानना ॥ २४ ॥ अब सचंद्र राहुका आयुर्दायविचार कहते हैं, चंद्रयुक्त राहु  
होवे तो पहिले सरीखी दशा लायके चंद्रायुष्यका पिंड करके उसमें शोधन करके  
जो शेष सो राहुका करण कक्षा वो करणसे अंशायुक्रमसे राहुके वर्षादि काणा ॥ २५ ॥  
अब लग्नगत सचंद्र राहुका आयुर्दाय कहते हैं, लग्नमें सचंद्रगह होवे तो लग्नमा-  
वसरीखा आयुर्दाय साधन करके राहुदृष्टाने और चंद्रदृष्टीसे गुणन करके माठसे

लघ्नभावसाधनतस्ततः ॥२६॥ तत्तदृष्टिहतं कृत्वा षष्ठ्याप्तं  
धनशोधने ॥ सोदये च सराब्धिदावेवं न्यायः समीरितः  
॥ २७ ॥ स्थानवृद्धिः क्षयः कार्या द्रेष्काणक्षं सराशिकम् ॥  
अस्तंगतानामर्थं स्याद्विना भृगुसुतं शनिम् ॥ २८ ॥ त-  
योर्वेदांशहीनं स्याद्व्यंशोनं शत्रुगस्य तु ॥ अंगारकं वर्ज-  
यित्वा शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः ॥ २९ ॥ सुहृद्वर्गगतानां तु तद्वलं

टीका ।

एवं करणं कदा सराब्धिदौ राहुयुतचंद्रे सोदये जन्मलग्नसहिते सति न्यायो  
रितिः समीरितः कथित इति ॥ २६ ॥ २७ ॥ अथ द्रेष्काणवशात्स्थानवृद्धि-  
क्षयाबाह स्थानेतिअर्थेन । द्रेष्काणक्षं सराशिकं राशिना समानं सराशिकं  
एकराशिकमित्यर्थः । एवं भूतं द्रेष्काणक्षं द्रेष्काणराशिश्चेदेतदुक्तं भवति लग्नं  
स्वद्रेष्काणे वर्तमानं चेत् भावस्थानफलस्य वृद्धिः स्थानवृद्धिः कार्या । अर्थात्  
लग्नं स्वातिरिक्तान्यद्रेष्काणवर्ति चेत् स्थानस्य क्षयः कार्यः अत्र स्थानवृद्धि-  
क्षयो आयुर्विषयकौ ज्ञेयौ ॥ २८ ॥ अथास्तंगतग्रहायुर्दायहानिमाह ॥ अ-  
स्तमिति सपादार्थेन । अस्तंगतानां ग्रहाणां प्राचीनातायुर्दायस्य अर्थं स्याद-  
र्थं ग्राह्यम् तत्र विशेषस्तु विना भृगुसुतं शनिं शुक्रशनिव्यतिरेकेण अथत-  
योस्तंगतयोः सतोः वेदांशहीनं चतुर्थांशोनं स्यादिति ॥ २९ ॥ अथ श-

भाषा ।

भाग लेना लब्ध आवे सो मकरादि होवे तो धन करना कर्कादि होवे तो ऋण क-  
रना ॥ २६ ॥ २७ ॥ अब द्रेष्काणयोगसे वृद्धि क्षय कहते हैं. स्थानकी और द्रे-  
ष्काणकी राशि एक होवे तो भावस्थानफलकी वृद्धि जाननी भिन्न होवे तो क्षय जा-  
नना. अस्तंगत ग्रहोंका जो आयुर्दाय होवे उसका अर्थ लेना परंतु शुक्र शनी जो  
अस्तंगत होवे तो चतुर्थांश न्यून करना ॥ २८ ॥ शत्रुक्षेत्रगत जो ग्रह हैं उसमें  
मंगलविना दूसरे ग्रहोंका आयुर्दायका तीसरा अंश न्यून करता है. शत्रुक्षेत्रगत प्र-  
होंका चतुर्थांश कमी करना ऐसा कया है, परंतु मित्रवर्गका ग्रह होवे तो चतुर्थांश-  
का अर्थ कर्मा करना ॥ २९ ॥ ऐसा छ प्रकारसे आयुष्यका हरण विधि कया सो

हरति स्वकम् ॥ एवं भावेषु सर्वेषु षड्विवं हरणं नहि ॥ ३० ॥  
हरणं नैव कर्तव्यमंशदायेऽष्टवर्गजे ॥ स्वोच्चे च त्रिगुणे  
प्रोक्तं स्ववर्गे द्विगुणं तथा ॥ ३१ ॥ अधिमित्रगृहे सार्धं  
त्र्यंशं मित्रगृहे युतम् ॥ अरावध्यादिभावे च त्र्यंशखंड-

## टीका ।

शुद्धक्षेत्रगतग्रहायुर्हानिमाह त्र्यंशेति पादद्वयेन । शत्रुगस्य शत्रुक्षेत्रवर्तिनः  
अंगारकं भौमं वर्जयित्वा भौमव्यतिरेकेणेत्यर्थः । अन्यो ग्रहः स्वायुर्दायं त्र्यं-  
शानं कुर्यात् । अथ शत्रुक्षेत्रगतानामपि सुहृद्द्वर्गगतानां सतां विशेषमाह  
शश्विति सपादार्धेन । शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः यत्प्राप्तं त्र्यंशोनमिति स्वकमायुः  
तद्वलं त्र्यंशार्धमित्यर्थः तेषां सुहृद्द्वर्गगतानां शत्रुक्षेत्रगतत्वेऽपि मित्रवर्गसंब-  
धेनेत्यर्थः त्र्यंशार्धं हरति नश्यतीत्यर्थः न त्र्यंशमिति । एवं पदप्रकारकं ग्रहा-  
युर्हरणमुक्त्वैतद्भावेऽपि नेत्याह एवमित्यर्थेन । एवमुक्तपदप्रकारकं हरणं  
भावेषु लग्नादिषु नहि नास्तीत्यर्थः किंतु ग्रहाणामेवेति भावः ॥ ३० ॥ एव-  
मेव अष्टवर्गजेश्चायुषि मित्रादीनां वृद्धिः शश्वदीनां हरणं चाह हरणमि-  
त्यादित्रयस्त्रिंशच्छ्लोकपर्यन्तम् । अष्टवर्गजे अष्टवर्गसमुद्भवे अंशदाये हरणं  
न्यासो न कर्तव्यं न कार्यं तत्र तु योग एव कार्यः तदेवाह । स्वोच्चे उच्चस्थे  
ग्रहे त्रिगुणं प्रोक्तं प्राप्तदायः त्रिगुणः कर्तव्यः स्ववर्गे स्वकीयवर्गस्थे सति  
स्वराशस्थे सति द्विगुणं कार्यं तथा अधिमित्रगृहे वर्तमानस्य ग्रहस्यायुः  
सार्धं अर्धेन सहितं कार्यं तथा मित्रगृहे स्थितस्य त्र्यंशयुतम् प्राप्तनदाये त्र्यं-  
शयुक्तं कार्यम् । एवं योगमुक्त्वाऽत्रापि हरणमाह अरो अरिक्षेत्रगे अध्यादिभावे  
अधिशत्रुगृहे च स्थितस्य प्राप्तायुर्त्र्यंशखंडविवर्जितम् स्वतृतीयांशोनं कर्तव्यम्

## भाषा ।

ग्रहोंका जानना भावोंका नहीं ॥ ३० ॥ अष्टवर्गोत्पन्न जो अंशदाय है उसका हर-  
ण नहीं करना, योग करना, उच्चका ग्रह होवे तो प्राप्त आयुष्यकृं त्रिगुणित करना,  
स्वराशिका होवे तो द्विगुणित करना, अधिमित्रका होवे तो अर्ध अधिक करना,  
मित्रक्षेत्रका होवे तो तृतीयांशयुक्त करना, शत्रुक्षेत्रका होवे वा अधिशत्रुका होवे तो

विवर्जितम् ॥ ३२ ॥ अष्टवर्गोत्थदायेषु प्रोक्तोऽयं विधिरं-  
जसा ॥ भावदायेषु सर्वेषु प्रोक्तोऽयं विधिरुत्तमः ॥ ३३ ॥  
दायगस्य तु सर्वस्य सहगस्य दलं भवेत् ॥ सुतधर्मगयो-  
र्यंशं पादं मृतिसुखस्थयोः ॥ ३४ ॥ सप्तांशं सप्तमस्थस्य  
प्रक्रिया प्रोच्यतेऽधुना ॥ अंशान्परस्परहृताञ्छेदेनैव वि-

## टीका ।

अयं विधिः अंजसा उत्तमप्रकारेणेत्यर्थः अष्टवर्गोत्थदायेषु अष्टवर्गसमुद्भ-  
वायुर्दायेषु प्रोक्तः अयमेव विधिः सर्वेष्वपि भावदायेषु उत्तमः प्रोक्तः इति  
॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ अथ मुक्तदाय एव दशासंज्ञको ज्ञेयस्तत्रांतर्दशाभा-  
गमाह दायगस्येत्यादिसपादचतुस्त्रिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । सर्वस्य दायगस्य दायं  
गमयतीति तस्य दायपतेरित्यर्थः सर्वदायसंबंधि दलं अर्थं सहगस्य स-  
हवर्तमानस्य भवेत् सहगोऽर्धविभागी भवतीत्यर्थः । तथा दायपतेः सुतधर्म-  
गयोः पंचमनवमस्थयोः ग्रहयोः सर्वदायसंबंधकं त्र्यंशं तृतीयांशमितो भागो  
भवति एवं मृतिसुखस्थयोः अष्टमचतुर्थस्थयोः सर्वदायसंबंधि पादं चतुर्थां-  
शदशाभागो भवति तथा सप्तमस्थस्य सर्वदायसंबंधि सप्तांशं सप्तमांशांस्तर्द-  
शाभवतीति ॥ ३४ ॥ अथोक्तांतर्दशानयनप्रकारमाह । प्रक्रियासाधनरीतिः  
प्रोच्यते कथ्यते अंशान् तत्तत्स्थानोक्तान् परस्परहतान् कृत्वा वामतो गुणने-  
न अग्रिमांकः सर्वांशभागग्रहणे सामुदायिकः सिध्यति तं तेन तेनांशांकेन

## भाषा ।

तृतीयांश कमी करना, यहविधी अष्टवर्गोत्पन्न आयुर्दायमें जानना और सर्वभा-  
वायुर्दायमेंभी जानना ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ अब अंतर्दशा भाव कहते हैं, आ-  
युर्दायका जो अधिपति हैं उसका जो दाय है उसका अर्थ भाग दायपतिके साथ  
जो रहनेवाला ग्रह है वो लेता है और दायपतिसे पांचवे नवमें जो ग्रह हैं वे सर्व  
दायका तृतीयांश लेते हैं और सप्तमस्थ जो ग्रह हैं वो सर्व दायका सातवा अंश  
लेता है ॥ ३४ ॥ अब अंतर्दशा लानेका प्रकार कहते हैं, यहां अंश छेद और

( १६४ )

बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागै-

भाजितम् ॥ ३५ ॥ तत्तदंशविभक्तं च स्वस्य स्वस्य समं  
भवेत् ॥ नीचार्धपक्षे सर्वत्र विधिरेष विधीयते ॥ ३६ ॥

टीका ।

विभज्याप्तं तत्तदंशस्य पृथग्गुणकच्छेदो भवति सप्तांशभागहरणे मूलदायस्य  
गुणकः तथा सर्वांशच्छेदसमूहे सर्वेषामप्यंशानां भाजको ज्ञेयः एवं तत्तदंश-  
गुणकेन संगुण्य सर्वांशगुणकसमुदायेन विभज्याप्तं तदंशदायफलमुत्पद्यते  
इति तात्पर्यम् । एष एव विधिः सर्वत्र नीचार्धपक्षे नीचाद्यर्धानयनविषये वि-  
धीयत इति । अथांतरदशोदाहरणम् । अथ दशापतिश्चंद्रः ततः सकाशाच्छ्रमस्य  
त्रिकोणस्थितत्वात्पंचमस्थानस्थितत्वेन तृतीयांशमोक्तत्वं लग्नस्य सुस्पष्टतरं  
जातं शुक्रभौमयोश्चंद्रात्सुखस्थानस्थितत्वाच्चतुर्थांशमोक्तत्वं अथोपरिष्ठादुक्त-  
ग्रहाणां स्थितिप्रकारं तावद्विशदयामः । एते ग्रहाः परस्परं छेदहताः कृताश्चे-  
ज्जायमाना अंशसंख्या ४८।१६।१२।१२ इति एते मूलदायस्य गुणकांकाः  
संजाताः एते एकीकृताः संतः जायमानसंख्या ८८ इति एषा संख्या मूलद-  
शांशकभागहरा भवति मूलदशांकाश्च १६।१०।४।२४।१२ स्वांशसंख्यया ४८  
इत्यनेन गुणयित्वा समुदिता संख्या च ८०८।७।१।२१। ३६ इयं संख्या भा-  
गहरेण ८८ इत्यनेन विभाज्य जाता ९।२।७।५।२।२३ इदं चंद्रमध्ये चन्द्रान्त-  
रम् । मूलदशा १६।१०।४।२४।१२ लग्नांशेन १६ गुणिता जायमानसंख्या  
२६९।६।१०।२।७।१२ इमां संख्यां भागहरेण ८८ संख्यांकेन विभज्य लब्धं  
३।०।२२।३।७।१ इदं चंद्रमध्ये लग्नांतरम् । मूलदशा १६।१०।४।२४।१२ इयं  
भृग्वंशेन १२ इत्यनेन भौमांशेन १२ इत्यनेन च गुणिता सती जाता संख्या  
२०२।१।२२।५।०।२४ इयं भागहरेण ८८ संख्यांकेन विभाजिता सती जातं  
२।३।१६।५।७।५४ इदं चंद्रमध्ये भृगोरंतरम् । भौमस्य चांतरं जातम् एवं सर्व-

भाषा ।

समच्छेद करके अंशादिक समूलदशाकू गुणन करना और उसका इकट्ठा पिंड करके  
भाग देना तो अंतर्दशा आविर्गी। इसका उदाहरण टीकामें बताया है, और, यहाँ

नीचाभावेष्टवर्गोत्थं भावदायैऽशकक्रमे॥ नायं विधिः स्मृ-  
टीका ।

षामंतरं वोद्धव्यम् ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ एवमुक्तसमच्छेदाभावस्थानान्याह नी-

| अथ दशकमचक्रमाह. |      |      |      |                     |      |      |      |      |
|-----------------|------|------|------|---------------------|------|------|------|------|
| शु.             | श.   | गु.  | म.   | ल.                  | सु.  | बु.  | च.   | योग. |
| १७              | ७    | ५    | ०    | १                   | ६    | ३    | ६    | ५९   |
| ९               | ७    | २    | ०    | ९                   | १०   | ६    | १०   | ८    |
| २               | २५   | २६   | ०    | २४                  | ०    | १४   | ४    | ७    |
| ३               | ३३   | ४६   | ०    | १९                  | ५६   | ३४   | २४   | ३४   |
| ३२              | ०    | ०    | ०    | ३६                  | २०   | ४२   | १२   | २२   |
| १९००            | १९१८ | १९२६ | १९३१ | १९३१                | १९३३ | १९४० | १९४३ | १९६० |
| १०              | ७    | ३    | ५    | ५                   | ३    | १    | ८    | ६    |
| ४               | ६    | १    | २८   | २८                  | २२   | २३   | ८    | १२   |
| १४              | १७   | ५०   | ३६   | ३६                  | ५६   | ५०   | २७   | ५३   |
| २२              | ५४   | ५४   | ५४   | ५४                  | ३०   | ५०   | ३२   | ४४   |
| अंशच्छेदचक्रम्. |      |      |      | चंद्रान्तरदशचक्रम्. |      |      |      |      |
| चं.             | ल.   | शु.  | मौ.  | च.                  | ल.   | शु.  | मौ.  | योग. |
|                 |      |      |      | ९                   | ३    | २    | २    | १६   |
| १               | १    | १    | १    | ७                   | ०    | ३    | ३    | १०   |
| १               | ३    | ४    | ४    | ५१                  | २२   | १६   | १६   | ४    |
| समच्छेदचक्रमाह. |      |      |      | ५१                  | ३७   | ५७   | ५७   | २४   |
|                 |      |      |      | २३                  | १    | ५४   | ५४   | १२   |
|                 |      |      |      | १९४३                | १९५२ | १९५५ | १९५८ | १९६० |
| चं.             | ल.   | शु.  | मौ.  | ८                   | १०   | ११   | २    | ६    |
|                 |      |      |      | ८                   | १६   | ८    | २५   | १२   |
| ४८              | १६   | १२   | १२   | २७                  | १८   | ५५   | ५३   | ५१   |
| ४८              | ४८   | ४८   | ४८   | ३२                  | ५५   | ५६   | ५०   | ४४   |

चेत्यादिअष्टत्रिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । अयं पूर्वोक्तः हरणविधिः नीचाभावे नीचर-  
हिते तथा अष्टवर्गोत्थदायभावे अष्टवर्गायुर्दायप्रक्रियां तथा अंशकक्रमे अं-  
शायुर्दायविषये च न स्मृतः नोक्तः अतः तत्र विषयत्रये बहवोऽनेके ग्रहाश्चेत्

भाषा ।

चक्रमां दिखाया है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अथ समच्छेद जहां नहीं होता वो स्थान क-  
हते हैं. यह हरणविधि नीच स्थानका जहां न होवे अष्टवर्गायुर्दायविषयमें अंशायु-  
र्दायविषयमें नहीं कष्टा वास्ते यह तीन ठिकानेपर बहुत ग्रह होवे तो संपूर्ण आयु-

तस्तत्र बहवश्चेत्तु तेऽखिलम् ॥ ३७ ॥ केन्द्रादिगा ग्रहाः  
 सर्वे ददत्येवापहत्य च ॥ अर्धत्र्यंशं च पादं च हरणाभा-  
 वसम्मतौ ॥ ३८ ॥ सर्वद्वित्रिवेदाश्च त्रिषट्सप्ताष्टपाणयः ॥  
 स्वर्क्षहोराट्टकाणेशास्त्रिंशांशेशाद्रिभागपाः ॥ ३९ ॥ नवा-  
 र्ककालहोरेशाः षष्ट्यंशेशकलांशपौ ॥ भुंजते च क्रमा-

टीका ।

ते तु अखिलं सर्वमायुर्ददाति ॥ ३७ ॥ अथ केन्द्रादिस्थानेषु विशेषमा-  
 ह । सर्वेऽपि ग्रहाः केन्द्रादिगाः केन्द्रपणफरापोक्लिमस्थाः क्रमादर्थं त्र्यंशं  
 पादं चापहत्य अत्र हरणाभावसंमतौ हरणराहित्यस्य संमतिः प्रमाणं  
 यस्य तस्मिन्नुक्तविषयत्रयेऽपि शेषं ददतीति तावत्यायुर्दाय एवांतराणि  
 भवंतीत्यर्थः ॥ ३८ ॥ अथोक्तांतर्दायैस्तर्दायोपभोक्तृकममाह सर्वेत्या-  
 दिचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । अंतर्दायेशः स्वर्क्षे स्वराशौ वर्तमानः सर्वं  
 प्राप्तांतर्दायं भुंक्ते स च होरेशश्चेद्वितीयांशं प्राप्तांतर्दशार्धं भुंक्ते एवं  
 सट्टकाणेशः द्रेष्काणपतिश्चेत्तृतीयभागं त्रिंशांशश्चेदपि तृतीयांशं अद्रिभा-  
 गपः सप्तांशपतिश्चेद्वेदांशं प्राप्तांतर्दायं चतुर्थांशं नवांशेशश्चेद्व्यंशम् अर्कांशेशो  
 द्वादशांशपतिश्चेत्पष्ठांशं कालहोरेशश्चेत्प्राप्तांतर्दायसप्तमांशं षष्ट्यंशश्चेदष्टमांशं  
 कलांशपः षोडशांशपतिश्चेत्पाणी द्वितीयांशमित्यर्थः एवं क्रमात्सर्वे अंतर्दा-  
 यपतयो ग्रहाः अंतर्दायविधौ अंतर्दशाविधाने स्वस्वांशं भुंजते इति अंतर्द-

भाषा ।

प्य देते हैं ॥ ३७ ॥ सब ग्रह केन्द्र पणफर आपोक्लिममें होवे वहां क्रमसे अर्ध,  
 तृतीयांश, चतुर्थांश, कर्मा करके शेष आयुष्य देते हैं ॥ ३८ ॥ अंतर्दशाका अधि-  
 पति स्वराशिमें होवे तो सर्वायुर्दाय भोगते हैं, वा ग्रह होरापति होवे तो दूसरा भाग  
 भोगता है, द्रेष्काणपति होवे तो तीसरा भाग भोगता है, त्रिंशांश स्वामी होवे तो  
 तीसरा भाग भोगता है, सप्तांशक स्वामी होवे तो चतुर्थांश भोगते हैं, नवमांशका हो-  
 वे तो तृतीयांश भोगता है, द्वादशांशका होवे तो छटा अंश भोगते हैं, कालहोरा-  
 धिपति होवे तो सातवां भाग भोगता है, षष्ट्यंशका स्वामी होवे तो आठवां भाग  
 भोगता है, षोडशांशका स्वामी होवे तो दूसरा भाग भोगता है, यह रीतिसे सब ग्रह



त्सर्वे त्वन्तर्दायविधौ तथा ॥ ४० ॥ ग्रहाद्वावात्ततस्तस्मा-  
स्थितानां द्वादशस्वपि ॥ भावानां च क्रमात्प्रोक्ता भागां-  
शाश्च स्वयंभुवा ॥ ४१ ॥ सर्वद्विवेदसप्ताष्टषट्त्रिरत्नादि-  
शोऽद्वयः ॥ वेदांगा हारका एव ग्रहाणां समुदीरिताः  
॥ ४२ ॥ हत्वा दायं बलैः स्वैस्तु बलं योगेन भाजयेत् ॥

### टीका ।

शापाचक्रक्रमः प्राप्तांतर्दशाहरणक्रमं चोपदिदेशति ॥ ३९ ॥ ४० ॥ अथ  
ग्रहेभ्यो भावेभ्यश्च द्वादशस्थानेषु भागांशानाह ग्रहादिति द्वाभ्याम् । ततः  
अंतर्दायानयनानंतरं तस्माद् ग्रहात् तस्माद्वावाद्वा स्थितानां भावानां उत्तर-  
श्लोकस्था भागांशाः क्रमाद्द्वादशस्वपि स्थानेषु स्वयंभुवा ब्रह्मणा प्रोक्ताः  
॥ ४१ ॥ तानेव भागांशानाह । प्राप्तसर्वः प्रथमभावे द्वितीयांशः प्राप्तार्धमि-  
त्यर्थः द्वितीयभावे वेदश्चतुर्थांशस्तृतीयभावे सप्तांशश्चतुर्थभावे अष्टांशः पंचम-  
भावे षष्ठांशः षष्ठभावे त्रिः तृतीयांशः सप्तमभावे रत्नं नवांशोष्टमभावे दिशो  
दशांशो नवमभावे अद्वयः सप्तमांशो दशमभावे वेदश्चतुर्थांशः एकादशस्था-  
ने अंगः षष्ठांशो द्वादशस्थाने एते भागांशाः ग्रहाणां हारकाः एव समुदीरि-  
ता इति एतैर्हरणं कार्यमिति भावः ॥ ४२ ॥ अथावशिष्टस्य व्यवस्थामाह हत्वे-  
ति द्वयेन । तत्र आयव्यये स्थानद्वये तु हरणावशिष्टदायं स्वैर्बलैर्हत्वा सर्वबल-  
योगेन भाजयेत् लब्धम् आयव्ययस्यांतर्दशास्वरूपं ज्ञेयम् तथा वियदादिषु

### भाषा ।

अपने अपने अंतर्दशामें अपना अपना अंश भुक्तमान करते हैं । ऐसा अंतर्दशाका  
पाचकक्रम कहा ॥ ३९ ॥ ४० ॥ अब ग्रहोंसे और भावोंसे बारह स्थानोंके भागांश  
जो ब्रह्मदेवने कहे हैं सो आगेके श्लोकमें कहते हैं ॥ ४१ ॥ प्रथमभावका सर्वदाय,  
दूसरे भावका अर्ध दाय, तीसरे भावका चतुर्थांश, चौथे भावका सप्तांश, पंचम  
भावका अष्टमांश, छठे भावका षष्ठांश, सातवें भावका तृतीयांश, आठवें भावका  
नवांश, नवम भावका दशांश, दशम भावका सप्तांश, ग्यारहवें भावका चतुर्थांश,  
और बारहवें भावका षष्ठांश, यह ग्रहोंके हारक भागांश जानना ॥ ४२ ॥ अब  
भावके भागांश कहे हैं । बारहवें ग्यारहवें भावका निर्णय ऐसा है कि, हरण करके



ग्रहेषु सर्वेषु बलोत्तरेषु स्वोच्चांशगेषु प्रबलस्य वर्गे ॥  
दिग्वीर्यचेष्टाबलपूर्तियुक्ते पेंड्येषु नीचार्धकृतापहाराः ॥ १ ॥  
अष्टत्रिंशद्भिदाः संति ताः स्वोच्चादिसुसंस्कृताः ॥ लग्ना-  
दिभावगानां च ग्रहाणां स्थितिभेदतः ॥ २ ॥ द्विघ्नाश्चतु-  
रशीतिश्च भिदाः संति द्विजोत्तम ॥ स्वोच्चादिस्थितिभेदेन  
भिन्नाः सूर्येषु भूमयः ॥ ३ ॥ सलग्नानां बलैः सर्वैरधिका-  
टीका ।

द्वादशेऽस्मिन्नथाऽध्याये टीकायां धिषणाप्रदः ॥ सिद्धिबुद्धिपतिः श्रीमा-  
नू गणेशः पातु सर्वदा ॥ १ ॥ पूर्वोक्तदायग्रहणं खेटरश्मिबलादिना ॥ विचा-  
र्यतेऽथ मुनिना द्वादशेऽत्र सविस्तरम् ॥ २ ॥ अथ श्रीमत्पराशरो द्वादशाऽ-  
ध्याये रश्मिबलादितारतम्येनायुर्दायमुपदिशति तत्रादौ पेंड्यायुषि भेदान्  
गणयति ग्रहेष्वित्यादित्रिभिः । पेंड्येषु “पेंड्यो द्वादशया प्रोक्तः ” इति प्रा-  
युक्तेषु पिंडायुर्दायेषु नीचार्धकृतापहाराः नीचार्धेन कृतः अपहारो यासां ताः  
अष्टत्रिंशत् ३८ संख्याका भिदा भेदाः संति कस्य ग्रहस्य तदाह सर्वेषु ग्रहेषु  
बलोत्तरेषु सत्सु अथवा सर्वेषु स्वोच्चांशगेषु सत्सु प्रबलस्याधिकबलस्य दि-  
ग्वीर्यचेष्टाबलपूर्तियुक्ते पूर्णदिग्बलपूर्णचेष्टाबलसहिते वर्गे वर्तमानस्य ग्रहस्ये-  
ति । अथ ताः अष्टत्रिंशद्भिदाः स्वोच्चादिसुसंस्कृताः स्वकीयोच्चादिभिः सुसं-  
स्कृताः सत्यः द्विघ्ना द्विगुणितसंख्याका ७६ भवन्ति । अथ लग्नादिभावगा-  
नां लग्नादिद्वादशभाववर्तिनां ग्रहाणां स्थितिभेदतः स्थितिभेदेन चतुरशी-  
तिभेदा ८४ भवन्ति हे द्विज ! स्वोच्चादिस्थितिभेदेन स्वकीयोच्चमूलत्रिको-  
णादिस्थितिबलाद्भिन्नाः सूर्येषुभूमयः १५१२ द्वादशाधिकपंचदशशतभेदा  
भवन्ति इति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ अथ लग्नग्रहबलतारतम्येन अंशाद्यन्यतमा-  
भाषा ।

अब पिंडायुर्दायके भेद कहते हैं. पहिले पिंडायुर्दायके वारह भेद कहते हैं.  
पाँछे नीचमें अर्धहानि करनेसे ३८ भेद हैं. अब यह ३८ भेदमें अपने उच्चादिक  
संस्कृत होवे तो द्विगुणित ७६ भेद होते हैं. वारह भावके अनुवर्ति ग्रहोंके स्थिति-  
के योगसे चौराशी भेद होते हैं. और हे मैत्रेय ! अपने स्वराशि उच्च मूल त्रिकोणा-

नां क्रमा द्विज ॥ अंशोद्भवस्तथा पैंड्यो निसर्गोत्थाभिधः  
परः ॥ ४ ॥ शतस्वरांशो भौमाच्च नक्षत्रांशकसंज्ञकौ ॥  
स्वरांशश्चेतरो दायः करदायस्तथेतरः ॥ ५ ॥ स्वोच्चनी-  
चसुहृच्छत्रुवर्गगैश्च चतुर्विधः ॥ अतिनीचातिशत्रोश्च  
टीका ।

युर्दायग्रहणमाह सलग्नानामित्यादिपंचश्लोकपर्यन्तम् । सलग्नानां लग्नस-  
हितानां ख्यादिग्रहाणामित्यर्थः एतेषामष्टानां मध्ये बलैरधिकानां बलाधि-  
क्यानां अधिकबलतस्तम्येन इत्यर्थः हे द्विज मैत्रेय ! क्रमात् क्रमशः आ-  
युर्दायो ग्राह्य इति भावः । कोसौ क्रमस्तदाह लग्ने बलवति अंशोद्भवः अं-  
शोत्पन्नः तथा रवौ बलवति पैंड्यः चंद्रे बलवति निसर्गोत्थाभिधः निसर्गो-  
त्थः निसर्गोत्पन्न इत्यभिधा नाम यस्य सः तथा भौमान् नाम भौमे बलवति  
शतः स्वरांशः शतस्वरांशसंज्ञकः तथा बुधे बलवति नक्षत्रसंज्ञकः तथा गुरौ  
बलवति अंशसंज्ञकः नवांशनामक इत्यर्थः तथा शुके बलवति स्वरांशसंज्ञ-  
कः तथा शनौ बलवति करदायः एतत्संज्ञकः दायो ग्राह्य इति ॥ ४ ॥ ५ ॥  
अथ स्वोच्चाधिकारतस्तम्येन आयुर्ग्रहणे विशेषमाह स्वोच्चेतिसार्धेन ।  
स्वोच्चनीचसुहृच्छत्रुवर्गगैः चतुर्विधो ग्राह्यः तथा पद्वर्गातिर्गतस्वोच्चवर्गवर्त-  
मानस्य पैंड्यो ग्राह्यः तथा स्वनीचवर्गवर्तमानस्य निसर्गः एतत्संज्ञकः  
दायः तथा सुहृद्गर्गवर्तमानस्य शतस्वरांशः तथा शत्रुवर्गगतस्य नक्षत्रसंज्ञकः

भाषा ।

दि स्थान स्थिति निमित्तसे १५१२ भेद होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ अब कौनके  
बलसे कौनका आयुर्दाय लेना सो कहते हैं. हे मैत्रेय ! लग्न बलवान् होवे तो अं-  
शायुर्दाय लेना. सूर्य बलवान् होवे तो पैंड्यायुष्य लेना. चंद्र बलवान् होवे तो  
निसर्गायु लेना. मंगल बलवान् होवे तो शतस्वरांशायुर्दाय लेना. बुध बलवान्  
होवे तो नक्षत्रायुष्य लेना. गुरु बलवान् होवे तो नवांशायुर्दाय लेना. शुक्र बलवान् होवे  
तो स्वरांशायुर्दाय लेना. शनि बलवान् होवे तो करदाय नामक आयुष्य लेना  
॥ ४ ॥ ५ ॥ उच्चादिकके बलमे विशेष कहते हैं. स्वोच्चवर्गमें होवे तो पैंड्यायुष्य  
लेना. स्वनीचवर्गमें होवे तो निसर्गायुष्य लेना. शत्रुवर्गमें होवे तो स्वरांशायु लेना.

भागराशिगतस्य च ॥ ६ ॥ समुदायाष्टवर्गश्च भिन्नाष्टक  
उदीरितः ॥ तत्र मूलत्रिकोणे च भिन्नवर्गे च वृद्धिकृत्  
॥ ७ ॥ तथा समारिवर्गे च न वृद्धिहरणे तथा ॥ सूर्यादयः  
क्रमाल्लग्नगताश्चेद्बलवत्तराः ॥ ८ ॥ पैड्यो ध्रुवोऽष्टवर्गोऽथः  
प्रक्रमानुगतोऽंशकः ॥ करदायः क्रमाल्लग्न रव्यादौ तु

टीका ।

तथा अतिनीचनवांशराशिर्वर्तमानस्य समुदायाष्टवर्गसंज्ञकः तथाऽतिशत्रु-  
नवांशराशिर्वर्तमानस्य भिन्नाष्टकसंज्ञकः उदीरितः कथित इति ॥ ६ ॥  
तत्र हानिवृद्धी आह अत्रेतिअर्धद्वयेन । तत्र तस्मिन्नायुर्दाये मूलत्रि-  
कोणे भिन्नवर्गे च वर्तमानस्य ग्रहस्य वृद्धिकृत् प्रागुक्तरीत्या वृद्धिः कार्येत्यर्थः  
अर्थात् नीचातिशत्रुवर्गे प्रागुक्ता हानिरिति भावः तथा तेन प्रकारेण समा-  
रिवर्गे उदासीनशत्रुवर्गं वर्तमानस्य न वृद्धिहरणे प्रागुक्तवृद्धिहरणे नस्त इ-  
ति ॥ ७ ॥ अथ लग्नगतबलवद्ग्रहतास्तम्येन आयुराह सूर्यादय इतिसपदार्थ-  
कद्वयेनासूर्यादयः क्रमात्सप्त ग्रहाः बलवत्तराः बलानि संति येषां ते बलवन्तः  
अतिशयेन बलवन्तो बलवत्तराः अतिबलिन् इत्यर्थः एवं भूतः लग्नगताः लग्नैः  
वर्तमानाश्चेत्पैड्यः ध्रुवः समुदायाष्टवर्गः भिन्नाष्टवर्गः प्रक्रमानुगतः अंशकः  
करदायः ग्राह्य इति ॥ ८ ॥ अथ उच्चाद्यधिकारवशाल्लग्नगतानामायुःक-

भाषा ।

शत्रुवर्गमें होवे तो नक्षत्रायु लेना. अति नीच नवांशमें होवे तो समुदायाष्टक-  
वर्गायुष्य लेना अति शत्रु नवांश राशिमें होवे तो भिन्नाष्टक वर्गायु लेना  
॥ ६ ॥ जो ग्रह मूलत्रिकोणमें त्रिवर्गमें होवे तो पूर्वोक्त रीतिसे वृद्धि करना नीच-  
शत्रुवर्गमें होवे तो हानि करना समशत्रुवर्गके ग्रहका आयुष्यमें वृद्धि हानि नहीं  
करना ॥ ७ ॥ सूर्यादय इस विषयमें और विशेष कहते हैं. सूर्यादि ग्रह बल-  
वान् होयके लग्नमें बैठे होवे तो क्रमसे आयुर्दाय लेना. सूर्यसे पैड्य १ चंद्रसे  
ध्रुव २ मंगलसे समुदायाष्टवर्ग ३ बुधसे भिन्नाष्टवर्ग ॥ गुरुसे प्रक्रमानुगत ५ शु-  
क्रसे अंशकायु ६ शनिसे करदाय ७ यह क्रमसे लेना ॥ ८ ॥ जन्मलग्नमें उच्चा-  
दिस्थित सूर्यादिग्रहोंसे आयुष्यका भेद कहते हैं. लग्नमें उच्चराशिका सूर्यादिक

स्थिते सति ॥ ९ ॥ पैँड्यः स्वरांशो ध्रुवदाय एव तत्प्रक्र-  
मांशश्च तथांशकोत्थः ॥ भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञः क-  
रोत्थ उच्चादिषु योजनीयः ॥ १० ॥ ध्रुवः सुखस्थस्य तु स-  
प्तमस्य पैँड्यः स्वरांशः खलु कर्मगस्य ॥ द्वितीयसंस्थस्य  
टीका ।

ममाह क्रमादित्याद्यर्धसहितदशमश्लोकेन । लग्ने जन्मलग्ने क्रमात् क्रमशः  
ख्यादौ सूर्यप्रभृतिग्रहे उच्चादिषु उच्चमूलत्रिकोणादिसंबन्धेन स्थिते वर्तमाने  
एते आयुर्दायाः योजनीयाः इत्यन्वयः तानेवाह पैँड्यः पिंडायुर्दायः लग्न-  
स्थाने ख्यादौ उच्चस्थे सति ग्राह्याः एवं त्रिकोणस्थे सति स्वरांशो ग्राह्यः  
तथा स्वर्क्षस्थे सति ध्रुवो ग्राह्यः अधिमित्रस्थानस्थे प्रक्रमांशः तथा  
मित्रक्षेत्रस्थेऽंशायुर्दायः तथा शत्रुक्षेत्रस्थे सति भिन्नाष्टवर्गः तथा अधि-  
शत्रुक्षेत्रस्थे सति समुदायाष्टवर्गः स्वनीचस्थे सति करः अंशायुर्दायः । ननु  
समक्षेत्रलग्नगश्चेत् किमित्याकांक्षायां तत्राभाव एव बोध्यः एवं यवनाचा-  
र्यादीनामपि मतमिति ॥ १० ॥ अथ प्रकारांतरेणायुर्दायग्रहणमाह ध्रुवः ।  
इतिद्वयेन । सुखस्थस्य लग्नाच्चतुर्थभावगतस्य ध्रुवः आयुर्दायो ग्राह्यः सप्त-  
मस्थस्य पैँड्यः तथा कर्मगस्य दशमस्थस्य द्वितीयसंस्थस्य च स्वरांशो ग्रा-  
ह्यः तथा तृतीयधीधर्मगतस्य लग्नात् तृतीयपंचमनवमस्थस्य पैँड्यो ग्राह्यः  
षष्ठस्थस्य तु मित्रवर्गायुः तथा मृत्युगतस्य अष्टमस्थस्य तथेतदः समुदायाष्ट-  
वर्गायुग्राह्यः आये वर्तमानस्य पैँड्यः वरांशध्रुवदायान्यतमः तथा आद्यगतस्य  
भाषा ।

ग्रह होवे तो पिंडायुर्दाय लेना, त्रिकोणका होवे तो स्वरांशायु लेना, स्वराशिका  
होवे तो ध्रुवायुष्य लेना, अधिमित्रका होवे तो प्रक्रमांश लेना, मित्रक्षेत्रका होवे तो  
अंशायुर्दाय लेना, शत्रुक्षेत्रका होवे तो भिन्नाष्टवर्ग लेना, अधिशत्रुक्षेत्रका होवे  
तो समुदायाष्टवर्ग लेना, स्वनीचका होवे तो अंशायुर्दाय लेना, समका होवे तो  
अभाव जानना ॥ १० ॥ मतांतर कहते हैं, लग्नसे चौथे घरमें ग्रह होवे तो ध्रुवा-  
युष्य लेना, सातवें होवे तो पैँड्य लेना, दसवें घरमें और दूसरे घरमें होवे तो  
स्वरांशायु लेना, तीसरे पांचवें नवम घरमें होवे तो पैँड्य लेना, छठे घरमें होवे

च पैँड्य उक्तस्तृतीयधीधर्मगतस्य चैव ॥ ११ ॥ षष्ठ-  
व्ययस्थस्य तु भिन्नसंज्ञस्तथेतरो मृत्युगतस्य चैवम् ॥  
पैँड्यः स्वरांशो ध्रुव आय उक्तः पैँड्यो भवेदाद्यगतस्य  
चैव ॥ १२ ॥ लाभे रवींद्वारबुधेज्यशुक्रमंदाः स्थिताः प्रक्र-  
मदाय एव ॥ लग्नार्यभौमज्ञरवीन्दुमंदशुक्रास्तृतीये सुतमे  
टीका ।

लग्नस्थस्य पैँड्य उक्त इति ॥ ११ ॥ १२ ॥ अथ द्वादशभावेषु ग्रहाणां मि-  
श्रायुर्दायग्रहणक्रममाह लाभे इत्यादिपंचदशश्लोकपर्यंतम् । लाभे एकादश-  
स्थाने मिश्रायुर्विषये प्रक्रमदाय एव ग्राह्यः तत्र क्रमः रवींद्वारबुधेज्यशुक्रमं-  
दाः क्रमणायुर्दाये स्थिता ज्ञेयाः लग्ने अत्र सप्तमीविभक्तिलोप आर्यः लग्न-  
स्थाने तथा तृतीये सुतमे पंचमे धर्मे नवमे च एतेषु भावेषु आर्यभौमज्ञरवी-  
न्दुमंदशुक्राः क्रमेणायुर्दायस्थिताः ज्ञेयाः स्वे द्वितीयभावे क्रमेण शुक्रमंदा-  
र्यबुधार्कभौमचंद्रा आयुर्दातारः तथा सुखे चतुर्थभावे बुधात् पूर्वोक्तक्रमे बु-  
धसकाशाद् ग्रहक्रमो ग्राह्यः ४।१।३।२।६।७।५ एते ग्राह्या इत्यर्थः अस्ते चं-  
द्रादुक्रमतः नाम प्रथमोक्तः क्रमः विलोमतो ग्राह्यः २।३।१।४।५।७।६। एवं  
क्रमादित्यर्थः निधनेष्टमभावे भौमार्कमंदार्यसितज्ञचंद्राः क्रमादायुर्दातारो  
ग्राह्याः षष्ठे रवींदुशुक्रार्किंकुजार्यसौम्याः क्रमाद्ग्राह्याः व्यये द्वादशभावे  
सौम्यात् बुधात् प्रथमोक्तक्रमो ग्राह्यः ४।१।२।६।७।३।५ एते इत्यर्थः कर्मणि  
दशमभावे कुजात् प्रथमोक्तप्रकारो ग्राह्यः ३।५।४।१।२।६।७ एवमित्यर्थः

भाषा ।

तो मित्राष्टकवर्ग लेना, आठवे घरमें होवे तो समुदायाष्टक वर्ग लेना, ग्यारहवे घरमें  
होवे तो पैँड्य स्वरांश ध्रुव यह तीनोंमेंसे एक लेना, लग्नमें होवे तो पैँड्य लेना  
॥ ११ ॥ १२ ॥ द्वादश भावोंमें ग्रहोंका मिश्रायुर्दाय लेनेका क्रम कहते हैं, ग्या-  
रहवें घरमें मिश्रायु लेनेके वास्ते सू. चं. मं. बु. गु. शु. शनी यह आयुर्दायस्थित  
जानना, लग्नमें तथा ३।५।९। में घरमें क्रम करके गु. मं. बु. सू. चं. श. शुक्र यह  
आयुर्दाय होनेवाले जानना, दूसरे घरमें क्रमसे शु. श. गु. बु. सू. मं. चं. आयुर्दाय  
देनेवाले जानना, चौथे घरमें क्रमसे बु. सू. मं. चं. शु. श. गु. आयुर्दाय देनेवाले

च धर्मं ॥ १३ ॥ स्वे शुक्रमंदार्यबुधार्कभौमचंद्राः सुखेस्ते  
 निधनेऽपि चैव ॥ बुधाक्रमाद्व्युक्रमतश्च चंद्राद्रौमार्कमं-  
 दार्यसितज्ञचंद्राः ॥ १४ ॥ षष्ठे व्यये कर्मणि लाभगा वा  
 रवीन्दुशुक्रार्किकुजार्थसौम्याः ॥ सौम्यात्कुजाद्रार्गवतः क्र-  
 मात्स्युर्मिश्रे तु दाये क्रमशः प्रदिष्टम् ॥ १५ ॥ नक्षत्रदा-  
 योऽंशकपिंडदायो भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञः ॥ स्वरांश-  
 दायौ क्रमशः प्रदिष्टौ विशेषतस्तत्र वदामि यस्मात् ॥ १६ ॥  
 अष्टत्रिंशदमिश्रे तु अंकसूर्यकलांशकैः ॥ मूर्छाक्षिणी भि-  
 टीका ।

लाभे वा प्रथमतः अन्यः क्रम उक्त एव तत्र विकल्पेन भार्गवतः पूर्वक्रमे  
 शुक्रादितः क्रमो गाह्याः ६।७।३।५।४।१।२ एवं मिश्रायुर्दाये क्रमशः सर्व-  
 भावेषु ग्रहणं प्रदिष्टं कथितमिति ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथोक्तायुर्दायान्  
 गणयति नक्षत्रेति । नक्षत्रदायः, अंशदायः, पिंडदायः, भिन्नाष्टवर्गायुर्दायः,  
 समुदायसंज्ञकाष्टवर्गायुर्दायः, शतस्वरांशः, स्वरांशायायुर्दायः, नवमांशायायुर्दा-  
 यश्चेति मिश्रायुपि उक्ताः । तत्र यस्मादायुर्दायात् यावन्तो भेदाः उत्पद्यन्ते  
 तद्विशेषतो वदामि कथयामि ॥ १६ ॥ अथाऽमिश्रायुर्दाय भेदानाह अष्ट-  
 त्रिंशदिति । अमि आयुर्दायेऽष्टत्रिंशद्भेदाः मुख्यः तत्रापि अंकसूर्यकला-

### भाषा ।

जानना. ७ वें घरमें चं. मं. सृ. वृ. गृ. श. शु. यह आयुर्दाय देनेवाले जानना.  
 ८ वें घरमें मं. सृ. श. गु. शु. वृ. चं. यह क्रमसे आयुर्दायक जानना. ६ वें घरमें  
 सृ. चं. शु. श. मं. गु. नृ. क्रमसे लेना. १२ वें घरमें चं. मृ. चं. शु. श. मं. गु.  
 यह क्रमसे लेना १० वें घरमें मं. गु. वृ. नृ. चं. शु. श. यह क्रमसे लेना. ग्याहवें  
 घरमें शु. श. मं. गु. वृ. नृ. चं. यह क्रमसे आयुर्दाय देनेवाले कहते हैं ॥१३॥१४॥  
 ॥१५॥ अब आयुर्दायकी गणना कहने हैं. नक्षत्राय, प्र्यंशाय, पिंडाय, भिन्नाष्टक-  
 र्गाय, समुदायष्टकवर्गाय, शतस्वरांशाय, न्यगंशाय, नवमांशाय, यह आयुर्दायसे  
 आगे जो भेद उत्पन्न होते हैं सो कहने हैं ॥१६॥ अब अमिश्रायुर्दायके भेद कहने



दाः सन्ति रश्मिजास्त्रिंशदेव हि ॥ १७ ॥ एकस्य विषये द्वौ  
चेदाययोगदलं भवेत् ॥ ज्यादयश्चेद्युताख्यादिसंख्याप्ता-  
श्च दशा भवेत् ॥ १८ ॥ रवावुच्चगते चान्ये बलिष्ठा मूल-  
कोणगाः ॥ स्वोच्चस्थेषु बलिष्ठेषु सर्वेषु शशहंसके ॥ १९ ॥  
एवं चिरायुषां योगेष्वन्येषु गणितेषु च ॥ चंद्रयोगेषु त्रिषु  
टीका ।

शकैः नवांशद्वादशांशषोडशांशैः मूर्छाक्षिणीभिदाः २२१ एकविंशत्याधि-  
कद्विशतभेदाः अवांतराः सन्ति तथा तत्रैव रश्मिजाः रश्मिसमुद्भवाः त्रिंश-  
देव ३० हीति प्रसिद्धम् ॥ १७ ॥ अथ मिश्रायुर्दायदशाग्रहणरीतिमाह ए-  
कस्येति। एकस्य ग्रहस्य विषये सहवर्तमानौ द्वौ आयुर्दातारौ प्राप्तौ चेत्  
दाययोगदलं भवेत् दायद्वयस्य योगं कृत्वा ध्रुवशेषेण दशा भवति तथा ए-  
कस्य ग्रहस्य विषये व्यादयः त्रिप्रभृतयः ग्रहाः सहवर्तमानाश्चेत्तदा व्यादि-  
संख्याप्ता प्राप्तव्याद्यायुर्दाययोगं कृत्वा व्यादिमिश्रणसंख्याकांकैः भागं गृ-  
हीत्वा तत्तद्दशा ज्ञेयेति ॥ १८ ॥ अथोक्तेषु नक्षत्राद्यायुर्दायेषु पिंडायुर्दायग्र-  
हणस्थलान्याह रवावित्यादिसार्धविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । रवौ सूर्ये उच्चगते  
उच्चस्थिते सति अन्ये ग्रहा बलिष्ठाः मूलत्रिकोणगा वा स्युः तथा सर्वेषु ग्रहे-  
षु बलिष्ठेषु उच्चस्थेषु सत्सु वा तथा शशयोगे हंसयोगे वा एवं प्रकारेण अ-  
न्येषु गणितेषु उक्तान्यचिरायुर्दायकारकगणनान्तर्गतेषु योगेषु सुनफा अनफा-  
दुर्धरासंज्ञकेषु त्रिषु चंद्रयोगेषु चंद्रसमुद्भवेषु योगेषु चंद्रे बलवत्तरे सति तथा स-  
भाषा ।

हैं अमिश्रायुके ३८ भेद हैं. उसमेंभी नवांश, द्वादशांश, षोडशांशके भेदसे २२१  
भेद होते हैं. और रश्मिआयुष्यके तीस भेद है ॥ १७ एक घरमें दो आयुष्य दे-  
नेवाले होवे तो दोनोंका योग करके उसका अर्ध लेना. तीन आदि लेके ग्रहोंका  
योग होवे तो जितने होवे उनोंका आयुर्योग करके वो संख्यासे भाग लेना. सो  
आयुष्यदशा जानना ॥ १८ पिंडायुर्दाय लेनेका भेद कहते हैं. सूर्य उच्चका होवे,  
दूसरे ग्रह बलिष्ठ होवे, शशयोग, हंसयोग, और दीर्घायुयोग, सुनफा, अनफा, दु-  
र्धरायोग, चंद्रयोग, और राजयोग, यह योग होवे, चंद्र बलवान् होवे तो.

च चंद्रे तु बलवत्तरे ॥ २० ॥ राजयोगेषु सर्वेषु पैंड्यमाह  
पराशरः ॥ लग्ने गुरौ कर्मगते च भानौ चंद्रे सुखे वाऽस्त-  
गते बलिष्ठे ॥ पूर्णे त्रिकोणोपचये शुभेषु पापेष्वथात्रोक्त-  
मसंस्थितेषु ॥ २१ ॥ शुभाश्च केंद्रे त्रिषडायमेऽन्ये विपर्यये  
पैंड्यमतः प्रदिष्टम् ॥ रिःफाष्टपष्ठेषु सहस्ररश्मौ भौमे क्र-  
माच्छीतकरे तु पैंड्यः ॥ २२ ॥ पापालग्ने चाष्टमे सप्तमे

टीका ।

वेषु पूर्वोक्तेषु राजयोगेषु सत्सु पराशरः पैंड्यं पिंडायुर्दायग्रहणमाहेति १९ ॥ २० ॥  
अथ प्रकारान्तरेण पंड्यायुर्ग्रहणमाह लग्ने इत्यादिपादोनत्रयोविंशतिपर्यन्त-  
म् । लग्ने गुरो सति कर्मगते दशमस्थे भानौ सति सुखे चतुर्थस्थाने वाऽस्त-  
गते समभावस्थे बलिष्ठे बलवति पूर्णे चंद्रे सति तथा त्रिकोणोपचये त्रिकोणं  
च उपचयं चानयोः समाहारस्तास्मिन् समाहारैकवचनं “सनपुंसकम्” इति  
नपुंसकत्वम् पंचमनवमतृतीयपष्ठदशमेकादशभावेष्वित्यर्थः शुभे शुभग्रहे स-  
ति तथाऽत्रोक्तं स्थानं प्रति असंस्थितेषु अवर्तमानेषु पूर्वोक्तान्यस्थानस्थितेषु  
द्वादशभावलग्नधनसप्तमाष्टमभावे स्थितेषु सत्सु तथा केन्द्रत्रिषडायमे च शु-  
भाश्चेत् लग्नचतुर्थसप्तमदशमतृतीयपष्ठैकादशेषु शुभेष्वित्यर्थः तथाऽन्ये नाम  
पापाः विपर्यये उक्तान्यस्थाने वर्तमानाश्चेत् पैंड्यं पिंडायुः प्रदिष्टं कथितं  
तथा रिःफाष्टपष्ठेषु १२।८।६ सहस्ररश्मौ रवौ भौमे शीतकरे च क्रमात् स्थितेषु  
सत्सु पैंड्यः ग्राह्यः तथा लग्नेऽष्टमे सप्तमे वा पापाः अथ वा पष्ठे कर्ममे दशमे  
रिःफमे द्वादशभावे च सौम्याश्चेत् नीचाभावे नीचराशिरहिते सति पैंड्य-  
दायः प्रदिष्ट इति ॥ २१ ॥ २२ ॥ अथ ध्रुवाद्यन्यायुर्दायग्रहणं वक्तुं

भाषा ।

पिंडायुर्दाय ग्रहण करना ऐसा पराशर कहते हैं ॥ १९ ॥ २० ॥ अब प्रकारान्तरे  
पिंडायुष्यका ग्रहण कहते हैं. गुरु लग्नमें, सूर्य १० वा, ४ चंद्र ७, शुभग्रह ५।९  
।३।६।११, पापग्रह १२।१।२।७।८, शुभग्रह १।१।७।१०।३।६।११, सूर्य १२  
मंगल ८, चंद्र ६, ऐसे यह पूर्वोक्त योग होवे तो पिंडायुष्य लेना. अथवा पापग्रह  
१।८।७ शुभग्रह ६।१०।१२ नीचवर्जित होवे तो पिंडायुष्य लेना ॥ २१ ॥ २२ ॥ अ-

वा सौम्याः षष्ठे कर्मभे रिःफभे वा ॥ नीचाभावे पैँड्यदायः  
प्रदिष्टो मंदे लग्ने स्वोच्चगे च ध्रुवाख्यः ॥ २३ ॥ वीणायां  
कार्मुके चक्रे गदायामर्धचन्द्रके ॥ रवौ पैँड्योऽशको लग्ने  
ध्रुवश्चंद्रे च भूमिजे ॥ २४ ॥ भिन्नाष्टवर्गः सौम्ये तु नक्ष-  
त्रांशसमुद्भवः ॥ गुरौ नक्षत्रदायः स्यात्प्रक्रमानुगतः सिते  
॥ २५ ॥ समुदायाष्टवर्गस्तु मंदे तु बलवत्तरे ॥ वाप्यां पाशे  
टीका ।

मंदेत्यादि तत्रादौ ध्रुवायुग्रहणमाह मंद इतिपादेन । लग्ने स्वोच्चे तुलास्थे  
इत्यर्थः मंदे शनैश्चरे सति ध्रुवाख्यः आयुर्दायो ग्राह्य इति ॥ २३ ॥  
अथ योगविशेषेण बलवत्तरलग्नसप्तमग्रहेषु पृथक् दायविशेषग्रहणमाह वी  
णायामित्यादिसार्धपंचविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । वीणायां पूर्वार्धोक्तवीणायोगे  
कार्मुके योगे चक्रे योगे गदाख्ययोगेऽर्धचंद्रके योगे वा सति रवौ बल-  
वत्तरे सति पैँड्यो ग्राह्यः लग्ने बलत्तरेऽशकः चन्द्रे बलवत्तरे ध्रुवः भूमिजे-  
भौमे बलवत्तरे भिन्नाष्टवर्गः सौम्ये बुधे बलवत्तरे नक्षत्रांशसमुद्भवः गुरौ  
नक्षत्रदायः सिते बलवति प्रक्रमानुगतः मंदे बलवत्तरे तु समुदायाष्टवर्गः  
आयुर्दायो ग्राह्यइति ॥ २४ ॥ २५ ॥ पुनः प्रकारांतरमाह वाप्यामित्यादि-  
सप्तविंशतिश्लोकपर्यन्तम् । वापीपाशशरपद्मसमुद्राख्यपंचयोगेषु सत्सु उक्ता-

भाषा ।

वायुप्य ग्रहण करनेका नियम कहते हैं. जन्मलग्नमें तुलाराशिका होके शनि  
बैठा होवे तो ध्रुवायुप्य लेना ॥ २३ ॥ अब योगविशेषसे आयुर्दायिका ग्रहण कह-  
ते हैं. विणायोग, कार्मुकयोग, चक्रयोग, गदायोग, अर्धचंद्रयोग, होवे, सूर्य बल-  
वान् होवे तो पिंडायुप्य लेना. लग्न बलवान् होवे तो पिंडायुप्यलेना. लग्न बलवान्  
होवे तो अंशकायु लेना. चंद्र बलवान् होवे तो ध्रुवायु लेना. मंगल बलवान् होवे  
तो भिन्नाष्टक वर्गायु लेना. बुध बलवान् होवे तो नक्षत्रांशायु लेना. गुरु बलवान्  
होवे तो नक्षत्रायु लेना. शुक्र बलवान् होवे तो प्रक्रमानुगतायु लेना. शनि बलवान्  
होवे तो समुदायाष्टकवर्गायु लेना ॥ २४ ॥ २५ ॥ और प्रकारांतर कहते हैं. वा-  
पी, पाश, शर, पद्म, समुद्र यह पांच योगोंमेंसे कोईभी एक आदि योग होवे,

शरे पद्मे समुद्रार्कादिषु क्रमात् ॥ २६ ॥ बलिष्ठेषु नवां-  
शोत्थो ध्रुवः पैंड्यः स्वरांशकः ॥ भिन्नाष्टवर्ग अंशोत्थो  
नक्षत्रांशक ईरितः ॥ २७ ॥ रज्जौ विहंगे मालायां नले  
च मुसले क्रमात् ॥ पैंड्यो ध्रुवः क्रमात्प्रोक्तो रव्यादौ तु  
बलोत्तरे ॥ २८ ॥ गंडे शक्तौ च शकटे यूपे केदारशूलयोः ॥  
प्रक्रमानुगतश्चाथ रश्मिजौ ध्रुवसंज्ञितौ ॥ २९ ॥ अष्टव-  
र्गसमुद्भूतौ क्रमादेवं बलोत्तरे ॥ नौछत्रवज्रदामाख्ये स्वर-

### टीका ।

न्यतमैके इत्यर्थः अर्कादिषु सप्तसु बलिष्ठेषु सप्तसु क्रमात् अर्के नवांशः चंद्रे  
ध्रुवः भौमे पैंड्यः बुधे स्वरांशः गुरौ भिन्नाष्टवर्गः शुकेऽशोत्थः शनौ नक्षत्रां-  
शकश्च ईरितः कथितः ॥ २६ ॥ २७ ॥ पुनः प्रकारांतरमाह रज्जाविति रज्जु-  
विहंगमालानलमुसलेषु पूर्वार्धोक्तेषु पंचसु पंचान्यतमे एकस्मिन्नव्यादौ ब-  
लोत्तरे सति क्रमात् पैंड्यो ध्रुवश्च ग्राह्यः यथा रज्जौ पैंड्यः विहंगे ध्रुवः मा-  
लायां पैंड्यः नले ध्रुवः मुसले पैंड्य इति ॥ २८ ॥ पुनः प्रकारांतरमाह गं-  
डेइतिसार्धेन । गंडशक्तिशकटयूपकेदारशूलाख्यपङ्क्त्योगान्यतमे योगे सति  
क्रमाद्व्यादौ बलवत्तरे प्रक्रमानुगतः रश्मिजः ध्रुवसंज्ञितः अष्टवर्गसमुद्भूत  
आयुर्दायश्च क्रमाद्ग्राह्याइति ॥ २९ ॥ पुनर्योगांतरमाह नावित्यर्थेन । नौयोगे  
छत्रयोगे वज्रयोगे दामाख्य योगे च अतिनीचगे रव्यादौ सति स्वरदायः स्व-

### भाषा ।

सूर्यादि सात ग्रहोंमेंसे जो बलवान् होवे तो क्रमसे आयुष्य लेना. सूर्य बलवान्  
होवे तो नवांशायु चन्द्र ध्रुवायु, मं. पैंड्यायु, बु. स्वरांशकायु, गु. भिन्नाष्टवर्गायु  
शु. अंशायु श. नक्षत्रांशायु कहा है ॥ २६ ॥ २७ ॥ प्रकारांतर कहते हैं. जन्मकुं-  
लीमें रज्जुयोग होवे तो पैंड्यायु लेना. विहंग होवे तो ध्रुव, माला होवे तो पैंड्य,  
नल होवे तो ध्रुव, मूसल होवे तो पैंड्य, लेना ॥ २८ ॥ गंड होवे तो प्रक्रमायु,  
शक्ति होवे तो रश्म्यायु, शकट होवे तो ध्रुवायु, यूप, होवे तो अंशायु. केदार होवे  
तो भिन्नाष्टवर्गायु, शूल होवे तो समुदायाष्टवर्गायु सूर्यादि बलवान् ग्रह होवे  
लेना ॥ २९ ॥ नौकायोग. छत्र, वज्र, दाम, यह, योग होवे. सूर्यादि अनि

दायोतिनीचगे ॥ ३० ॥ कूटे गंडे शरे नागे गोले शृंगाट-  
के पुनः ॥ कालकूटे क्रमात्प्रोक्ताः पैंड्याद्याः सप्त वै द्विज  
॥ ३१ ॥ पैंड्यास्त्रयो ध्रुवाश्चांशदायाश्चाष्टकवर्गकौ ॥ द्रे-  
ष्काणेषु नवांशेषु द्वादशांशेषु च क्रमात् ॥ ३२ ॥ कलांशे-  
षु नव प्रोक्ता दायाश्चैव पुनः पुनः ॥ त्रिंशत्सवेदाः स्वर-  
टीका ।

रांशायुर्दायो ग्राह्याः ॥ ३० ॥ पुनर्योगांतरमाह कूटेति । कूटे गंडे शरे नागे गोले शृ-  
ंगाटके कालकूटे च क्रमात्पैंड्याद्याः पैंड्यध्रुवाष्टवर्गोत्थप्रक्रमानुगतांशायुः  
स्वरांशरश्म्याख्याः सप्तैव ग्राह्याः हे द्विज मैत्रेयेति ॥ ३१ ॥ पुनः प्रकारांतरमाह  
पैंड्या इतिसार्धेन । द्रेष्काणेषु त्रिषु पैंड्याद्यास्त्रयः पैंड्यध्रुवस्वरांशाः क्रमा-  
द्ग्राह्याः नवांशेषु ध्रुवाख्या नवग्राह्याः द्वादशांशेषु अंशदायाः द्वादशभेदभि-  
न्नाः क्रमाद्ग्राह्याः कलांशेषु उच्चादिनवस्थानगतेषु ग्रहेषु अष्टकवर्गसंज्ञकौ  
द्विविधौ पुनः पुनर्ग्राह्याः तद्यथा कलांशेन उच्चे वर्तमानस्य ग्रहस्य भिन्ना-  
ष्टवर्गसमुदायाष्टवर्गसंज्ञकाः षोडश क्रमाद्ग्राह्याः एवं त्रिकोणादिषु  
वर्तमानेषु ग्रहेषु ते एव समुदायाष्टकभिन्नाष्टकायुर्दायाः षोडशैव पुनः  
पुनः प्रोक्ता इति ॥ ३२ ॥ अथ रश्मिवशादायुर्ग्रहणमाह त्रिंशदित्याद्येको-  
नचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यन्तम् । त्रिंशत् ३० सवेदास्त्रिंशत् ३४ स्वरपाचकाः ३७

### भाषा ।

नीचके होवे तो स्वरांशायु लेना ॥ ३० ॥ हे मैत्रेय ! कूट योग होवे तो पैंड्य लेना,  
गंड होवे तो ध्रुवायु, शर होवे तो अष्टवर्गायु, नाग होवे तो प्रक्रमायु लेना, गोल  
होवे तो अंशायु, शृंगाटक होवे तो स्वरांशायु, कालकूट होवे तो रश्म्यायु लेना  
॥ ३१ ॥ प्रकारांतर कहते हैं. प्रथम द्रेष्काणमें लग्न होवे तो पैंड्य लेना, दूसरे  
द्रेष्काणमें ध्रुव लेना, तीसरे द्रेष्काणमें स्वरांश लेना नवांशमें ध्रुवादि नव आयुष्य  
क्रमसे लेना द्वादशांशमें अंशादि लेना उच्चादिक नव स्थानोंमें जो ग्रह होवे तो  
भिन्नाष्टक समुदायाष्टक वर्गायुष्य क्रमसे लेना. वारंवार संख्यापूर्तिपर्यंत गणना  
॥ ३२ ॥ अब रश्मिके मतसे आयुष्य लेनेका भेद बताते हैं. जन्मकालमें रश्मि  
३०।३४।३७।३९।४२।४५।४८।५१।५४।५७।६०।६३।६६।६९।७२।७५।७८।८१।८४ इसमेंसे कोईभी संख्या

पाचकाश्च सुराश्च दंताः क्षितिपावकाश्च ॥ षट्त्रिंशदिष्व-  
 ग्रय एव भानि छंदासिमूर्च्छाश्च जिनाः कराश्चेत् ॥ ३३ ॥  
 पेंड्यस्तथा द्वादशधा प्रभिन्नः क्रमेणदायो नियतः प्रादि-  
 ष्टः ॥ तत्त्वान्निन्दामग्रय एवरत्नदस्त्रास्त्रिदस्त्रा ध्रुवदायभेदाः  
 ॥ ३४ ॥ एकास्त्रयश्चेत्समुदायसंज्ञतस्ततस्तु वेदा इतरोऽ  
 ष्टवर्गः ॥ पंचादिकेष्वंशकदाय उक्तो रुद्राश्च सूर्या यद्विपै-  
 ङ्यआद्यः ॥ ३५ ॥ विश्वे मनुश्चेत्स्वरभागदायो नक्षत्रदा-  
 टीका ।

सुराः ३३ दंताः ३२ क्षितिपावकाः ३१ षट्त्रिंशत् ३६ इष्वग्रयः ३५ भा-  
 नि २७ छंदांसि २६ मूर्च्छा २१ जिनाः २४ एतत्संख्याकाः कराः रश्मयः  
 संतिचेद्द्वादशधाप्रभिन्नः द्वादशप्रकारः पेंड्यः पिंडायुर्दायः क्रमेण क्रमशः  
 नियतो निश्चितः प्रादिष्ट उक्तः तथा तत्त्वानि २५ नंदामग्रयः ३९ रत्न-  
 दस्त्राः २९ त्रिदस्त्राः २३ एतत्संख्याकेषु रश्मिषु ध्रुवायुर्दायभेदाश्चत्वारः  
 क्रमशो ग्राह्याः तथा एकास्त्रयः एकरश्मिमारभ्य रश्मित्रयपर्यंतम् १।२।३  
 एतत्संख्याकेषु रश्मिष्वित्यर्थः समुदायसंज्ञः समुदायाष्टवर्गदायो ग्राह्यः । ततः  
 तदनंतरं वेदाः ४ चत्वारो रश्मयश्चेदितरोऽष्टवर्गः भिन्नाष्टवर्ग इत्यर्थः ग्रा-  
 ह्याः तथा पंचादिकेषु अग्निमोक्तरुद्रसंख्याप्राग्वर्तमानेषु ५।६।७।८।९।१०  
 एष्वित्यर्थः रश्मिषु अंशदाय उक्तः तथा रुद्राः ११ सूर्याः १२ यदि एतत्सं-  
 ख्याका रश्मयः तर्हि आद्यः पेंड्यदायो ग्राह्यः तथा विश्वे १३ मनुः १४  
 एवं रश्मिषु स्वरभागदायः स्वरांशायुर्दायो ग्राह्यः तिथिसंख्याकः १५ र-  
 श्मिश्चेत् नक्षत्रदायः ग्राह्यः नृपे १६ षोडशसंख्याके रश्मो अत्यष्टित्रये १७।

भाषा ।

रश्म्योर्का होवे तो पिंडायुर्दाय लेना तथा २५।३९।२९।३३। रश्मि होवे तो ध्रु-  
 वायुप्य लेना, तथा १।२।३ रश्मि होवे तो समुदायाष्टवर्गायु लेना तथा ४ रश्मी  
 होवे तो भिन्नाष्टवर्ग लेना, तथा ५।६।७।८।९।१० रश्मी होवे तो अंशायु लेना,  
 तथा ११।१२ रश्मी होवे तो पहिला पिंडायु लेना, १३।१४ रश्मी होवे तो स्व-  
 रांशायु लेना, १५ रश्मि होवे तो नक्षत्रायु लेना, १६।१७।१८।१९। रश्मि होवे तो

यस्तिथिसंज्ञकश्चेत् ॥ ३६ ॥ नृपेत्यष्टित्रये प्रोक्ता आद्यपै-  
ड्यभिदास्तथा ॥ प्रक्रमानुगतो विंशत्यष्टत्रिंशोऽष्टवर्गजः  
॥ ३७ ॥ चत्वारिंशत्रये पैड्यो नक्षत्रांशस्त्रये ततः ॥ शेषेषु  
षट्सु पैड्यः स्यादाद्यो गर्गोयमाह च ॥ ३८ ॥ इष्टरश्म्य-  
धिकप्रोक्तक्रम एव कराधिके ॥ केंद्रादिषु ग्रहाणां च बलो-  
त्तरवशाक्रमः ॥ ३९ ॥ बलोत्तरवशादवे स्थानेतरवशात्त-

## टीका ।

१८१९ एतेषु रश्मिष्वित्यर्थः आद्यपैड्यभिदाः पिंडायुर्दायादिमभेदाः ग्रा-  
ह्याः तथा विंशे २० रश्मौ प्रक्रमानुगतः ग्राह्यः अष्टत्रिंशे ३८ रश्मौ अष्ट-  
वर्गजः अष्टवर्गसंज्ञको ग्राह्यः चत्वारिंशत्रये चत्वारिंशत्संख्याकरश्मयः यत्र  
यस्मिन् ४०।४१।४२ एतेष्वित्यर्थः पैड्यो ग्राह्यः तथाऽग्रिमत्रये ४३।४४।  
४५ एतेषु नक्षत्रांशः ग्राह्यः शेषेषु २१।२८।४६।४७।४८।४९ एतेष्ववशिष्टेषु  
पैड्यो दायः स्यात् आद्याः आद्यपट्टमेदा इत्यर्थः अयं रश्म्यायुर्दायः मां प्र-  
ति गर्ग आह्वेति अयं इष्टरश्म्यधिकप्रोक्तः क्रमः बलवत्तरवशात् पूर्वं यः के-  
न्द्रादिषु स्थानेषु उक्तः तदतिरिक्तस्थानेषु कराधिके रश्म्यधिके सति अय-  
सुक्तक्रमः रश्म्यायुर्दायक्रम एव प्रोक्तः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥  
अथ उक्तमनुवदति बलोत्तरवशादिति । बलोत्तरवशात् बलाधिक्यतारतम्येन  
स्थानांतरवशात् स्थानांतराणि स्वमित्रशत्रुक्षेत्रादीनि तद्वशात् इष्टफलक्रमा-  
त् इष्टकष्टफलवशात् तथा रश्म्युक्तविधिना एवं क्रमादायुर्दायो मयोक्त इति

## भाषा ।

पहिला पिंडायुष्य लेना, २० रश्मि होवे तो प्रक्रमायु लेना, ३८ रश्मि होवे तो  
अष्टवर्गायु लेना, ४०।४१।४२ रश्मि होवे तो पिंडायु लेना, ४३।४४।४५। २-  
श्मि होवे तो नक्षत्रायु लेना, २१।२८।४६।४७।४८।४९ रश्मि होवे तो पैड्या-  
यु लेना, यह रश्म्यायुर्दाय गर्ग ऋषीं मेरेकू कहा है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६  
॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ यह आयुर्दायके भेद वे बलकी तारतम्यतासे मित्रादि  
स्थानबलकी तारतम्यतासे इष्टकष्ट फलयोगसे रश्मीके निमित्तसे मैने आयुर्दाय-

था ॥ इष्टात्फलक्रमादेव रश्म्युक्तविधिना क्रमात् ॥ ४० ॥  
 कल्पादौ भगवान् गार्ग्यः प्रादुर्भूय महामुनिः ॥ ऋषिभ्यो  
 जातकं सर्वमुवाच कलिमाश्रितः ॥ ४१ ॥ अस्मिन्नुत्तरभागे  
 तु मयानुक्तं च यद्ववेत् ॥ तत्सर्वं गर्गहोरायां मैत्रेय त्वं वि-  
 लोक्य ॥ ४२ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे दाय-  
 प्रकरणं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

### टीका ।

॥ ४० ॥ अत्र पुनर्गर्गं प्रमाणयति कल्पादाविति । भगवान् गार्ग्यः कल्पा-  
 दौ प्रादुर्भूतः महामुनिः महामननशीलः भूतभविष्यद्वर्तमानकालज्ञः क-  
 लिमाश्रितः कलिकालीनफलाश्रयेण सर्वं जातकं ऋषिभ्यः शिष्यभूतेभ्यः  
 उवाच कथितवान् 'वक्षत्येव कलिं श्रितः' इति पाठे कल्पादौ प्रादुर्भूय यदुक्त-  
 वान् ततः कालबाहुल्यात् अज्ञपरंपरया मलिनत्वमिया पुनः कलिं श्रितः  
 कलौ प्रादुर्भूतः वक्ष्यति कथयिष्यतीत्यन्वयः अन्यत्समानम् ॥ ४१ ॥  
 अथ स्वोक्तशेषं गर्गशास्त्रेण पूरयति अस्मिन्निति । अस्मिन् उत्तरभागे मया  
 विस्तरमिया यदनुक्तं अकथितं भवेत्स्यात् तत्सर्वं गर्गहोरायां गर्गहोराशास्त्रे  
 संविस्तरं हे मैत्रेय ! त्वं विलोक्य पश्य इति ॥ ४२ ॥ एवं यथामति व्याख्या  
 गणेशप्रीतये कृता ॥ मयेयं शोधनीयेव कृपया प्राज्ञसत्तमैः ॥ १ ॥ इति श्री-  
 बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे श्रीमद्द्व्यङ्गः न्वयवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्योतित-  
 दशदिग्मंडलजटाशंकरसुनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण वि० सु० टीकायां द्वादशो-  
 ऽध्यायः ॥ १२ ॥

### भाषा ।

के भेद बताये हैं ॥ ४० ॥ ऐसा यह जातक शास्त्र कलियुगके प्रारंभमें गर्गमुनि  
 अपना प्रागट्य करके अपने शिष्योंकू कहते मये अथवा कहेंगे ॥ ४१ ॥ यह उत्त-  
 र भागमें जो मैंने न कहे हैं यह सब गर्गहोरामें, हे मैत्रेय ऋषे ! तुम देखलेव ॥ ४२ ॥  
 वति वृ० भाषाटीकायां द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥



भाग्यं कर्म च वक्ष्यामि मैत्रेय शृणु सुव्रत ॥ भाग्यादेव  
नृणां सिद्धिर्भाग्यादेव धनायती ॥ १ ॥ यशांसि भाग्यतो  
भाग्यविपर्ययाद्विपर्ययः ॥ करिष्यमाणकर्माणि ज्ञातव्या-  
नि प्रयत्नतः ॥ २ ॥ लग्नादिंदोश्च नवमं भाग्यं बलवशा-  
टीका ।

अथ त्रयोदशाध्यायः सम्यग्व्याख्यायते मया ॥ श्रीगणेशप्रेरणया यां-  
बहुद्विवलोदयम् ॥ १ ॥ अस्मिन्त्रयोदशाध्याये भाग्यं कलांशजादिकम् ॥  
फलं विस्तरशः प्राह मैत्रेयाय महामुनिः ॥ २ ॥ अथ भगवान् पराशरऋ-  
षिः सकलव्यवहारसुखसाधनीभूतभाग्यादिविचारं अस्मिन्त्रयोदशाध्याये व-  
क्तुं प्रतिजानीते भाग्यमिति द्वयेन । हे सुव्रत मैत्रेय ! भाग्यं वैभवं कर्म सा-  
ध्वसाधु व्यापारं च ते वक्ष्यामि अस्मिन्नध्याये कथयिष्यामि शृण्वार्कण्येत्य-  
मिसुखीकरणं यतो नृणां जनानां भाग्यादेव सिद्धिः सकलकार्यसाधनं यतो  
भाग्यादेव धनायती धनं द्रव्यं आयतिः प्रभावः ते यतो भाग्यत एव यशां-  
सि कीर्तयः भाग्यविपर्ययात् अभाग्यात् उक्तानां सर्वेषां विपर्ययः नाश इ-  
त्यर्थः अतः करिष्यमाणकर्माणि भाग्यसूचकान्यभाग्यकारकाणि वेति प्रय-  
त्नतो ज्ञातव्यानि इति तज्ज्ञानं वक्ष्यामीति प्रतिजानीते ॥ १ ॥ २ ॥ अथ  
भाग्यविचाररीतिमाह लग्नादित्यादिसार्धचतुःश्लोकपर्यंतम् । भाग्यं भाग्य-  
स्थानं तु लग्नात् इंदोश्च सकाशान्नवमं ज्ञेयम् तच्च बलवशात् बलतारतम्येन  
अल्पाधिकभाग्यकारकं भवेत् एवमेव शुभापापारिमित्राख्यैः शुभाः सौम्याः  
पापाः खलाः अरयः शत्रवः मित्राणि इष्टाः इति आख्या येषां तैर्ग्रहैश्च भा-  
ग्यस्य वृद्धिहानी भवतः एवं भाग्ये उच्चापि पंचकात् उच्चत्रिकोणस्वर्क्षमित्रा-

भापा ।

हे मैत्रेय ! अब वैभव और शुभाशुभ व्यापार कहता हूँ और वनप्राप्ति यशकी  
प्राप्ति यह सब भाग्योदयसे होती हैं वास्ते भाग्योदयका लक्षण कहता हूँ ॥ १ ॥  
॥ २ ॥ भाग्यस्थान लग्नसे और चंद्रसे नवम घर जानना, परंतु उसमें भी बलाबल,  
देखके भाग्यकी वृद्धि या हानि कहना, जैसा उच्च, स्वग्रही, मित्रक्षेत्री, अधिमित्र-  
क्षेत्री, मूलत्रिकोणी, होके जो ग्रह भाग्यमें होवे तो भाग्यवृद्धि जानना, नीच, शु-

द्रवेत् ॥ शुभपापारिमित्रारख्यैर्ग्रहैरेवं शुभाशुभैः ॥ ३ ॥  
 उच्चादिपंचकादृद्धिरन्यस्माद्धानिरिष्यते ॥ स्वस्मिन्नन्यत्र  
 विषये स्वदेशेतरदेशयोः ॥ ४ ॥ स्वेष्वन्येषु तु वर्गेषु ज्यो-  
 तिर्विद्वशसुस्थितैः ॥ अन्धंशो राशिलिप्तायाः सप्तांशः

### टीका ।

धिमित्रस्थानसंबंधेन भाग्ये स्थितैः भाग्यदर्शकैश्च शुभपापग्रहैः शुभैः पापै-  
 श्च सर्वैरपि ग्रहैरित्यर्थः वृद्धिः भाग्यवर्धनं तथाऽन्यस्मात् समशब्दविशानुनी-  
 चस्थानसंबंधेन भाग्ये स्थितैः सर्वग्रहैः हानिः भाग्यनाशः इष्यते कथ्यते इ-  
 त्यर्थः तथा स्वस्मिन् स्वीये विषये स्थाने भाग्यपतिश्चेत्स्वदेशेऽन्यत्र विषये-  
 ऽन्यक्षेत्रे भाग्येशश्चेदितरदेशे वा भाग्याप्तिः अथ वा हे ज्योतिर्विन्मैत्रेय !  
 भाग्यगतैर्ग्रहैः स्वेषु दशसु वर्गेषु स्थितैः दशवर्गगणनया स्ववर्गस्थितैः स्व-  
 देशे भाग्याप्तिः तैश्चान्येषु स्वतरेषु दशसु वर्गेषु स्थितैः परदेशे भाग्यं ज्ञेयमि-  
 ति ॥ ३ ॥ ४ ॥ अयोक्तं दशवर्गरीत्या स्वदेशपरदेशभाग्यं तद्वदेव सप्तांश-  
 षोडशांशपष्ट्यंशरीत्यापि स्वदेशपरदेशभाग्यज्ञानं भवति अतस्तानंशानाह  
 अद्यंश इत्यादिसप्तमांतम् । सप्तांशमाह राशिलिप्तायाः राश्यंकस्य लिप्ताः कृ-  
 त्वा ताम्यः अद्यंशः सप्तभिर्भागः सप्तांश इति संप्रकीर्तितः षोडशांशमाह अ-  
 ष्टादशार्द्धकांशस्तु अष्टादशैर्य ऋक्षांशः राश्यंशः सकलांशः षोडशांश इति  
 कीर्तितः पष्ट्यंशमाह राशिकलाम्यः पष्टिभिर्यो भागः स एव पष्ट्यंशः एवं  
 क्रमेण सप्तांशादीनानीय पतयः स्मृताः तत्तत्पतयो ग्राह्या इत्यर्थः । अथ प्र-  
 कारान्तरेण षोडशांशमाह सावने दिवसे चक्रनक्षत्रांशः राशिचक्रस्य सप्तविं-

### भाषा ।

शुद्धेत्री, अधिदशत्रुक्षेत्री, समका होके भाग्यमें बैठे होवे तो भाग्यकी हानि जानना,  
 और भाग्यपति स्ववर्गमें होवे तो स्वदेशमें भाग्योदय परवर्गमें होवे तो परदेशमें  
 भाग्योदय जानना ॥ ३ ॥ ४ ॥ अब सप्तांश, षोडशांश, पष्ट्यंश कहने हैं, राशि  
 अंशकी कला करके सातसे भाग लेना, जो भाग आवे वो सप्तांश जानना, अठ-  
 रासे बाराका जो भाग लेना उसकूं षोडशांश कहने हैं, राशि अंशकी कला करके  
 ०से भाग लेना, उमकूं पष्ट्यंश कहने हैं, सावन दिवनकूं राशिचक्रकी सप्ता-

संप्रकीर्तितः ॥ ५ ॥ अष्टादशर्क्षकांशस्तु कलांश इति  
कीर्तितः ॥ षष्ठ्यंश एव षष्ठ्यंशः क्रमेण पतयः स्मृताः  
॥ ६ ॥ भाग्यात्रिकोणोपगतैः शुभं स्याद्भाग्यं तु केन्द्रोप-  
गतैः शुभैश्च ॥ ७ ॥ पापैस्तथा स्याद्शुभं च भाग्यं मित्रादि-  
भिः स्यान्नियमो विशिष्टात् ॥ ८ ॥ एवं भाग्यविपर्यासौ  
भावानां च वदेत्तथा ॥ भावग्रहांतरकला द्विशत्याप्ताः स-  
टीका ।

शक्तिभिर्भागः कलांशकः षोडशांशः । मतांतरमाह । इतरैरन्यैराचार्यैः राशिपु-  
यः षष्ठ्यंशः सोऽपि कलांशकः षोडशांशः स्मृतः कथित इति ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥  
फलितमाह भाग्यादितिसार्धेन । भाग्यात् लग्नचंद्राभ्यां नवमभावात् त्रिको-  
णोपगतैः पंचमनवमस्थानस्थैः केन्द्रोपगतैः प्रथमचतुर्थसप्तमदशमस्थानस्थैश्च  
शुभैः ग्रहैः शुभं भाग्यं स्यात् भाग्यवृद्धिरित्यर्थः तथा लग्नचंद्राभ्यां नवमात्  
त्रिकोणकेन्द्रगतैः पापैस्तु अशुभं भाग्यं भाग्यहानिरित्यर्थः तत्र मित्रादि-  
भिः मित्रस्वक्षेत्रोच्चादिसंबन्धेन तु विशिष्टात् पूर्वोक्तविशेषानियमः तत्रतत्र-  
स्थे पापेऽपि भाग्यवृद्धिः मित्रादिक्षेत्रस्थत्वादिति भावः एवं प्रकारेण भावानां  
संबन्धिनो भाग्यविपर्यासौ भाग्यवृद्धी भाग्यहानी तथा उक्तप्रकारेण वदेत्क-  
थयेदिति ॥ ८ ॥ अथ भावफलसमान्याह भवेतिसार्धश्लोकेन । भावग्रहां-  
तरकलाः भावग्रहयोः अंतरं विवरं कृत्वा तस्य कलाः कृत्वा ताः द्विशत्याप्ताः

भाषा ।

बीससे भाग लेना उसकू षोडशांश कहते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ अब भाग्यस्या-  
नका विशेष फल कहते हैं. लग्नचंद्रसे जो नवममन्थरमें वहसे ५।९।१।४।७।९ •  
घरमें शुभग्रह होवे तो भाग्योदय उत्तम जानना. और जो ऊपर लिखे हुये घरोंमें  
पापग्रह होवे तो भाग्यकी हानि जानना. परंतु वहां विशेष ग्रह हैं कि पूर्वोक्त घरों-  
में बैठे हुये ग्रह स्वराशीके मित्रराशीके उच्चके होवे तो अति उत्तम फल देंगे,  
नीचादिकके होवे तो नष्ट फल देंगे ॥ ८ ॥ अब भाग्योदयादिक भावफल कौनसे  
घरमें होवेगा उसका निर्णय कहते हैं. भावका और ग्रहोंका अंतर करके उसका

मादयः ॥ ९ ॥ द्विघ्नाद्विघ्नाः करघ्नाश्च षष्ठ्याप्ताश्च समादयः  
 ॥ अथेष्टादिफलघ्नं च समयो भाग्यभावयोः ॥ १० ॥ फलेन  
 च दशघ्नेन रश्मिना च हतास्तथा ॥ भावाष्टवर्गोत्थसमा-  
 हिततद्ग्रहांतरोत्थास्तु समादयः स्युः ॥ ११ ॥ तत्तद्ग्र-  
 होत्थाब्दहतास्तथा स्युरेवं तथा भाग्यफलानि तत्र ॥  
 स्थानानि नव वर्गाश्च तेषां भाग्यफलं शृणु ॥ १२ ॥

### टीका ।

शतद्वयेन भक्ताः फलं समादयः वर्षमासदिनादि स्यात् ते समादयः द्विधा  
 स्थाप्याः एकत्र द्विघ्ना द्विगुणिताः षष्ठ्याप्ताः फलं समादयः तत्समादिकं इ-  
 ष्ठादिफलघ्नं कृत्वा भाग्यभावयोः समयः भवति ॥९॥१०॥ अथ प्रकारान्तरेण  
 समाधानयनमाह फलेनेति । दशघ्नेन दशगुणितेन फलेन भावग्रहांतरफलेन  
 हता गुणिताः ततः रश्मिना तत्तद्ग्रहरश्मिना च हताः भावाष्टवर्गोत्थसमा-  
 हितग्रहांतरोत्था तत्तद्ग्रहभावांतसमुत्पन्नाः स्पष्टतराः समादयः स्युरिति ॥११॥  
 समुच्चयेनाह तत्तदिति । एवं सर्वेषां भावानां अब्दादयः तत्तद्ग्रहोत्थाब्दह-  
 ताः तथा स्युः स्पष्टा स्युरिति । अथ तत्र फलानि तु कथं ज्ञेयानि ग्रहाणां  
 स्थानानि नववर्गाश्च संति तेषां संबंधि भाग्यं फलं शृणु कथयामीत्यव्याहा-  
 रः ॥ १२ ॥ अथोच्चादिस्थानविशेषेण फलविशेषं क्रमाद्व्यादीनामाह तत्रा-

### भाषा ।

कला करके २०० से भाग लेना. लब्ध वर्षमासदिनादिक जानना. पीछे ग्रहवर्षा-  
 दिकोंकू द्विगुणित करके दो ठिकाने लिखना. पीछे एक ठिकानेकेवर्षादिकोंको  
 द्विगुणित करके ६० से भाग लेना लब्ध जो वर्षादिक फल उसका और पूर्व जो  
 स्थापित अंक हैं उसमें अंतर करना जो शेष वो भाग्यभावका समय जानना ॥ ९,  
 ॥ १० ॥ अब प्रकाशंतर कहते हैं. ग्रहभावका अंतर करके जो शेष फल उसकू द-  
 शगुणित करके फेर उसकू वो ग्रहकी रश्मीमें भाग लेना. शेष वर्षादिक भाग्यम-  
 मय जानना. अथवा अष्टवर्गोत्थ वर्षोमें भाग्योदयका फल कहना ॥ ११ ॥ इस  
 रीतिसे सर्वभावका फलप्राप्तिममय वे वे भावाधिपतिके संबंधने ऊपर लिखी हुई  
 रीतिसे कहना. और भावफलका विशेष निर्णय नववर्गमें कहना ॥ १२ ॥ अब

ख्यादीनां क्रमाच्छृंगचामरादेश्च विक्रये ॥ कृपिकर्मणि  
सेवायां पैशुन्ये लिपिकर्मणि ॥ १३ ॥ धनार्जने व्यये व्या-  
धौ गमनागमविक्रये ॥ विवादे प्रेतकार्ये च भ्रातृणां कल-  
हे तथा ॥ १४ ॥ धनार्जने सुते दारग्रहणे लिपिकर्मणि ॥  
उच्चादिस्थानवर्गेषु लाभदश्च रविः क्रमात् ॥ १५ ॥ शंख-

### टीका ।

दौ रविफलमाह ख्यादीनामित्यादिपंचदशश्लोकपर्यंतम् । रविः सूर्यः उच्चा-  
दिस्थानवर्गेषु उच्चादीनि उच्चत्रिकोणस्वर्क्षमित्रर्क्षादीनि स्थानानि राशय इत्य-  
र्थः तथा तेषां वर्गाः ग्रहादयः पद उच्चवर्गस्वत्रिकोणवर्गस्वराशिर्गवर्गस्वमित्र-  
राशिर्गवर्गादयः तेषु वर्तमानः एवं फलदो भवति तान्येव फलान्याह शृंगवि-  
क्रये लाभद एवं पदं सर्वत्र १ चामरादि राजचिन्हविक्रये, २ कृपिकर्मणि स्प-  
ष्टम्, ३ सेवायां, ४ पैशुन्ये, “ पिशुनो दुर्जनः खलः ” इत्यमरः । पिशुनस्य  
दुर्जनस्य कर्म पैशुन्यं तस्मिन्, ५ लिपिकर्मणि, लेखनक्रियायां, ६ धनार्ज-  
ने द्रव्यसंपादने, ७ व्यये द्रव्यवितरणे, ८ व्याधौ रोगे, लाभदत्वं रोगनाशने-  
त्यर्थः, ९ गमनागमविक्रये, गमनागमनाभ्यां यो विक्रयः तेन, नत्वेकस्था-  
नस्थित्येत्यर्थः, १० विवादे, ११ प्रेतकार्ये, १२ भ्रातृणां संबंधि कलहे, १३ ध-  
नार्जने, १४ सुते, संततावित्यर्थः, १५ दारग्रहणे विवाहे, १६ लिपिकर्मणि,  
१७ इति रविफलानि ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथ कलांशार्थहोराभ्यां स्वरा-

### भाषा ।

सूर्यादि ग्रहोका उच्चादिकके अनुसारसे फलविशेष कहते हैं. उसमें प्रथम सूर्यका  
कहते हैं. सूर्य उच्च, त्रिकोण, स्वराशी, मित्रराशी, अधिमित्रराशीका होवे या उ-  
च्चादिक राशीके वर्गमें होवे तो क्रमसे नीचे लिखे हुये पदार्थोंका विक्रय करनेमें  
लाभ होवेगा. शृंग १, चामरादि राजचिन्ह २, कृपिकर्म ३, सेवा ४, दुर्जनकर्म  
५, लिपिकर्म ६, धनसंपादन ७, रोगनाशनकर्म ८, द्रव्यवितरण ९, गांवागांव  
फिरके माल बेचना १०, विवाद ११, प्रेतकार्य १२, भ्रातृकलह १३, पुत्रसं १४,  
धनार्जन १५, विवाह १६, लेखनकर्म १७, यह १७ कर्मकरनेमें द्रव्यलाभ होवेगा.  
इतिसूर्यफलम् ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अब चंद्र उच्चादि राशीका होवे या उच्चादिराशी-

माणिक्यमुक्तानां लाभे तत्क्रयविक्रये ॥ सुरते स्त्रीषु मैत्रे  
च राज्ञः पुरुषमित्रता ॥ १६ ॥ धनायतिस्तथा तत्र मैत्रं  
च कृषिकर्मणि ॥ वस्त्रादिधनसिद्धिश्च ब्राह्मणेन विरोधता  
॥ १७ ॥ धननाशो भवेद्युद्धे पराजयपराभवौ ॥ कलांशा  
त्यर्धहोरांशफलानि क्रमशः स्थिते ॥ १८ ॥ स्वर्णसिद्धि-  
र्जयो वस्त्रलाभो मित्रसमागमः ॥ विवादो भ्रातृभिः शत्रु-

### टीका ।

शिस्ववर्गस्वचंद्रस्य फलान्याह शंखेत्यादिअष्टादशश्लोकपर्यंतम् । कलांशा-  
द्यर्धहोरांशफलानि एवं वक्ष्यमाणानि ज्ञेयानि कदा कलांशादिषु स्थिते वर्त-  
माने चंद्रे इति प्रकरणक्रमप्राप्तोर्थः शंखादीनां लाभे १, तत्क्रयविक्रये तेषां  
शंखमाणिक्यमुक्तानां क्रयविक्रयकर्मणि २, सुरते मैथुने ३, स्त्रीषु रामासु  
मैत्रे स्नेहे लाभद इत्यर्थः ४, तथा राज्ञः पुरुषमित्रता समासाभाव आर्षः रा-  
जपुरुषमित्रतेत्यर्थः ५, धनायतिः धनलाभः ६, तथा तत्र लाभे कृषिकर्मणि  
च मैत्रं स्नेहः स्यात् ७, वस्त्रादिधनसिद्धिः ८, ब्राह्मणेन विरोधता द्विजा-  
तिविरोधः ९, युद्धे धननाशः तथा पराजयपराभवौ पराजयः स्वोत्कर्षहा-  
निः पराभवः स्वदेशद्रव्यबलादिहानिः १०, इति फलं भवेत् इति चंद्रफला-  
नि ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ अथ भौमफलानि स्वर्णसिद्धिरित्यादिसार्धद्वा-  
विंशतिश्लोकपर्यंतम् । स्वर्णसिद्धिः १, जयः २, वस्त्रलाभः ३, मित्रसमागमः  
४, भ्रातृभिर्विवादः ५, शत्रुकर्म शत्रुकृत्यं ६, स्त्रीचंचलाक्षकः स्त्रीषु चंचलने-

### भाषा ।

के वर्गमें होवे तो क्रमसे नीचे लिखे हुवे पदार्थोंमें लाभ होवेगा. शंखादिक्रयविक्रय  
१, मैथुन २, स्त्रीमैत्री ३, राजपुरुषमित्रता ४, धनलाभ ५, कृषिकर्म ६, वस्त्रादिव्या-  
पार ७, ब्राह्मणविरोध ८, स्वोत्कर्षहानि ९, स्वदेशद्रव्यबलादिहानि १०, यह फल  
होवे. इतिचंद्रफलम् ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ अब मंगलका फल कहते हैं. मंगल उच्चादि  
राशिका होवे अगर उच्चादि वर्गका होवे तो क्रमसे नीचे लिखा हुवा फल जानना.  
स्वर्णसिद्धि १, जय २, वस्त्रलाभ ३, मित्रसमागम ४, वंधुविवाद ५, शत्रुकर्म ६,

कर्म स्त्रीचंचलाक्षकः ॥ १९ ॥ स्त्रीलाभो दासलाभश्च कृ-  
त्स्नेहा च बलक्षयः ॥ बलैर्धनायतिः स्वोच्चे क्षेत्राद्यैर्न्या-  
यतो भवेत् ॥ २० ॥ मूलत्रिकोणे क्षेत्रेण राज्ञो वाथ ध-  
नायतिः ॥ स्वर्क्षं वस्त्रं कांचनादिसिद्धिश्चाथ सुदृढफलम्  
॥ २१ ॥ धान्यायतिश्च मैत्री च क्रूरकर्मप्रवर्तनम् ॥ कुष्ठं  
चाप्यग्निभीतिश्च गृहदाहोऽतिशत्रुभे ॥ २२ ॥ ग्रहणी  
टीका ।

त्रः ७, स्त्रीलाभः ८, दासलाभः ९, कृत्स्नेहा सर्वेच्छा १०, बलक्षयः ११, बलैः  
धनायतिः धनप्राप्तिः १२, एवं फलानि भाग्यगे स्वोच्चस्थे स्वक्षेत्राद्यैर्युते वा  
भौमे न्यायतः न्यायेन स्युः तत्रस्थे मूलत्रिकोणगे भौमे क्षेत्रेण कृषिणा राज्ञः  
सकाशाद्वा धनायतिः धनप्राप्तिः स्यात् । भाग्यगे स्वर्क्षं वर्तमाने तु वस्त्रकां-  
चनादिसिद्धिः । अथ सुदृढफलं भाग्यस्थसुदृढक्षेत्रवर्तमानभौमस्य फलं तु  
धान्यायतिः धान्यानां प्राप्तिः मैत्री इति अथ भाग्यस्थाऽतिशत्रुभे भौमे स-  
ति क्रूरकर्मप्रवर्तनं कुष्ठं अग्निभीतिः गृहदाहः ग्रहणी संग्रहणी गुल्मरोग-  
श्चेति व्याधयः स्युः धननाशश्च स्यात् ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥  
अथ भाग्यगतबुधफलान्याह विद्येत्यादिपदाधिकसार्धाष्टाविंशतिश्लोकपर्य-  
न्तम् । विद्यार्जने विद्यासंपादने १, सुखे सुखप्राप्ते २, इष्टफलद इत्यर्थः

भाषा ।

स्त्रीविषयं चंचलनेत्र ७, स्त्रीलाभ ८, दासलाभ ९, सर्वेच्छा १०, बलक्षय  
११, बलकरके धनप्राप्ति १२, इतना फल मंगल उच्चस्वक्षेत्रका होवे तो जानना.  
और जो मंगल भाग्यमें मूलत्रिकोणराशिका होके बैठे होवे तो कृषिकर्मसे वा रा-  
जाके निमित्तसे धन मिले. जो मंगल स्वराशिका होके भाग्यमें होवे तो वस्त्रसुवर्णा-  
दिकका लाभ जानना. जो मंगल मित्रराशिका होके. भाग्यमें बैठे होवे तो धान्य-  
प्राप्ति बहुत होवे. जो मंगल अधिशत्रु राशिका होके भाग्यमें बैठे तो क्रूरकर्ममें प्रवृ-  
त्त करे. अग्निभय, कुष्ठ, संग्रहणी, गुल्म आदि रोग होवे धननाश होवे ॥ १९ ॥ २० ॥  
॥ २१ ॥ २२ ॥ अब भाग्यस्थानगत बुधका फल कहते हैं. बुध उषराशिका होयके  
भाग्यके धरमें होवे तो विद्यासंपादन करनेमें और सुखप्राप्ति करनेमें फलप्राप्ति होवे.

गुल्मरोगश्च धननाशश्च तत्र तु ॥ विद्यार्जने सुखे स्त्रीभिः  
कलहश्च धनायतिः ॥ २३ ॥ क्षेत्रदासादिलभं च कृषि-  
कृत्यं धनायतिः ॥ विवादो बंधुभिर्युद्धे जयश्चैव पराजयः  
॥ २४ ॥ विद्याबुद्धिधनक्षेत्रयशांसि च फलंति च ॥ रा-  
ज्ञस्तत्पुरुषेणैव स्वर्णक्षेत्रायतिस्तथा ॥ २५ ॥ स्वर्क्षे ध-

टीका ।

शत्रुराशिगतभाग्यस्ये बुधे स्त्रीभिः कलहः ३, मित्रराशिगतभाग्यस्ये  
बुधे तु धनायतिः धनलाभः ४, क्षेत्रदासादिलभः ५, कृषिकृत्यं ६,  
धनायतिः ७, नीचादिरथे बंधुभिर्विवादः ८, युद्धेऽजयः जयाभावः  
९, पराजयः पराभवः १०, उच्चादौ विद्याबुद्धिधनयशांसि, फलंति  
११. राज्ञः नृपात्तथातत्पुरुषेण राजपुरुषयोगेन स्वर्णक्षेत्रायतिः स्वर्णभू-  
मिलामः १२, स्वर्क्षे सति लिपिना लिपिकर्मणा शिल्पकर्मणा शिल्पकृत्येन  
च धनायतिः द्रव्यलाभः १३, वस्त्रस्वर्णादिलामः १४, राजस्त्रीभिः धनायतिः  
राजस्त्रीयोगेन धनागमः १५, उदासीनक्षेत्रस्थे तु कायस्य कर्मणा साक्षा-  
च्छरीरकृत्येन आयः धनप्राप्तिः १६, आतिशत्रुस्थो विद्यानाशः १७, स्व-  
कर्मणा निजव्यापारेण धननाशः १८, अश्मरी रोगविशेषः १९, कुष्ठं २०,  
कलांशादि फलं स्वपोढशांशादिवर्तमानफलं तु बंधुभिर्विवादात् दायः स्व-  
मागप्राप्तिः २१, देशपर्यटनात् धनं लभेत् २२, क्षेत्रसिद्धिः २३, जयः २४,  
विद्यालाभः २५, धान्यविवर्धनं २६, कृषिकर्मसमुद्योगः २७, सेवाकरण-

भाषा ।

शत्रुराशिका होके बैठे तो स्त्रियोंसे कलह. मित्रराशिका होवे तो धनलाभ. क्षेत्रदा-  
सादिककालाभ. खेतीमें लाभ. नीचराशिका होवे तो बंधुविरोध, युद्धमें हानि, पराभव  
होवे. उच्चादिकका होके बैठे तो विद्या बुद्धि धन यश स्वर्ण भूमि राजपुरुष इनोंसे लाभ  
होवे. स्वराशिका होवे तो लेखनकर्मसे, शिल्पकर्मसे, राजस्त्रीयोगसे, वस्त्र स्वर्णा-  
दिकसे, धनप्राप्ति होवे. समराशिका होके बैठे तो शरीरकृत्यसे धनप्राप्ति. अधिशत्रु-  
का होवे तो विद्यानाश. व्यापारमें नाश. अश्मरीरोग. कुष्ठरोग होवे. अपने पोढ-  
शाशमें होवे तो बंधुविवादमें धनप्राप्ति, और देशांतर फिरनेसे धन प्राप्त होवे. क्षेत्र-



नायतिः प्रोक्ता लिपिना शिल्पकर्मणा ॥ वस्त्रस्वर्णादिसि-  
द्धिश्च राजस्त्रीभिर्धनायतिः ॥ २६ ॥ कायस्य कर्मणा त्वायो  
विद्यानाशः स्वकर्मणा ॥ धननाशोऽश्मरी कुष्ठं कलांशा-  
दिफलं ततः ॥ २७ ॥ विवादाद्वधुभिर्दायो देशपर्यटनाद्व-  
नम् ॥ क्षेत्रसिद्धिर्जयो विद्यालाभो धान्यविवर्धनम् ॥ २८ ॥  
कृषिकर्मसमुद्योगः सेवाकरणकौशलम् ॥ विद्यार्जनमथ

### टीका ।

कौशलं सेवाकृत्यकुशलत्वं २८, विद्यार्जनं विद्यासंपादनं चेति बुधफलानि  
॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ अथ भाग्यगतगुरुफलमाह  
अथेत्यादिसौर्धकत्रिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । अथानंतरं गुरोः फलं प्रोक्तं भाग्यस्थ-  
स्येति शेषः श्रीमान् लक्ष्मीवान् १, सुखी २, गुणी गुणाः दयादाक्षिण्या-  
दयः संति यस्येति तथा ३, बह्वायतिः बहुप्राप्तिः भवेदित्यर्थः ४, अमा-  
त्यत्वं प्रधानत्वं ५, सर्वसंपत्समन्वितः स्पष्टं ६, अत्र शत्रुक्षेत्रगतस्य फलं ध-  
ननाशः द्रव्यनाशः ७, प्रमोहेण प्रमादेनेत्यर्थः क्षेत्रनाशः ८, परामवः परा-  
जयः ९, अथ मित्रक्षेत्रस्थभाग्यगतगुरुफलं विद्यार्जनं विद्यासंपादनं १०, तथा  
सेवाकरणं दास्याचरणं ११, अथाधिमित्रक्षेत्रस्थस्य फलं संपदः ऐश्वर्याणि १२,  
पुत्रैः मित्रैश्च धनायतिः द्रव्यागमः १३, स्त्रीभिः तथा कृतकर्मणा आचरित-  
व्यापारेण च धनप्राप्तिः १४, विवाहः १५, धनलाभः १६, क्रमात् एवमुक्त्य-

### भाषा ।

सिद्धि होवे. जय होवे. विद्यालाभ. धान्यवृद्धि, खेतीका उद्योग, सेवाकौका कर्ममें  
कुशलता. विद्यासंपादनमें कुशलता होवे इतिबुधफलम् ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥  
॥ २७ ॥ २८ ॥ गुरु भाग्यमें होवे तो लक्ष्मीवान् १, सुखी २, गुणवान् ३, बहु-  
तप्राप्ति ४, प्रधानपना ५, सर्वसंपत्तिवान् ६, होवे. शत्रुराशिका होवे तो द्रव्यना-  
श ७, क्षेत्रनाश ८, पराजय ९, होवे. मित्रराशिका होवे तो विद्यासंपादन करना  
१०, सेवा करना. अधिमित्रका होवे तो ऐश्वर्यप्राप्ति पुत्रमित्रादिकनने धनप्रा-  
प्ति. स्त्रीनिमित्तसे धनप्राप्ति. विवाह इत्यादि मार्गसे धन मिले. इतिगुरुफलम्.

प्रोक्तं गुरोः श्रीमान् सुखी गुणी ॥ २९ ॥ ब्रह्मायतिरमा-  
त्यत्वं सर्वसंपत्समन्वितः ॥ धननाशः प्रमोहेण क्षेत्रनाशः  
पराभवः ॥ ३० ॥ विद्यार्जनं तथा सेवाकरणं संपदस्तथा ॥  
पुत्रैर्धनायतिर्मित्रैः स्त्रीभिश्च कृतकर्मणा ॥ ३१ ॥ विवाहो  
धनलाभश्च क्रमादेवं फलं वदेत् ॥ राज्ञां कृत्यकरः श्रीमा-  
न्युत्रबंधुसमन्वितः ॥ ३२ ॥ सेनानाथस्तथामात्यो विद्या-  
टीका ।

कारेण फलं वदेत् कथयेदिति ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ अथ भाग्यगतशुक्रफ-  
लमाह राज्ञामित्यादिपंचत्रिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । राज्ञां नृपाणां कृत्यकरः कर्मक-  
र्ता १, श्रीमान् २, पुत्रबंधुसमन्वितः स्पष्टं ३, सेनानाथः सेनापतिः ४, त-  
थाऽमात्यः प्रधानः ५, विद्यार्जनपरः विद्यासंपादनोत्सुकः ६, धनी द्रव्यवान्  
७, पाठकः अध्यापकः ८, याजकः, ऋत्विक् ९, बहुस्त्रीकः ब्रह्मः स्त्रियो-  
यस्य सः तथा १०, अतिशत्रुभेऽतिशत्रुक्षेत्रस्थे सति फलमाह । स्त्रीसक्तः स्त्री-  
लालसः ११, निर्धनः दरिद्रः १२, मूर्खः बुद्धिशून्यः १३, पातकी दोषी १४,  
भारकः भारवाहक इत्यर्थः भवेत् १५, स्वक्षेत्रस्थफलमाह राज्ञः भूपस्य सेना-  
धिकारी सैन्याधिकारवान् १६, प्रियेः इष्टैः बंधुभिः बांधवैश्च आयतिः इष्ट-  
प्राप्तिः १७, सेवावृत्त्याऽन्यसेवाचरणेन तथा कृप्या कृपिकर्मणा विद्यया वेद-  
शास्त्रप्रभृत्या पूर्तकर्मणा स्वात्मादिकृत्येन च सर्वसंपद्युतः अखिलसंपत्तिसहितः  
स्यात् १८, श्रीमांश्च १९, एवं प्रकारेण शुक्रस्य फलं भवेदिति ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

### भाषा ।

॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ अत्र शुक्रका फल कहते हैं—शुक्र उच्चादिकका होके भाग्यमें  
होवे तो क्रमसे राज्यकार्य करनेवाला १, लक्ष्मीवान् २, पुत्रसे भाइयोंसे सुखी ३,  
सेनापति ४, प्रधान ५. विद्यासंपादन करनेमें बहुत मूर्ख ६, धनवान् ७. अ-  
ध्यापक ८, ऋत्विक् ९, बहुत स्त्रियोंसे युक्त १०, होवे. अधिशत्रुराशिका होके  
बैठे तो स्त्रीलालसी ११, दरिद्री १२, बुद्धिहीन १३, पातकी १४, भारवाहक  
१५, होवे. स्वक्षेत्रका होवे तो सेनाधिकारी १६, प्रियबांधवोंसे इष्टप्राप्ति १७, दूस-  
रेकी सेवा करनेसे १८, कृपिकर्मसे १९. विद्यामें २०, इष्ट, पूर्त चापी कृप तला-

र्जनपरो धनी ॥ पाठको याजकश्चाथ बहुस्त्रीकोऽतिशत्रुभे  
॥ ३३ ॥ स्त्रीसक्तो निर्धनो मूर्खः पातकी भारको भवेत् ॥  
सेनाधिकारी राज्ञश्च प्रियैर्वन्धुभिरायतिः ॥ ३४ ॥ सेवावृ-  
त्त्या च कृष्या च विद्यायाः पूर्वकर्मणा ॥ सर्वसंपद्युतः श्री-  
मान् शुक्रस्यैवं फलं लभेत् ॥ ३५ ॥ कुजोच्चादि फलं चा-  
र्कैः कलांशादिफलं भवेत् ॥ कलांशादिषु यत्प्रोक्तं कलां-  
शादि फलं त्विदम् ॥ ३६ ॥ उच्चादिषु तथा प्रोक्तं फलमेवं

### टीका ।

॥ ३४ ॥ ३५ ॥ अथ शनिफलमाह कुजेतिसार्धेन । कुजोच्चादिफलं यत्कुजस्य  
उच्चादिवर्तमानस्य शुभफलमुक्तं तदेव आर्कैः शनैश्चरस्य कलांशादिफलं  
षोडशांशादिवर्तमानफले भवेज्जानीयादित्यर्थः कुजस्य कलांशादिषु षोडशां-  
शादिषु यत्फलं प्रोक्तं तदेव शनेः कलांशादिवर्तमानस्य फलं भवेत् तथा कुज-  
स्य उच्चादिषु यत्प्रोक्तं तदेव उच्चादिवर्तमानस्य शनेः एवं फलं विचिंतयेदि-  
ति ॥ ३६ ॥ एवं भाग्यस्थानगतग्रहवशात्फलान्युक्त्वाऽथ तत्तत्फलागमकालं  
नवांशतारतम्येनाह स्वभाग्येत्यादिसार्धत्रिचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । स्वभाग्य-  
क्षगतान् स्वस्य यत् भाग्यर्क्ष भाग्यराशिः तत्र गतान् वर्तमानान् ऋक्षान्  
नवांशराशीन् ततः न्यूनान् अधिकान्वापि वर्तमानान् स्वरश्मिघ्नान् स्वकी-  
यरश्मिगुणितान् कृत्वा भाग्यर्क्षे ग्रहयुक्ते सति तथा तद्रश्मिघ्नान् तस्य ग्रहस्य  
रश्मिभिर्गुणितान् कृत्वा उत्तरमनंतरं त्रिभिर्विभज्य त्रिसंख्यया भागमाहृत्य

### भाषा ।

वादिकर्मसे १, सर्वसंपत्तिवान् होवे श्रीमान् होवे इति शुक्रकलम् ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४  
॥ ३५ ॥ अब शनिका फल कहते हैं, शनिका फल पहिले जो मंगलके विषयमें  
लिखा है ओई जानना ॥ ३६ ॥ पूर्व जो भाग्यस्थानका फल कहा है उस फलकी  
प्राप्ति कोन समयमें होवेगी वा समयका जान अब कहते हैं, भाग्यस्थानकी नव-  
मांश राशिकी भाग्यभावकी रश्मिसे गुणन करके और वहां जो ग्रह बैठा होवे वो  
ग्रहकी रश्मिसे गुणन करना पाँछे तीनसे भाग लेना, शून्य दोष रहे ताका फल

विचिंतयेत् ॥ स्वभाग्यर्क्षगतानृक्षान्यूनान्श्वाप्याधिकांस्ततः  
 ॥ ३७ ॥ स्वरश्मिघ्नान् ग्रहे युक्तेस्तद्रश्मिघ्नांस्तथोत्तरम् ॥  
 त्रिभिर्विभज्य निःशेषे त्वोजराशौ नवांशके ॥ ३८ ॥ आ-  
 दिमध्यावसाने स्याद्युग्मे तत्र नवांशके ॥ आदौ मध्येवसा-  
 ने स्याद्युग्मे चौजे नवांशके ॥ ३९ ॥ मध्येवसाने चाद्ये  
 च युग्मे मध्यांतिमादिमे ॥ आदौ मध्येवसाने स्यादेवं चे-  
 द्भाग्यलक्षणम् ॥ ४० ॥ ओजराशौ नवांशे चेद्युग्मे मध्यां-  
 तिमादिमे ॥ युग्मे राशौ नवांशे चेदोजे मध्येऽन्तिमेऽपि

टीका ।

निःशेषे शेषरहिते सति ओजराशौ विषमराशौ आदिमध्यावसाने युग्मे नवां-  
 शे सति आदौ मध्येऽवसाने वा यथाक्रमं भाग्यफलं ज्ञेयम् तथा युग्मे राशौ  
 ओजनवांशके मध्येऽवसाने आद्ये सति मध्यमांतप्रथमे सति अथवा युग्मे  
 राशौ मध्यांतिमादिमे मध्यमांतिमें प्रथमे युग्मे नवांशके सति च आदौ  
 मध्येवसाने वा चेत् क्रमात् भाग्यलक्षणं एवं स्यात् एवमेव ओजराशौ मध्यां-  
 तिमादिमे मध्यमांतिमप्रथमे युग्मे नवांशे सति अथ वा युग्मे समे राशौ  
 मध्ये मध्यमेंऽन्तिमे प्रथमे वा ओजे विषमे नवांशे सति तथा युग्मे राशौ  
 मध्यांतिमादिमे नवांशे सति च एवं पूर्वोक्तकाले फलं ज्ञेयम् एतत् त्रिभागे  
 गृहीते शून्यावशेषे सति ज्ञेयं अथ च त्रिभागग्रहणानंतरं एकं द्वयं वा शेषं  
 स्याच्चेद्व्यत्यासतः वैपरीत्येनेत्यर्थः कालः भाग्यसमयः भवेत्स्यात् अथ चरमे  
 भाग्यगतचरलग्ने कलाभ्यां भाग्यकलासंयुक्तग्रहकलाभ्यां हते गुणिते तद्व-  
 त्पागवत् त्रिभिर्विभज्येत्यर्थः चराद्वंशे चरस्थिरादिः स्वभावसंज्ञके प्राप्तेऽर्थादादौ  
 मध्येऽवसाने फलं स्यात्तथा स्थिरे स्थिरलग्नेऽन्ते मध्यमादिमेऽवसाने मध्ये आ-

भाषा ।

कहते हैं. भाग्यस्थानकी विषमराशि होवे तो आद्य मध्य अवसानमें चरादिक प्र-  
 मसे फल जानना और युग्म नवमांश होवे तो आद्य मध्य अवसानमें फल जानना.  
 तथा भाग्यराशी युग्म होय और नवमांश विषम होवे वो मध्य अंत आद्यमें फल  
 जानना. और युग्मराशि युग्मनवमांश होवे तो मध्य अंत आदिमें और आदि म-

च ॥ ४१ ॥ प्रथमेपि वयस्येवं युग्मे मध्येऽतिमादिमे ॥  
शेषं द्वयं चेदेकं स्यात्कालो व्यत्यासतो भवेत् ॥ ४२ ॥  
कलाभ्यां च हते तद्वच्चराद्यंशे चरे च भे ॥ आदौ मध्येव-  
साने स्यात्स्थिरंस्ते मध्यमादिमे ॥ ४३ ॥ उभये मध्यमेऽ-  
ते च आदावेवं प्रकीर्तिताः ॥ भावानां चैव सर्वेषां चंद्रल-  
ः । तु लग्नतः ॥ ४४ ॥ अंशदायोक्तवत्कृत्वा शुभपापदृगा-  
हतम् ॥ षष्ठ्याप्तं तद्वलाप्तंस्याद् भ्रात्रादीनां च संस्त्यका  
॥ ४५ ॥ रश्मिघ्नं च बलाप्तं च त्वनिष्टमपवादकम् ॥ ४६ ॥

### टीका ।

दौ चेत्यर्थः फलं बोध्यम् तथा उभये द्विःस्वभावलग्ने मध्यमेऽते आदौ च फ-  
लं स्यात् एवं प्रकीर्तिताः अंशा इत्यर्थः इति ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥  
॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अथ भ्रात्रादिसंख्यामाह भावानामित्यादियावदध्या-  
यसमाप्तिः । अथ सर्वेषां भावानां चंद्रलग्नाचंद्रराशेः तथा लग्नतः जन्मलग्नाच्च वि-  
चारः कर्तव्यः स तु अंशदायोक्तवत्कृत्वा प्रागुक्तांशायुर्दायवत् गणितं विधा-  
य ततः शुभपापदृगाहतं एकत्र शुभदृष्टिहतं एकत्र पापदृष्टिहतं च कृत्वा  
तत्कृमात्षष्ठ्याप्तं तथा तद्वलाप्तं भावबलाप्तमित्यर्थः प्राप्तफलं भ्रात्रादीनां शे-  
षसंख्या नष्टसंख्या च ज्ञेया अथ च तदेव अंशदायोक्तवत्कृतमेव रश्मिघ्नं र-  
श्मिगुणितं ततः बलाप्तं बलभाजितं फलं अनिष्टं अपवादकं शुभं च ज्ञेयमि-  
ति ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ एवं त्रयोदशाध्याये कृता टीका यथामति ॥ गणे-

### भाषा ।

ध्य अंत्य क्रमसे भाग्यफल जानना. यह विषय टीकामें स्पष्ट किया है ॥ ३७ ॥  
॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अब द्वादश भावोंका विचार कहते  
हैं, चंद्रलग्नसे करना, और जन्मलग्नसेभी करना. पहिले जैसा अंशायुर्दाय लाते हैं,  
वैसा गणित करके दो ठिकानें लिखके एक ठिकानें शुभदृष्टियोगसे गुणना, अ-  
न्यत्र पापदृष्टियोगसे गुणना. पीछे दोनों ठिकानें ६० से भाग लेना. वैसा भाव-  
बलसे भागलेना. शेष रहे वो भावबंधकी संख्या जाननी. अन्यप्रकार पूर्वोक्त

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे कलांशादिफले त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

नाडीद्वयं मुहूर्तः स्याद्विनाडीद्वयमेव च ॥ रवेरुदयतो मेघात्सर्वजितः क्रमात्स्मृतः ॥ १ ॥ आर्द्राश्लेषानुराधाश्च टीका ।

शपीतये सा च शोधनीया बुधैर्मुदा ॥ १ ॥ इति वृ० उत्तरभागे श्रीमद्व्यासः-  
चयवेदशाब्ज्योतिर्विच्छ्रीधरेण वि० सु० टीकायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथो चतुर्दशाध्याये गणेशप्रेरितो ह्यहम् ॥ कुर्वे यथामति व्याख्यां विद्वांसः शोधयंस्त्विमाम् ॥ १ ॥ अथ भगवान् पराशरो महर्षिः चतुर्दशेऽस्मिन्नध्याये वर्षचर्यामुपादिदेश । तत्रादौ मुहूर्तलक्षणमाह नाडीत्यर्द्धेन । नाडीद्वयं घटिकाद्वयं मुहूर्तः स्यान्मुहूर्तो भवति एतत्सामान्यमानं त्रिंशद्घटिकात्मकदिनमानविषयं ज्ञेयम् । न्यूनातिरिक्तदिनमाने तु विनाडीद्वयं तद्यथा त्रिंशद्घट्यूनदिनमाने कतिचिद्विगतपलनाडीद्वयं तथा त्रिंशद्घट्यधिकदिनमाने तु तत्तारतम्येन विशेषपलसहितनाडीद्वयं मुहूर्तो भवतीति भावः एवमेव रात्रिमानतारतम्येन मुहूर्तलक्षणं ज्ञेयमिति । अथ लग्नान्याह रवेरितिपादेन । रवेः सूर्यस्य उदयतः औदयिकलग्नमारभ्य इत्यर्थः मेघात्सकाशान्मीनपर्यंतं क्रमेण द्वादशलग्नानि पुनरुदयपर्यंतं भवतीति भावः अथोक्तनाडीद्वयमुहूर्तेषु प्रत्यहं दिवा पंचदशरात्रौ पंचदशेति त्रिंशन्नक्षत्रसंज्ञा आह सर्वजितइत्यादि-

भाषा ।

गणितकूं रात्रिगुणित करके भाववलसे भाग लेना, शेष शुभाशुभ फल जानना ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ इति वृ० त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अब मुहूर्तलक्षण कहते हैं, दो घटीका एक मुहूर्त होता है, सर्व दिनके मुहूर्त १५ रात्रिके मुहूर्त १५ कम जास्त नहीं होते, इसवास्ते दो घटीका मुहूर्तप्रमाण लिखा, परंतु दिनमानकी वृद्धि होनेसे मुहूर्तके दोघटीमें जास्त कम होता है, अब लग्नमान कहते हैं, सूर्य जिस राशिका होता है ओई लग्नका प्रथम उदय होता है, पीछे अपने अपने क्रमसे दूसरे दिनके प्रातःकालपर्यंत चारह लग्न मुक्त होजाते हैं ॥ १ ॥ अब दिनरात्रिके मुहूर्त ३० हैं उसके नाम कहते हैं, दिनके जां पंधरा १५

मघाश्चाथ धनिष्ठिकाः ॥ उत्तराषाढसंज्ञश्च सर्वजिद्रोहिणी  
तथा ॥ विशाखाश्च ततो ज्येष्ठा मूलं च शततारकम् ॥ भ-  
रणीपूर्वफाल्गुन्यौ विश्वजिच्च ततो भवेत् ॥ ३ ॥ उत्तराप्रो-  
ष्ठपाच्चैव रेवती च ततः परम् ॥ अभिजिच्चोत्तरा चाथ कृ-  
त्तिका रोहिणी ततः ॥ ४ ॥ मूलं च रोहिणी चाथ मृगशीर्षं  
च हस्तकम् ॥ पुष्यं च श्रवणो हस्तचित्रास्वातीः क्रमा-  
त्स्मृताः ॥ ५ ॥ नाडीद्वयमुहूर्तानां संज्ञा एताः क्रमाद्विज ॥

टीका ।

सार्धपंचश्लोकपर्यन्तम् । अथ सर्वजितः सर्वाणि दिननक्षत्राणि तत्तन्मुहूर्ते  
स्वसदृशफलदानेन जयन्ति ताः सर्वजितः संज्ञाः प्रत्यहं सूर्योदयमारभ्य क्रमे-  
ण नाडीद्वयमुहूर्तानां त्रिंशन्मितानां स्मृता उक्ताः ताश्च आर्द्रा १, आश्लेषा  
२, अनुराधा ३, मघा ४, धनिष्ठा ५, उत्तराषाढा ६, सर्वजित् नाम अभि-  
जित् ७, रोहिणी ८, विशाखा ९, ज्येष्ठा १०, मूलम् ११, शततारका १२,  
भरणी १३, पूर्वाफाल्गुनी १४, विश्वजित् अभिजित् १५ एता दिनमुहूर्तसं-  
ज्ञाः सर्वजित्संज्ञकाः पंचदश । अथ उत्तराप्रोष्ठपात् उत्तराभाद्रपदा १, रेवती  
२, अभिजित् ३, उत्तरा ४, कृत्तिका ५, रोहिणी ६, मूलं ७, रोहिणी ८, मृ-  
गशीर्षं ९, हस्तकं १०, पुष्यः ११, श्रवणः १२, हस्तं १३, चित्रा १४, स्वाती  
१५, एता रात्रिमुहूर्तसंज्ञाः पंचदश १५ विश्वजित्संज्ञकाः हे द्विज ! हे मे-  
त्रेय ! नाडीद्वयमुहूर्तानां एताः संज्ञाः विश्वजित्संज्ञका ज्ञेया इति ॥ २ ॥ ३ ॥  
॥ ४ ॥ ५ ॥ अथ विनाडीद्वयमुहूर्तसंज्ञा द्वात्रिंशदाह सर्वजिदित्यादिसार्धनव-

भाषा ।

मुहूर्त हैं वे सर्वजित् नामक हैं. आर्द्रा १, आश्लेषा २, अनुराधा ३, मघा ४, ध-  
निष्ठा ५, उत्तराषाढा ६, सर्वजित् नाम अभिजित् ७, रोहिणी ८, विशाखा ९,  
ज्येष्ठा १०, मूल ११, शततारका १२, भरणी १३, पूर्वाफाल्गुनी १४, अभिजित्  
१५, यह दिनमुहूर्त जानना. अब रात्रिके मुहूर्त कहते हैं. उत्तराभाद्रपदा १, रेवती  
२, अभिजित् ३, उत्तरा ४, कृत्तिका ५, रोहिणी ६, मूल ७, रोहिणी ८, मृग-  
शीर्ष ९, हस्त १०, पुष्य ११, श्रवण १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाती १५,

सर्वजिह्वरणीहस्तविश्वजिह्वोहिणी तथा ॥६॥ दक्षश्च मृग-  
शीर्षश्च शर्वः पुष्योऽथ रुद्रभम् ॥७॥ उत्तरा विश्वजिह्वोहिणी चि-  
त्रा पुष्यश्च वायुभम् ॥८॥ अभिजिह्वसुभं पौष्णं कृत्तिका च  
पुनर्वसु ॥९॥ पूर्वोत्तरप्रोष्ठपदौ शततारा च विश्वभम् ॥१०॥ ज्ये-  
ष्ठा सूर्यं च मूलं च भाग्यश्च क्रमशः स्मृताः ॥११॥ ज्येष्ठा चाथ  
विशाखा च मूलं च शततारका ॥१२॥ नामानि च मुहूर्तानां  
विनाडीद्वयरूपिणाम् ॥ आवृत्त्या षष्टि ताः प्रोक्ताः काला-

### टीका ।

श्लोकपर्यंतम् । अथ सर्वजित्संज्ञकाः विनाडीसंज्ञका यथा भरणी १, हस्त २,  
विश्वजित् पूर्वाषाढा ३, रोहिणी ४, दक्षः अश्विनी ५, मृगशीर्ष ६, शर्व आ-  
र्द्रा ७, पुष्य ८, रुद्रभम् आर्द्रा ९, उत्तरा १०, विश्वजित्पूर्वाषाढा ११, श्रोणी  
श्रवणं १२, चित्रा १३, पुष्यः १४, वायुभं स्वाती १५, अभिजित् १६, वसुभं  
धनिष्ठा १७, पौष्णं रेवती १८, कृत्तिका १९, पुनर्वसु २०, पूर्वप्रोष्ठपत् पूर्वा-  
भाद्रपदा २१, उत्तरप्रोष्ठपत् उत्तराभाद्रपदा २२, शततारका २३, विश्वभं  
स्वाती २४, ज्येष्ठा २५ सूर्यं हस्तः २६, मूलं २७, भाग्यः पूर्वाफाल्गुनी २८,  
ज्येष्ठा २९, विशाखा ३०, मूलं ३१, शततारका ३२, एवं क्रमशः विनाडी-  
द्वयरूपाणां मुहूर्तानां सर्वजित्संज्ञानामानि ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ एवं ना-  
डीद्वयमुहूर्तसंज्ञाः विनाडीद्वयमुहूर्तसंज्ञाश्रोक्त्वा षष्टिनाडीसंज्ञा आह आ-  
वृत्त्या इत्यर्थेनायाः विनाडीरूपिण्यः त्रिंशत्संज्ञाः प्रायुक्ताः ता एव पुनरावृ-  
त्त्या षष्टि इति विभक्तिलोप आर्पः षष्टिसंख्याकाः नाडीरूपिणः एकघटिका-

### भाषा ।

यह पंधरा रात्रिके विश्वजित् नामक मुहूर्त जानने ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ अब  
विनाडी संख्यात्मक षचीस मुहूर्त कहते हैं. उनके नाम भरणी आदि लेके शतता-  
रकापर्यंत नाम टीकामें स्पष्ट हैं ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ अब षष्टिनाडी मुहूर्त कहते  
हैं. जो पहिले दो घटिकात्मक रात्रिदिनके ३० मुहूर्त कहे हैं, उभयकं द्विरावृत्तिसे  
घडी घडीका माने तो साठ घडीके साठ मुहूर्त कलांशनामक होते हैं ॥ १० ॥



शा नाडिरूपिणः ॥ १० ॥ नक्षत्रसंज्ञया प्रोक्ताः षष्ट्यावृ-  
त्त्या कलांशकाः ॥ मेषो यमो वृषः कुंभो झषो जूकश्च क-  
र्कटः ॥ ११ ॥ सिंहो वृश्चिकश्चिवापो मृगः कन्या क्रमाद्भवे-  
त् ॥ राशिचक्रकलांशे तु क्रमादेवं प्रकीर्तिताः ॥ १२ ॥  
मेषोगौर्यमकर्कीचलेयकन्यातुलालयः ॥ धनुर्मृगघटो मी-

टीका ।

स्वरूपाः ते एव कलांशसंज्ञका इति ॥ १० ॥ अथ कलांशानाह नक्षत्रेत्यर्थेन।  
या विनाडीसंज्ञाः द्वात्रिंशत् प्राशुक्ताः ता एव पुनरावृत्त्या दिनरात्रिषष्टिमा-  
गात्मकनाडीरूपिण्यः पुनरावृत्त्या नक्षत्रसंज्ञया कलांशकाः षष्ट्या षष्टिसं-  
ख्यया ज्ञेया इति । अथ राशिचक्रकलांशसंज्ञाः पंचघटिकात्मिका उदयात्  
द्वादशाह मेष इति द्वादशश्लोकांतम् । उदयात् पंच घटिकाः मेषः १, ततः  
पंचमो मिथुनः २, ततः पंच वृषः ३, ततः पंच कुंभः ४, ततः पंच झषो  
मीनः ५, ततः पंच जूकः तुला ६, ततः पंच कर्कटकः ७, ततः पंच सिंहः ८,  
ततः पंच वृश्चिकः ९, ततः पंच चापः धनुः १०, ततः पंच मृगो मकरः ११,  
ततः पंच कन्या १२, एवं क्रमात् राशिचक्रकलांशे संज्ञाः प्रकीर्तिताः  
कथिताः इति ॥ ११ ॥ १२ ॥ अथ नित्योदयक्रममाह मेषेति । मेषः  
१, गौर्वृषः २, यमो मिथुनः ३, कर्किः ४, लेयः सिंहः ५, कन्या ६, तुला  
७, अलिः वृश्चिकः ८, धनुः ९, मृगो मकरः १०, घटः कुंभः ११, मीनः १२,  
एवं क्रमेण उदयादुदयकालीनलगात् घटिकासु ग्रंथांतरोक्तासु नित्योदय-  
संज्ञा ज्ञेयाः ताश्च “मीने मेषे चतुर्नाड्यः सार्धाश्च वृषकुंभयोः ॥ मकरे मि-

भाषा ।

अब कलांशमुहूर्त कहते हैं, जो पहिले वर्त्तीस मुहूर्त नाडीनामक कहे हैं उसकू पु-  
नरावृत्तिसे घटिकात्मक लेके गिनना, वे नक्षत्रकलांश मुहूर्त हाते हैं, अब राशिच-  
क्रकलांश मुहूर्त कहते हैं, सूर्योदयसे लेके पांचपांच घटिकाका मेषादिराशिकलांश  
जानना, मेष १, मिथुन २, वृषम ३, कुंभ ४, मीन ५, तुला ६, कर्क ७, सिंह  
८, वृश्चिक ९, धन १०, मकर ११, कन्या १२, यह क्रमसे राशिकलांशक हैं  
॥ ११ ॥ १२ ॥ अब नित्योदयलग्नक्रम टीकामें स्पष्ट है, अब तात्कालिक बारह

नमुदयाद्वटिकासु च ॥ १३ ॥ सिंहान्मेषाच्च चापाच्च नक्ष-  
त्रक्रम ईरितः ॥ चंद्रज्ञशुक्रधूमार्कपरिवेषारकार्मुकाः ॥ १४ ॥

### टीका ।

थुने पंच शेषाः सार्धाः प्रकीर्तिताः” एवमिति ॥ १३ ॥ अथ नक्षत्रक्रमग्रह-  
णप्रकारभेदानाह सिंहादित्यर्थेन । सिंहात् सिंहाराश्यारंभनक्षत्रात् मघासका-  
शादित्यर्थः आश्लेषांतमिति भावः इत्येकः प्रकारः चापात् धनूराश्यारंभनक्ष-  
त्रात् मूलसकाशादित्यर्थः ज्येष्ठांतमिति भावः इतिद्वितीयः प्रकारः मेषात्  
मेषराश्यारंभनक्षत्रात् अभिनीनक्षत्रसकाशादित्यर्थः रेवत्यंतमिति भावः इ-  
ति तृतीयः प्रकारः एवं प्रकारत्रयेण नक्षत्राणां परिगणनक्रमः ईरितः कथि-  
तः । अथ प्रकारत्रयेण प्रत्यहं रात्रि दिनकाले द्वादशग्रहक्रममाह । चंद्रः १,  
बुधः २, शुक्रः ३, धूमः पूर्वार्धोक्तो ग्रहः ४, अर्कः ५, परिवेषः पूर्वार्धो-  
क्तः ६, आरो भौमः ७, कार्मुकः पूर्वार्धोक्तः ८, गुरुः ९, पातः पूर्वार्धोक्तः  
१०, शनिः ११, केतुः १२, एते द्वादश ग्रहाः क्रमात् उक्तक्रमेण चक्रलिप्तां-  
शके विषये सिंहात् सिंहलग्नोदयात् सकाशात् द्वादशलग्न्येषु भवन्ति  
तत्तल्लग्नकाले उदयन्ति इत्यर्थः एवं तारकांशके विषये मेषात् मेषलग्नात् स-  
काशात् केत्वादिः केतुरादिर्यस्येति सः प्रागुक्तः क्रमः विलोमतः चित्रांतं  
ग्राह्य इत्यर्थः तथा वटिकांशके विषये अर्कादिधूमपर्यन्ताः प्रथमोक्तक्रमांत-

### भाषा ।

ग्रह लानका क्रम कहते हैं, जन्मलग्न जो होवे, उसकं पहिले देखना, कि गिहादि  
है, या चापादि है, या मेषादि है, वो देखके तीन क्रममेंने जिन क्रममें आया होवे  
वो क्रम मुख्य गिनके वहांमें अनुक्रमसे चंद्र १, बुध २, शुक्र ३, धूम ४, मूर्ध ५,  
परिवेष ६, मंगल ७, कार्मुक ८, गुरु ९, पात १०, शनि ११, केतु १२, पर्यंत  
जो राशि आवे वो राशि लेके उस राशिके ग्रह मांटना, जैसा वृश्चिक लग्न जन्मका  
है तो सिंहादि है वामने नातकान्यमें सिंहराशिवा चंद्र, वरुणा वा बुध, मृगशिरा शुक्र,  
वृश्चिक धूम इत्यादिर्करके केतु इत्येवं जानना, नक्षत्र क्रममें भेदके क्रममें ग्रह  
केतु आदि चंद्रांत गिन जहांतक पूर्वराशिके अनुक्रममें नक्षत्र आवे वो नक्षत्रका  
ग्रह जानना, जैसा क्षमिनीका केतु, वहांमें गिनना, तो उन्नराकालगृहीके चतुर्थ

गुरुः पात शनिः केतुर्ग्रहाः स्युर्द्वादश क्रमात् ॥ चक्रलि-  
प्तांशके चैवं केत्वादिस्तारकांशके ॥ १५ ॥ अर्कादिधूमप-  
र्यताः क्रमात्स्युर्घटिकांशके ॥ सत्र्यंशा घटिकास्तिस्त्रो मे-  
षानिमिषयोर्द्विज ॥ १६ ॥ चतस्रः कुंभवृषयोस्तथा मकर-  
युग्मयोः ॥ वित्र्यंशाः पंच सत्र्यंशास्ताः कर्किधनुषोः

### टीका ।

गैतरविसकाशात् धूमांतं चापात् धनोदयात् द्वादश उदयविषये ग्राह्या इ-  
त्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ अथ प्रागुक्तमेषादिनित्योदयानां प्रत्यहं भोगकाल-  
मानघटिकामाह सत्र्यंशा इत्यादिअष्टादशश्लोकपर्यंतम् । हे द्विज मैत्रेय ! मे-  
षानिमिषयोः मेषमीनयोः लग्नयोः नित्यं मानं सत्र्यंशाः तिस्त्रो घटिकाः  
विंशतिपलाधिकघटिकाद्वयमित्यर्थः कुंभवृषयोः नित्यभोगमानं चतस्रः घ-  
टिकाचतुष्टयात्मकं तथा तेन प्रकारेण मकरयुग्मयोः मकरमिथुनयोः वि-  
त्र्यंशाः पंच तृतीयांशोनाः पंचचत्वारिंशत्पलाधिकघटिकाचतुष्टयात्मकमि-  
त्यर्थः नित्यमानं ज्ञेयं ताः पंच सत्र्यंशाः तृतीयांशसहिताः पंच नाम विंश-  
तिपलाधिकपंचघटिकाः नित्यमानं कर्किधनुषोः स्पष्टं स्मृताः तथा सिंहवृ-  
श्चिकयोः षट् घटिका नित्यमानं चपरं शेषयोः उक्तावशिष्टयोः कन्यातुल-  
योरित्यर्थः अंशोनाः सप्त अत्र अंशशब्देन घटिकातृतीयांशो ग्राह्यः चत्वा-  
रिंशत्पलाधिकषट्घटिका इत्यर्थः एवं इदं उक्तप्रकारकं मेषलग्नात् सका-  
शात् उदयराशिजं लग्नाविहितमित्यर्थः नित्यं मानं प्रोक्तं कथितमिति

### भाषा ।

चरणका चंद्र आया, वैसे सब लायके पूर्वाभाद्रपदाका तीसरी वखत गिननेसे केतु,  
पुनः आया तो केतु पूर्वाभाद्रपदाके चौथे चरण मीनराशिका केतु है इत्यादि. विशेष  
टीकामें स्पष्ट है ॥ १४ ॥ १५ ॥ अब नित्य लग्नकी घटिपलात्मक मान कहते हैं.  
हे मैत्रेय ! मेषमीनका प्रमाण घटी ३ पल २०, वृषकुंभका प्रमाण घ० ४ पल ०  
मिथुनमकरका प्रमाण घ० ४ प० ४०, कर्कधनका प्रमाण घ० ५ प० २०, सिं-  
हवृश्चिकका प्रमाण घ० ६ प० ०, कन्यातुलाका प्रमाण घ० ६ प० ४०, यह

स्मृताः ॥ १७॥ सिंहवृश्चिकयोः षट् च अंशोनाः सप्त शे-  
षयोः ॥ नित्यं मानमिदं प्रोक्तं मेषादुदयराशिजम् ॥१८॥  
ख्याक्रांतात्तथा प्रोक्ता एकद्वित्रिचतुर्घटी ॥ मानानि मेष-  
तः सिंहाच्चापादकोदयात्ततः ॥ १९ ॥ दशवर्गाधिपाश्रिं-  
त्याः प्रोक्ताश्चेंदुनवांशकाः ॥ अन्यत्र कीर्तिताः प्रश्ने नष्ट-  
द्रव्यविनिश्चये ॥ २० ॥ श्रीमान् रिक्तश्च मूर्खश्च कुशलो

टीका ।

॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ अथ प्रकारांतरमाह ख्याक्रांतादिति द्वाभ्याम् । ख्या-  
क्रांतात् अकोदयात् रविसहितात् उदयलग्नादित्यर्थः लग्नमानानि मेषात्  
चतुर्णां सिंहाच्चतुर्णां चापाच्चतुर्णां क्रमात् एकद्वित्रिचतुर्घटिमानं प्रकारांतरेण  
बोध्यम् तत्र दशवर्गाधिपाः तत्तल्लग्नोक्तमानेषु विभाजनीयाः तथा चेंदुनवां-  
शकाः चंद्रराशिनवांशकाश्च विभाजनीयाः तत्प्रयोजनमाह नष्टद्रव्यविनिश्च-  
ये नष्टद्रव्यस्य विनिश्चयः निर्णयः यस्मिन् तथाभूते प्रश्ने प्रश्नविचारे एते चेंदु-  
नवांशकाः अन्यत्र कीर्तिताः अन्यमतोक्ता इति ॥ १९ ॥ २० ॥ अथ दश-  
वर्गादिषु फलान्याह श्रीमानित्यादिसार्धचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । श्रीमान्  
'१, रिक्तः २, मूर्खः ३, कुशलः ४, वंचनः ५, पटुः ६, स्त्रीसक्तः ७, वेदवित्  
८, धीरः ९, मंदाग्निः १०, तीव्ररोषणः अतिकोपी ११, मूलरोगी मूले मूल-  
स्थाने यो रोगः सोऽस्यास्तीति तथा १२, पिशुनः दुर्जनः १३, सदाऽनपरः  
सर्वकाले भ्रमणशालः १४, शुचिः १५, सेवाकरः दासः १६, सुभाषी पटुवा-  
क् १७, धनवान् १८, लोभसंयुतः १९, विद्यया प्रख्यातः प्रसिद्धः २०, भीरुः  
२१, बुद्धिः श्रीमान् बुद्ध्या श्रीमान् २२, श्रीमान् २३, सुशीलकः २४, पर-  
दाररतः २५, श्रीमान् २६, सुशीलः २७, बलवान् २८, गुणी २९, अध्व-

भाषा ।

लग्नमान कक्षा ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ अब प्रकारांतर कहते हैं. उदयलग्नमे मेष-  
पसे ४, सिंहसे ४, धनसे ४, यह बारह राशिमें एक दोन तीन चार घटिका क्र-  
मसे कालप्रमाण जानना. दशवर्गका और चंद्रनवांशका चितवन करना. नष्टद्रव्य-  
प्रश्नादिकमेंभी इसका प्रयोजन है ॥ १९ ॥ २० ॥ अब दशवर्ग ऊपरमे योगफल

## टीका ।

न्यः मार्गस्थः ३०, निगमव्यग्रः वेदाम्यासे निमग्नः ३१, पातकी ३२, तपो-  
युतः ३३, परदाररतः ३४, वेश्यासक्तः ३५, असत्फलवासनः मिथ्याफला-  
मिकांक्षी ३६, सिंहासनस्थः ३७, रिक्तः निरुद्योगी ३८, जटिलः जटाधारी  
३९, कुलपांसनः नीचः ४०, योगी ४१, बुद्धः ज्ञाता ४२, संन्यासी ४३, से-  
नानी सेनापतिः ४४, बुद्धिमान् सूक्ष्मधीः ४५, सुखी ४६ कुष्टी कुष्ठरोगी  
४७, भूतकरः ४८, श्रीमान् ४९, एकपुत्रसमन्वितः ५०, शास्त्रज्ञः ५१, दास-  
कृत्यः ५२, चंडरोषसमन्वितः तीव्रकोपी ५३, स्त्रीसक्तः ५४, परदारोक्तः प-  
रदारैः उक्तः भाषितः लोभित इत्यर्थः ५५, मृत्युः ५६, पटुः ५७, अरोग-  
वान् रोगरहितः ५८, कुरूपः ५९, कुशलः ६०, जितारिः जितशत्रुः ६१,  
पुत्रवर्जितः ६२, शूरः ६३, वीरः ६४, चंडोऽतिकोपी ६५, कुशलः ६६,  
कुक्षिरोगवान् जठररोगी ६७, ग्रामणीः ग्रामपतिः ६८, विटपः स्त्रैणपालकः  
६९, घूर्तो वंचकः ७०, सतीपतिः ७१, अरिंदमः शत्रुहा ७२, वंध्यापतिः ७३,  
सुरापी ७४, रिक्तसाध्यपतिः रंकप्राप्यस्त्रीसेवी ७५, सुखी ७६, विजयी ७७,  
युद्धमीरुः ७८, चोरः ७९, अमर्षी क्रोधी ८०, धनार्जकः द्रव्यसंपादकः ८१,  
धनार्जनाय द्रव्यसंपादनाय सततं निरंतरं अकृत्यानां शतानि करोतीति त-  
था ८२, वृषलीपतिः शूद्रस्त्रीनिषेवी ८३, इंद्रः ८४, सेनानीः ८५, सत्यवाक्  
८६, शुचिः ८७, शिरोरोगी ८८, कुष्टी ८९, मेही मेहरोगवान् ९०, पिशुनः  
दुर्जनः ९१, सुखी ९२, जलवद्रोगसहितः जलोदरादियुक्तः ९३, कृतज्ञः उ-  
पकारज्ञः ९४, निर्घृणो निर्दयः ९५, घृणी दयावान् ९६, विवादशीलो वा-  
दस्वभावः ९७, सुसुखः सुंदराननः ९८, क्रोधनः ९९, कामुकः १००,  
पटुः कुशलः १०१, चरचित्तः २, धनी ३, वाग्मी वक्ता ४, विद्यार्जनपरः ५,  
सुखी ६, अपुत्रः ७, कृषिकृद्धीरः कृषीवलश्रेष्ठः ८, परदाररतः ९, शुचिः  
११०, विद्याहीनः ११, मूर्खः १२, बुद्धिमान् १३, शास्त्रपारगः शास्त्रांतज्ञः  
१४, सदामीरुः १५, जडः १६, वाग्मी १७, कृत्येषु कुशलः कार्यपटुः १८,  
सुखी १९, नीतिज्ञः न्यायज्ञः १२०, लेखकः २१, नीचजातीकृत्यरतः  
अन्येभ्यो नीचजातिकारायिता २२, पटुः २३, प्रेप्यदूतः २४, गोमयवि-  
केता २५, वदान्यो दाता २६, धनवंचको धनप्रतारकः २७, सेनानीः

वंचनः पटुः ॥ स्त्रीसक्तो वेदविद्धीरो मंदाग्निस्तीव्ररोषणः  
 ॥ २१ ॥ मूलरोगी च पिशुनः सदाऽटनपरोऽशुचिः ॥ से-  
 वाकरः सुभाषी च धनवाँल्लोभसंयुतः ॥ २२ ॥ प्रख्यातो  
 विद्यया भीरुर्बुद्धिश्रीमान्सुशीलकः ॥ परदाररतः श्रीमान्  
 सुशीलो बलवान् गणी ॥ २३ ॥ अध्वन्यो निगमव्यग्रः पात-  
 की च तपोयुतः ॥ परदाररतो वेश्यासक्तः सत्फलवासनः ॥  
 ॥ २४ ॥ सिंहासनस्थो रिक्तश्च जटिलः कुलपांसनः ॥ यो-  
 गी बुद्धश्च संन्यासी सेनानीर्बुद्धिमान् सुखी ॥ २५ ॥ कुष्ठी  
 टीका ।

२८, क्षेत्रवान् २९, वीरः १३०, लेखवृत्त्या च जीवति लेखनक्रियया नि-  
 र्वाहकः ३१, मूर्खः ३२, जितेंद्रियः शमदमसंपन्नः ३३, वाग्मा ३४, सदा-  
 कृत्यपरः सदाद्योगी ३५, सुखी ३६, अन्नदाता ३७, मृष्टाशी मधुरशुक्र ३८,  
 शिवमक्तः ३९, जितेंद्रियः १४०, कुब्जः बुद्धिशरीराम्यां वक्रः ४१, वक्रश-  
 रीरः शरीरेणैव वक्रः ४२, जात्यंधो जन्मांधः ४३, बधिरः श्रवणहीनः ४४,  
 शठो धूर्तः ४५, अमर्षी क्रोधी ४६, नर्तको नटः ४७, क्रुद्धः संजातकोपः  
 ४८, दुर्जनो दुष्टः ४९, वेदपासगः वेदानां पारं समाप्तिं गच्छतीति तथा १५०,  
 वक्ता ५१, गायकः ५२, सर्वदा जनार्जकः, जनमनःसंपादकः ५३, तालज्ञः  
 गानसाधनविशेषज्ञः ५४, विद्यया युक्तो विद्वान् १५५, एवं पंचपंचाशदुत्तरं  
 एकयोगावसानकं एकयोगोऽवसाने यस्य तत् शतं पंचपंचाशदुत्तरगुणाः श्री-  
 योगा ज्ञेयाः इति ओजे ओजराशौ पूर्वं पूर्वयुताः पूर्वनवांशे प्रथमसहिताः  
 क्रमाद्योगाः ज्ञेयाः युग्मे समे राशौ तु वामतः वेपरीत्येन प्रथमनवांशे अव-  
 सानीययोगमारम्य क्रमो ज्ञेयः चरे चरराशौ उक्तक्रमः स्थिरे राशौ तु वामं  
 विलोमतो यथा स्यात् तथा उभये द्विःस्वभावे राशौ अर्धपदादितः तथा आ-  
 दौ राश्यारंभे त्रिंशद्गुणा योगाः आरंभतः अंते राश्यंते वामतः विलोमतः त्रिं-  
 शदेवहि पष्ट्यंशे तु प्राग्वत्पूर्वोक्तरीत्यैव ओजचरादिकाः विषमसमचरस्थि-  
 रादिकाः गुणा बोद्धव्या इति ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

भाषा ।

कहते हैं, सो योगके नाम टीकामें स्पष्ट लिखा है, वास्ते भाषामें फिर लिखे नहीं है।

भूतकरः श्रीमानेकपुत्रसमन्वितः ॥ शास्त्रज्ञो दासकृत्यश्च  
चंडरोषसमन्वितः ॥ २६ ॥ स्त्रीसक्तः परदारोक्तो भृत्यः प-  
दुरोगवान् ॥ कुरूपश्चापि कुशलः जितारिः पुत्रवर्जितः  
॥ २७ ॥ शूरो वीरश्च चंडश्च कुशलः कुक्षिरोगवान् ॥ ग्रा-  
मणीर्विटपो धूर्तः सतीपतिररिंदमः ॥ २८ ॥ बंध्यापतिः  
सुरापी च रिक्तसाध्यापतिः सुखी ॥ विजयी शुद्धभीरुश्च  
चारोऽमर्षी धनार्जकः ॥ २९ ॥ धनार्जनाय सततमकृत्य-  
शतकारकः ॥ वृषलीपतिरिंद्रश्च सेनानीः सत्यवाक्छुचिः  
॥ ३० ॥ शिरोरोगी च कुष्ठी च मेही च पिशुनः सुखी ॥  
जलवद्रोगसंयुक्तः कृतज्ञो निर्घृणो घृणी ॥ ३१ ॥ विवाद-  
शीलः सुमुखः क्रोधनः कामुकः पटुः ॥ चलचित्तो धनी  
वाग्मी विद्यार्जनपरः सुखी ॥ ३२ ॥ अपुत्रः कृषिकृद्दीरः  
परदाररतः शुचिः ॥ विद्याहीनश्च मूर्खश्च बुद्धिमाड्छास्त्र-  
पारगः ॥ ३३ ॥ सदाभीरुर्जडो वाग्मी कृत्येषु कुशलः सु-  
खी ॥ नीतिज्ञो लेखको नीचजातिकृत्यरतः पटुः ॥ ३४ ॥  
प्रेष्यो गोमयविक्रेता वदान्यो धनवंचकः ॥ सेनानी क्षे-  
त्रवान्वीरो लेखकृत्या च जीवति ॥ ३५ ॥ मूर्खो जितेंद्रियो  
वाग्मी सदाकृत्यपरः सुखी ॥ अन्नदाता च मृष्टाशी शि-  
वभक्तो जितेंद्रियः ॥ ३६ ॥ कुञ्जो वक्रशरीरश्च जात्यंधो  
बधिरः शठः ॥ अमर्षी नर्तकः क्रुद्धो दुर्जनो वेदपारगः

टीका ।

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

भाषा ।

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

॥ ३७ ॥ वक्ता च गायकः श्रीमान्सर्वदा च जनार्जकः ॥  
 तालज्ञो विद्यया युक्तः पंचपंचाशदुत्तरम् ॥ ३८ ॥ शतं  
 गुणाश्च श्रीयोगा एकयोगावसानकम् ॥ पूर्वपूर्वयुता ओजे  
 युग्मे राशौ तु वामतः ॥ ३९ ॥ चरे क्रमः स्थिरे वाममुभ-  
 योर्धपदादितः ॥ आदौ त्रिंशद्गुणा अंते वामतस्त्रिंशदेव-  
 हि ॥ ४० ॥ षष्ठ्यंशे तु गुणाः प्रोक्ताः प्राग्वदोजचरादि-  
 काः ॥ मेषादुत्क्रमते राहुः केतुर्याति वृषात्क्रमात् ॥ ४१ ॥  
 ऋक्षसंध्यंतरे जातः प्रष्टासौ म्रियते भृशम् ॥ केतुराहुस्थि-  
 ते राशौ भसंधौ मरणं भवेत् ॥ ४२ ॥ इतरेषां त्रयाणां च

टीका ।

॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ अथ राहुकेतुगतिमाह मेषादित्यर्थेन । राहुः  
 मेषात् मेषराशिसकाशात् उत्क्रमते विपरीतगतिक्रमेण क्रमशो याति तथा  
 केतुः वृषाद्वृषराशेः सकाशात् क्रमात् अनुलोमगतिक्रमेण याति ॥ ४१ ॥  
 उक्तस्य प्रयोजनमाह ऋक्षेति । ऋक्षसंध्यंतरे ऋक्षस्य यद्राहुकेत्वोः प्रवेशसं-  
 ध्यंतरं तस्मिन्नसौ प्रष्टा प्रश्नकर्ता जातश्चेत् भृशमिति निश्चयेन म्रियते न-  
 श्यति तथा केतुराहुस्थिते केतुराहुसंयुक्ते राशौ यः भसंधिः राशिसंधिः त-  
 स्मिन् प्रष्टुः मरणं भवेत् एवं राहुकेतुवत् इतरेषां त्रयाणां धूमकार्मुकपरिवेषा-

भाषा ।

॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ यह श्रीमान् आदि लेके वि-  
 द्वाणपर्यंत एकसो पंचावन १५५ योग कहै. वे विषम राशिके नवांशमें श्रीमान्  
 योगसे गिनती करना, समराशिका नवांश होवे तो विद्वान् योगसे आरंभ करके  
 श्रीमान् योगपर्यंत क्रम जानना. चर राशिमें क्रमसे स्थिर राशिमें विलोमसे दि-  
 स्वभावराशिमें अर्धभागसे क्रम लेना ॥ ३९ ॥ ४० ॥ अब राहुकेतुकी गति कहते  
 हैं. राहु मेषसे विपरीत क्रमसे जाताहै केतु वृषमसे क्रमसे जाता है ॥ ४१ ॥ अब  
 राहुकेतुगतिका फल कहते हैं. राहुकेतुका एकराशिमें संयोग होवे तो प्रश्न करने-  
 वाले मरण जानना. धूम कार्मुक परिवेषकामी फल पेंना जानना ॥ ४२ ॥ ४३ ॥



प्रकाशे व्याधिपीडितः ॥ दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते न  
मृतो यदि ॥ ४३ ॥ कलांशराशितोऽरिष्टे नक्षत्रारिष्टसंभ-  
वे ॥ पित्रादीनां सुतस्यापि तद्वशाच्चितयेत्सुधीः ॥ ४४ ॥  
पापशत्रुग्रहक्रांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ॥ सौम्यपापादय-  
श्चैवं शुभाशुभफलप्रदाः ॥ ४५ ॥ एकद्वित्रिचतुःपंचषट्स-  
टीका ।

णां प्रकाशे उदयराशौ प्रष्टा व्याधिपीडितो भवति कदा यदि न मृतश्चेत्  
दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते इति ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अथ पित्राद्यरिष्ट-  
माह कलांशेत्यादि एकोनपंचाशच्छ्लोकपर्यंतम् । कलांशराशितः षोडशांशरा-  
शिसकाशात् अरिष्टे प्राप्ते सति तथा नक्षत्रारिष्टसंभवे नक्षत्रतः अरिष्टजनिते  
अरिष्टे सति पित्रादीनां सुतस्यापि तद्वशात्कलांशनक्षत्रांशशुभाशुभवशा-  
त्सुधीः शुभाशुभं चितयेत् तद्रीतिमाह । पापशत्रुग्रहाक्रांताः पापग्रहैः शत्रु-  
ग्रहैर्वा सहिताः तद्दृष्टिसंयुता वा भावाः यदि भवेयुः तदा सौम्यपापादयः  
यथाक्रमं शुभाशुभफलप्रदा इष्टानिष्टफलदा ज्ञातव्याः तत्रांशानाह । एक १  
द्वि २ त्रि ३ चतुः ४ पंच ५ षट् ६ सप्त ७ अष्ट ८ अंक ९ दिक् १० धरा १  
सूर्यः १२ इंद्रः १ नृपः १६ मूर्च्छा २१ इंद्रः १४ नृपाः १६ भानि २७ अर्कः  
१२ नृपाः १६ जिनाः २४ पंच ५ अष्ट ८ वसुः ८ भूतानि ५ इष्ट ५ सुर ५  
दंत ३२ जिन २४ अद्रि ७ नखाः २० त्रिंशत् ३० खवेदाः ४० षट्सप्ततिः  
७६ षष्टिः आदियुक् ६७ नवतिः ९० शतं १०० मूर्च्छा २१ जिनाः २४ दं-  
ताः ३२ जिनाः २४ दिशः १० एवं प्रकारेण नवशतं ९०० उक्तयोगाः अ-  
नुलोमविलोमक्रमेण ज्ञेयाः । तत्र तु पूर्वपूर्वयुता संख्या अनुक्रमोक्तांशसंख्या  
लक्ष्मीयोगफलप्रदा सौम्ययोगे भवति सैव पापयोगे तन्नाशकेति इयं संख्या  
नक्षत्रचक्रे राशिचक्रे च ज्ञेया दिवसचक्रे तु वामतः विलोमतः स्मृता ॥४४॥

भाषा ।

अब पितृभ्रातृपुत्रादिकोंका अरिष्ट कहते हैं. षोडशांशराशितसे अरिष्ट आवे नक्षत्र-  
मतसे अरिष्ट आवे और वे वे भावके ऊपर पापग्रहोंकी दृष्टि होवे या पापग्रह बैठे  
होवे तो पित्रादिकोंका अशुभफल जानना. शुभदृष्टियोगोंसे शुभ जानना. वार्किके  
नवसो ९०० योग जो हैं उसका विचार पूर्वापर निर्णय करके देखना. तो स्पष्ट

साष्टाङ्कदिग्धराः ॥ सूर्येन्द्रनृपमूर्छेन्द्रनृपभार्कनृपाजिनाः  
 ॥ ४६ ॥ पंचाष्टवसुभूतेषु सुरदंतजिनाद्रयः ॥ नखास्त्रिंश-  
 त्ववेदाः षट्सप्ततिः षष्टिराद्रियुक् ॥ ४७ ॥ नवतिश्च शतं  
 मूर्च्छा जिना दंता जिना दिशः ॥ एवं नवशतं प्रोक्ताः  
 क्रमादेवं तु तत्र तु ॥ ४८ ॥ पूर्वपूर्वयुता संख्या लक्ष्मी-  
 योगफलप्रदा ॥ नक्षत्रे राशिचक्रे तु दिवसे वामतः स्मृ-  
 ता ॥ ४९ ॥ शुभमित्रग्रहाक्रांता भावास्तदृष्टिसंयुताः ॥  
 द्वित्रिपंचषट्सप्तवसुनंददिशोऽद्रयः ॥ ५० ॥ त्रिंशद्दि-  
 शो नखाः षष्टिः सूर्यमूर्छाजिनाजिनाः ॥ आकृतिर्भानि  
 भार्कान्नखाश्छंदः शतं नखाः ॥ ५१ ॥ त्रिंशत्खवेदा दि-  
 ग्विधे शतं षष्टिः शतं जिनाः ॥ वेदाः खवेदाः पूर्वार्द्धे

## टीका ।

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ अथ सुगतिदुर्गतिप्रदानंशानाह शु-  
 भमित्रेत्यादिसार्धद्विपंचाशच्छ्लोकपर्यन्तम् । शुभमित्रग्रहाक्रांताः शुभग्रहेर्भि-  
 त्तैर्वा युताः तदृष्टिसंयुता वा भावाश्चेत् द्वि२त्रि३ पंच५षट् ६ सप्त७वसुः८नंदाः  
 ९ दिशः १० अद्रयः ७ त्रिंशत् ३० दिशः १० नखाः २० षष्टिः ६० सूर्यः १२ मूर्च्छा २१  
 जिनाः २४ आकृतिः २९ भानि २७ अर्काः १२ अग्रयः ३ नखाः २० छंदः  
 २६ शतं १०० नखाः २० त्रिंशत् ३० खवेदाः ४० दिक् १० विधे १३ शतं  
 १०० षष्टिः ६० शतं १०० जिनाः २४ वेदाः ४ खवेदाः ४० एते राशिपू-  
 र्वार्द्धे शुभाः परार्धे तु प्राग्वत् विलोमतः केवलं दुर्गतिप्रदा भवन्ति ॥ ५० ॥

## भाषा ।

मालूम होवेगा ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ अथ सुगतिदुर्गति-  
 का ज्ञान कहते हैं. भाव शुभमित्रग्रहोंसे युक्त होवे या उन्नोंकी दृष्टि होवे तो यह  
 योग २।३।५।६।७।८।९।१०।११।३।०।१०।२।०।६।०।१२।११।२।४।२।४।२।१।  
 २।७।१२।३।२।०।२।६।१०।२।०।३।०।४।०।१३।१०।०।६।०।१०।०।२।४।  
 ४।४।०। राशिके पूर्वार्द्धमें जानना. परार्द्धमें विलोमक्रमसे लेना. केवल दुर्गति

परार्धे प्राग्वदत्र तु ॥ ५२ ॥ एते योगबलाच्चैव केवलं दु-  
र्गतिप्रदाः ॥ दिनर्क्षं चक्रसंख्याः स्युरादिमध्यावसानिकाः  
॥ ५३ ॥ सप्तविंशतिसप्तत्यां शते षष्ठ्यां शतद्वये ॥ ५४ ॥  
कुब्जः कलांशे मूकस्तु शतद्वयशतत्रये ॥ ५५ ॥ सहस्रे  
द्विशते जातः पंचमे पापसंयुते ॥ द्वित्रिपंचाष्टदिग्विश्वनृ-  
पातिघृतिभूमयः ॥ ५६ ॥ नवदिग्भसुरैः स्थानैस्तिथिवि-  
श्वाष्टकैः क्रमात् ॥ गुणेन वामतः प्रोक्तो लक्ष्म्यंशे श्रीस-

टीका ।

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ अथ दिनादिभागग्रहणरीतिं फलं चाह दिनेत्यादिसप्तपंचा-  
शच्छ्लोकपर्यन्तम् । दिनानि दिवसाः ऋक्षाणि नक्षत्राणि चक्रं राशिचक्रं एतेषां  
संख्याः आदिमध्यावसानिकाः प्रथमद्वितीयांत्यभागभवाः ज्ञेयाः सप्तविंश-  
तिः २७ सप्तत्यां ७० शते १०० षष्ठ्यां ६० शतद्वये २०० षट् ६ पंचाशति  
५० विंशे २० षण्णवत्यां ९६ अशीतिके ८० षष्टिभागे ६० विंशत्यां २०  
शते १०० षष्ठ्यां ६० शतद्वये २०० जातः कुब्जः स्यात् कलांशे तु शत-  
द्वये २०० शतत्रये ३०० सहस्रे १००० द्विशते २०० पंचमे ५ पापसंयुते  
सति मूको भवतीति तथा ते अंशाः द्वि २ त्रि ३ पंच ५ अष्ट ८ दिक् १०  
विश्वे १३ नृपाः १६ अतिघृतिः १८ भूमयः १ नव ९ दिक् १० भं २७ सुराः  
३३ स्थानैः ४९ तिथिः १५ विश्वे १३ अष्टकैः ८ एतैः वामतः गुणेन गुण-  
नेन प्राप्तलक्ष्म्यंशे एतत्संज्ञके भागे जातः श्रीसमान्वितः प्रोक्तः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

भाषा ।

देनेवाले हैं ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ अब कुब्जादि योगका ज्ञान कहते हैं. दिन  
नक्षत्र राशि इन्नोंकी संख्या आदि मध्य अवसानसहित मिलायके जो संख्या सो  
यह आवे तो २७।७०।१००।६०।२००।६।५०।२००।९६।८०।६०।२०।१००।  
६०।२००। कुब्ज होवेगा, २००।३००।१०००।२००। और पंचम भावमें  
पापग्रह होवे तो मूक होवेगा, २।३।५।८।१०।१३।१६।१८।१९।१०।२७।३३।  
४९।१५।१३।८ यह योगसे श्रीमान् होवेगा ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

मन्वितः ॥ ५७ ॥ रविचंद्रतमःपातकालेष्वरिभवेषु च ॥  
 पंचाशीतिशते वेदे मनौद्वित्रिशते पुनः ॥ ५८ ॥ खा-  
 ब्धिपंचसु दिग्भागे सहस्रे चाक्षिचंद्रगे ॥ खखा-  
 नि रूपं विश्वाष्ट्रिचंद्रखखभूमिपैः ॥ ५९ ॥ शता-  
 धिके च जातोस्मिन्बधिरः षष्टिसंयुते ॥ कर्कितृश्रिक-

टीका ।

॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ अथयोगांतराण्याह खीत्यादि एकोनषष्टितमश्लोक-  
 पर्यंतम् । रविचंद्रतमःपातकालेषु सूर्यचंद्रराहुपातकालेषु अरिभवेषु ६।११ एषु  
 तथा पंचाशीतितमे ८५ शते १०० वेदे ४ मनौ १४ द्वि २ त्रि ३ शते १००  
 खाब्धि ४० पंच ५ दिग्भागे १० सहस्रे १००० खाक्षि ३० एतेषु चंद्रगे चं-  
 द्रसहिते भागे सति खखानिरूपं १०० विश्वे १३ अष्ट ८ त्रि ३ चंद्र १ खखः  
 भूमिपैः १६०० शताधिके षष्टिसंयुते भागेच जातः बधिरः स्यात् बधिरो भ-  
 वति ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ अथाऽपमृत्युकालमाह कर्कीत्यादिद्विषष्टिश्लोकपर्यंतम् ।  
 कर्कितृश्रिकमीनांशतद्राशीशांशके कर्कः तृश्रिकः मीनः एतेषां यो नवमां-  
 शः तस्मिन् अथवा तद्राशीशांशके ते च पूर्वोक्तास्त्रयश्च राशयः कर्कितृश्रिक-  
 मीनाख्याः तेषां ये ईशाः चंद्रभौमगुरुवः तेषां येऽशाः कर्कमेपतृश्रिकधनुर्मी-  
 नाख्याः तेषु जात्येकवचनं तथा पातके पाते अथ वा औच्चशच्चक्षगतयोः  
 उच्चराशिशत्रुराशिस्थयोः ग्रहयोः अंशके राशिनवांशे यावदेकादि त्रिशतं ए-  
 कांकमारम्य शतत्रयांकपर्यंतं ये अंकाः तैः सुभाजिताः ये आकाशपूर्णघट-  
 यः १८०० अष्टशताधिकसहस्रांकाः यावत् निःशेषं भवेयुः तावद्भाजनीयाः

भाषा ।

अब योगांतर कहते हैं. सूर्यचंद्रराहुपात कालके विषे ६।११।८५।१००।४।१४।  
 २।३।१००।४०।५।१०।१०००।३०।१००।१३।८।३।१ यह योगमें चंद्रसहित  
 भाग होवे तो बहिरा होवे ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ अब मृत्युकाल कहते हैं. कर्क तृश्रिक  
 मीनांशके स्वामी क्रमसे चंद्र भौम गुरु जानने. कर्क मेष तृश्रिक धन मीन इनोके  
 विषे और पातके विषे उच्चराशि शत्रुराशिके ग्रहके अंशोंके विषे एक एकसे लेके  
 तीनसो अंकपर्यंत जो अंक हैं उनके भाग लेना. अठरासो कहा जहांतक निःशेष

मीनांशे तद्वाशीशांशके तथा ॥ ६० ॥ पातकेत्वोच्च शत्रु-  
क्षगतयोरंशके पुनः ॥ एकादित्रिशतैर्यावत्क्रमात्तास्तु सु-  
भाजिताः॥६१॥आकाशपूर्णघृतयो निःशेषं लब्धसंख्यके॥  
सदोषेऽनंतरांशे तु जातस्यैतेऽपमृत्यवः ॥ ६२ ॥ पंचाश-  
तः षडावृत्त्या स्वल्पमध्यचिरायुषः ॥ क्रमेणोत्क्रमशस्ते  
तु त्रैराशिकविधानतः ॥ ६३ ॥ खाक्ष्यद्रयस्तु षष्ट्यंशास्त्रि-  
टीका ।

ततः लब्धसंख्यके अंशे सदोषे पापसाहित्यादिरूपे जातस्य उत्पन्नस्य जंतोः  
अपमृत्यवः ज्ञेया इति ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ अथ सप्तमध्ये चिरायुर्ज्ञानमाह  
पंचाशतइति । पंचाशतः ५० षडावृत्त्या आवृत्तिपटकेन किंचिदधिकाष्टांकेन  
सुहुर्मुहुः गणनया स्वल्पमध्यचिरायुषः क्रमेणोत्क्रमशः त्रैराशिकविधानतः  
अनुपातरीत्या गणनेन स्वल्पमध्यचिरायुषो ज्ञेयाः प्रथमावृत्तौ स्वल्पायुषः  
द्वितीयावृत्तौ मध्यमायुषः तृतीयावृत्तौ चिरायुषः अयं क्रमः । उक्र-  
मस्तु चतुर्थावृत्तौ चिरायुषः पंचमावृत्तौ मध्यमायुषः षष्ठावृत्तौ स्वल्पायुषइति  
तत्र वर्षाण्याह शराः ५ दिशः १० तिथयः १५ नखाः २० तिथयः १५ दश  
१० एवं षडिति॥६३॥ अथ चतुर्दशग्रहाणां नवग्रहाणां च षष्ट्यंशत्रिंशांशादी-  
नाह खाक्ष्यद्रयइत्यादिसार्धाष्टषष्टिःश्लोकपर्यंतम् । खाक्ष्यद्रयः ७२० संख्या-  
काः षष्ट्यंशाः भवंति तथा खरसाग्रयः ३६० त्रिंशांशाः भवंति अष्टपद्भूम-  
भाषा ।

होवे वहांतक भाग लेके लब्ध जो हैं वो संख्यातुल्य अंकमें अंश पापग्रहका आवे  
तो उतने वरसोंमें अपमृत्यु जानना ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ अब घोडेमें स्वल्पायु-  
षका मत कहते हैं. पचास ५० कुब्ज आवृत्तिके वर्षसे वारंवार गणना और त्रैरा-  
शिकरीतिसे करके स्वल्प मध्य चिरायु क्रम उत्क्रमसे जानना. प्रथमावृत्तिमें स्व-  
ल्पायु द्वितीयावृत्तिमें मध्यमायु तृतीयावृत्तिमें दीर्घायु उसकू क्रम कहते हैं. चौथी  
आवृत्तिमें दीर्घायु पांचवी आवृत्तिमें मध्यमायु छठी आवृत्तिमें स्वल्पायु यह उत्क्रम  
जानना. आवृत्तिके वर्ष ५।१०।१५।२०।१५।१० जानना॥६३॥अब चौड़ा ग्रहोंके

शांशाः खरसाग्रयः ॥ ६४ ॥ अष्टषट्भूमयः कालहोराः  
सप्तदिनेषु च ॥ वेदेन्द्रा द्वादशांशाः स्युर्नवांशा गजखे-  
न्दवः ॥ ६५ ॥ सप्तांशा वेदनागास्तु द्रेष्काणास्तु षडग्र-  
यः ॥ अर्द्धहोराजिनाः प्रोक्ता नक्षत्राणि च राशयः ॥ ६६ ॥  
भुंजते च ग्रहाश्चैवं मनुसंख्याश्च भुंजते ॥ राशयश्च ग्रहा-  
श्चैव नक्षत्राणि च भुंजते ॥ ६७ ॥ रव्यादिशिखिपर्यन्ता  
नवभूमेन्द्रकार्मुकौ ॥ पातश्च परिवेषश्च कालश्चेति चतुर्द-  
श ॥ ६८ ॥ तेषां प्रादुर्भवे चैवमन्यदा तु नवग्रहाः ॥

### टीका ।

यः १६८ कालहोराः सप्तदिनेषु संहत्या भवन्ति वेदेन्द्राः १४४ द्वादशांशाः  
स्युः गजखेन्दवः १०८ नवांशाः स्युः वेदनागाः ८४ सप्तांशाः स्युः षडग्रयः  
३६ द्रेष्काणाः स्युः जिनाः २४ अर्द्धहोराः स्युः एवं नक्षत्राणि राशयश्च प्रो-  
क्ताः तान् ग्रहाः मनुसंख्याकाः रविचंद्रभौमबुधगुरुशुक्रशनिराहुकेतुभूमेन्द्रका-  
र्मुकपातपरिवेषकालाख्याः चतुर्दश ग्रहाः भुंजते कदा तेषां प्रादुर्भावे सति  
भूमेन्द्रादीनां प्रकटीभावे सति अन्यदा अन्यकाले तु नवग्रहाः रव्यादिकेत्वं-  
ता एवेति ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ अथ नक्षत्राणि गणयति  
दक्षादितिसार्धैकसप्ततिश्लोकपर्यन्तम् । दक्षात् अश्विनीनक्षत्रात् पंच ५, भगा-  
त् पूर्वानक्षत्रात् षट् ६, आर्द्रायाः पंच ५, वारुणात् शततारकासकाशात्

### भाषा ।

षट्चंशादिकोंके अंक कहते हैं. षट्चंशकू वारह राशिसे गुणन किये तो षट्चंश  
योगांक ७२० भये वैसे आगे जानना. त्रिंशांशके ३६० कालहोराके १६८ द्वा-  
दशांशके १४४ नवांशके १०८ सप्तांशके ८४ द्रेष्काणके ३६ अर्द्धहोराके २४  
यह अनुक्रमसे नक्षत्र राशि सूर्य १ चंद्र २ मंगल ३ बुध ४ गुरु ५ शुक्र ६ शनि  
७ राहु ८ केतु ९ धूम १० इंद्रचाप ११ पात १२ परिवेष १३ काल १४ इ-  
नोंका ऊपर लिखे हुये अंशोंमें प्रगट होवे पीछे फलका विचार देखना ॥ ६४ ॥  
॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ अथ नक्षत्रकी गणना कहते हैं. अश्विनीसे ५,

दस्तात्पंच भगात् षट् च पंचार्द्राद्वारुणादपि ॥ ६९ ॥ कूर्पात्सप्त क्रमात्प्रोक्तास्तत्तदंशेषु सर्वदा ॥ अक्षिणी पंचदश च नखास्तत्त्वं तथामराः ॥ ७० ॥ सत्र्यंशाश्च षडंशोनाः श्रुत्वारिंशक्रमादथ ॥ शतं खेष्विदवः प्रोक्ता विनाडीतनवोऽपि च ॥ ७१ ॥ कलांशाद्यर्धहोरांशभोगकालः प्रकीर्ति-

## टीका ।

चत्वारि ४, कूर्पात् वृश्चिकराशिविहितात् पूर्वोक्तभगादिषट्कानंतरप्रथमप्राप्तात् अनुराधासकाशादित्यर्थः सप्त ७, एवं क्रमात् तत्तदंशेषु सर्वदा ताराः प्रोक्ताः ज्ञेयाः तत्र विनाडीतनवः विनाडीरूपाणि अक्षिणी २, पंचदश १५, नखाः २०, तत्त्वानि २५, अमराः ३३, सत्र्यंशा अमराः त्र्यंशसहिताः ३३, षडंशोनाः अमराः षष्ठांशोनाः ३३, चत्वारिंशत् ४०, शतं १००, खेष्विदवः १५० अयं कलांशाद्यर्धहोरांशभोगकालः कलांशादीनां अर्धहोरांशस्य च भोगकालः प्रकीर्तितः कथितः ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ प्रमाणेति। अयं श्लोकखैराशिकगणितप्रकरणे प्रमाणीभूतः। कालात्मकाः घटिकात्मका एते प्रमाणराशयश्च भागहाराः भागं हारयन्ति तथाभूताः भागहरणसाधनीभूता इत्यर्थः भवन्तीति शेषः च परं तत्तदंशकला तेषां तेषामेशानां

## भाषा ।

पूर्वासे ६, आर्द्रासे ५, शततारासे ४, अनुराधासे ७ यह क्रमसे तारा कहे हैं. वहां कलांश २।१५।२०।२५।३३।३३।३३।४०।१००।१५०। यह कलांशका मांगकाल कदा ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ अब कलांशादिक्रमं उत्पन्न भया हुवेका फल कहते हैं. कलांशमें जो उत्पन्न भया उसकू क्रमसे कटुक मिष्ट तिक्त तुवर क्षार अम्ल यह क्रमसे जानना. षष्ट्यंशमें जो उत्पन्न भया है उसका फल अम्लसे लेके कटुपर्यंत गिनना. त्रिंशांशमें जो उत्पन्न भया है कषायादि तिक्तांत क्रमसे गिनना. कालहोरांशमें उत्पन्न भया होवे तो तिक्तादि क्रमसे गिनना. द्वादशांशमें मधुरादिक्रमसे गिनना. नवांशमें अम्लादिक्रमसे गिनना. सप्तांशमें अर्धहोरांशमें त्रेष्काणमें मधुरादिक्रमसे गिनना. वे वे अंशसंख्या तुल्यवर्षमें रसप्रीति उत्पन्न होती

तः ॥ प्रमाणराशयश्चैते भागहाराः कलात्मकाः ॥ ७२ ॥  
 तत्तदंशकला इच्छा राशयो गुणराशयः ॥ कटुको मधुर-  
 स्तिक्तः कषायो लवणाम्लको ॥ ७३ ॥ कलांशे क्रमशो ग-  
 ण्याः षष्ठ्यंशे व्युत्क्रमात्स्मृताः ॥ त्रिंशांशे तु कषायादिः  
 कालहोरांशके पुनः ॥ ७४ ॥ तिक्तादिद्वादशांशेषु मधु-  
 रादिनवांशके ॥ अम्लादिमुनिभागे तु द्रेष्काणे मधु-  
 रादितः ॥ ७५ ॥ अर्धहोरांशके तद्वज्जातस्यैष्वेव जा-  
 टीका ।

कलाभूता इच्छाराशयः इच्छासंज्ञकराशयः गुणराशयो भवन्ति इति ॥ ७२ ॥  
 अथ कलांशादिषु उत्पन्नस्य प्रियरसानाह कटुक इत्यादिसार्धपंचसप्ततिश्लो-  
 कपर्यंतम् । कलांशे जातस्य अंशक्रमात् कटुस्तिक्तः मधुरः मिष्टः तिक्तः कटुः  
 कषायः तुवरः लवणः क्षारः आम्लः स्पष्टः एते क्रमशः पुनः पुनः प्रीतिविष-  
 ये गण्याः षष्ठ्यंशे तु व्युत्क्रमात् अम्लादि क्रमशः कटुकांतं षट् सुहृर्गणनी-  
 याः त्रिंशांशे तु कषायादि तिक्तस्तं षट् कालहोरांशके तिक्तादि मधुरांतं षट्  
 द्वादशांशेषु मधुरादि कटुकांतं षट् नवांशके अम्लादि लवणांतं षट् मुनि-  
 भागे सप्तमांशे द्रेष्काणे चापि तु मधुरादितः कटुकांतं षट् तद्वदेव अर्धहोरां-  
 शकेऽपि एषु अंशेषु जातस्य उत्तरसेषु तत्तदंशसंख्यया सुहृर्गणनेन रसेषु  
 प्रीतिर्जायते इति ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ अथ षष्ठ्यंशोत्पन्नकन्यायाः  
 वंध्यात्वादिज्ञानमाह वेदेत्यादिसार्धसप्ततिश्लोकपर्यंतम् । वेदाष्टद्वादशभिः  
 ४।८।१०।२७। सभिः ३ एतत्संख्याकैः अंशैः प्रषष्ठ्यंशे मास्करे सूर्ये सति  
 उत्पन्ना कन्या वंध्या भवति तथा त्रि ३ षट् ६ नव ९ त्रि ३ ख० अर्क १२

भाषा ।

है ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ अब षष्ठ्यंशमें जो कन्या उत्पन्न होवे उसका  
 वंध्यायोग कहते हैं. ४।८।१०।२७।३ यह अंशोंमें सूर्य होवे तो यह षष्ठ्यंशोत्पन्न  
 कन्या वंध्या होती है. तथा ३।६।९।३।०।१२।१४।२४।३२।३३ यह क्रमसे अं-  
 क ९।१०।२७।२४।१२।१२।४९।३।५।५० यह षष्ठ्यंशमें कन्या उत्पन्न भई



यते ॥ वेदाष्टदशमैरामैः प्रषष्ट्यंशे च भास्करे ॥७६॥ त्रि-  
षट्पनवत्रिखार्काब्धिजिनदंतसुराः क्रमात् ॥ नवदिग्भैर्जि-  
नार्कैश्च सूर्येस्तानैस्त्रिपंचभिः ॥७७॥ पंचाशद्भिः क्रमाद्गु-  
ण्या वंध्यावंध्या प्रकीर्तिता ॥ त्रिवेदाद्यंकविश्वेन्द्रनखच्छंदो-  
जिना यमाः ॥७८॥ पंचाशच्च शतं पूर्वयुता मृतसुता स्मृ-  
ता ॥ पुत्राणां तु कलांशे तु शेषे जाता मृता द्विज ॥७९॥  
द्वादशे च चतुर्विंशे चतुस्त्रिंशे सुरांशके ॥ द्विसप्तांशे नवां-  
टीका ।

अब्धि ४ जिन २४ दंत ३२ सुराः ३३ एते अंकाः क्रमात् नव ९ दिक् १०  
मानि २७ जिनाः २४ अर्काः १२ सूर्याः १२ तानाः ४९ त्रयः ३ पंच ५  
पंचाशत् ५० एतैः गुण्याः प्राप्तांकपरिमिते प्रषष्ट्यंशे वंध्या पूज्या प्रकीर्तिता  
कथिता ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ अथ मृतसुताज्ञानमाह त्रिवेदेत्यर्धकद्वयेन । त्रयः  
३ वेदाः ४ अद्रयः ७ अंकाः ९ विश्वे १३ इंद्राः १४ नखाः २० छंदांसि २६  
जिनाः २४ यमाः २ पंचाशत् ५० शतं १०० एतान्पूर्वांकियुतान् कृत्वा त-  
स्मिन् भास्करे जाता कन्या मृतसुता ज्ञेया ॥ ७८ ॥ अथ प्रकारांतरमाह पु-  
त्राणामित्यर्थेन । कलांशे शेषे नाम उक्तावशिष्टे षोडशांशे भास्करे सति पु-  
त्राणां मध्ये के चिज्जाता अपि मृता ज्ञेयाः हे द्विजेति ॥ ७९ ॥ अथ जातस्य  
संन्यासित्वज्ञानमाह द्वादशेत्यादि एकाशीतिश्लोकपर्यन्तम् । द्वादशांशे १२  
चतुर्विंशांशे २४ सुरांशे ३३ द्विसप्तांशे ७२ नवांशे ९ षष्ट्युत्तरशतांशे १६०  
षट्शतेश्च सहस्रेश्च खलाहीन्द्रशके १८०० एतत्संख्याके खांशतिथ्यंशके दशां-

भाषा ।

होवे तो पूज्य होवे ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ अब मृतसुतायोग कहते हैं ३।४।७।९।  
१३।१४।२०।२६।२८।२।५०।१०० इस अंकोंमें पूर्वके अंक युक्त करके वो  
अंशमें सूर्य होवे तो मृतसुतायोग जानना ॥ ७८ ॥ अब मृतपुत्रज्ञान कहते हैं,  
षोडशांशमें सूर्य होवे तो पुत्रोंमें कितनेक पुत्र मृत हुवे जानना ॥ ७९ ॥ अब सं-  
न्यासीका योग कहते हैं १२।२४।३३।७२।९।१६०।६००।१०००।१८००।

शांशे षष्ठ्युत्तरशतांशके ॥ ८० ॥ षट्शते च सहस्रे च ख-  
 खार्हींद्वंशके पुनः ॥ खांशतिथ्यंशके जातो भवेत्प्रव्रजितो  
 नरः ॥ ८१ ॥ गुरुशुक्रोदये राशौ तयोः परमहंसकः ॥ श-  
 त्रुराशिगतौ तौ चेदप्रकाशयुतौ तु वा ॥ ८२ ॥ अष्टः  
 स्यात्तु तथा ज्ञे तु त्रिदंडावाबहूदकाः ॥ रवौ जटाधरः शैवः  
 कुजे नमोऽटनः स्मृतः ॥ ८३ ॥ मंदे बौद्धोऽथ वाग्मी स्या-  
 द्राहौ केतौ तथैव च ॥ धूमे कापालिकाश्चापे काले तु परि-  
 टीका ।

शपंचदशांशके जातो नरः प्रव्रजितः संन्यासी भवेत् ॥ ८० ॥ ८१ ॥ अथ  
 परमहंसादियोगानाह गुर्वित्यादिसार्धचतुरशीतिश्लोकपर्यन्तम् । यस्मिन् रा-  
 शौ गुरुदयः शुक्रोदयो वा तयोः राश्योः जातः परमहंसो भवति तौ गुरुशु-  
 क्रौ स्वशत्रुराशिगतौ अप्रकाशयुतौ धूमादिग्रहयुतौ वा संतौ अष्टः परमहंस-  
 धर्मात् च्युतः स्यात् तथा ज्ञे तद्व्रति बुधे सति तु त्रिदंडी, संन्यासी, बहूदको  
 वा भवेत् तथा रवौ सति जटाधरः शैवः जटाधारी शिवभक्तो भवेत् तथा कु-  
 जे भौमे सति नमः वस्त्रहीनः स्यात् अटनः भ्रमणशीलः स्यात् तथा मंदे श-  
 नौ सति बौद्धो बुद्धधर्मवान् सन् वाग्मी वक्ता स्यात् तथैव राहौ केतौ वा  
 जन्मराशौ सति वाग्मी बौद्धः स्यात् तथा धूमे ग्रहे सति कापालिकः स्यात्  
 तथा चापे काले परिवेषके वा ग्रहे सति शूद्रपापः छत्रपापः तथा लिंगी पा-  
 भापा ।

१५।१० यह संख्यातुल्य अंशमें जन्म होवे तो संन्यासी होवे ॥ ८० ॥ ८१ ॥  
 अब परमहंसयोग कहते हैं, जिस राशिमें गुरुका वा शुक्रका उदय होवे उस रा-  
 शिमें जन्म होवे तो परमहंसयोग जानना, अथवा गुरु शुक्र धूमादिकसे युक्त होवे  
 तो धर्मअष्ट परमहंस होवे, गुरु शुक्र सरीखा बुधका योग होवे तो त्रिदंडी संन्या-  
 सी होवे बहूदक वा होवे अथवा सूर्य होवे तो शिवभक्त होवे, मंगल होवे तो वस्त्र-  
 हीन भ्रमण करता फिरे शनि होवे तो बौद्धधर्म बोलनेवाला होवे, राहु केतु जन्म-  
 राशिमें होवे तो बौद्धधर्मी होवे, धूम ग्रह होवे तो कापालिक धर्मी होवे, चापकाल  
 परिवेष ग्रह होवे तो गुप्तपापी पाखंडी कुलमार्गने चलनेवाला होवे ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

वेषके ॥ ८४ ॥ गूढपापो यथा लिंगी कुलमार्गतस्तथा ॥  
षष्ठ्यंशे ऋक्षसंध्यंशे सार्ये पौष्णेन्द्रभांशके ॥ ८५ ॥ त्रिंशां-  
शे कालहोरांशे तत्तदंशांशकेऽपि च ॥ नव मूर्च्छासुरांशे तु  
यथा षष्ठितमे युतः ॥ ८६ ॥ शतांशे खाब्धितिथ्यंशे द्वा-  
दशांशे नवांशके ॥ राश्यंतांशे तु सप्तांशे ऋक्षसंधिमृगांति-  
के ॥ ८७ ॥ मृगकर्कालिसिंहादिमीनतूलांशकादिमे ॥ अं-  
त्यांशेऽपि च जातस्य षडर्थाक्षि जिने रदे ॥ ८८ ॥ द्रेष्का-  
णेनार्धहोरायां त्रिसप्तेन नखेषु तु ॥ जातः प्रव्रजितश्चैषु  
सर्वत्रैकयुतेष्वपि ॥ ८९ ॥ पापाप्रकाशसंयोगे कलत्रे त्वशुभं  
टीका ।

खंडी कुलमार्गतो वा स्यात् इति ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ पुनः परिव्राद्धर्मज्ञा-  
नमाह षष्ठ्यंशेत्यादिएकोननवतिश्लोकपर्यंतम् ॥ षष्ठ्यंशे ६० ऋक्षसंध्यंशे सार्ये-  
आश्लेषांशे पौष्णे रेवत्यंशे इंद्रभांशके ज्येष्ठांशे त्रिंशांशे कालहोरांशे नवांशे मूल-  
च्छींशे ४९ सुरांशे ३३ षष्ठितमंशे शतांशे खाब्धितिथ्यंशे ५४० द्वादशांशे  
नवांशे राश्यंतांशे राश्यवसानांशे सप्तांशे ऋक्षसंधौ नक्षत्रसंधौ मृगांतिमांशे  
मकरकर्कवृश्चिकसिंहमेषमीनतुलानां आदिमंशे अंत्यांशे वा जातस्य तथा  
परिव्राद्धर्मः स्यात् षट् ६ अर्थः ५ अक्षिणी २ जिनाः २४ रदाः ३२ एष्वं-  
शेषु द्रेष्काणे अर्धहोरायां त्रिसप्ते नखे अंशे च जातः प्रव्रजितः संन्यासी स्या-  
त् अथवा सर्वत्र उक्तेषु अंशेषु एकयुतेषु जातश्चापि प्रव्रजितः स्यात् इति ॥  
॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ अथांशविशेषजातस्य स्त्रीलक्षणमा-  
भाषा ।

॥ ८४ ॥ अब पुनः संन्यासीके चर्मांकां ज्ञान कहते हैं. शष्ठ्यंश ६० में, नक्षत्र-  
संध्यंशमें, आश्लेषांशमें, रेवत्यंशमें, ज्येष्ठांशमें, त्रिंशांशमें, कालहोरांशमें, नवांश-  
में, राशिअवसानांशमें, सप्तांशमें, नक्षत्रसंधिमें, मकर कर्क वृश्चिक सिंह मेष मीन  
तुलावांके आदि अंत्य अंशोंमें जो उत्पन्न हुवा तो संन्यासधर्मनिष्ठ होवे ६।५।२।  
२४।३२ यह अंशोंमें द्रेष्काणमें अर्धहोरामें अथवा पूर्वोक्त अंकमें एक युक्त क-  
रके जो अंक होवे वो अंशमें उत्पन्न होवे संन्यासधर्मनिष्ठ होवे ॥ ८५ ॥ ८६ ॥

भवेत् ॥ रवौ वंध्या तु शीतांशौ क्षीणे तु व्यभिचारिणी  
॥ ९० ॥ कुजे तु म्रियते मंदे दुर्भगा राहुसंयुते ॥ परदार-  
रतिः स्वीयनिषेकाभावतोऽसुताः ॥ ९१ ॥ धूमे विवाहही-  
नः सन् म्रियते कार्मुके सति ॥ परिवेषे तु दुःशीला केतौ  
बंध्याऽसती भवेत् ॥ ९२ ॥ काले भावस्तु पापे तु गर्भस्त्रा-

टीका ।

इ पापेतिद्वाम्याम् । कलत्रे सप्तमस्थाने पापाप्रकाशसंयोगे पापग्रहधूमाद्यप्र-  
काशग्रहयुते अशुभं कलत्रं भवेत् तदेव प्रकाशयति रवौ सति वंध्यालामः स्या-  
त् सप्तमस्थाने शीतांशौ चंद्रे क्षीणे सति व्यभिचारिणी स्त्री स्यात् तथा कुजे  
सति म्रियते स्त्री नश्यति तथा मंदे दुर्भगा राहुसंयुते परदाररतिः स्यात् त-  
द्योगेन स्वीयनिषेकाभाववशादसुताः अपिस्त्युः ॥ ९० ॥ ९१ ॥ अपि च  
धूमं इत्यादि चतुर्नवतिश्लोकपर्यंतमाप्तमस्ये धूमे सति विवाहहीनः सन् म्रि-  
यते कार्मुके सत्यपि तथैव सप्तमे परिवेषग्रहे सति दुःशीला स्यात् तत्र के-  
तौ सति वंध्या स्यात् अथ वा असती भवेत् काले ग्रहे सति अभावः स्त्री-  
राहित्यं स्यात् पाते सति गर्भस्त्रावेण संयुता स्यात् सप्तमे पूर्णचंद्रे सति सु-  
शीला स्त्रीप्रसूता कन्यासूः स्त्री स्यात् दुधे सति अपुत्रा स्यात् जीवे गुरौ  
सति तु गुणयुक्ता सुपुत्रिणी स्यात् शुके सति सौभाग्यसंयुक्ता श्रीमती पु-

भाषा ।

॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ अंश अंशके ऊपरमे स्त्रीके लक्षण कहते हैं. मातर्वै ध-  
रमें पापग्रह होंवे वा धूमादि अग्रकाश ग्रह होंवे तो स्त्री दुष्ट होवे. अब प्रत्येकप्र  
फल जुदा कहते हैं. सूर्य वंध्या, क्षीण चंद्र व्यभिचारिणी, मंगल स्त्रीनाश, श-  
नि होवे तो दुर्भागिनी, राहु होवे तो पररत, होवे ॥ ९० ॥ ९१ ॥ धूम होवे  
तो विवाह न होत मरे कार्मुक ग्रह होवे तो पूर्वोक्त फल परिवेष होवे तो दुः-  
शीला स्त्री होवे, पात ग्रह होवे तो गर्भस्त्रावी स्त्री होवे, बेगु होवे तो वंध्या वा  
दुष्ट होवे, कालग्रह होवे तो निर्गतिन होवे. पूर्णचंद्र मानवें घरमें होवे तो सुशीला  
और कन्याप्रजावती होवे. दुध होवे तो अपुत्रा होवे, गुरु होवे तो सुपुत्रिणी होवे,

वेण संयुता ॥ सुशीला स्त्रीप्रसूता च पूर्यमाणे तु शीतगौ  
॥ ९३ ॥ बुधे त्वपुत्रा जीवे तु गुणयुक्ता सुपुत्रिणी ॥ शुक्रे  
सौभाग्यसंयुक्ता श्रीमती पुत्रिणी भवेत् ॥ ९४ ॥ एष्वेवं  
दशमे पापपुण्यकर्मरतो भवेत् ॥ पंचाशद्भिः सुरैस्तत्त्वैर्नृ-  
पैश्च मुनिभिर्ग्रहैः ॥ ९५ ॥ अष्टभिः षड्भिरेवाथ सप्तादि-  
भिरनुक्रमात् ॥ पंचादिभिश्च होराः स्युरेकोत्तरचयैरथ  
॥ ९६ ॥ पापपुण्यक्रियाकर्ता क्रमाल्लब्धांतरांशजः ॥ आवृ-  
त्तिरुत्तरा प्रोक्ता पापपुण्यक्रिया रतिः ॥ ९७ ॥ मिश्रे तु

टीका ।

त्रिणी च भवेत् ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ अथ दशमभावतारतम्येन शुभा-  
शुभकर्मरतिज्ञानमाह एष्वेवमित्यादिसार्धसप्तनवतिपर्यंतम् । एवमेव दशम-  
भावे पापपुण्यग्रहवशात् दृष्टशुभकर्मफलं मिश्रेतु मिश्रं मिश्रितं स्यात् तत्र  
मिश्रिते अधिकवशादेव निर्णयः पापाधिके अशुभं पुण्याधिके शुभं ज्ञेयम्  
तच्च विशेषतः एष्वंशेषु इत्याह पंचाशद्भिः ५० सुरैः ३३ तत्त्वैः २५ नृपैः १६  
मुनिभिः ७ ग्रहैः ९ अष्टभिः ८ षड्भिः ६ सप्तभिः ७ पंचादिभिः एकावसान-  
कैः तथा एकोत्तरचयैः उक्तांशेषु एकसहितैः अंशैः पापपुण्यमिश्रक्रियाः ज्ञे-  
याः इति ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ अथ ता एव विशदयति वर्णेत्यादिसै-

भाषा ।

शुक्र होवे तो सौभाग्ययुक्त होवे ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ अब दशम भावकी ता-  
रतम्यसे विशेष फल कहते हैं, जैसा सातवें घरमें स्त्रीका फल कहा वैसा दशवें घर-  
में व्यापार शुभाशुभ कर्म फल देखना, दशवे घरमें शुभग्रहयुक्त या दृष्टि होवे तो  
शुभकर्म फल जानना, पापग्रहयुक्त या दृष्टि होवे तो अशुभकर्मफल जानना शुभ  
पाप समान होवे तो मिश्रफल कहना, न्यूनाधिक होवे तो वो देखके अधिक जो  
होवे उसका फल कहना, उसमेंमी यह आगे जो अंश लिखे हैं ५०।३३।२५।  
१६।७।९।८।६।७ पांच लेके एक अवसानपर्यंत और पूर्वोक्त अंकोंमें एक युक्त  
करना, वो अंकोंमें जन्म होवे तो पापादिकके योगसे पापपुण्यमिश्र कर्मफल जान-  
ना ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ कोई कर्म फलकू स्पष्ट दिखाते हैं, वर्णाश्रमके आचा-

मिश्रं त्वधिकवशादेव तु निर्णयः ॥ वर्णाश्रमाचारविहीन-  
बुद्धिः स्त्रियां च पापी परदारसक्तः ॥ ९८ ॥ क्षेत्रापहारी  
च परस्वसर्वं निहत्य योगं सकलं करोति ॥ परस्य चोत्कर्ष-  
विधातकारी विषाग्निदः पातककर्मकृच्च ॥ ९९ ॥ ग्रामस्य  
देशस्य च विप्रवर्य ! धनापहारी व्यसने कृतार्थः ॥ मृति-  
प्रदं कर्म करोति सूर्यात्पाप्यप्रकाशः सितशीतगोश्च  
॥ १०० ॥ दयारतो दानरतः सतेजा स्वाचारपाती विजि-  
तेंद्रियश्च ॥ इष्टं च पूर्णं च करोति जीवे शुक्रे वदान्यः कृ-  
तदारशीलः ॥ १०१ ॥ मेघे त्वगम्यागमनप्रियश्च त्वभ-

टीका ।

कशतश्लोकपर्यंतम् । वर्णाश्रमाचारविहीनबुद्धिः वर्णाः ब्राह्मणादयः आश्र-  
माः ब्रह्मचर्यादयः तत्संबंधी यः आचारः विहिताचरणं तद्विषये विहीना  
नष्टा बुद्धिर्यस्य तथा स्त्रियासंबंधी पापी पापकर्ता परदारसक्तः परस्त्रीलंपटः  
क्षेत्रापहारी परभ्रम्यपहारकर्ता परस्वसर्वं निहत्य विनश्य सकलं आत्मनः यो-  
गं इष्टप्राप्तिं करोति तथा परस्य अन्यस्य उत्कर्षविधातकारी उत्कर्षनाशकः  
विषाग्निदः विषाग्निददातीति तथा विषदः ग्रामादिदाहक इत्यर्थः अत एव  
पातककर्मकृत् ग्रामस्य देशस्य च संबन्धिनः ये विप्रवर्याः तेषां धनापहारी  
व्यसने कृतार्थः व्यसने द्यूतादिरूपे कृतार्थः कृतेच्छः सूर्यात् मृतिप्रदं मारकं  
कर्म करोति सिताहधात् पापी भवति शीतगोः प्रकाशः प्रख्यातः भवति भौ-  
मादयारतः दानरतः सुतेजाः स्वाचारपाती आचारहीनः विजितेंद्रियश्च भव-  
ति तत्र जीवे सति इष्टं पूर्णं खातादि कर्म करोति तत्र शुक्रे वदान्यः दाता भव-  
ति तत्र शनौ कृतदारशीलः इति ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ अथ मेपादिराशि-

भाषा ।

रमें बुद्धिहीन होवे, परस्त्रीलंपट होवे, दूसरेका भूमि चोर लेवे, दूसरेका सर्वस्य ह-  
रण करे, दूसरेका उत्कर्ष नाशकरे, विष देवे, ग्राम जलादेवे, ब्राह्मणोंका धन लेवे,  
सूर्य होवे तो मारक कर्म करे, बुध होवे तो पापकर्म करे, चंद्रमे प्रत्यानर्कति, मंग-  
लसे दयायुक्त, गुरुसे इष्ट पूर्ण कर्म करे, शुक्रसे दाना देवे, शनिसे न्नीशील होवे

क्षयभक्षयो वृषभे सुशीलः ॥ देवेशदेवालयधर्मकारी युग्मे  
विरक्तोऽत्यधनैर्विहीनः ॥ १०२ ॥ चांद्रे च तीव्रं च करो-  
ति पापं परस्वहर्तापि च पूतकारी ॥ सिंहे तु देवस्य वि-  
घातकारी पाथोनके धर्मरतिः सुकृत्यः ॥ १०३ ॥ ज्यूके  
परेषां धनदश्च पूतं करोति चापेऽपि च वृश्चिके तु ॥ पर-  
स्वहर्ता परदारसक्तो मृगोऽपि चैवं घटभे कृतज्ञः ॥ १०४ ॥  
यज्ञस्य कर्ता उषभे तथैव पूर्तादिकारी बहुयोजकः स्यात् ॥

टीका ।

जातफलमाह मेपे इत्यादिसार्धचतुःश्लोकपर्यंतम् । मेपे जातस्य फलं अगम्या-  
गमनप्रियः अगम्यागमनं प्रियं यस्य अभक्ष्यभक्ष्यः अभक्ष्यं भक्ष्यं यस्य तथा  
भवति वृषे तु सुशीलः सुस्वभावः देवेशदेवालयधर्मकारी देवेशाः शिववि-  
ष्णवादयः तेषां देवालयं मंदिरं तत्र धर्मकर्ता भवति युग्मे मिथुने विरक्तः वै-  
राग्यसंपन्नः अत्यधनैः अतिशयेन ये अधनाः दरिद्राः तैः विहीनः रहितः भ-  
वति चांद्रे चंद्रदेवत्ये कर्कं जातस्य फलं तीव्रं पापं करोति परस्वहर्ता भवति  
तथा पूतकारी पूतकर्म करोति सिंहे तु देवस्य देवतास्थानस्य विघातकारी  
नाशकः पाथोनके कन्यायां जातः धर्मरतिः सुकृत्यश्च भवति ज्यूके तुलायां  
परेषां धनदः अन्येषां धनदाता द्रव्येण पूर्णं करोति चापेऽपि धनुष्यपि पूर्वो-  
क्तं फलं बोध्यं वृश्चिके तु परस्वहर्ता परद्रव्यापहारी परदारसक्तः परस्त्रीलंपटः  
भवति मृगे मकरेऽपि एवमेव फलं ज्ञेयं घटभे कुंभे राशौ कृतज्ञः कृतं जाना-  
तीति तथा यज्ञस्य कर्ता भवति उषभे मीने पूर्तादिकारी तडागादिकर्ता बहु-

भाषा ।

॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ मेप राशिमें जन्म होवे तो अगम्यागमन-  
शील अभक्षकूं भक्षण करे वृषभ राशिमें अच्छा स्वभाव, शिवविष्णुके मंदिरमें धर्म  
करे, मिथुन राशिमें वैराग्यसंपन्न अति दरिद्ररहित होवे, कर्क राशिमें बड़ा पाप  
करे, परधन चोरे, वावडी कूवा खुदावे, सिंह राशिमें देवस्थानका नाश करे, क-  
न्याराशिमें धर्मकर्ममें रत होवे, तुला राशिमें दूसरेकूं धन देवे धनराशिमें दूसरेकूं  
धनसे पूर्ण करे, वृश्चिक राशिमें धन दूसरोंको देवे, परस्त्रीनं लंपट धनराशिमें पूर्व

नर्तको गायको बंदी शिल्पी याच्चपरस्ततः ॥ १०५ ॥  
 गायको नर्तको भारवाही प्रणतियोजकः ॥ प्रेष्यश्च भार-  
 को बंदी याचको धातुवादकः ॥ १०६ ॥ वेदाध्यायी स्मृ-  
 तिज्ञस्तु शैवाश्रमकृतश्रमः ॥ शिल्पलेखनकर्ता च मीमां-  
 सान्यायतर्कवित् ॥ १०७ ॥ पंचरात्रार्थशास्त्रज्ञ इतिहास-  
 पुराणवित् ॥ आयुधश्रमहेतुश्च आयुर्वेदकृतश्रमः ॥ १०८ ॥

### टीका ।

योजकः बहून्यो जयतीति तथा स्यात् ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ अथ सूर्यादीनां कालांशवशात्फलमाह नर्तक इत्यादिसार्धाष्टोत्तरशतश्लोकपर्यंतम् ।  
 नर्तकः नटः गायकः बंदी राजस्तावकः शिल्पी सूपादिकर्मकुशलः याचकः  
 याच्नापरो याचनातत्परः गायकः नर्तकः भारवाही प्रणतियोजकः नमः-  
 शीलः प्रेष्यो दूतः भारको भारवाही धातुवादकः वेदाध्यायी स्मृतिज्ञः शैवा-  
 श्रमकृतश्रमः शिवदीक्षायात्नशीलः शिल्पलेखनकर्ता शिल्पक्रियो लेखनक्रि-  
 यश्च मीमांसान्यायतर्कवित् मीमांसादिशास्त्रज्ञः पंचरात्रार्थ शास्त्रज्ञः आग-  
 मज्ञः इतिहासपुराणवित् भारतादिवेत्ता आयुधश्रमहेतुः आयुधकर्ता  
 आयुर्वेदकृतश्रमः वैद्यः एवं कालांशतः कालांशमानेन अर्काच्छन्यंतं

### भाषा ।

फल जानना, कुंभ राशिमें यज्ञ करे उपकार जाने, मीनराशिमें तलावादिक करे,  
 और बड़े कामोंकी तजबीज करे ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ अब सूर्यादिकों-  
 का कालांश ऊपरसे फल कहते हैं. नाचना १, गाना, २, बंदिवान् होना ३,  
 राजाका स्तवन करना, रसोईमें और दूसरी कारागिरिके काममें कुशल  
 होना ४, मांगनेवाला याचक ५, गायक ६, नर्तक ७, भारवाही ८, नम्रतासे  
 रहनेवाला ९, दूतपनाकरना १०, भार उचलनेवाला ११, बंदी १२, याचक  
 १३, धातु बनानेवाला १४, वेदाध्ययन करनेवाला १५, स्मृतिशास्त्र जाननेवाला  
 १६, शिव दीक्षामें प्रवीण होना, श्रम करना १७, शिल्पकर्म लेखन कर्म करना १८,  
 मीमांसा न्याय तर्क जाननेवाला १९, आगमतंत्र जाननेवाला २०, भारत पुराण  
 जाननेवाला २१, शस्त्र करनेवाला २२, वैद्यपना करनेवाला २३, यह फल सू-



अर्कात्कालांशतश्चैव क्रमादेवं प्रकीर्तिताः ॥ अध्यापकस्तु  
वेदानां सेवकः शास्त्रपाठकः ॥ १०९ ॥ अश्वसादीभसादी  
च लिपिलेखनतत्परः ॥ मंदुराबंधको नट्यो देशिको या-  
ज्ञिको गुरुः ॥ ११० ॥ दानशीलस्तु तृणको ग्रामणीर्व्य-  
सनाधिपः ॥ आरामकरणोद्युक्तः पुष्पविक्रयतत्परः ॥ १११  
राजकार्यरतः सेनालतापुष्पफलक्री ॥ नृत्यगीते च कु-  
शलस्तांबूलफलविक्री ॥ ११२ ॥ निषिद्धविक्रयकरो ग्रा-  
टीका ।

क्रमाद्युणाः प्रकीर्तिताः ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ अथ  
षष्ठ्यंशफलान्याह अध्यापकस्त्वितिसार्धसप्तदशोत्तरशतश्लोकपर्यंतम् । वेदा-  
नां अध्यापकः १ सेवकः २ शास्त्रपाठकः ३ अश्वसादी ४ भसादी आ-  
धोरणः ५ लिपिलेखनतत्परः ६ मंदुराबंधकः वाजिशालाधिकृतः ७ नट्यः  
८ देशिकः पाठशालाध्यापकः ९ याज्ञिकः १० गुरुः ११ दानशीलः १२ तृ-  
णः १३ ग्रामणीः १४ व्यसनाधिपः १५ आरामकरणोद्युक्तः १६ पुष्पविक्रय-  
तत्परः १७ राजकार्यरतः १८ सेनालतापुष्पफलक्री १९ नृत्ये गीते च  
कुशलः २० तांबूलफलविक्री २१ निषिद्धविक्रयकरः २२ ग्रामाणामधिका-  
भाषा ।

यैसे लेके शनिपर्यंत क्रमसे कालांशप्रमाणसे कहा है ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥  
॥ १०८ ॥ अब षष्ठ्यंशका फल कहते हैं. वेद पढ़ना १, सेवा करना २, शास्त्र  
पढ़ना ३, अश्वके ऊपर बैठनेमें कुशल ४, हाथीके काममें कुशल ५, पुस्तकादि  
लेखनमें कुशल ६, घोड़ेकी शालाका अधिकारी ७, नाचनेवाला ८, पाठशाला  
पढ़ानेवाला ९, यज्ञ करानेवाला १०, गुरुपद पानेवाला ११, दानशील १२,  
घास बेचनेवाला १३, सारे गामका चौधरीपना करनेवाला १४, दुःख देनेमें  
कुशल १५, वागवगीचा करनेमें कुशल १६, फूलमालीका रोजगार करनेवाला  
१७, राजकाम करनेवाला १८, शाक फूल फल खरीद करनेवाला १९, नृत्य-  
गीतमें कुशल २०, तांबूल फल बेचनेवाला २१, निषिद्ध पदार्थ बेचनेवाला २२,

माणामधिकारकृत् ॥ बंदी च देशिकः प्राज्ञो धूपकश्चौप-  
धिक्रियः ॥ ११३ ॥ कायस्य करणोद्युक्तो भारको भांडवि-  
क्रयी ॥ कृषिकृच्च वणिग्धातुचर्मकारी च कर्षकः ॥ ११४ ॥  
शास्त्राधिकारी विज्ञानी पुंस्तेको रंजको वणिक् ॥ वेदवेदां-  
गविद्वेत्ता शास्त्रज्ञो बंदिपाठकः ॥ ११५ ॥ ग्रामणीरधिका-  
री च गणको दंडकारकः ॥ मारकश्चैधनाहारी फलमूला-  
दिविक्रयी ॥ ११६ ॥ शांतकृत्स्वर्णकारी च कृषिकृत्पलवि-

### टीका ।

रकृत् २३ बंदी २४ देशिकः २५ प्राज्ञः २६ धूपकः २७ औपधिक्रियः २८  
कायस्य शरीरस्य करणोद्युक्तः अलंकारकर्ता बहुरूपीत्यर्थः २९ भारकः ३०  
भांडविक्रयी ३१ कृषिकृत् ३२ वणिक् ३३ धातुचर्मकारी ३४ कर्षकः ३५  
शास्त्राधिकारी ३६ विज्ञानी ३७ पुंस्तेकः ३८ रंजकः ३९ वणिक् ४० वेद-  
वेदांगवेत्ता ४१ शास्त्रज्ञः ४२ बंदिपाठकः ४३ ग्रामणीः ४४ अधिकारी ४५  
गणकः ४६ दंडकारकः ४७ मारकः ४८ ईधनाहारी ४९ फलमूलादिविक्र-  
यी ५० शांतकृत् ५१ स्वर्णकारी ५२ कृषिकृत् ५३ पलविक्रयी मांसविक्रे-

### भाषा ।

गांवोंका अधिकार करनेवाला २३, राजसेवकी २४, देशिक २५, बुद्धिमान् २६,  
धूपपदार्थका बेचनेवाला २७, औपध बेचनेवाला २८, बहुरूपीका सवांग लेनेवा-  
ला २९, भार उचलनेवाला ३०, धातुपात्र बेचनेवाला ३१, खेती करनेवाला ३२,  
बनियेकी दूकान करनेवाला ३३, धातुचर्मका व्यापारी ३४, खेतीकर्म करनेवा-  
ला ३५, शास्त्राधिकार जाननेवाला ३६, अनुभव जाननेवाला ३७, पुस्तकसंग्रह  
करनेवाला ३८, रंगारेका काम करनेवाला ३९, बनियेकी दूकान करनेवाला ४०,  
वेदवेदांग जाननेवाला ४१, शास्त्र जाननेवाला ४२, राजसेवा वालक पढानेवा-  
ला ४३, गांवका चौधरीपना करनेवाला ४४, अधिकारपदवी पानेवाला ४५,  
गणितशास्त्रकूं जाननेवाला ४६, दंड देनेवाला ४७, मारक ४८, जलानेकी ल-  
कड़ी चोरनेवाला ४९, फलमूलकूं बेचनेवाला ५०, शांतकर्म करनेवाला ५१,  
सोनारकर्म करनेवाला ५२, खेती करनेवाला ५३, मांसविक्रय करनेवाला ५४,

क्रयी॥योजकोऽध्यापकोऽध्यक्षः प्रतिग्रहपरः फली॥११७॥  
क्रमाद्व्युत्क्रमतश्चैव षष्टिः स्यादंशकेषु तु ॥ रवीशहरिवि-  
ष्ण्वीशदुर्गागणपतिष्वथ ॥ ११८ ॥ चंडिकायां च चंडी-  
शचंद्रविष्ण्वीशपावके ॥ त्रिपुरामंदिराविष्णुहरिशंकरशं-  
भुषु ॥ ११९ ॥ क्षेत्रेशे गरुडे स्कंदे शास्तरि ब्रह्मणीश्वरे ॥

### टीका ।

ता ५४ याजकः ५५ अध्यापकः ५६ अध्यक्षः ५७ प्रतिग्रहपरः ५८ फली  
५९ षष्टितमस्य फलाभावः ६० एतानि फलानि मेषाद्योजराशिषु क्रमाद्व्या-  
दिषु उत्क्रमतःविलोमतः षष्ट्यंशेषु फलानि ज्ञेयानि ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥  
॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ अथ षष्ट्यंशेषु अंशद्वयै-  
क्येन त्रिंशत्फलानि स्वीत्यादिसार्धद्वयेनाह । रवौ १ ईशे २ हरौ ३ विष्णौ ४  
ईशे हिरण्यगर्भे ५ दुर्गायां ६ गणपतौ ७ चंडिकायां ८ चंडौ ९ ईशे महादेवे  
१० चंद्रे ११ विष्णौ १२ ईशे १३ पावके १४ त्रिपुरायां १५ मंदिरायां १६ वि-  
ष्णौ १७ हरौ १८ शंकरे १९ शंभौ २० क्षेत्रेशे २१ गरुडेशे २२ स्कंदे २३ शा-  
स्तरि २४ ब्रह्मणि २५ ईश्वरे २६ विषापहरणोद्युक्ते गरुडे २७ जिने २८ बुद्धे

### भाषा ।

यज्ञ करनेवाला ५५, विद्या पढानेवाला ५६, स्वामिपना करनेवाला ५७, सर्वो-  
का दान लेनेवाला ५८, फलोका उपभोग करनेवाला ५९, समानता ६०, यह  
फल विपमराशिका लग्न होवे तो लिखे हुवे क्रमसे जानना. और सम लग्न होवे  
तो समानतासे लेकर अध्यापकतक क्रमसे जानना ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥  
॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ अब षष्ट्यंशके  
दो दो अंश भेले किये तो तीस अंश होते हैं सो तीस अंशका फल कहते हैं.  
सूर्यके विषे १ ईश २ हरी ३ विष्णु ४ हिरण्यगर्भ ५ दुर्गा ६ गणपती ७ चं-  
डिका ८ चंड ९ महादेव १० चंद्र ११ विष्णु १२ ईश १३ अग्नि १४  
त्रिपुरा १५ मंदिरा १६ विष्णु १७ हरी १८ शंकर १९ शंभु २० क्षेत्रेश  
गरुडेश २२ स्कंद २३ शास्ता २४ ब्रह्मा २५ ईश्वर २६ गरुड २७ जिन  
२८ बौद्ध २९ सर्वसमान ३० यह क्रमसे जो अंशमें जन्मनक्षत्र होवे वो देव-

विषापहरणोद्युक्ते जिने बुद्धे क्रमात्तथा ॥ १२० ॥ ज्वरश्लेष्मातिसारासृग्जठरव्याधिमूलरूक् ॥ मेहग्रहणिपिटिका पावकावनिशस्त्रतः ॥ दाहज्वरविषाभ्यां तु सूर्यात्कालेति मेमृतिः ॥ राशौ ग्रहांशके पित्तवातश्लेष्मजरोगतः ॥ १२१ ॥ पित्तवातकफश्लेष्मपित्तवातेः क्रमात्स्मृतः ॥ ज्वरसन्निपा-

टीका ।

२९ अंतिमे प्राग्बत्फलाभावः ३० ॥ ११८॥११९॥१२०॥ अथ सूर्यकालांति-  
मे मरणे निमित्तान्याह ज्वरेति एकपदो नैकपादाधिकेन सार्धेन श्लोकेन ।  
सूर्यात्सकाशात् कालांतिमे कालमर्यादे चतुर्दशान्यतमग्रहे जन्मराशौ सति  
तथा जन्मनि तद्ग्रहांशे सति च क्रमाच्चतुर्दश फलानि ज्वरः १ श्लेष्मा २ अ-  
तिसारः ३ असृक् ४ रक्तव्याधिः ५ मूलरूक् मूलव्याधिः ६ मेहः ७ ग्रहणी ८  
पिटिका ९ पावकः १० अवनिः ११ शस्त्रतः १२ दाहात् १३ ज्वरात् विषेण  
वा उभाभ्यां वा १४ मरणं ज्ञेयमिति ॥ १२१ ॥ अथ प्रकारांतरेण जन्मलग्न-  
स्थसूर्यादिनवग्रहवशान्मृतिनिमित्तमाह पित्तेति चरणसहितार्द्धेन श्लोकेन ।  
सूर्ये पित्तेन १ चंद्रे वातेन २ भौमे श्लेष्मणा ३ बुधे पित्तात् ४ गुरौ वातात् ५  
शुके कफात् ६ शनौ श्लेष्मणा ७ राहौ पित्तेन ८ केतौ वातेन ९ इति क्रमा-  
त् मृतिप्रदानि ज्ञेयानि ॥ १२२ ॥ अथ नवांशफलानि निधननिमित्तान्याह

भाषा ।

ताका भक्त होवे ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ १२० ॥ अब मरणका निमित्त कहते  
हैं. सूर्यसे लेके कालनामक ग्रहपर्यंत १४ चौदा ग्रह हैं उसमेंसे जो ग्रह जन्म-  
राशिमें होवे वो नीचे लिखे हुवे निमित्तसे मरण जानना. सो निमित्त कहते हैं.  
ज्वर १ कफ २ अतिसार ३ लौहका व्याधि ४ जठरव्याधि ५ मूलव्याधि ६  
प्रमेह ७ संग्रहणी ८ पित्तकरो ९ आग्नि १० अवनी ११ शस्त्र १२ दाह १३  
ज्वरविष १४ यह क्रमसे फल जानना ॥ १२१ ॥ अब प्रकारांतरसे फल कहते  
हैं. सूर्य होवे तो पित्तसे १ चंद्र होवे तो वायुसे २ भौम हो० कफसे ३ बुध हो०  
पित्तसे ४ गुरु हो० वायुसे ५ शुक्र हो० कफसे ६ शनि हो० कफसे ७ राहु हो०  
पित्तसे ८ केतु होवे तो वायुसे मरण होवेगा. यह क्रमसे मृत्युक्रम जानना ॥ १२२ ॥

तजठरामयांत्ररुग्रामप्रमेहजलकाज्जलाग्निः ॥ १२३ ॥  
ज्वरसन्निपाततोत्रभवेन्मृतिः क्रियपूर्वकस्तु निधनांशके-  
षु तु ॥ गुल्मोदरज्वरविषाग्निजलादिपातशस्त्रादिपातगुद-  
कीलभगंदरोत्था ॥ १२४ ॥ रक्तातिसारजठरज्वरमेहगु-  
ल्मकुष्ठातिसारपिटकादिभिरश्मरीयैः ॥ शूलाशानिक्षतज-  
पित्तसमावृतानि शीतज्वरप्रभृतिराशिवशात्क्रमेण ॥ १२५

### टीका ।

ज्वरेतिसार्द्धकद्वयेन । ज्वरेण १ सन्निपातेन २ जठरामयेन ३ अंत्ररुजा ४  
रामप्रमेहेण त्रिविधप्रमेहरोगेण ५ जलात् ६ अग्निः ७ ज्वरात् ८ सन्निपात-  
तः ९ मेषपूर्वकद्वादशराशिषु निधनांशकाः मरणकालीननवांशाः तेषु एवं  
मृतिर्ज्ञेया ॥ १२३ ॥ अथ राशिवशान्मरणनिमित्तान्याह गुल्मोदरेतिसार्धेन ।  
गुल्मः १ उदरः ज्वरः रोगविशेषः २ एतैः विषाग्निजलपातात् विषं स्थावरं जंगमं  
तेन अग्निजलादिपातात् ३ शस्त्रादिपातात् ४ गुदकीलभगंदरोत्थात् गुदकी-  
लः गुदस्थानीयरोगविशेषः तस्मात् भगंदराद्वा ५ रक्तातिसारजठररोगज्वरैः  
६ मेहगुल्माभ्यां ७ कुष्ठातिसाराभ्यां ८ पिटकादिभिरश्मर्यादिमिश्र ९ शू-  
लाशानिक्षतजेन शूलेन वज्रपातोत्पन्नरुधिरेण १० पित्तसमावृत्तेन ११ शीत-  
ज्वरप्रभृतिना च १२ मृतिर्भवतीति क्रमेण बोद्धव्यम् ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

### भाषा ।

अब नवांशके निमित्तसे मरणनिमित्त कहते हैं. प्रथम नवांशमें जन्म होवे तो ज्व-  
रनिमित्तसे १ सन्निपातसे २ जठररोगसे ३ आतडेके रोगसे ४ प्रमेहसे ५ जल-  
से ६ अग्निसे ७ ज्वरसे ८ सन्निपातसे ९ मेषादिद्वादशराशिके जन्मलग्नके नवां-  
शके निमित्तसे फल जानना ॥ १२३ ॥ अब राशिके निमित्तसे मरण कहते हैं  
मेष राशिमें गुल्मरोग उदररोग ज्वर इन रोगोंसे मृत्यु होवे १ विष करके २ अ-  
ग्निजलके निमित्तसे ३ शस्त्रादिपातसे ४ गुदकील रोग भगंदर रोगसे ५ रक्ताति-  
सार ज्वर जठर रोगसे ६ प्रमेह गुल्म रोगसे ७ कुष्ठ अतिसारसे ८ पीठक रोग  
अश्मरी रोगसे ९ शूल वज्रपातादिकसे उत्पन्न भया हुआ रुधिरसे १० पित्तरोगसे  
११ शीतज्वरादिकसे १२ मृत्यु होवेगा ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

कालादिरव्यंतखगोक्तजाता चेदुर्गपातपतनज्वरसन्निपा-  
तात् ॥ गोपातसत्वजनिता च मृतिः क्रमेण वामेन चा-  
पि पुनरेवमथांशकेषु ॥ १२६ ॥ आचतुर्थात्खभूतानि त्र-  
यो द्वादशहारकौ ॥ अथ स्यादष्टमात्षष्टिः पंचाष्टौ दश-  
टीका ।

अथ कालादिरव्यंतचतुर्दशग्रहांशवशान्मृत्युमाह कालादीतिश्लोकेन । का-  
लादि कालग्रहमारभ्य रव्यंतचतुर्दशखगोक्तम् जाता तथा तत्तदंशेषु च मृतिः  
क्रमेण एवं ज्ञेया तामाह दुर्गपातात् १ पतनात् २ ज्वरात् ३ सन्निपातात् ४  
गोः वृषभात् ५ पातात् ६ सत्वजनिता प्राणिसमुद्भूता च ७ पुनः वामेन  
क्रमेण विलोमतः क्रमेण सत्वजनितादि दुर्गपातांतं सप्त ७ एवं चतुर्दशग्रह-  
वशात्तन्नवमांशवशाच्च मृतिरिति ॥ १२६ ॥ अथ रश्मिवशेन अब्दानयने  
अब्दानब्दहरांश्चाह आचतुर्थादित्यादिसार्धद्वात्रिंशदधिकशतश्लोकपर्यंतम् ।  
आचतुर्थात् चतुर्थरश्मिमारभ्य सप्तरश्मिपर्यंतं खभूतानि ५० अब्दाः तत्र  
त्रयः ३ द्वादश १२ एतौ हारकौ ज्ञेयो अथाष्टमात् रश्मेः षष्टिः ६० अब्दाः  
तत्र पंच ५ अष्टौ ८ हारकौ ततः दशमाद्रश्मेः सकाशात् पंचपंचाशत् ५५  
अब्दाः स्युः तत्र त्रयः ३ रत्नानि ९ हारकौ एकादशे रश्मौ अष्टषष्टिः ६८  
अब्दाः तत्र सप्तसप्ततिः ७७ अब्दाः तत्र वेदपंच ५४ रसाः ६ हाराः तथा  
दश १० रुद्राः ११ ततः आत्रिंशतः षोडशरश्मिमारभ्य त्रिंशद्रश्मिपर्यंतं क-  
मादब्दाः अशीतिः ८० सप्ततिः ७० खेपवः ५० खाब्धयः ४० खाद्रयः ७०  
वेदाद्रयः ७४ वेदसप्ततिः ७४ षष्टिः ६० अष्टाद्रिः ७८ अष्टेषु ५८ पंचसप्ततिः  
७५ अद्रियुक् सप्ततिः ७७ एकाशीतिः ८१ चतुर्युक्ता एकाशीतिः ८५

### भाषा ।

अथ कालादि सूर्यात् चौदा ग्रहोंके अंशनिमित्तसे मृत्युज्ञान कहते हैं. कालग्रहके  
अंशमें दुर्गपातसे मृत्यु हांवे १ पतनसे २ ज्वरसे ३ सन्निपातसे ४ वृषभके निमित्तसे  
५ पतनसे ६ प्राणिनिमित्तसे ७ ८ पतनसे ९ वृषभके निमित्तसे १० सन्निपातसे ११  
ज्वरसे १२ पतनसे १३ दुर्गपातसे १४ मृत्यु हांवे. यह क्रममें चौदा ग्रह निमि-  
त्तसे उसके नवांशनिमित्तसे मृत्यु जानना ॥ १२६ ॥ अथ रश्मिके निमित्तसे

मात्ततः ॥ १२७ ॥ पंचपंचाशदब्दाः स्युस्त्रयोरत्नानि हारकाः ॥ एकादशोऽष्टषष्टिः स्यात्सप्तकाष्ठाश्च हारकाः ॥ १२८ ॥ त्रयोदशे च तानाः स्युर्द्विसप्ततिरथो मनौ ॥ रश्मयः पंचदश चेत्पंचसप्ततिरेव च ॥ १२९ ॥ वेदपंचरसा हारा दश रुद्राश्च रश्मयः ॥ आत्रिंशतः क्रमादब्दा अशीतिरथ सप्ततिः ॥ १३० ॥ खेषवः खाब्धयः खाद्रिवेदाद्रिवेदसप्ततिः ॥ षष्टीरष्टाद्रिरष्टेषु पंचसप्ततिरद्वियुक् ॥ १३१ ॥ एकाशीतिश्चतुर्युक्ता चत्वारिंशत्स्मृताः समाः ॥ सप्तांकरसर्तकेषु नवाद्विरसषट्कराः ॥ १३२ ॥ रुद्रा दिङ्मनवतर्काका अब्दहाराः क्रमादमी ॥ रुद्रार्कमनुविश्वेष्टिः सप्तांकेष्वर्कदिकछराः ॥ १३३ ॥ वेदेषुर्वेदकांकाः स्युरंशहाराः प्रकी-

टीका ।

चत्वारिंशत् ४० एते समाः अब्दाः स्मृताः कथिताः अथ तत्र क्रमात् षोडशमारभ्य त्रिंशत्पर्यन्तं ह्योराः सप्त ७ अंक ९ रस ६ तर्काः ६ इषवः ५ नव ९ अद्रयः ७ रसाः ६ षट्कराः २ रुद्राः ११ दिक् १० नव ९ तर्काः ६ अर्काः १२ अमी क्रमादब्दहाराः पूर्वोक्ताब्दांकानां हारांकाः इति रश्म्यायुर्दायहाराः कथिताः इति ॥ १२७ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ अथांशायुषि हारानाह रुद्रेत्यर्धकद्वयेन । रुद्राः ११ अर्काः १२ मनवः १४ विश्वे १३ अष्टिः १६ सप्त ७ अंकेषवः ५९ अर्काः १२ दिक् १० शराः ५ वेदेषवः ५४ वेदांकाः ९४ एते अंशहाराः अंशायुर्दायहारांकाः प्रकीर्तिताः कथिता इति ॥ १३३ ॥ एवं द्वादशराश्यंशायुर्दायहारांकानुक्त्वाऽथ नवांशायुर्दायंका-

भाषा ।

वर्ष लानेके हैं उसमें वर्षहार कहते हैं, चक्रमें स्पष्ट है ॥ १२७ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ अब अंशायुष्यके हार कहते हैं, ११ १२ १४ १३ १६ १७ ५९ १२ १० ५ ५ ४ १४ यह अंशायुर्दायके हार कहें ॥ १३३ ॥ नवांशायुर्दायके अंक कहते हैं, ५ १ ६ १९ ० १ १० ० १ १ १ २ ० १२ १ यह क्रमसे

भषष्ठाष्टमगाः शुभाश्चेत् ॥ १४० ॥ द्वितीयवेश्मास्तगता-  
 श्च भौमक्षीणेंदुमंदा यदि वा च वामम् ॥ स्थानेषु धनदे-  
 प्वेवं शत्रुवर्गगता यदि ॥ १४१ ॥ रव्यारार्कितमः क्षीणचं-  
 द्राः स्यू रेकदा इमे ॥ एवं त्रिकादियोगानां संयोगो रेकदो  
 गुणैः ॥ १४२ ॥ अन्यथा तारतम्येन कादाचित्को भवेद्विज्ज् ॥  
 लग्ने द्विधर्मकर्मायसुखपुत्रास्तविक्रमे ॥ १४३ ॥ स्थितः स्थि-  
 तौ स्थिताः खेटाः शत्रुग्रहनिरीक्षिताः ॥ आदौ वयसि म-  
 ध्येऽन्ते दरिद्राः स्युः क्रमाद्भवेत् ॥ १४४ ॥ नवयोगा इमे

### टीका ।

वा द्वितीयवेश्मास्तगताः २।४।७। एषु स्थानेषु गताः यदि भौमक्षीणेंदुमं-  
 दाः मंगलक्षीणचंद्रशनयः अथ वा यदि वामं विपरीतं एषु धनादिषु स्था-  
 नेषु शत्रुवर्गगताः यदि वा रव्यारार्कितमः क्षीणचंद्राः रविभौमशनिराहुक्षीण-  
 चंद्राः स्युः तदा रेकदाः दरिद्रियोगकारका इमे ज्ञेयाः एवं त्रिकादियोगानां  
 षष्ठाष्टमद्वादशादिस्थानेषु योगानां उक्तानां संबंधियोगश्चेत् गुणैः रेकदो  
 योगो ज्ञेयः अन्यथा हे द्विज मैत्रेय । उक्तान्यतमस्थाने कादाचित्को योगो  
 भवेदिति तारतम्येन ज्ञेयाः तथा लग्नद्विधर्मकर्मायसुखपुत्रास्तविक्रमे १।२।  
 ९।१०।११।४।५।७।३। एतत्स्थाने स्थितः एकः स्थितौ द्वौ स्थिताख्यादयः वा  
 खेटाः शत्रुग्रहनिरीक्षिताः स्वशत्रुग्रहेण विलोकिताश्चेत् एकग्रहे आदौ ग्रहद्व-  
 ये मध्ये वयसि त्र्यादिग्रहेषु अन्ते वयसि दरिद्रकारकाः स्युः एवं क्रमाद्भवेत्  
 इमे नवयोगाः त्रिषु स्थानेषु षष्ठाष्टमद्वादशस्थानेषु रेकदा दारिद्र्यदा भवं-  
 ति इति ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ अथ योगांतराण्याह कर्के-

### भाषा ।

द्रयोग जानना ऐसा ६।८।१२ यह स्थानोंमें संबंध होवे तो गुणयुक्त दरिद्रियोग जा-  
 नना. अथवा १।२।९।१०।११।४।५।७।३ यह स्थानोंमें एक ग्रह होवे और श-  
 त्रुदृष्टि होवे तो आप अवस्थामें दरिद्र होंगे, दोग्रह होंगे तो मध्य अवस्थामें, तीन  
 आदि लेके ग्रह होवे तो अंतिम अवस्थामें दरिद्रियोग होवे ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥  
 ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ अब योगांतर कहते हैं. कर्कमे लेके चार राशिके अंदर शुभ



प्रोक्तास्त्रिषु स्थानेषु रेकदाः ॥ कर्कटादृश्चिकान्मीनाच्चतुर्ष्वेव  
क्रमात्स्थिताः ॥ १४५ ॥ शुभग्रहे स्थिताः पापा मध्येऽन्ते  
प्रथमे क्रमात् ॥ सुखान्मृत्योर्व्ययात्पुत्राद्धर्माद्धन्नात्तथैव च ॥  
॥ १४६ ॥ एवमक्षा यदि न्यूनाश्चाष्टवर्गसमुद्भवाः ॥ केंद्रे-  
षु च त्रिकोणेषु शुभा उपचये परे ॥ १४७ ॥ धनदेषु शु-  
भाश्चान्ये परेषु च यदि स्थिताः ॥ इष्टरश्मिफलाधिक्यैक-  
श्च द्वौ च त्रयोपि वा ॥ १४८ ॥ उच्चादिपंचकस्थाने नवां-  
शेष्वेव वा यदि ॥ लक्ष्मीयोगा इमे प्रोक्तास्सुहृद्दृष्टास्तथा

टीका ।

त्यादिसार्धषट्चत्वारिंशच्छ्लोकपर्यन्तम् । कर्कटात् वृश्चिकात् मीनाद्वा चतुर्षु  
चतुर्षु राशिषु क्रमात् स्थिताः ग्रहाः शत्रुग्रहे स्थिताः शत्रुग्रहेण विलोकिताः  
पापा वा स्युश्चेत् कर्कटाच्चतुर्षु मध्ये वयसि फलदाः वृश्चिकाच्चतुर्षु अन्ते  
वयसि फलदाः मीनाच्चतुर्षु क्रमात् प्रथमे वयसि फलदाः तथा सुखात्  
चतुर्थान्मृत्योः अष्टमात् व्ययात् द्वादशात् पुत्रात्पंचमात् धर्मान्नवमा-  
ल्लभात् जन्मलब्धात् एवं तथैव पूर्वप्रकारेणैव फलं ज्ञेयम् अत्र अष्टवर्गसमुद्भ-  
वाः अक्षाः यदि न्यूनाः स्युस्तर्हि इति ॥ १४५ ॥ १४६ ॥ अथ शुभयोगा-  
नाह केंद्रेष्वित्याद्येकोनपंचाशत्श्लोकपर्यन्तम् । केंद्रेषु १।१।७।१०। एषु त्रिको-  
णेषु १५।९। एषु शुभाः तथा उपचयस्थाने परे नाम अशुभाः धनदेषु स्थाने-  
षु शुभाः परेषु धनदव्यतिरिक्तेषु अन्ये नाम पापाः यदि स्थिताः इष्टरश्मि-  
फलाधिक्ये सति एकः अत्र संधिरार्षः द्वौ वा त्रयोपि वा उच्चादिपंचकस्थाने  
उच्चत्रिकोणस्वातिमित्रमित्रस्थानेष्व वा नवांशेषु उच्चादिनवांशेषु यदि स्यु-

भाषा ।

वा पापग्रह होवे और शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो मध्य अवस्थामें योग फल देवेंगे,  
वृश्चिकादि चार राशिमें होवे तो अंत्य अवस्थामें योगफल जानना, मीनादि चार  
राशिमें होवे तो प्रथम अवस्थामें योगफल जानना. अब शुभयोग कहते हैं. १।१।  
७।१०।९। यह स्थानोंमें शुभ ग्रह होवे. ३।६।११ यहस्थानोंमें पापग्रह होवे तो  
धनस्थानमें शुभग्रह होवे इष्टरश्मिफल जादा होवे उच्च मूल त्रिकोण राशिके एक

परे ॥ १४९ ॥ रेके प्रोक्ताधिकाक्षांशाः शुभा रिःफाष्टषड्विना ॥ उच्चौ द्वौ वा त्रयः कोणे चत्वारोऽतिसुहृत्स्थिताः ॥ १५० ॥ मित्रेण पंच षट् सप्त खेटाश्चेच्छ्रीप्रदाः स्मृताः ॥ द्विर्द्वादशे शुभौ चंद्रात्सप्तमे वा तनोस्तथा ॥ १५१ ॥ गुरौ लग्ने द्वितीये ज्ञे व्यये शुक्रेऽथ वा भवेत् ॥ भावदृग्बलकष्टेष्टफलभावस्वभावतः ॥ १५२ ॥ दायानां च फलैरेव

टीका ।

स्तर्हि इमे लक्ष्मीयोगाः प्रोक्ताः तथा परे उक्तान्यस्थाने सुहृद्दृष्टास्तर्ह्यपि लक्ष्मीयोग इति ॥ १४७ ॥ १४८ ॥ १४९ ॥ पुनर्लक्ष्मीयोगांतरमाह रेके इतिसार्धेन । रेके दरिद्रयोगे प्रोक्ताधिकाक्षांशाः प्रोक्तसंख्यायाः अधिकाः अर्कांशाः येषां ते तथा शुभाः शुभग्रहाः रिःफाष्टषड्विना द्वादशाष्टषष्ठस्थानव्यतिरेकेण द्वौ उच्चौ त्रयः उच्चाः कोणे वा चत्वारः अतिसुहृत्स्थानस्थिताः अथ वा मित्रे मित्रस्थाने च पंचषट्सप्तखेटाश्चेच्छ्रीप्रदाः लक्ष्मीदायकाः स्मृताः कथिता इति ॥ १५० ॥ अथ पुनर्योगांतरमाह द्विर्द्वादशेत्यादिसार्धेन । चंद्रात्सकाशात् शुभौ शुभग्रहौ द्विर्द्वादशे द्वितीयद्वादशस्थाने अथ वा तनोः लग्नात्सकाशात्सप्तमे स्थाने सति तथा लग्ने गुरौ सति तथा द्वितीये धनस्थाने ज्ञे बुधेऽथ वा व्यये द्वादशे शुक्रे सत्यपि लक्ष्मीयोगो भवेत् किं तु भावदृग्बलकष्टेष्टफलभावस्वभावतः भावानां दृग्बलं तथा कष्टेष्टफलं तथा भावानां स्वभावाः यथा तथा तत्तारतम्येन मीनातिरिक्तश्रीयोगो ज्ञेय इति ॥ १५१ ॥ १५२ ॥ अथान्य-

भाषा ।

दो तीन ग्रह होवे अथवा उच्चादिकके नवांश होवे तो लक्ष्मीयोग जानना ॥ १४७ ॥ १४८ ॥ १४९ ॥ अब पुनः लक्ष्मीयोग कहते हैं, दरिद्रयोगमें जो अधिक अक्षांश कहे हैं वे और १२।८।६ यह स्थानोको छोड़के अन्य शेष कोईभी स्थानोंमें बैठे होवे और उच्च त्रिकोणके होके एक दो, तीन वा चार ग्रह होवे और अतिमित्रस्थानगत होके पांच, छः सात ग्रह होवे तो श्रीलक्ष्मीयोग जानना ॥ १५० ॥ अब और योगांतर कहते हैं, चंद्रसे २।१२ घरमें शुभ ग्रह होवे, लग्नसे ७ घरमें चंद्र होवे, लग्नमें गुरु होवे, २ घरमें बुध, १२ घरमें शुक्र होवे, तो लक्ष्मीयोग

भाववर्गेशसंयुतैः ॥ रश्म्यंशसंभवादेव वर्षचर्या तु देव-  
वित् ॥ १५३ ॥ एषामंशाच्च संभूताः कारकादिग्रहैरपि ॥  
मासचर्यां दिनोत्थां नाप्यष्टवर्गसमुद्भवात् ॥ १५४ ॥ भा-  
वदृष्टयोः प्रधानत्वात्कारको बोधको बले ॥ इष्टकष्टफले  
त्वन्ये पाचको रश्मिसंभवे ॥ १५५ ॥ अंतर्दाये तु भावानां  
प्रधानो वेधकः स्मृतः ॥ अंतर्दाये दशानां तु कारको बो-

टीका ।

चाह दायानामित्यादिद्वयेन । दायानां आयुर्दायानां फलैः भाववर्गेशसंयुतैः  
भावास्तन्वादयः वर्गाः गृहादयः एषां ये ईशाः स्वामिनस्तैर्युतैः रश्म्यंशसंभवात्  
रश्म्यंशोक्ताहैवविहैवज्ञः वर्षचर्यां वदेत् तथा एषां दायानां रश्मीनां च येऽ-  
शाः संभूताः तत्तारतम्येनेत्यर्थः तथा कारकादिग्रहैरपि मासचर्यां दिनोत्थां  
चर्यां च अष्टवर्गसमुद्भवात्फलाजानीयात् ॥ १५३ ॥ १५४ ॥ अथाऽन्यच्चा-  
प्याह भावेत्यादियावदध्यायावसानम् । भावदृष्टयोः भावविचारे दृष्टिविचा-  
रे च प्रधानत्वान्मुख्यत्वात्कारको ग्राह्यः बलावलविचारे प्रधानत्वाद्बोधको  
ग्राह्यः इष्टकष्टफलविचारे रश्मिसंभवे विचारे च प्रधानत्वात्पाचको ग्राह्यः अं-  
तर्दायविचारे च सर्वभावानां वेधकः प्रधानो मुख्यः स्मृतः दशानामंतर्दाये  
च बोधककारको प्रधानो तथा भावस्वभावविषये अन्यथा दशाविचारमंतरा  
पाचकः प्रधानो भवेत् । सूर्यः स्वभावतः पाचकः चंद्रमास्तु बोधकः स्मृत

भाषा ।

जानना, परंतु भावबल, दृष्टिवल, इष्टकष्टबल, देखके तारतम्यतासे कहना ॥  
॥ १५१ ॥ १५२ ॥ अब और योग कहते हैं, आयुर्दायका फल द्वादश भावका  
शुभाशुभफल वर्गोंका फल ग्रहस्वामीका फल रश्मिफल यह सबोंका विचार करके  
वर्षचर्या कहना, रश्मियोंके अंशोंकी तारतम्यतासे मासचर्या कहना, अष्टवर्गके  
फलादेशसे दिनचर्या कहना ॥ १५३ ॥ १५४ ॥ अब बलावल लेनेका योग क-  
हते हैं, भावविचारमें, दृष्टिविचारमें मुख्य कारक लेने, बलावलविचारमें बोधक  
लेना, इष्टकष्टविचारमें पाचक लेना, अंतर्दायविचारमें वेधक लेना, दशाके अंत-  
र्दायविचारमें बोधक, कारक लेना, भावस्वभावविचारमें पाचक लेना, सूर्य स्वभावसे

धकस्तथा ॥ १५६ ॥ भावस्वभावविषये पाचकस्त्वन्यथा

भवेत् ॥ पाचकस्त्वन्यथा सूर्यश्चंद्रमा बोधकः स्मृतः

॥ १५७ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे अब्द-

चर्यावर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

षष्ठादिरश्मिष्वार्धेऽशे जनको जन्मतो भृशम् ॥ धना-

टीका ।

इति ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥ अध्यायेऽस्मिन्यथाबुद्धिकृता टीका मया

बुधाः शोधनीया भवद्भिः सा यत ईशो हि सर्ववित् ॥ १ ॥ एवं परोपकृतये

यावद्बुद्धिबलौयम् ॥ कृतया व्याख्यया श्रीमद्गणेशः प्रीयतां मम ॥ २ ॥ इति

श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरार्द्धे श्रीमद्बुद्ध्यङ्गुल्यवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्यावि-

द्योतितगिद्विद्मंडलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनी-

टीकायां अब्दचर्यावर्णने चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अथ पंचदशाऽध्यायेऽब्दचर्यादि फलं मुनिः ॥ आह तद्ब्रह्माकृतौ श्रीमद्गणेशः

प्रेरयेद्भि माम् ॥ १ ॥ अथ श्रीमद्भगवान्पराशरऋषिः मैत्रेयायाऽस्मिन्य-

चदशाध्याये अब्दचर्यादिफलमुपदिशति तत्रादौ रश्म्यंशफलमाह षष्ठादीत्य-

ष्टमश्लोकपर्यंतम् । षष्ठादिरश्मिषु षष्ठरश्मिमारभ्य अग्रिमरश्मिनां अंशवशा-

त्फलानि यथा षष्ठे रश्मौ आर्धेऽशे सति तस्य जन्मतः जनकः पिता भृशं अत्यं-

तं धनादिहीनः धनधान्यादिरहितः स्यात् तथा रिक्त उद्योगहीनश्च स्यात् तथा

भाषा ।

पाचक है. चंद्रमा बोधक है ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥ इति धृ० उत्तरार्धे

भाषाटीकायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अब आगे वर्षचर्याका फल कहते हैं. उसमें प्रथम रश्मिका फल कहते हैं.

छठी रश्मिके प्रथमांशमें जन्म होवे तो उसका पिता धनधान्यहीन होवे. दूसरे

अंशमें जन्म होवे तो जन्म होते पिताका मृत्यु होवे. तीसरे अंशमें जन्म होवे तो

दरिद्र सेवक होवे. चौथे अंशमें जन्म होवे तो दरिद्री व्याधिग्रस्त होवे. पांचवें

अंशमें होवे तो अत्यंत पीडित होवे. नवम, दशम, पष्ठ, सप्तम अंशमें होवे तो

रोगी दरिद्री जावे तो जावे जीनेकामी संशय है. ग्यारहवीं रश्मिके आधंशमें

दिहीनो रिक्तश्च द्वितीयेंऽशे पितुर्मृतिः ॥१॥ निःस्वस्त्वृतीये  
दासश्च चतुर्थे रंकसंयुतः ॥ व्याधिभिः पीडितस्तद्वत्पंचमे  
भृशदुःखितः ॥२॥ नवमे दशमे चैवं षष्ठेंशे सप्तमेऽपि च ॥  
व्याधियुक्तो दरिद्रश्च यदि जीवति जीवति ॥ ३ ॥ एकाद-  
शेऽपि रश्मौ चेदाद्येंशे पितृलालितः ॥ पितृधनव्ययकरो  
द्वितीये बंधकीपतिः ॥ ४ ॥ वेश्यासक्तस्त्वृतीये स्यान्निर्धनः  
कुलपांसनः ॥ मृतपुत्रोऽथ वाऽभाग्यश्चतुर्थे स्त्रीविमानितः  
॥ ५ ॥ पंचमे त्वल्पपुत्रः स्यात्षष्ठे चाप्यरुजा युतः ॥ श्री-  
योगे धनवान्कश्चित्सप्तमे दुःखितोऽधनः ॥ ६ ॥ आद्येंऽशे

### टीका ।

द्वितीयेंऽशे जन्मतः तत्समये एव पितुर्मृतिः स्यात् । तृतीयेंऽशे निःस्वो दरिद्रः  
दासः सेवकश्च स्यात् चतुर्थेंऽशे रंकसंयुतः दरिद्रियुक्तः व्याधिभिः पीडितश्च  
स्यात् तद्वत्तेन प्रकारेण पंचमेंऽशे भृशदुःखितः अत्यंतपीडितः नवमे दशमे ष-  
ष्ठें सप्तमे चांशे व्याधियुक्तः रोगी दरिद्रः रंकः यदि जीवति तदा जीवति अनेन  
जीवनेपि संशय एवोदितः एकादशे रश्मौ आद्येंशे पितृलालितः पित्रैव पो-  
षितः मृतमातृक इत्यर्थः तथा पितृधनव्ययकरः पितृधनहर्ता स्यात् द्वितीयें-  
शे बंधकीपतिः पुंश्चलीभर्ता वेश्यासक्तः स्यात् तृतीयेंशे निर्धनः तथा कुल-  
पांसनः कुलहीनः अथवा मृतपुत्रः अभाग्यो वा स्यात् चतुर्थेंऽशे स्त्रीविमा-  
नितः स्त्रीपराजित् स्यात् पंचमेंशे तु अल्पपुत्रः स्यात् षष्ठेंशेऽरुजा युत अरुणः  
श्रीयोगेन धनवान्स्यात् सप्तमेंऽशे दुःखितः अधनश्च स्यात् द्वादशे रश्मौ

### भाषा ।

जन्म होवे तो पिता लालन, पोषण करे. पितृधनका हरण करे. दूसरे अंशमें होवे  
तो पुंश्चली स्त्रीका पति होवे. वेश्यासक्त होवे. तीसरे अंशमें होवे तो निर्धन और  
कुलहीन होवे. अथवा मृतपुत्र वा अभाग्य होवे. चौथे अंशमें जन्म होवे तो स्त्री-  
पराजित होवे. पांचवें अंशमें अल्पपुत्र होवे. छठे अंशमें निरोगी होवे. स्त्रीके योगसे  
धन प्राप्त होवे. सातवें अंशमें दुःखी और निर्धन होवे. बारह रश्मिके प्रथमांशमें

द्वादशे रश्मौ नैव तस्य शुभाशुभौ ॥ द्वितीये बलवान्मूर्ख-  
 श्रौर्यद्रव्येण जीवति ॥ ७ ॥ तृतीये च चतुर्थे च वेश्याप-  
 तिररिंदमः ॥ नृपपूरुषमृत्युश्च भार्याहीनोऽसुतोऽधनी ॥ ८ ॥  
 विद्वांश्चतुर्दशे त्वाद्ये पितृभ्यांलालितः सुखी ॥ द्वितीये केश-  
 भाक्वापि शत्रुजिच्च रणाजिरे ॥ ९ ॥ पितृभ्यां हीन एवाथ  
 लब्धकिंचिद्धनार्जकः ॥ देशादेशमटत्येव तृतीये धनतत्परः  
 ॥ १० ॥ सद्गिरीड्यः सुखी ख्यातः शांतबुद्धिररिंदमः ॥  
 चतुर्थे धनवान् क्षेत्री विद्ययार्जितपोषकः ॥ ११ ॥ सती

## टीका ।

आद्येऽंशे जातस्य तस्य शुभाशुभे नैव स्तः फलाभावइत्यर्थः द्वितीये बल-  
 वान्मूर्खः अतश्चौर्यद्रव्येण जीवती । तृतीयेऽंशे चतुर्थे चांशे वेश्यापतिस्तथा  
 अरिंदमः शत्रुनाशनः नृपपूरुषमृत्युः राजपुरुषात्तस्य मृत्युः स्यात् जीवन्सन्  
 भार्याहीनः असुतः अधनश्च स्यात् ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥  
 ॥ ८ ॥ पुनश्चतुर्दशादिषु फलान्याह विद्वानित्यादिर्विंशतिश्लोकपर्यंतम् ।  
 चतुर्दशे रश्मौ आद्यांशे विद्वान् द्वितीये पितृभ्यां लालितः सुखी च तृतीये-  
 शे केशभाक् कापि शत्रुजित् रणाजिरे स्यात् तथा पितृभ्यां हीन एव किंचि-  
 द्धनार्जको भवति देशादेशमटति चतुर्थे तु धनतत्परः सद्गिरीड्यः सुखी  
 ख्यातः प्रसिद्धः शांतबुद्धिः अरिंदमश्च पंचमे तु धनवान् क्षेत्री क्षेत्रवान् वि-  
 द्यया अर्जितपोषकः संपादितस्य पालकः ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ सती श्रीयो-

## भाषा ।

जन्म होवे तो शुभाशुभ समान हैं. दूसरे अंशमें बलवान् तथा मूर्ख, चोर होंगे.  
 तीसरे चौथे अंशमें वेश्यापति होंगे. शत्रुका नाश करे. राजपुरुषके हातसे मृत्यु  
 होंगे. और जो कभी जीवे तो भार्याहीन, पुत्रहीन, धनहीन, होंगे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥  
 ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ चौदावे गदिमके प्रथमांशमें विद्वान् होंगे. दूसरे अंश-  
 में मातापितासे लालित होंगे. सुखी होंगे. तीसरे अंशमें केश पोषे. शत्रुकुं जीने.  
 मातापितासे हीन होंगे. देशदेश करे. चौथे अंशमें धनतत्पर होंगे. सुखी होंगे.  
 प्रसिद्ध, शांतबुद्धि, शत्रुनाशकर्ता, अच्छे पुरुष जिमकी स्तुति करे. पांचवें अंशमें

श्रीयोगसंयुक्तः पंचमे दुःखभागधनी ॥ पुत्रादिसंपत्संयुक्त  
एवं पंचदशे भवेत् ॥ १२ ॥ अस्मिन्पष्ठे धनी प्राज्ञो विद्य-  
या सद्यशो भवेत् ॥ एवं च षोडशेचांशे त्वतीव धनवान्भवे  
त् ॥ १३ ॥ स्वबंधुभ्योऽधिकोऽन्येऽंशे विद्ययाऽथ धनेन वा ॥  
पुत्रादिसंयुतः श्रीमांशुयंशे स्यात्स्वजनेश्वरः ॥ १४ ॥ इष्टा-  
पूर्तेन संयुक्तस्त्वष्टादशोनविंशके ॥ पूर्ववर्तिशरश्मौ तु ल-  
ब्धधामपरायणः ॥ १५ ॥ वदान्यः पूर्वधर्माणां मनुवद्बहुपु-

### टीका ।

गसंयुक्तः सद्भार्यालक्ष्मीसमान्वितः षष्ठे दुःखभाक् धनी पुत्रादिसंपत्संयुक्तश्च  
पंचदशे रश्मौ एवमेव फलानि पंचांशपर्यन्तं अस्मिन्पष्ठे तु धनी प्राज्ञः विद्य-  
या सद्यशश्च भवेत् एवमेव षोडशे रश्मौ चकारात्सप्तदशे तु आद्यंशे अतीव  
धनवान् स्वबंधुभ्योऽधिकः द्वितीयंशे भवति विद्यया धनेन च युक्तः पुत्रा-  
दिसंयुतः श्रीमांश्च त्र्यंशे स्यात् स्वजनेश्वरः चतुर्थंशे स्यात् । इष्टापूर्तेन  
संयुक्तः पंचषष्ठांशे स्यात् अष्टादशोनविंशके रश्मौ तु पूर्ववत्सप्तदशरश्म्युक्तफ-  
लं ज्ञेयं विंशतिरश्मौ तु लब्धधामपरायणः लब्धस्थानतत्परः वदान्यो दाता  
मनुवद्बहुपुत्रकः इति एकविंशे रश्मौ तु धनैर्युक्तः आद्यंशेऽनंतभागके द्विती-

### भाषा ।

धनी, भूमियुक्त, विद्यासे पोषण करनेवाला, उत्तम भार्यायुक्त होवे. छठे अंशमें  
दुःखी, धनपुत्रसे सुखी होवे. पंधरावे रश्मिका अंशफल पांच रश्मि अंशपर्यंत  
ऊपर लिखे सरीखा फल जानना. छठे अंशमें बुद्धिमान् धनवान् होवे. सोलहवीं  
रश्मिके और सतरावी रश्मिके प्रथम अंशमें बहुत धनी होवे दूसरे अंशमें अपने  
बंधुसे प्रतापी ज्यादा होवे. तीसरे अंशमें विद्या तथा धन पुत्रादिकसे सुखी होवे.  
चौथे अंशमें अपने लोकमें अधिकारपदवी पावे. पांचवें छठे अंशमें यज्ञ याग करे  
बावडी, कूवा, तलाव, बगीचा बनावे. अठारावी और उगनीसवी रश्मिका फल  
सतरावी रश्मि सरीखा जानना. बीसवी रश्मिमें मिला हुई जगामें लुब्ध रहै.  
दानशाल, बहुपुत्रवान् होवे. एकवीस रश्मिके प्रथम अंशमें व दूसरे अंशमें धनी होवे.

त्रकः ॥ एकविंशे धनैर्युक्तमाद्येऽन्तरभागके ॥ १६ ॥ तृ-  
 तीये तु भुवि ख्यातो दानेन च धनेन च ॥ द्विनामत्वं तु  
 वा यज्वा यानवाहनसंयुतः ॥ १७ ॥ श्रीमान्बहुधनानां च  
 साधकश्च चतुर्थके ॥ अग्निमांघ्रेन रोगार्तश्चतुर्थे धनवा-  
 न्सुखी ॥ १८ ॥ पंचमे देशयोर्विद्वान्वदान्यो दंतुरोऽथवा  
 ॥ सप्तमे धनहानिः स्याद्राजयोगैश्च मृत्युयुक् ॥ १९ ॥ अष्ट-  
 मे निर्धनस्थानां जनानां पोषणे रतः ॥ द्वाविंशे प्रथमेशे  
 तु पितुः पुत्रो धनस्य तु ॥ २० ॥ द्वितीये धनहीनश्च किं-  
 चित्कृषिकरः सुखी ॥ तृतीये राजकार्यार्थी तत्कर्मार्जितवि-  
 टीका ।

येशेऽपि तथैव तृतीये तु भुवि ख्यातः दानेन धनेन भवति द्विनामत्वं च  
 स्यात् द्विनामा भवतीत्यर्थः यज्वा यानवाहनसंयुतः श्रीमान्बहुधनानां सा-  
 धकश्च चतुर्थे अग्निमांघ्रेन रोगार्तः धनवान् सुखी पंचमेशे भवति देशयोः  
 स्वदेशे परदेशे च विद्वान् वदान्यः दंतुरः षष्ठे भवति सप्तमे तु धनहानिः रा-  
 जयोगैः नृपसमागमैः मृत्युयुक् च अष्टमे तु निर्धनस्थानां दरिद्राणां जनानां  
 पोषणे रतः । अथ द्वाविंशे रश्मौ प्रथमांशे पितुः धनस्य पोषकः पुत्रो भवति  
 ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ अग्निमाणां चाह द्वितीयइत्यादिद्वाविंशतिश्लोकपर्यंत-  
 स्म द्वाविंशे रश्मौ प्रथमांशफलं पूर्वमुक्तं द्वितीये तु धनहीनः किंचित्कृषिकरः  
 सुखी च तृतीयेशे राजकार्यार्थी तत्कर्मार्जितवित्तकः तत्सेवासंपादितद्रव्य-  
 भाषा ।

तीसरे अंशमें दानधर्मसे विख्यात होवे. वाहन मिले. यज्ञ करे. श्रीमान् बहुधन-  
 वान् सुखी होवे. चौथे अंशमें अग्निमांघसे रोगी होवे. धनी, सुखी, पांचवें अंशमें  
 होवे. वदान्य, दंतुर, छठे अंशमें होवे. सातवें अंशमें धनहीन होवे. राजनिमित्तसे  
 मृत्यु होवे. आठवें अंशमें निर्धन, दरिद्रीका पोषण करे. बावीसवें अंशके प्रथम  
 अंशमें पितृधनका पोषण करे ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥  
 ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ बावीसवी रश्मिके दूसरे अंशमें धनहीन,  
 थोड़ी खेती करे. सुखी होवे. तीसरे अंशमें राजकर्मसे धन मिलावे. चौथे अंशमें



तत्कः ॥ २१ ॥ चतुर्थे तु प्रभुश्चान्यनामभागदृढबंधनात् ॥  
पंचमे तद्वदेवस्यात्पष्ठे कार्यस्य हानिकः ॥ २२ ॥ सर्वव्य-  
यश्च रिक्तश्च सप्तमे रोगयुग्धनी ॥ त्रयोविंशे तु जनकला-  
लितश्च सुखी भवेत् ॥ २३ ॥ तृतीये मूर्खकृत्येन पराभव-  
समन्वितः ॥ चतुर्थे चोरकृत्येन पंचमे व्याधिसंभवः ॥ २४ ॥  
पष्ठे दरिद्रः पुरुषो व्याधिना पीडितो भवेत् ॥ श्रीमान्पुत्र-  
श्चतुर्विंशे प्रथमे लालितो भृशम् ॥ २५ ॥ स्वजात्यनुगुणो  
विद्वान्प्रथमे च द्वितीयके ॥ तेन ख्यातस्तृतीये स्यात्स्वतं-  
त्रः सर्वसंमतः ॥ २६ ॥ क्षेत्रदारसुहृत्पुत्रकलत्रैर्वहुभिर्वृतः ॥

टीका ।

श्च चतुर्थे तु प्रभुः अन्यनामभाक् परनामधारी अत्र हेतुः दृढबंधनादिति पं-  
चमे तद्वदेव प्राग्वदेव फलं पष्ठे कार्यस्य हानिकः सर्वव्ययः रिक्तश्च सप्तमे रो-  
गयुग्धनीच ॥ २१ ॥ २२ ॥ अथ त्रयोविंशादिरश्मिषु फलं माह त्रयोविंश-  
त्यादिसप्तविंशतिपर्यंतम् । त्रयोविंशे रश्मौ तु जनकलालितः प्रथमंशे द्वि-  
तीये तु सुखी भवेत् तृतीये मूर्खकृत्येन पराभवसमन्वितः चतुर्थे चोरकृत्येन  
युक्तः पंचमे व्याधिसंभवः पष्ठे दरिद्रः व्याधिना पीडितश्च पुरुषो भवेत् । अथ  
चतुर्विंशे रश्मौ श्रीमान्पुत्रः पित्रा भृशं लालितः स्वजात्यनुगुणः विद्वान्  
प्रथमांशे भवति द्वितीये तेन गुणेन ख्यातः प्रसिद्धः तृतीये स्वतंत्रः सर्वसं-  
मतश्च चतुर्थे क्षेत्रदारसुहृत्पुत्रैर्वहुभिर्वृतो भवति पंचमे व्याधितः पष्ठे बहुव्य-

भाषा ।

समर्थ होवे, दूसरेका नाम धारण करे, पांचवें अंशमें चौथे सरीखा फल, छठे अं-  
शमें कार्यकी हानि करनेवाला होवे, सातवें अंशमें रोगों और धनी होवे ॥ २१ ॥  
॥ २२ ॥ तेवीस रश्मिके प्रथमांशमें पितासे सुखी, दूसरे अंशमें सुखी होवे, ती-  
सरे अंशमें मूर्खताके कामसे हार जावे, चौथे अंशमें चोर होवे, पांचवें अंशमें रो-  
गकी उत्पत्ति होवे, छठे अंशमें दरिद्री, रोगपीडित होवे, चौबीसवीं रश्मिके प्रथ-  
मांशमें लक्ष्मीवान् पितासे सुखी विद्वान् स्वजातिके गुणसे युक्त होवे, दूसरे अंश-  
में प्रथमांशका फल जानना, तीसरे अंशमें स्वतंत्र सर्व संमत होवे, चौथे अंशमें

पंचमे व्याधितः षष्ठे बहुव्ययपरायणः ॥ २७ ॥ पंचविंशे-  
 तु षष्ठांशे फलहीनस्तु जीवति ॥ षड्विंशे प्रथमांशे तु द-  
 रिद्रः स्यात्सुतोऽपि सन् ॥ २८ ॥ पितुः कार्यं तु वृद्धिः  
 स्याद्वितीये पितृवेश्मतः ॥ अन्यत्र गत्वा तत्रैव स्वयोग्येन  
 च कर्मणा ॥ २९ ॥ स्वदेहपोषकोन्येशे धनी च कृत्यावित्त-  
 स्थितः ॥ चतुर्थे पंचमे चैव पट्टबंधादिसंयुतः ॥ ३० ॥ अ-  
 तीव धनवान्सः स्यात्षष्ठे त्वंशे स्वदेवभाक् ॥ क्षेत्रदारादि-  
 वृद्ध्या तु व्यथाव्याधिसमन्वितः ॥ ३१ ॥ नवमे धनहा-

टीका ।

यपरायणः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ अथ पंचविंशादिरश्मिफलान्याह  
 पंचविंश इत्यादिसार्धद्वात्रिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । पंचविंशे रश्मौ षष्ठांशे फलहीनः  
 फलरहितः सन् जीवति अथ षड्विंशे रश्मौ प्रथमांशे दरिद्रः सुतः पितुः कार्यं  
 भवति वृद्धिश्च स्यात् द्वितीये पितृगृहादन्यत्र गत्वा स्वयोग्यकर्मणा स्वदेह-  
 पोषको भवति अन्ये तृतीयेशे धनी कृत्याविच्च स्थितः चतुर्थे पंचमे च पट्टबं-  
 धादिसंयुतः दीक्षितः पुरग्रामपट्टनपट्टबंधाग्रहारसंयुतो वेत्यर्थः षष्ठे अतीव  
 धनवान् सप्तमेशे स्वदेहभाक् अष्टमेशे क्षेत्रदारादिवृद्ध्या जीवति व्यथाव्या-  
 धिसमन्वितः नवमे भवति दशमे धनहानिः पुत्रदारादिवर्जितः यावन्नवांश-

भाषा ।

घर स्त्री पुत्र सगे संबंधीसे भरपूर रहे. पांचवें अंशमें रोगी होवे. छठे अंशमें बहुत  
 खर्च करे ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ पचीसवीं रश्मिके छठे अंशमें  
 निष्फल जीना होवे. छत्वीसवीं रश्मिके प्रथमांशमें दरिद्रा पिताका काम करने-  
 वाला होवे. दूसरे अंशमें अपने घरकूं छोड़के दूसरे ठिकाने जायके उत्तम कर्ममें,  
 देहपोषण करे. तीसरे अंशमें धनवान् कामकूं जाननेवाला होवे. चौथे पांचवे अं-  
 शमें पट्टबंधनादिकसे युक्त दीक्षित होवे. छठे अंशमें धनवान् हांव. मातवें अंशमें  
 देह पोषण होवे. आठवें अंशमें खेतरत्ने भियादिककी वृद्धि करे जीवन करे, नवमें  
 अंशमें मानस दुःखी रोगी होवे. दशवें अंशमें धनहीन आपुत्रगृहिन हांव. सचा-

निः स्यात्पुत्रदारविवर्जितः ॥ यावद्दशनवांशाश्च षड्विंश-  
वदथद्वये ॥ ३२ ॥ राजप्रियस्ततश्चंडः शुद्धः स्यादंशके  
ततः ॥ एकोनत्रिंशे रश्मौ तु सुखी स्याच्च द्वितीयके ॥ ३३ ॥  
राजसेवी तृतीयेंशे कृत्याकृत्यविदीश्वरः ॥ बहुबंधुयुतः  
श्रीमान्मानवाहनसंयुतः ॥ ३४ ॥ देशग्रामाधिकारी च  
त्रिंशेत्वेतैः समन्वितः ॥ सेनानीनीतिमाञ्छूरः पंचमांशे  
भवेदिदम् ॥ ३५ ॥ षष्ठे तु विजयो युद्धे सप्तमेऽपि रुजा  
युतः ॥ न्यूनायतिस्तु वस्वंशे नवांशे त्वधिकायतिः ॥ ३६ ॥

### टीका ।

दशांशफलान्युक्तानि तान्येव अथ द्वये सप्तविंशतिरश्मौ अष्टाविंशतिरश्मौ  
च ज्ञेयानि विशेषस्तु राजप्रियः चंडः शुद्धः इति तत्र ज्ञेयः ॥ २८ ॥ २९ ॥  
॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ अथैकोनत्रिंशादिरश्मीनां फलान्याह एकोनत्रिंश  
इत्यादित्रिचत्वारिंशत्पर्यंतम् । एकोनत्रिंशे रश्मौ प्रथमांशे सुखी स्यात् द्वि-  
तीये राजसेवी स्यात् तृतीयेंशे कृत्याकृत्यवित् कार्याकार्यज्ञः ईश्वरोधिपतिः  
बहुबंधुयुतः श्रीमान्मानवाहनसंयुतः देशग्रामाधिकारी च चतुर्थादिनवांशः  
पर्यंतं क्रमात्स्यात् त्रिंशे रश्मौ एतैरुक्तफलैः समन्वितः एकत्रिंशे रश्मौ तु  
सेनानीः नीतिमान् शूरः इदं पंचमांशे फलं भवति षष्ठे तु युद्धे विजयः सप्तमे  
रुजा युतः न्यूनायतिः वस्वंशेऽष्टमेशे भवति नवांशे तु अधिकायतिः एवमेव

### भाषा ।

वीस अष्टावीस रश्मिके अंशोंमें पूर्वोक्त फल जानना ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥  
॥ ३२ ॥ जोगनतीसवी रश्मिके प्रथमांशमें सुखी होवे, दूसरे अंशमें राजसेवी  
होवे, तीसरे अंशमें सत्कर्मकू जाने चौथे अंशमें अधिपति होवे, पांचवें अंशमें बहु-  
त बंधुसमागममें रहै, छठे अंशमें श्रीमान् होवे, सातवें अंशमें सन्मान पावे, वाहन  
मिले, आठवें अंशमें देशाधिपति होवे, नवम अंशमें ग्रामाधिकारी होवे, तीस र-  
श्मिके अंशफलविचारमें पूर्वोक्त फल जानना, एकतीसवी रश्मिके पांचवें अंशमें  
सेनाधीश, नीतिमान्, शूर होवे, छठे अंशमें युद्धमें जय पावे, सातवें अंशमें रो-  
गयुक्त होवे, आठवें अंशमें लाभ थोडा होता रहे, नवम अंशमें बहुत लाभ होवे,

त्रयस्त्रिंशे तु राजानः षष्ठांशे वा तृतीयके ॥ अभिषिक्तो भवेद्यद्वा पट्टबंधस्तु योगतः ॥ ३७ ॥ रश्मौ तथा चतुस्त्रिंशे चतुर्थांशे पराजयः ॥ तृतीये पंचमे षष्ठे युद्धे तु विजयी भवेत् ॥ ३८ ॥ अष्टमे नवमेंऽंशे तु वृद्धिः स्यादशमे न हि ॥ षडंशविषये भस्माच्चत्वारिंशत्ततः परे ॥ ३९ ॥ द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे चाद्यके तथा ॥ राजा स्यात्पंचमे षष्ठे सप्ताष्टनवमे ततः ॥ ४० ॥ दशमे च क्रमाद्युद्धव्याधिर्वाऽथ पराजयः ॥ इतरांशेषु संख्यातः सर्वसंपत्समन्वितः ॥ ४१ ॥ ततः परं च सम्राट् स्याच्चतुर्थे पंचमे जयी ॥ अंशास्तुल्यास्तु तेष्वेवं विपरीतफलं विदुः ॥ ४२ ॥

## टीका ।

द्वात्रिंशद्रश्मौ ज्ञेयं तत्रविशेषानुक्तत्वात् त्रयस्त्रिंशे रश्मौ षष्ठांशे तृतीये वा राजानो भवन्ति यद्वा योगतः योगवशात्पट्टबंधः स्यात् अथ वा राज्याभिषिक्तो भवति चतुस्त्रिंशे रश्मौ चतुर्थांशे पराजयः तृतीयपंचमषष्ठेषु तु युद्धे विजयी भवेत् अष्टमे नवमेंऽंशे तु वृद्धिः स्यात् दशमे षडंशविषये न हि फलाभावः तस्माच्चतुस्त्रिंशरश्मेः सकाशात् यावच्चत्वारिंशद्रश्मिपर्यंतं येऽपरेऽन्ये रश्मयः सन्ति तेषामेकमेव फलमुच्यते तदेव द्वितीयतृतीयचतुर्थाद्येषु राजा स्यात् सप्ताष्टनवमदशमेषु क्रमात् युद्धं व्याधिः पराजयः इति फलानि ज्ञेयानि इतरांशेषु सर्वसंपत्समन्वितः संख्यातः कथितः ततः परं चतुस्त्रिंशद्रश्म्यनंतरं रश्मिषु सत्सु सम्राट् चक्रवर्ती स्यात्तत्र पंचमचतुर्थांशयोः जयी जेता सम्राट् भवति एवमुक्तसंख्यया तुल्या अंशा नेवचेन्नामेतदवशिष्टांशे इत्यर्थः

## भाषा ।

चत्तीस रश्मिके अंशमें पूर्वसारखा फल जानना. तेहतीस रश्मिके छठे तीसरे अंशमें राजा होते हैं. चौतीस रश्मिके चौथे अंशमें पराजय हार होंगे. तीसरे, पांचवें, छठे अंशमें जीत होंगे. आठवें नवम अंशमें वृद्धि होवे. चौतीस रश्मिसे लेंके चालीस रश्मितक जो रश्मिहैं उसके प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ यह अंशोंमें राजा

व्याधिरुक्तवदेवस्थाद्यावद्दिशतिरश्मयः ॥ यद्यप्यंशाः परं  
नाऽत्र अधिकारं भजन्ति ते ॥ ४३ ॥ अथ स्थानगतानां  
तु रव्यादीनां क्रमात्फलम् ॥ ततो रविः शिरोरोगं बंधूनां  
च विरोधताम् ॥ ४४ ॥ द्वितीये धनहानिश्च तृतीये मित्र-  
वर्धनम् ॥ धनलाभं सुखे सौख्यं शत्रुभिश्च समागम् ॥ ४५ ॥  
पंचमे पुत्रलाभं च बुद्धिमुद्यमसिद्धिस्तु ॥ षष्ठे धनं जयं  
कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनम् ॥ ४६ ॥ अष्टमे व्याधिहानिं च

टीका ।

विपरीतफलं विदुः उक्तविपर्यासः स्यात्तत्र प्रथमादि यावद्दिशतिरश्मिपर्यंतं  
उक्तवत्तुल्यरश्मिराहित्ये व्याधिः स्यात् अथात्र यद्यपि परं अंशा नोक्तास्तथा-  
पि तेषु स्वाधिकारफलं भजंतीति ज्ञेयम् ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥  
॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अथ रव्यादीनां स्थानवशात्फ-  
लान्याह तत्रादौ रविस्थानफलान्याह अथेत्यादिअष्टचत्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम्  
अथाऽनंतरं स्थानगतानां तन्वादिस्थानस्थितानां रव्यादीनां ग्रहाणां क्रमा-  
द्भावक्रमेण प्रथमादिद्वादशांतमित्यर्थः तदेवाह रविः सूर्यः तनुगतः शिरोः  
रोगं शिरःशूलं बंधूनां विरोधतां बांधवविरोधमिति द्वितीयभावे धनहानिं  
करोति तृतीये भावे मित्रवर्धनं धनलाभं करोति सुखे चतुर्थभावे सौख्यं तथा  
शत्रुभिः समागमं करोति पंचमे भावे पुत्रलाभं बुद्धि उद्यमे सिद्धिस्तु  
षष्ठे भावे धनं जयं च कुर्यात् सप्तमे भावे स्त्रीविरोधनं कुर्यात् अष्टमे भावे

भाषा ।

होवे. सातवें अंशमें युद्ध, आठवें अंशमें व्याधि, नवम अंशमें व्याधि, दशम  
अंशमें पराजय, होवे. बाकीके अंशोंमें सर्व संपत्ति-प्राप्त होवे ॥ ३३-॥  
॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अथ  
सूर्यादिग्रहोंका बारह भावोंका फल कहते हैं. भूर्य तनु भावमें होवे तो शिरोरोग  
बंधुविरोध करे. १ धनहानि करे. २ मित्रकी वृद्धि धनलाभ करे. ३ सुख करे.  
शत्रुसमागम करे. ४ पुत्रलाभ, बुद्धिवृद्धि, उद्योगकी सिद्धि करे. ५ धनप्राप्ति  
जयप्राप्ति करे. ६ स्त्रीविरोध करे. ७ व्याधि और हानि करे. ८ मित्रका बंधन

नवमे मित्रबंधनम् ॥ भाग्यहानिं च दशमे धनलाभं सुखं  
जयम् ॥ ४७ ॥ एकादशे धनानां च सिद्धिं मित्रसमागमम् ॥  
द्वादशे धनहानिं च जयं वा कुक्षिरुक्क्रमात् ॥ ४८ ॥ चंद्रे  
लग्ने च कलहं द्वितीये धनयोजनम् ॥ तृतीये भ्रातृभिला-  
भं धनवस्त्रादिसंग्रहम् ॥ ४९ ॥ चतुर्थे धनवस्त्रादिवाहना-  
दिसुसंयुतम् ॥ तीक्ष्णे धनी सुतयुतः परिपूर्णसंपत्पष्टे तु  
रोगसहितं कुमतिं च क्लामे ॥ ५० ॥ विद्याधनक्षेत्रसुखा-  
दियुक्तो मृत्यौ च मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ॥ स्त्रीस्वर्ण-

### टीका ।

व्याधिं हानिं च कुर्यात् नवमे भावे मित्रबंधनं भाग्यहानिं च कुर्यात् दशमे  
भावे धनलाभं सुखं जयं च कुर्यात् एकादशे भावे धनानां सिद्धिं मित्रसमा-  
गमं च कुर्यात् द्वादशे भावे धनहानिं व्ययं कुक्षिरुजं च क्रमाद्वा कुर्यादि,  
ति ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ अथ भावेषु चंद्रफलमाह चंद्र-  
त्यादिसार्धैकपंचाशच्छ्लोकपर्यंतम् । चंद्रः लग्ने वर्तमानः कलहं करोति द्विती-  
ये धनयोजनं करोति तृतीये भ्रातृलाभं धनवस्त्रादिसंग्रहं च करोति चतुर्थभा-  
वे धनवस्त्रादिसंयुतं वाहनादिसंयुतं च करोति तीक्ष्णे पंचमे सुतयुतः धनी  
परिपूर्णसंपत्पष्टः स्यात्पष्टे तु रोगसहितं कुमतिं च करोति क्लामे सप्तमभावे  
विद्याधनक्षेत्रसुखादियुक्तः भवेत् मृत्यौ अष्टमभावे मृत्युविषयः कुक्षिरोगी च  
भवति धर्मे नवमभावे स्त्रीस्वर्णदासानामायतिर्भवेत् माने दशमभावे सुचा-

### भाषा ।

भाग्यकी हानि करे. ९ धनलाभ, सुख, जयप्राप्ति करे. १० धनसिद्धि, मित्रसमा-  
गम करे. ११ धनहानि, खर्च, कुक्षिरोग करे १२ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥  
॥ ४७ ॥ ४८ ॥ अब चंद्रका द्वादशभावका फल कहते हैं. चंद्र कलह करे. १ ध-  
नप्राप्ति करे. २ भाईसे लाभ वस्त्रादिकका संग्रह करे. ३ धनवस्त्रवाहनप्राप्ति करे.  
४ धनपुत्रसर्वसंपत्तिकी प्राप्ति करे. ५ रोग कुबुद्धि करे. ६ विद्याधन भूमीसुखकी  
प्राप्ति करे. ७ मृत्यु दुःख कुक्षिरोग होवे. ८ स्त्रीसुवर्णदासोंकी प्राप्ति करे. ९ उत्तम

दासायतिरेव धर्मे माने सुचारित्रगुणं धनं च ॥ ५१ ॥  
 लभेत्तु चैतत्सकलं व्यये तु धनस्य रिःफं कुरुते शशी तु ॥  
 कुजे लभे तु चापल्याक्षतं स्वे धननाशनम् ॥ ५२ ॥ वि-  
 क्रमे भ्रातृमरणं धनलाभः सुखं यशः ॥ चतुर्थे बंधुमरणं  
 शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ॥ ५३ ॥ पंचमे पितृहानिं च धनाय-  
 तिसुतो यशः ॥ षष्ठे रिपुसमृद्धिं च जयं बंधुसमागमम् ॥  
 ॥ ५४ ॥ अर्थवृद्धिं स्त्रियां दारमरणं नीचसेवनम् ॥  
 नीचस्त्रीसंगमो मृत्यौ धननाशं पराभवश्च ॥ ५५ ॥ पराभ-  
 वमनर्थं च धर्मे पापरुचिक्रिया ॥ धनव्ययं च दशमे ध-

टीका ।

रित्रं गुणं धनं च करोति लाभे एकादशभावे एतत्सकलं पूर्वोक्तं फलं व्यये  
 द्वादशभावे तु शशी धनस्य रिःफं द्रव्यनाशं करोति ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥  
 अथ भावेषु मौमफलान्याह कुजे इत्यादिसप्तपंचाशच्छ्लोकपर्यन्तम् । लग्नस्था-  
 ने कुजे मौमे सति चापल्याच्चपलत्वात् क्षतव्याधिः स्यात् स्वे द्वितीये भावे  
 धननाशं विक्रमे तृतीयभावे भ्रातृमरणं धनलाभः सुखं यशश्च चतुर्थभावे  
 बंधुमरणं शत्रुवृद्धिः धनव्ययश्च पंचमे पितृहानिः धनायतिः पुत्रलाभः यश-  
 श्च षष्ठे भावे रिपुसमृद्धिः जयो बंधुसमागमोऽर्थवृद्धिश्च स्त्रियां सप्तमभावे दा-  
 रमरणं नीचसेवनं नीचस्त्रीसंगमश्च मृतौ अष्टमभावे धननाशः पराभवः अन-  
 र्थश्च धर्मे नवमभावे पापरुचिक्रिया धनव्ययश्च दशमे भावे धनलाभः कुक-

भाषा ।

गुणकी और धनकी प्राप्ति करे. १० ग्यारहवेंमें दशवेका फल जानना. ११ द्रव्य-  
 नाश होवे. १२ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ अब मंगलका द्वादशभावफल कहते हैं.  
 मंगल १ होवे तो अपलस्वभावके लिये छिद्रका व्याधि होवे. धननाश करे. २ माई-  
 का नाश, धनलाभ, सुख, यशप्राप्ति करे. ३ बंधुमरण, शत्रुवृद्धि, धनप्राप्ति खर्च  
 करे. ४ पिताकी हानि, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ, यशप्राप्ति करे. ५ शत्रुवृद्धि, जय, बंधु-  
 समागम, अर्थवृद्धि करे. ६ स्त्रीमरण, नीचसेवन, नीचस्त्रीसंगम करे. ७ धननाश,  
 पराभव, अनर्थ करे. ८ पापकर्ममें रुचि, धन खर्च करे. ९ धनलाभ, कुकर्म करे.

नलाभं कुकर्णं च ॥ ५६ ॥ लाभे धनं सुखं वस्त्रं स्वर्णक्षेत्रा-  
दिसंग्रहम् ॥ व्यये नेत्ररुजं भ्रातृनाशं च कुरुते कुजः  
॥ ५७ ॥ बुधः षष्ठेऽरिवृद्धिं च युद्धे सति पराजयम् ॥ मृतौ  
बंधुविहीनत्वं बंधनं व्ययमे व्ययम् ॥ ५८ ॥ भावोक्तफलवृद्धिं  
तु परे तु कुरुते तथा ॥ गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धिं धनक्ष-  
यम् ॥ ५९ ॥ षष्ठे पराजयं व्याधिमष्टमे बंधनं तथा ॥ रिःफे  
चौरहतस्वं तु नेत्ररोगपराजयम् ॥ ६० ॥ सप्तमे च चतुर्थे च

टीका ।

मै च लाभे एकादशभावे धनं सुखं वस्त्रं स्वर्णक्षेत्रादिसंग्रहश्च व्यये भावे नेत्र-  
रुजं भ्रातृनाशः एवं कुजः फलं कुस्ते ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥  
॥ ५७ ॥ अथ भावेषु बुधफलान्याह बुधइतिसार्धेन । बुधः षष्ठे भावेऽरिवृद्धिं  
युद्धे सति पराजयं च मृतौ अष्टमस्थाने बंधुहीनत्वं बंधनं च व्ययमे द्वादश-  
भावे व्ययं नाशं परेषु शेषेषु भावेषु भावोक्तफलवृद्धिं तत्तद्भावविहितफलाधि-  
क्यं कुस्ते । इति ॥ ५८ ॥ अथ भावेषु गुरुशुक्रफलम् गुर्वित्यादिसार्धैकपाष्टि-  
श्लोकपर्यंतम् । अथ गुरुशुक्रौ तृतीयभावे धनवृद्धिं धनक्षयं च कुस्तः षष्ठे परा-  
जयं व्याधिं च कुस्तः अष्टमे बंधनं कुस्तः रिःफे द्वादशभावे चौरहतस्वं चौरैः  
हृतं त्वं द्रव्यं यस्य तथा तं कुस्तः अपि च नेत्ररोगं पराजयं चेति सप्तमे चतु-

भाषा ।



सैनापत्यधनायतिः ॥ सर्वसंपत्समृद्धिं च नवमे राजसंप-  
दम् ॥ ६१ ॥ पूर्वोक्तफलसंयोगमन्येष्वपि समं भवेत् ॥  
कुजवद्रविवन्मंदः पादत्र्यंशं दलं गतः ॥ ६२ ॥ पादोनमे-  
कं मित्राधिमित्रस्वर्क्षे च कोणमे ॥ उच्चे तु नीचे त्रिगुण-  
मध्यरौ द्विगुणं ततः ॥ ६३ ॥ अरौ सार्धं क्रमात्कालफल-  
जस्त्वेव निर्णयः ॥ शुभैर्दृष्टो रवी राजसेवाफलधनायतिः

टीका ।

यै च भावे सैनापत्यधनायतिः सर्वसंपत्समृद्धिश्च नवमे राजसंपत्पूर्वोक्तफल-  
संयोगं पूर्वोक्तफलप्राप्तिं च कुस्तः अन्येष्ववशिष्टेषु भावेषु समं तत्तद्भावतुल्यं  
फलं भवेदिति ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ अथमंदफलमाह कुजेतिपादेन । मंदः  
शनिः कुजरव्युक्तद्वादशभावफलदो भवति । अथाधिमित्रादिस्थानस्थितानां  
भावोक्तफलन्हासवृद्धी आह पादमित्यादिसार्धत्रिषष्टिस्थोऽप्येतत् । मित्राऽ-  
धिमित्रस्वर्क्षत्रिकोणोच्चेषु वर्तमानेषु ग्रहेषु पूर्वोक्तभावफलं क्रमात्पादत्र्यंशद-  
लपादोनैकांशफलदा ग्रहाः स्युः नीचे वर्तमानेषु त्रिगुणं मध्यरौ अधिशत्रु-  
स्थाने द्विगुणं अरौ शत्रुक्षेत्रे वर्तमानेषु ग्रहेषु सार्धं क्रमात्कालफलजो निर्ण-  
यः ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ अथ रव्यादीनां दृष्टिवशात्फलं कथयन्नादौ रविफल-  
माह शुभैरिति पंचषष्टिस्थोऽप्येतत् । अथ रविः शुभैः शुभग्रहैः दृष्टः विलो-  
कितश्चेत्तस्य फलं राजसेवा धनायतिश्च, एवं शत्रुभिः दृष्टो रविश्चेत्कलहं

भाषा ।

करे, ८ भाग्योदय करे, ९ व्यापार राजसन्मान करे, १० लाभ करे, ११ द्रव्य  
चोरीमें जाता रहे १२ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ अब शनिका जो फल है, सो सूर्य,  
मंगल यह दोनोंके भावमें जो फल कहा है वो जानना. अब भावोक्त फलकी न्हास  
वृद्धि कहते हैं. जो ग्रह मित्रक्षेत्री होवे तो पादमात्र भावफल जानना. अधिमित्रका  
होवे तो तृतीयांश भावफल जानना. स्वक्षेत्रका होवे तो अर्धभावफल जानना. त्रि-  
कोणका होवे तो तीनभाग फल जानना. उच्चराशिका होवे तो संपूर्ण फल जानना.  
नीचराशिका होवे तो त्रिगुणहीन फल जानना. अधिशत्रुका होवे तो द्विगुणहीन  
फल जानना. शत्रुक्षेत्रका होवे तो अर्धहीन फल जानना ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ अब सूर्यके

॥ ६४ ॥ शत्रुभिः कलहं दुःखं रुजं जठरनेत्रयोः ॥ मित्र-  
दृष्टौ जयं बंधुलाभं पापैश्च रोगिताम् ॥ ६५ ॥ धनहानिं  
शशी पापैः शिरोनेत्ररुजं तथा ॥ शत्रुभिः पापकरणं धन-  
नाशं गमागमौ ॥ ६६ ॥ शुभैररोगतां सौख्यं धनलाभं  
च बंधुभिः ॥ मित्रलाभं जयं क्षेत्रदेशलाभं करोति हि  
॥ ६७ ॥ पापैर्दृष्टः कुजः क्षेत्रधनधान्यादिनाशनम् ॥ श-  
त्रुभिर्वधनं रोगं चाहवं दूरवासनम् ॥ ६८ ॥ शुभैस्तु वि-  
टीका ।

दुःखं जठरनेत्रयोः रुजं चेति फलानि, मित्रदृष्टो रविश्रेजयः बंधुलाभश्चेति,  
पापैः पापग्रहेः दृष्टो रविश्रेद्रोगितां रुग्णत्वमिति रविफलानि दृष्टिवशाज्ज्ञे-  
यानि ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ अथ दृष्टिवशाच्चंद्रफालान्याह धनेत्यादिसप्तपष्टिभ्यो-  
कपर्यंतम् । शशी चंद्रः पापैर्दृष्टश्चेच्छिरोनेत्ररुजं व्यथां धनहानिं च करोति  
शत्रुभिः दृष्टश्चेत्पापकरणं पापाचरणं धननाशं गमागमौ भ्रमणमित्यर्थः तथा  
शुभैर्दृष्टश्चेदरोगतां सौख्यं बंधुभिः धनलाभं मित्रलाभं जयं क्षेत्रदेशलाभं च  
करोतीति ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ अथ दृष्टिवशाद्भौमफलमाह पापैरित्यादि एकोन-  
सप्ततिभ्योऽप्यंतम् । अथ कुजो भौमः पापैर्ग्रहेर्दृष्टो विलोकितः क्षेत्रधनधा-  
न्यादिनाशं करोति शत्रुभिर्विलोकितः वधनं रोगं आहवं युद्धं दूरवासनं प्र-

भाषा ।

दृष्टिका फल कहते हैं. सूर्य शुभग्रहकी दृष्टिसे युक्त होवे तो राजसेवा धनप्राप्ति करे.  
शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो कलह, दुःख नेत्ररोग होवे. मित्रग्रहोंकी दृष्टि होवे तो जय,  
बंधुलाभ होवे. पापग्रहोंकी दृष्टि होवे तो रोगी होवे ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ अथ चंद्रका फल  
कहते हैं. चंद्रके ऊपर पापग्रहोंकी दृष्टि होवे तो शिरोरोग, नेत्ररोग, पीडा धनहानि  
करे. शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो पापकर्म करे. धननाश होवे. नित्य भ्रमण करे. शुभ-  
ग्रहोंकी दृष्टि होवे तो नीरोगीपना, सुख, बंधुसमागम, धनलाभ, मित्रलाभ, जय,  
क्षेत्र, देशलाभ करे ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ अथ मंगलका फल कहते हैं. मंगलके ऊपर  
पापग्रहोंकी दृष्टि होवे तो भूमिधनधान्यादिकका नाश करे. शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे  
तो वधन, रोग, युद्ध, प्रवास करे. शुभग्रहोंकी दृष्टि होवे तो विजय, पराक्रम, देश,

जयं देशक्षेत्रलाभं सुहृच्छुभम् ॥ मित्रैश्च धनसंसिद्धिं क-  
रोति हि न संशयः ॥ ६९ ॥ शुभैर्बुधो लिपिविज्ञानं विद्या-  
लाभं च कौशलम् ॥ मित्रैर्भूषा धनक्षौमरत्नलाभं च श-  
त्रुभिः ॥ ७० ॥ अतिसारं च दुर्बुद्धिं प्रतीकेषु सदोद्यमम् ॥  
पापैर्महाविषादं च कुक्षौ शूलं च वर्धते ॥ ७१ ॥ गुरुः शु-  
भैस्तु संदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ॥ जयं धनायतिमित्रैर्दा-  
रक्षेत्रादिसंग्रहम् ॥ ७२ ॥ शत्रुभिः कुष्ठरोगं च त्वग्दोषकलहं  
टीका ।

चासं च करोति शुभैर्दृष्टो भूमिः विजयं पराक्रमं देशक्षेत्रलाभं सुहृच्छुभं  
सुहृद्भयः कल्याणं करोति मित्रैर्दृष्टश्चेद्धनसंसिद्धिं धनप्राप्तिमित्यर्थः हि नि-  
श्चयेन करोति न संशयइति ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ अथ दृष्टिवशाद्बुधग्रहफलान्याह  
शुभैरित्यादिश्लोकद्वयेन । बुधः शुभैर्दृष्टः लिपिविज्ञानं विद्यालाभं कौशलं  
च करोति मित्रैर्दृष्टो बुधः भूपाधनक्षौमरत्नलाभं करोति शत्रुभिर्दृष्टः अति-  
सारं रोगं दुर्बुद्धिं प्रतीकेषु गात्रेषु विषये सदा उद्यमं उद्योगं करोति पापैर्दृष्ट-  
श्चेन्महाविषादं अतिखेदं कुक्षौ शूलं च वर्धते ॥ ७० ॥ ७१ ॥ अथ दृष्टिव-  
शाद्गुरुफलमाह गुरुरित्यादित्रिसप्ततिश्लोकपर्यन्तम् । शुभैः संदृष्टो गुरुः धर्म-  
कार्योद्यमं विहिताचरणोद्योगं सुखं जयं धनायतिं च करोति मित्रैर्दृष्टः दार-  
क्षेत्रादिसंग्रहं करोति शत्रुभिर्दृष्टः कुष्ठरोगं त्वग्दोषं कलहं रणं च करोति पा-  
भाषा ।

भूमि मित्रवर्गसे सुखकरे. मित्रग्रहोंकी दृष्टि होवे तो धनप्राप्ति होवे ॥ ६८ ॥ ६९ ॥  
अब बुधकी दृष्टिका फल कहते हैं. बुधके उपर शुभग्रहोंकी दृष्टि होवे तो लिपि-  
ज्ञान, विद्यालाभ, कुशलता प्राप्त करे. मित्रग्रहोंकी दृष्टि होवे तो वस्त्रालंकार, रत्न-  
लाभ करे. शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो अतिसाररोग, दुर्बुद्धि, सदा उद्योग करे.  
पापग्रहोंकी दृष्टि होवे तो बहुत खेद, कुक्षिमं शूलवृद्धि होवे ॥ ७० ॥ ७१ ॥ अब गुरुकी  
दृष्टिका फल कहते हैं. गुरुके उपर शुभग्रहोंकी दृष्टि होवे तो धर्मकामका उद्योग,  
सुख, जय, धनप्राप्ति करे. मित्रग्रहोंकी दृष्टि होवे तो स्त्री भूमि आदि पदार्थोंका सं-  
ग्रह करे. शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो कुष्ठरोग, त्वचारोग, कलह, संग्राम करे ॥ ७२ ॥

रणम् ॥ पापैः पराजयं बुद्धेः केदारादिवियोजनम् ॥ ७३ ॥  
 शुभैः शुक्रः सुखं योषालाभं भूषाधनायतिः ॥ मित्रैस्तु  
 पट्टबंधादि देशलाभादि चाखिलम् ॥ ७४ ॥ पापैः पराजयं  
 योषावियोगं धननाशनम् ॥ शत्रुभिर्याप्यरोगं च मूत्रकृ-  
 च्छादिकं तथा ॥ ७५ ॥ मंदः पापैस्तथाकुक्षिरोगं बंधध-  
 नशयम् ॥ शत्रुभिः शत्रुबाधा च पराभवमथामयम् ॥ ७६ ॥  
 शुभैररोगतां मित्रैर्दृष्टो बंधुसमागमम् ॥ रवौ स्थानबले

### टीका ।

पैर्दृष्टः शुद्धे पराजयं केदारादिवियोजनं करोति ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ अथ दृष्टि-  
 वशाच्छुक्रफलान्याह शुभैरित्यादिपंचमस्ततिश्लोकपर्यंतम् शुभैर्दृष्टः शुक्रः  
 सुखं योषालाभं स्त्रीलाभं भूषाधनायतिं भूषणधनप्राप्तिं करोति मित्रैर्दृष्टः प-  
 ट्टबंधादि देशलाभादि चाखिलेष्टं करोति पापैर्दृष्टः पराजयं योषावियोगं ध-  
 ननाशं च शत्रुभिर्दृष्टः याप्यरोगं कष्टसाध्यरोगं मूत्रकृच्छ्रादिकं च करोति  
 ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ अथ दृष्टिवशाच्छनिफलान्याह मंदइतिसाद्धेन । पापैर्दृष्टो  
 मंदः शनिः कुक्षिरोगं बंधनं क्षयं च करोति तथा शत्रुभिर्दृष्टः शत्रुबाधा प-  
 राभवं आमयं च करोति शुभैर्दृष्टः अरोगतां मित्रैर्दृष्टः बंधुसमागमं च क-  
 रोति ॥ ७६ ॥ अथ स्थानबलवशाद्रव्यादीनां फलान्याह स्वावित्याद्येकाशी-

### भाषा ।

॥ ७३ ॥ अब शुक्रकी दृष्टिका फल कहते हैं. शुक्रके ऊपर शुभग्रहोंकी दृष्टि होवे  
 तो सुख, स्त्रीलाभ करे. अलंकारकी, धनकी प्राप्ति करे, मित्रग्रहोंकी दृष्टि होवे तो  
 पट्टबंधादि देशलाभ, इष्टप्राप्ति करे. पापग्रहोंकी दृष्टि होवे तो पराजय, स्त्रीवियोग  
 धननाश करे. शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो याप्य कहियं कष्टसाध्य रोग, मूत्रकृच्छ्र  
 रोग करे ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ अब शनिकी दृष्टिका फल कहते हैं. शनिके ऊपर पाप-  
 ग्रहोंकी दृष्टि होवे तो कुक्षिरोग बंधन क्षय करे. शत्रुग्रहोंकी दृष्टि होवे तो शत्रुकी  
 बाधा, पराभव, रोग करे. शुभग्रहोंकी दृष्टि होवे तो रोगरहित करे. मित्रग्रहोंकी  
 दृष्टि होवे तो बंधुसमागम करे ॥ ७६ ॥ अब सूर्यादेकौका स्थानादिक बलसे

पूर्णं स्वदेशे विद्यया बली ॥ ७७ ॥ चंद्रे प्रभुतया मौमे  
ग्रामण्येन बुधे सति ॥ श्रौतयां विद्यया वाऽऽर्यालिपिलेख-  
नकर्मणा ॥ ७८ ॥ जनैर्धनैरमात्येषु बुद्ध्या च बलवान्गुरौ ॥  
यद्वा स्वदेशराजस्तु कार्येणैव बली मतः ॥ ७९ ॥ शुक्रे  
स्वदेशमुख्यो वा त्वाधिपत्येन योषिताम् ॥ मंदे भृतकदा-  
सानां मुख्यः स्याद्वलवानपि ॥ ८० ॥ उक्तैस्तु पीडितः  
प्रेष्यः स्थानवीर्यानितेषु तु ॥ समन्यूनाधिकाद्वीर्याद्विष्टोक्त-

टीका ।

तिश्लोकपर्यंतम् । रवौ स्थानबले पूर्णे सति स्वदेशे । विद्यया बली भवति चंद्रे  
स्थानबले पूर्णे प्रभुतया प्रभुत्वेन बली भवति मौमे स्थानबले पूर्णे ग्राम-  
ण्येन ग्रामे मुख्यत्वेन बली भवति तथा बुधे सति श्रौतया वा ऽथ वा आं-  
र्यालिपिलेखनकर्मणा जनैः धर्मैः अमात्येषु च बुद्ध्या बलवान् भवेत् एवं  
स्थानबले पूर्णे गुरौ सति स्वदेशराजः स्वदेशेऽभिमानः कार्येण कृत्येणैव  
बली बलवान्मतः तथा भूते शुक्रे तु स्वदेशमुख्यः वा योषितामाधिपत्येन बली  
भवति तथा बलिनि मंदे सति भृतकदासानां वेतनोपजीविकानां मुख्यः स्यात्  
तथा शरीरेणापि बलवान्भवति एवं फलानि स्थानबलपूर्णे उक्तानि स्थान-  
वीर्यानितेषु स्थानबलहीनेषु उक्तैः पीडितः उक्तफलवंशात्पीडाद्युक्तः प्रेष्यो  
दासश्च भवेत् अतः समन्यूनाधिकाद्वीर्याभ्यूनातिरिक्तबलात् यः दृष्टो वि-

भाषा ।

फलादेश कहते हैं. सूर्य स्थानबलमें पूर्ण होवे तो अपने देशमें विद्यासे बलवान् होवे.  
चंद्र स्थानबलमें पूर्ण होवे तो प्रभुताईकी पदवी पावे. मंगल स्थानबलमें पूर्ण होवे  
तो गांवमें प्रभुताईकी पदवीसे बली होवे. बुध स्थानबलमें पूर्ण होवे तो श्रौतविद्या-  
से, लेखनकर्मसे, बुद्धिके बलसे बलवान् होवे. गुरु स्थानबलमें पूर्ण होवे तो अपने  
देशमें शोभायमान होवे, कर्म करनेसे बलवान् होवे. शुक्र स्थानबलमें पूर्ण होवे तो  
अपने देशमें मुख्य होवे, स्त्रियोंके आधिपत्यतासे बलवान् होवे. शनि स्थानबलमें  
पूर्ण होवे तो दासदासीमें और वेतनजीविका करनेवालेमें मुख्य होवे, शरीरसे बल-

षात्फलं वदेत् ॥ ८१ ॥ दिग्बलेनाधिके सूर्ये वाणिज्येन ध-  
 नायतिः ॥ यशश्च धनवृद्धिश्च चंद्रे तु राजसेवया ॥ ८२ ॥  
 भौमे तु सेवया ख्यातिर्वेदाभ्यासेन सर्वदा ॥ बुधे धना-  
 यतिः कृष्या यशः स्याद्बुद्धिमत्तया ॥ ८३ ॥ गुरौ धनाय-  
 तिस्तेन वीर्येण धनशुभ्रता ॥ राजकार्येण शुके च वदान्य-

टीका ।

लोकितः उत्कर्षः तस्माद्भ्यूनातिरिक्तं फलं वदेदिति पूर्णस्थानबलविचारः  
 ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ अथ कालायने चेष्टाबलेष्वन्यतमा-  
 धिके ग्रहाणां फलान्याह दिग्बलेनेत्यादिनवाशीतिश्लोकपर्यन्तम् । अथ सूर्ये  
 दिग्बलेन अधिके इतरबलाधिक्ये सति वाणिज्येन वणिक्कर्मणा धनायतिः  
 यशः धनवृद्धिश्चेति फलानि चंद्रे तथा भूते सति राजसेवया धनवृद्धिः भौमे  
 दिग्बलाधिक्ये सति सेवया ख्यातिः प्रसिद्धिः सर्वदा वेदाभ्यासेन च प्रसिद्धिः  
 वदान्यत्वेन सर्वदेत्यपिपाठः तत्पक्षे दातृत्वेनेत्यर्थः बुधे तथा भूते कृष्या  
 कृषिकर्मणा धनायतिः बुद्धिमत्तया बुद्धिमतो भावः बुद्धिमत्ता तथा यशः  
 कीर्तिः स्यात् गुरौ दिग्बलाधिक्ये धनायतिः तेन वीर्येण द्रव्यबलेन राज-  
 कार्येण धनशुभ्रता संपत्प्रकाश इत्यर्थः शुके दिग्बलाधिक्ये वदान्यत्वेन दा-  
 तृत्वा यशः कीर्तिः मंदे तथाभूते सति दासाधिपत्येन दासश्रेष्ठतयाऽऽदि-

भाषा ।

वान् होवे, स्थानबलमें हीनबली ग्रह होवे तो पीडायुक्त दास्यत्व करे, इति स्थान-  
 बलविचारः ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ अब सूर्यादिकोंका दिग्बला-  
 धिकादिकोंका फल कहते हैं, सूर्य दिग्बलमें अधिक होवे तो वणिक्क्यापारसे धन-  
 प्राप्ति, यशप्राप्ति, धनकी वृद्धि होवे, चंद्र दिग्बलमें अधिक होवे तो राजसेवासे  
 वृद्धि होवे, मंगल दिग्बलमें अधिक होवे तो सेवासे, वेदाभ्याससे प्रसिद्ध होवे,  
 बुध दिग्बलमें अधिक होवे तो बुद्धिसे यश कीर्ति होवे, गुरु दिग्बलमें अधिक होवे तो  
 धनप्राप्तिसे प्रकाशितयश होवे, शुक्र दिग्बलमें अधिक होवे तो दानशीलतासे यश  
 कीर्ति मिले, शनि दिग्बलमें अधिक होवे तो श्रेष्ठतासे, शूरतासे धनप्राप्ति होवे,

त्वेन वा यशः ॥ ८४ ॥ मंदे दासाविपत्येन धनायतिरिं-  
दमात् ॥ कालायनबलाधिक्ये रवौ भौमे शनैश्चरे ॥ ८५ ॥  
मंत्रोपदेशविधिना पाखंडिपदसंश्रयात् ॥ दासभावेन कृ-  
ष्णेदौ कृषितो विद्ययान्यथा ॥ ८६ ॥ गुरौ शुक्रे बुधे पाथो-  
निधिजे चात्रिसंभवे ॥ विद्याया बाधने संख्याबलदिग्बल-  
वृद्धितः ॥ ८७ ॥ नानाविधायतिः प्रोक्ता इति चेष्टाधिकेषु  
तु ॥ कविद्वुर्वीर्यथा पूर्वं विशेषादेव निर्णयः ॥ ८८ ॥ बलि-  
ष्ठा दायरश्म्युक्तफलं सर्वं करोति वै ॥ न्यूनाधिकेनुपातेन

टीका ।

भास्करादनायतिः एवं सप्तग्रहाणां दिग्बलाधिक्यफलमुक्त्या कालबला-  
धिक्येऽयनबलाधिक्ये च फलांतरमाह रवौ भौमे शनैश्चरे च मंत्रोपदेशवि-  
धिना तथा पाखंडिपदसंश्रयाद्दासभावेन च यथासंख्यं वर्तनं कृष्णेदौ कृष्ण-  
चंद्रे कालायनबलाधिक्ये सति कृषितः कृषिकर्मणाऽन्यथा विद्यया वा व-  
र्तनं गुरौ शुक्रे बुधे च तथा पाथोनिधिजे शुक्रचंद्रे अत्रिसंभवे इति तस्यैव  
विशेषणं विद्यायाः वा धने धनविषये च संख्याबलदिग्बलयोः वृद्ध्या आ-  
धिक्येन लक्षणं ज्ञेयं एवं चेष्टादिकेषु चेष्टाबलाधिक्येषु सूर्यादिग्रहेषु सत्सु  
नानाविधायतिः प्रोक्ता कथिता कविद्वुः शुक्रबुधगुरवः यथापूर्वं पूर्वोक्तं फलं  
विशेषदृष्ट्या निर्णयेदित्यर्थः तदेव विशदयति कविद्वुः शुक्रबुधगुरवः ब-  
लिष्ठाश्चेत् दायोक्तं रश्म्युक्तं च फलं सर्वं करोति कुर्वतीत्यर्थः वेति निश्चयेन  
न्यूनाधिके बले नु अनुपातेन एवं फलं विचिंत्यतां विचार्यतामिति ॥ ८२ ॥

भाषा ।

अब कालबलाधिक्य और अयनबलाधिक्यका फल कहते हैं. सू० मं० श० काल  
और अयनबलमें अधिक होवे तो मंत्रोपदेशसे पाखंड करनेसे दास्यत्व करके नि-  
र्वाह होवे, कृष्णपक्षका चंद्र काल अयन बलमें अधिक होवे तो खेतीसे विद्यासे  
निर्वाह होवे. गुरु, शुक्र, बुध, शुक्रपक्षका चंद्र काल अयनबलमें अधिक होवे तो  
विद्यासे, धनसे निर्वाह होवे. अब चेष्टाबलाधिक्यका फल कहते हैं. सूर्यादिग्रह चेष्टा-  
बलमें अधिक होवे तो नानाप्रकारकी विद्यासे धनप्राप्ति होवे. ऐसा निश्चय करके

फलमेवं विचिंत्यताम् ॥ ८९ ॥ सौम्येष्विष्टफलाधिकेषु नि-  
तरां श्रीमात्सुशीलो गुणी मित्रेष्वेवमतीव धर्मनिरतो  
दाता सुखी सत्त्ववान् ॥ पापेष्वेवमथापि पापनिरतः शत्रु-  
ष्वथो शत्रुभिर्वीर्येणाथ पराजयो जय इमान्पर्यायतः प्रा-  
प्नुयात् ॥ ९० ॥ अधिकेष्वशुभेष्वेवमनिष्टारव्यफलानि तु

टीका ।

॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ अथेष्टबलाधिक्यवशात्फलाः  
न्याह सौम्येति । इष्टफलाधिकेषु सौम्येषु ग्रहेषु सत्सु नितरां श्रीमान् मित्रेषु  
सुशीलः अतीव धर्मनिरतः एवं दाता सुखी सत्त्ववांश्च भवेत् एवं पापेषु क-  
ष्टफलाधिक्येषु सत्सु शत्रुषु पापनिरतो भवेत् अथो शत्रुभिः वीर्येण पराजयः  
अथ वा जयः इमान् श्रीमत्त्वादिकलप्रकारान्पर्यायतः ग्रहस्थित्यनुसारेण प्रा-  
प्नुयात् ॥ ९० ॥ अथ फलांतराण्याह अधिकेष्वितिषण्णवतिश्लोकपर्यंतम् ।  
अशुभेषु पापग्रहेषु सत्सु अनिष्टारव्यफलानिभवन्ति तानि तु व्याधिभिः ज्व-  
रादिभिः कलहैः मित्रैः पीडयते एवं पापेषु ग्रहेषु दुश्चेष्टः दुष्टा चेष्टा यस्य सः  
प्रातकी ध्रुवं भवति एवं शत्रुषु शत्रुग्रहेषु सदा रोगी बंधुभिः मित्रैश्चवर्जितो  
रहितः स्यात् सर्वद्वेषबलाधिक्ये सति स ग्रहः सर्वत्र अफलदः शुभेषु अधि-  
केषु फलदेषु सत्सु स्पष्टं फलप्रदो भवति तथा अत्यनिष्टफलः खेटः शुभेषु  
ग्रहेषु अफलप्रदः फलदो न भवति अन्येषु पापेषु अनिष्टफलदो भवति एवं  
सर्वत्र सर्वदा फलविचारः कर्तव्यः अथ स्वोच्चादिस्थानपदस्थाः स्वोच्चस्व-  
त्रिकोणस्वभिन्नस्वाधिभिन्नस्वोदासीनक्षेत्रस्थाः तथा स्वदिग्वर्गाः स्वकी-

भाषा ।

ज्ञानना ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ अब इष्टकष्टबलाधिक्यका  
फल कहते हैं शुभग्रह बुध, गुरु, शुक्र, चंद्र इष्टबलमे अधिक होवे तो अत्यंत ल-  
क्ष्मीवात् होवे । मित्रोंके ऊपर सुशीलता, धर्मरत, दानशील सुखी बलवान् होवे । पा-  
पग्रह सूर्य, मंगल, शनि, इष्टबलमें अधिक होवे तो शत्रुवोंके ऊपर पापबुद्धि होवे ।  
पराजय होत्रो ॥ ९० ॥ अब फलांतर कहते हैं । पापग्रह बलाधिक्यमें होवे तो ज्वरपीडि-  
त/दुश्चेष्ट, पातकी होवे । शत्रुग्रहमें हावे तो सदा रोगी, मित्रवर्ग बंधुवर्गरहित होवें ।



॥ ९१ ॥ व्याधिभिः कलहैर्मित्रैः पांड्यते नात्र संशयः ॥  
 एवं पापेषु दुश्चेष्टः पातकी भवति ध्रुवम् ॥ ९२ ॥ शत्रुष्व-  
 वं सदा रोगी मित्रैर्बन्धुविवर्जितः ॥ सर्वद्वष्टृबलाधिक्ये  
 सर्वत्राफलदो ग्रहः ॥ ९३ ॥ शुभेषु च फलेष्वेव स्पष्टमे-  
 व फलप्रदः ॥ अत्यनिष्टफलः खेटः शुभेषुत्वफलप्रदः ॥ ९४ ॥  
 अनिष्टफलदोऽन्येषु खेटः सर्वत्र सर्वदा ॥ स्वोच्चादिस्था-  
 नषट्स्थाः स्युस्तथादिग्वर्गगा अपि ॥ ९५ ॥ क्षेत्रपुत्रक-  
 लत्रादिधनधान्यसमृद्धिदाः ॥ यदि मित्रादिवर्गस्था धन-  
 धान्यविवर्धनाः ॥ ९६ ॥ व्याधिदुर्गतिदा प्रोक्ता दशारंभे

टीका ।

यदशवर्गस्थाः अपि क्षेत्रपुत्रकलत्रादिदातारः धनधान्यसमृद्धिदाश्च भवन्ति  
 यदि मित्रादिवर्गस्थाः तर्ह्यपि धनधान्यविवर्धनाः भवन्ति इति ॥ ९१ ॥ ९२ ॥  
 ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ अथ दशाविचारः व्याधीत्यादिशतश्लोकप-  
 र्यंतम् । शीतगोश्वंद्रस्य दशा आरंभे व्याधिदुर्गतिदा प्रोक्ता स्वोच्चादिसंस्थि-  
 तानां ग्रहाणां दशाप्रारंभे शुभदा भवति अन्यथा स्वोच्चाद्यन्यस्थानस्थानां  
 ज्योतिषां ग्रहाणां दशाप्रारंभेऽशुभदा अनिष्टा ज्ञेया । केंद्रधूम्रगताः केंद्रधूम-  
 स्थानस्थिताः दशायां सदा संपूर्णदशायां शुभदा भवन्ति अथ ग्रहाणां द्वा-  
 व्याणि कर्माणि गुणाश्च यस्य यः स्वभावः स च एते विषयाः पुरा पूर्वार्द्धे

भाषा ।

सर्वद्वेषी ग्रहबलाधिक्य होवे तो वो ग्रह निष्फल जानना. और स्वोच्च, मूल, त्रिको-  
 ण, स्वक्षेत्र, मित्रक्षेत्र, अधिमित्रक्षेत्र, उदासीन, क्षेत्रस्थ ग्रह अथवा अपने दशवर्ग-  
 में जो ग्रह हैं वे सब क्षेत्र, स्त्री, पुत्र, धन, धान्यकी समृद्धि करनेवाले होते हैं ॥ ९१ ॥  
 ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ अब दशाका फल कहते हैं. चंद्रकी दशा प्रारंभमें  
 व्याधि और दुर्गतिकू देनेवाली है. उच्चादि छः स्थानोंमें बैठे हुवे जो ग्रह हैं उनों-  
 की दशा प्रारंभमें शुभफल देनेवाली है. उच्चादि छः स्थानविना जो अन्य स्थानमें  
 बैठे हुवे जो ग्रह हैं उनोंकी दशा प्रारंभमें अनिष्ट फल देनेवाली है. केंद्रधूम्रस्था-

तु शीतगोः ॥ स्वोच्चादिसंस्थिता दायप्रारंभे शुभदा दशा  
॥ ९७ ॥ अन्यथाऽ शुभदा प्रोक्ता प्रारंभे ज्योतिषां दश ॥  
केंद्रधूम्रगताः खेटा दशायां शुभदाः सदाः ॥ ९८ ॥ द्रव्य-  
कर्मगुणाऽयस्य स्वभावाः कथिताः पुरा ॥ ते सर्वे स्वदशा-  
काले योज्या भावदृग्गादिषु ॥ ९९ ॥ भावदृष्टिबलेष्टानि फ-  
लानि कथितानि च ॥ भावाध्यायोत्तरव्यादिफलान्यत्रैव  
योजयेत् ॥ १०० ॥ आदौ बलफलं प्रोक्तं ततो दृष्टिफलं  
स्मृतम् ॥ ततो भावफलं प्रोक्तमिष्टानिष्टफलावहम् ॥ १०१ ॥  
चेष्टाबलफलं चादौ स्थानवीर्यं ततो भवेत् ॥ दिग्बलं च  
ततः प्रोक्तं कालायनबले ततः ॥ १०२ ॥ इति श्रीबृहत्पा-

## टीका ।

कथिताः उक्ताः ते सर्वे स्वस्वदशाकाले योज्याः तथा भावदृष्ट्यादिविषय-  
फलेष्वपि योज्याः तथा भावफलानि दृष्टिफलानि षड्बलफलानि इष्टकष्टफ-  
लानि यानि पुरा कथितानि भावाध्यायोत्तरव्यादिफलान्यपि अत्रैव दशा-  
काले एवं योजयेदिति ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ अथ मुख्यत्वेन ब-  
लग्रहाणामनुक्रममाह आदाविति द्वाग्याम् । बलविचारे आदौ प्रथमतः बल-  
फलं निसर्गबलफलं प्रोक्तं कथितं एतन्मुख्यं ततः दृष्टिफलं स्मृतं ततो भाव-  
फलं ततः इष्टानिष्टफलं ततः चेष्टाबलफलं ततः स्थानबलं ततः कालबलं  
ततः अयनबलं चेति क्रमेण बलविचारः कर्तव्य इति ॥ १०१ ॥ १०२ ॥ पा-

## भाषा ।

नगत जो ग्रह हैं उन्हींकी दशा संपूर्ण कालमें फल देनेवाली है. और ग्रहोंके द्रव्य,  
कर्म, गुण, स्वभाव यह सब पूर्वार्धमें कहे हैं वे सर्वोंकी अपनी अपनी दशाके कालमें फलकी योजना करनी. और भावदृष्टि षड्बल इष्टकष्टबल जो पहिले कहे हैं उन्हींकामी फल दशाकालमें जानना ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ अब ब-  
लेंका मुख्यत्वसे क्रम कहते हैं. पहिले निसर्गबल मुख्य कहा है, तदनंतर दृष्टिफ-  
ल, नंतर भावफल, मुख्य. उससे इष्टानिष्टफल मुख्य. उससे चेष्टाबल मुख्य. उससे

राशिरहोरायामुत्तरभागे अब्दचर्यादिफलवर्णनं नाम पंच-  
दशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ ॥ ६४ ॥

भावांशैः समतां गतः खलु ग्रहः पूर्णं विधत्ते फलं सं-  
धिस्थो न फलप्रदोऽंतरगतैस्त्रैराशिकेनैव च ॥ भावन्यून-  
मथ ग्रहस्य गुणयेदंशादिकं चार्णवैर्हित्वा चास्यथ सांवे-

### टीका ।

राशिरागाधवारिनिधिनिर्मथनं मया ॥ कृत्वा यथामति कृता टीका पंचद-  
शाह्वये ॥ १ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरार्द्धे श्रीमहर्ष्यङ्गः न्वयवदशा-  
स्त्राधनवद्यविद्याविद्योतितदिग्दिग्मंडलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विच्छेदधरेण वि-  
रचितायां सुबोधिनीटीकायामब्दचर्याफलवर्णनं नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

गणेशः पातु मां देवो यथार्थज्ञानकारकैः ॥ करफूत्कारसंभूतैः शीकरै-  
स्तापहारकैः ॥ १ ॥ अध्याये षोडशेऽस्मिस्तु भावसंस्थग्रहोद्भवम् ॥ संध्या-  
दितारतम्येन फलमाह पराशरः ॥ २ ॥ अथ परमऋषिः पराशरः संध्यादि-  
विचारेण भावगतफलान्याह भावांशैरिति । भावांशैः भावस्था ये वर्तमानां-  
शास्तैः समतां गतः तुल्यतां प्राप्तः ग्रहः पूर्णफलं विधत्ते खलु यथोक्तमिति  
शेषः संधिस्थः भावसंधिवर्तमानः ग्रहः फलप्रदो न भवति विफल इत्यर्थः अं-  
तरगतैः भावमध्यवर्तमानैः ग्रहैः त्रैराशिकेन अनुपातेन फलं ज्ञेयं अथ ग्र-  
हस्य अंशादिकं यदि भावन्यूनं भावांशाल्पं तर्हि तदर्णवैः चतुर्भिर्गुणयेत्  
यदि अस्य ग्रहस्य भावांशादंशादिकं अधिकं भवेत्तर्हि भावसंधितः हित्वा

### भाषा ।

स्थानबल मुख्य. उससे कालबल मुख्य. उससे अयनबल मुख्य. ऐसा यह क्रमसे  
बलविचार जानना ॥ १०१ ॥ १०२ ॥ इतिवृ० पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अब भावफल कहते हैं. जो ग्रह जिस भावमें बैठा है वो भावके जो अंश हैं वो  
अंशके तुल्य ग्रहका अंश होवे तो वो ग्रह उक्तप्रमाणसे संपूर्ण फल देता है और  
जो संधिस्थ ग्रह है वो फल देता नहीं है विफल हैं. भावके मध्यमें ग्रह होवे तो  
अनुपातसे फल जानना. भावांशसे ग्रहांश कमी होवे तो ४ से गुणन करना. वो

तौऽधिकमथौ प्रोक्तं फलं भावजम् ॥ १ ॥ ऊर्ध्वमुखो रविः  
युक्तो राशियुक्तस्त्वधोमुखो ज्ञेयः ॥ तिर्यङ्मुखोऽखिलयु-  
तो राशिर्भावाः परैऽप्येवम् ॥ २ ॥ अन्यजातीययोगे तु तै-  
त्तद्भावफलं वदेत् ॥ स्वजातीयेषु योगेषु त्रिंशाद्यंशा भव-  
त्युत ॥ ३ ॥ तत्त्वमाकृतिरेकाक्षिच्छंदस्तत्त्वं चतुस्त्रयः ॥

### टीका ।

वर्जयित्वा शेषं भावजं फलं प्रोक्तं कथितमिति ॥ १ ॥ अर्थ ग्रहयोगेन भाव-  
लक्षणमाह ऊर्ध्वमुखइति । रवियुक्तो राशिः ऊर्ध्वमुखः राशियुक्तः ग्रहरहितः  
अधोमुखो ज्ञेयः अखिलयुतः चंद्रादियुक्तः तिर्यङ्मुखो राशिर्भवति एवं परे  
सर्वे भावाः ज्ञेया इति ॥ २ ॥ अथेषां तिर्यङ्मुखादीनां भावानां फलकथन-  
रीतिमाह अन्येति । अन्यजातीययोगे भावेषु ग्रहादिसंभूतान्यजातीययोगेऽ-  
सुकभावेऽसुकग्रहादिसंभूतो योगः अतः अस्य भावस्यासुकं सदसत्फलमिति  
भावदृष्ट्यैव फलं कथयेत् स्वजातीययोगेषु तु नाम अन्यजातीयरोगरहितेषु  
केवलं स्वजातीयाः भावजातीया एव योगाश्चेतत्र फलं त्रिंशाद्या यंशास्ते  
एव फलं फलभूता भवन्तीति ॥ ३ ॥ अथ भावस्थानांकसंख्या आह तत्त्वेति  
सार्धेन । तनुभावे स्थानसंख्यातत्त्वं २५, धनभावे आकृतिः २२, सहजे एकाक्षि  
२१, सुतृदि छंदः २६, सुते तत्त्वं २५, रिपौ चतुस्त्रयः ३४, जायामावे  
एकोनविंशतिः १९, मृत्यौ छंदः २६, धर्मे नवाक्षी २९, कर्मणि पट्त्रयः ३६, आयु

### भाषा ।

भावफल आयु और जो कभी ग्रहके अंश भवांशसे अधिक होवे तौ भावमंधिमंसे  
हीन करके शेष भावफल जानना ॥ १ ॥ अब भावका विशेष फल कहते हैं, जो  
भाव सूर्ययुक्त होवे वो ऊर्ध्वमुख जानना, ग्रहरहित, हांवे वो वो भाव अधोमुख  
जानना, चंद्रादिग्रहसे युक्त हांवे तो तिर्यङ्मुख स्वभाव जानना ॥ २ ॥ अब ति-  
र्यङ्मुखादिभावका फल कहते हैं, यह भावका यह शुभाशुभ फल है नो भावदृष्टि-  
से कहना, और जो भावके स्वजातीय शुभाशुभ योग हैं, उनका फल तीस अंश-  
रूप है ॥ ३ ॥ अब भावके स्थानांक कहते हैं, तनुभावके ३५, धनभावके २२,

एकोनविंशतिच्छन्दो नवाक्षी षट्त्रयस्तथा ॥ ४ ॥ वेदेष्वो  
नृपाः स्थाने भावसंख्याः प्रकीर्तिताः ॥ एकत्रिंशत्त्रयस्त्रिं-  
शद्भानि त्रिंशत्तथैव च ॥ ५ ॥ एकत्रिंशद्दिनेत्रे च मुनिरा-  
माः खपावकाः ॥ भानि त्रिंशतिरेकद्वौ खवेदाः करणस्य  
तु ॥ ६ ॥ विषमायां क्रमादोजे युग्मे स्यातां शुभाऽशुभे ॥

टीका ।

वेदेष्वः ५४, व्यये नृपाः १६, एताः स्थाने स्थानविषये भावानां संख्याः  
क्रमात्प्रकीर्तिता इति ॥ ४ ॥ अथ भावेषु करणांकसंख्या आह एकत्रिंशा-  
दिति अर्धसहितेन । तनौ करणांकसंख्या एकत्रिंशत् ३१, धने त्रयस्त्रिंशत्  
३३, सहजे भानि नक्षत्राणि २७, सुहृदि त्रिंशत् ३०, सुते एकत्रिंशत्  
३१, रिपौ द्विनेत्रे २२, जायायां मुनिरामाः ३७, मृत्यौ खपावकाः ३०,  
धर्मे भानि २७, कर्मणि विंशतिः २०, आयि एकद्वौ २१, व्यये खवेदाः ४०,  
एवं भावकरणस्य संख्या ज्ञेया इति ॥ ५ ॥ ६ ॥ अथोक्तस्थानकरणानां  
विषमसमसंख्याया क्रमाच्छुभाऽशुभे आह विषमायामिति । ओजे राशौ वि-  
षमायां स्थानविषमसंख्यायां तथा करणसमसंख्यायां क्रमाच्छुभाऽशुभे फले  
ज्ञेये एवं युग्मे समे राशौ समायां स्थानसमसंख्यायां अर्थाद्युग्मराशौ करण-

भाषा ।

सहजके २१, सुखभावके २६, सुतभावके २५, शत्रुभावके ३४, स्त्रीभावके १९,  
मृत्युभावके २६, घर्भभावके २९, दशमभावके ३६, ग्यारहवें भावके ६४, बारहवें  
भावके १६, यह क्रमसे जानना ॥ ४ ॥ अब भावके करणांक कहते हैं, तनुभावके  
३१, धनभावके ३३, सहजभावके २७, सुखभावके ३०, सुतभावके ३१, शत्रु-  
भावके २२, स्त्रीभावके ३७, मृत्युभावके ३०, धर्मभावके २७, दशमभावके २०,  
ग्यारहवें भावके २१, व्ययभावके ४०, यह १२ बारह भावोंके करणांक जानना  
॥ ५ ॥ ६ ॥ अब स्थानकरणके समविषम संख्याके क्रमसे शुभाऽशुभ फल कहते हैं,  
विषमराशिमें स्थानसंख्या विषम होवे तो शुभफलदायक है, और समराशिमें  
स्थानसंख्या सम होवे तो अशुभफलदायक है, और विषम राशिमें करणसंख्या  
सम होवे तो अशुभफलदायक है, विषम करणसंख्या होवे तो शुभफलदायक है

समायां भवतस्तद्वत्पापसौम्यफले क्रमात् ॥ ७ ॥ ओजे  
 व्याधिः समे हानिर्यावत्तु दशकं भवेत् ॥ परतः पंचकं  
 चौजे समे व्याधिरथान्यथा ॥ ८ ॥ यावत्तु दशकं प्राग्वत्त-  
 तस्तद्वत्फलं वदेत् ॥ शिरोरोगाक्षिरोगाश्च रक्तासृक्कामला-  
 ज्वरः ॥ ग्रहणी शीतको मेहप्लीहौ गुल्मलतः क्रमात् ॥ ९ ॥  
 रत्नैर्धान्यैश्च हेमैश्च गोभिः क्षेत्रैश्च राजभिः ॥ दासैश्च

टीका ।

विषमसंख्यायां च क्रमात्पापसौम्यफले अशुमशुमफले ज्ञेये इति ॥ ७ ॥ अथ  
 विषमसमराशिषु स्थानकरणसंख्यया व्याधिहानी आह ओजे इति सार्धे-  
 न । ओजे विषमराशौ यावत्तु दशकं भवेत् स्थानकरणानां दशसंख्यापर्यंतं  
 व्याधिर्नाशः फलं समे राशौ दशसंख्यापर्यंतं हानिः फलं ज्ञेयं ततः परतः  
 दशसंख्योर्ध्वं पंचसंख्यापर्यंतं ओजे समे च राशौ व्याधिफलं अथ परतः  
 पंचदशसंख्यामारभ्य यावद्दशकं भवेत्पंचविंशतिसंख्यापर्यंतमित्यर्थः प्राग्व-  
 द्द्व्याधिहानी ओजसमे ज्ञेये ततः परतस्तद्वदेव फलं वदेदिति ॥ ८ ॥ अथ  
 पंचविंशतिमारभ्य दशपर्यंतं फलान्योजे आह शिर इति । शिरोरोगः १ अ-  
 क्षिरोगः २ रक्तासृक् ३ कामला ४ ज्वरः ५ ग्रहणी ६ शीतकः ७ मेहः ८  
 प्लीहः ९ गुल्मलतः १० एते क्रमाज्ज्ञेयाः एषां स्वरूपाणि वैद्यके इति ॥ ९ ॥  
 अथ पंचविंशतिमारभ्य दशपर्यंतं समराशौ फलान्याह रत्नैरिति । रत्नैः १

भाषा ।

॥ ७ ॥ विषमराशिमें दशसंख्यापर्यंत स्थानकरण संख्या होवे तो व्याधीका नाश-  
 होवे. यह फल जानना. समराशिमें स्थानकरणकी दश संख्यापर्यंत हानिफल जान-  
 ना. उस दसके आगे पांच संख्यापर्यंत व्याधि होवे, पंधराके ऊपर पच्चीसतक सम-  
 राशिमें व्याधिफल, विषमराशिमें हानिफल जाना ॥ ८ ॥ अब विषमराशिमें छब्बी-  
 स स्थानकरणसंख्या होवे तो शिरोरोग, सत्ताबीस संख्या होवे तो नेत्ररोग, अट्ठा-  
 बीस संख्या होवे तो रक्तविकार, उगणतीस संख्या होवे तो कामला हर्लमक रोग  
 होवे, तीस संख्या होवे तो ज्वररोग, एकत्रीस संख्या होवे तो संग्रहणी रोग, बर्ती-  
 स संख्या होवे तो शीतरोग, तेहतीस संख्या होवे तो प्रमेह रोग, चौतीस संख्या

महिषैरुष्ट्रैर्गजाश्वैर्वृद्धयः स्मृताः ॥ १० ॥ जात्या देशस्य  
कालस्य स्वानुरूपं फलं वदेत् ॥ तत्तद्भावानुसंज्ञश्च ग्रहा-  
द्भावात्फलं वदेत् ॥ ११ ॥ उच्चादिषु नवस्वेव कलांशादिषु  
यत्फलमाभाग्याध्यायोक्तमप्यत्र योजयेत्तु विशेषतः ॥ १२ ॥  
इति श्रीवृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे मासचर्याफलव-  
र्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

### टीका ।

धान्यैः २ हेमैः हेमभिः सुवर्णैरित्यर्थः ३ गोभिः ४ क्षेत्रैः ५ राजभिः ६  
दासैः ७ महिषैः ८ उष्ट्रैः ९ गजाश्वैः १० वृद्धयः स्मृताः भवन्तीति ॥ १० ॥ अथ  
फलानि वक्तुं जात्यादितारतम्येन फलान्याह जात्येति । यानि अस्मिच्छास्त्रे  
फलान्युक्तानि तानि जातिदेशकालतारतम्येन जात्यादिस्वानुरूपं यथा भ-  
वति तथा फलं वदेदिति ॥ ११ ॥ पुनश्च फलविचारमाह उच्चेति । अथ उच्चा-  
दिषु उच्चत्रिकोणादिस्थानस्थितेषु ग्रहेषु तथा कलांशादिषु स्थितेषु ग्रहेषु  
यदुक्तं फलं तथा भाग्याध्यायोक्तमपि तत्सर्वमत्र मासचर्याफलविचारे विशे-  
षतः योजयेदिति ॥ १२ ॥ एवं षोडशकेऽध्याय गणेशप्रीतये मया ॥ यथा-  
मति कृता टीका संशोध्या विबुधैर्मुदा ॥ १ ॥ इति वृ० उत्तरभागे जटारंकर-

### भाषा ।

होवे तो ह्रीह रोग, पर्यंतीस संख्या होवे तो गुल्मलतारोग होवे ॥ ९ ॥ अब सम-  
राशिमें स्थानकरणसंख्या छत्रांस होवे तो रत्नवृद्धि जानना. सैयतीस संख्या होवे  
तो धान्यवृद्धि जानना. अडतीस संख्या होवे तो सुवर्णवृद्धि. ओगणचालीस संख्या  
होवे तो गोपशुकी वृद्धि जानना. चालीस संख्या होवे तो क्षेत्रभूमिवृद्धि जानना.  
एकचालीस संख्या होवे तो राजसे वृद्धि जानना. ब्यांलीस संख्या होवे तो दाससे  
वृद्धि जानना. तियांलीस संख्या होवे तो महिष्यादि वृद्धि जानना. चौवालीस  
संख्या होवे तो उष्ट्रादिक वृद्धि जानना. पैंयतालीस संख्या होवे तो गजाश्ववृद्धि  
जानना ॥ १० ॥ यह स्थानकरणसंख्याका फल जो कहा सो सब जाति, देश,  
कालतारतम्यतासे अपने स्वरूपसदृश फल जानना ॥ ११ ॥ पूर्वी जो उच्चादिस्था-  
नगत फल और कलांशादिस्थित ग्रहफल और भाग्याध्यायोक्त सर्व फल यह सब

अर्केन्दुगुरवेः शुक्रः क्रमादन्ये बलक्रमात् ॥ भवंति  
स्थानदाः खेटाश्चत्वारश्च यदैकदा ॥ १ ॥ धनादीनां यथा  
लब्धिः पञ्च चेतूपज्यतायुतः ॥ आरोग्यं वस्त्रलामश्च षट्सु  
पट्टस्य बन्धनम् ॥ २ ॥ सप्त चेद्राज्यलामः स्यादेवं करणदा  
यदि ॥ धनहानिस्ततो व्याधिस्ततस्तु विपदादयः ॥ ३ ॥  
सप्तभिर्मरणं प्रोक्तमक्षाभावे मृतिर्भवेत् ॥ तत्र तिष्ठति चे-

टीका ।

सूनुज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचिता० सु० टीकायां मासचर्याफलवर्णनं नाम  
षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

ध्यात्वा गणेशपादाब्जे व्याख्येयं क्रियते मया ॥ अध्याये सप्तदशके य-  
थामति सुबोधिनी ॥ १ ॥ अथ स्थानदखेटानां नैकत्र सहवासतः ॥ फलानि  
तु विचित्राणि ऋषिः पाराशरोऽब्रवीत् ॥ २ ॥ अथ भगवान्महर्षिः पराशरः  
ग्रहयोगफलानि कथयन्त्वंशान्मुपसंहरति । तत्र स्थानदग्रहवशात्फलान्याह  
अर्कमित्यादिपञ्चमिः । अथार्केन्दुगुरवः शुक्रः रविचन्द्रगुरुशुक्राः क्रमादथ  
वाऽन्ये भौमबुधशनयः एते बलक्रमात् निसर्गबलक्रमतः चत्वारोपि यदा  
एकदैव स्थानदाः स्थानप्रदा भवंति तदा धनादीनां यथावलब्धिः प्राप्तिः  
स्यात् पञ्चमे स्थानदे सति पूज्यतायुतः तथाऽऽरोग्यं वस्त्रलामश्च स्यात् ष-  
ट्सु स्थानदेषु ग्रहेषु सत्सु पट्टस्य बन्धनं पट्टाभिषेकः स्यात् सप्त ग्रहाः स्था-  
नदाश्चेत् राज्यलामः स्यादिति स्थानफलानि । अथ एवं प्रकारेण यदि क-  
रणदातारः तर्हि चतुर्धु धनहानिः पञ्चसु व्याधिः षट्सु विपदादयः सप्तभिः

भाषा ।



त्वष्टे त्वन्यस्मिन्यादि वा मतः ॥ ४ ॥ उच्चसंख्याधिका अं-  
शाश्चंद्रस्य स्थानदाः परे ॥ शुभाख्याः शुभदाः प्रोक्ता रा-  
शिनात्र क्रमात्फलम् ॥ ५ ॥ होराशास्त्रमिदं सर्वं भाषितं  
तव सुव्रता ॥ पुण्यं यशस्यं धन्यं च त्रिकालज्ञानकारणम्  
विना मनुतपस्यैव शास्त्रज्ञानेन केवलम् ॥ हस्तामलकव-  
त्सर्वं जगतां लोकयेत्फलम् ॥ ७ ॥ पुत्राय शिष्याय  
च धीमते च तपस्विने मंत्रविदे च दात्रे ॥ दद्यादिमं  
टीका ।

करणदैः मरणं प्रोक्तं तथा अक्षाभावे केवलं करणाभावे मृतिर्भवेत् तत्र क-  
रणाभावस्थाने यदि वामतः अन्यस्मिन्खेटे तिष्ठति न मृतिः । अथ चंद्रस्य  
उच्चसंख्याधिका अंशाः ०।३। एतदधिकाः चेद्ग्रहाः स्थानदाः स्थानफ-  
लदाः भवन्ति परेऽन्ये शुभाख्याः शुभसंज्ञकाः एते सर्वे शुभदाः प्रोक्ताः अत्र  
क्रमाद्राशीनां फलं प्रोक्तं भाववदिति ध्वनिः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ अ-  
थोक्तशास्त्रस्य फलानि कथयन्नुपसंहरति होरेति पंचभिः । हे सुव्रत ! मैत्रेय !  
इदं सर्वं होराशास्त्रं तव मया भाषितं कथितं एतत्पुण्यं पुण्यकारकं यशस्यं  
यशस्करं धन्यं धन्यत्वसंपादकं त्रिकालज्ञानकरणं भूतमविष्यद्वर्तमानज्ञान-  
कारकं विना मनुतपस्या मंत्रजपव्यातिरेकेणापि केवलमेतच्छास्त्रज्ञानेनैव  
सर्वं जगद्धस्तामलकवत्करगृहीतामलकवत्सर्वं फलं लोकयेद्विलोकयेत् एता  
दृशमिदं शास्त्रं पुत्राय शिष्याय धीमते बुद्धिमते तपस्विने मंत्रविदे दात्रे वा  
भाषा ।

होवे तो धनहानि. पांच होवे तो व्याधि. छः होवे तो विपत्ति. सात होवे तो मरण-  
फल जानना. करणका अभाव होवे तोभी मृत्यु होवे. अन्य ग्रह होवे तो मृत्यु न  
होवे. चंद्रका उच्चांश ०।३ हैं. इससे ग्रह अधिक होवे तो स्थानफलदायक ग्रह  
जानना ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ अब शास्त्रका फल और उपसंहार समाप्ति-  
विषय कहते हैं. हे मैत्रेय ! यह सब होराशास्त्र तुमकू मैंने कहा. यह पुण्यकारक,  
यशस्कर, धनधान्यसंपादक, भूतमविष्यद्वर्तमानकालका शुभाशुभसूचक शास्त्र  
है. इस शास्त्रका उत्तम ज्ञान करनेसे मंत्राराधन, देवताराधन, करे विना हातमें

शास्त्रमहासमुद्रं यथैव शंभुः शिशवे पयोधिम् ॥ ८ ॥  
 बुद्धिहीनाय दांभाय दांभिकाय त्वमर्षिणे ॥ न दद्याद्यदि  
 दद्याच्चेद्विद्या स्वस्यविनश्यति ॥ ९ ॥ एवं ते कथितं शास्त्रं  
 त्वयि स्नेहाद्विजोत्तम ॥ जातकांशं विद्यांशं किं भूयस्त्वं  
 श्रोतुमिच्छसि ॥ १० ॥ इति बृ० उ० भागे दिनचर्यादि  
 फलवर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

## टीका ।

दद्यात् इमं शास्त्ररूपं महासमुद्रं अगाधमित्यर्थः बुद्धिहीनाय दंभवते दंभकराय  
 वाऽमर्षिणे क्रोधशालिने च न दद्यात् एतदोपरहिताय शिशवेऽपि दद्यात् ।  
 अत्र दृष्टान्तमाह । यथा शंभुः तपस्विने शिशवे उपमन्यवे पयोधिमदात् एवं  
 यदि दृष्टाय दद्याच्चेदियं विद्या स्वस्य वक्तुः विनश्यति हीयते हे द्विजोत्तम !  
 ब्राह्मणश्रेष्ठ ! त्वयि स्नेहादेवं शास्त्रं ते कथितं अनन्तरं जातकांशं विद्यांशं जा-  
 तकांशभूतांशं भूयः किं वा त्वं श्रोतुमिच्छसि ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ इति स-  
 प्तदशोऽध्याये व्याख्येयं तु यथामति ॥ कृता गणपतिप्रीत्यै परोपकृतयेऽपि च  
 ॥ १ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे श्रीमद्व्यङ्ग्यः न्वयवे० शा० ज्योतिर्विच्छी-  
 धरेण विरचितायां सु० टीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

## भाषा ।

जैसा आमलकी फल लिया होवै वैसा संपूर्ण जगत्का शुभाऽशुभ देखता है. यह  
 शास्त्र पुत्रकूं, शिष्यकूं, बुद्धिमान्कूं मंत्रवेत्ता पुरुषकूं देना. यह शास्त्र समुद्र स-  
 राखा अगाध है. यह शास्त्र दंभीकूं, क्रोधीकूं, दुष्टकूं देना नहीं. दिये तो कहनेवा-  
 लेकी विद्या नष्ट होती है. और यह पूर्वोक्त दोपरहित बालकभी होवे तो उसकूं  
 यह शास्त्र पढाना जैसा शिवजीने तपस्वी जो उपमन्यु बालक उसकूं पयोधि  
 दिया. हे भैत्रेय ! तेरे स्नेहके लिये यह जातकांश मैंने कहा. आगे पुनः क्या श्र-  
 वण करनेकी इच्छा है सो कहो ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ इति बृ० भाषाटी-  
 कायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

## मैत्रेय उवाच ।

भगवन्प्रश्नशास्त्रं तु सूचिकानां प्रकाशितम् ॥ कलौ  
युगे तु मंदानां यज्ज्ञातुं तद्वदस्वमे ॥ १ ॥ कृते युगे तु ध-  
र्मस्य पूर्णत्वात्तपसान्विताः ॥ सर्वे जानन्ति भूतं च भवद्वा-  
वि द्विजोत्तम ॥ २ ॥ त्रेतायां तपसा युक्ताः केचिज्जानन्ति  
टीका ।

अथाष्टादशकेऽध्याये शास्त्रज्ञानस्य सिद्धये ॥ यथावत्कथितो मंत्रावन्य  
चापि प्रकीर्णकम् ॥ १ ॥ गणेशो मां प्रेरयतु तद्वयाचिख्यासुमर्मकम् ॥ अष्टा-  
दशतमेऽध्याये दयालुर्विश्वपालकः ॥ २ ॥ अथ भगवान्महर्षिः अष्टादशेऽ  
ध्याये मैत्रेयाय यथार्थज्योतिर्ज्ञानप्रदो मंत्रो प्रश्नादिप्रकीर्णं चाह । मैत्रेयः  
पृच्छति भगवन्निति । मैत्रेयऋषिः पराशरात्सर्वं ज्योतिःशास्त्रं श्रुत्वा एत-  
ज्ज्ञानाय कलिजडधियां पूर्णज्ञानजनकोपायं ज्योतिःशास्त्रं पृच्छति भगव-  
न्निति । हे भगवन् ! सूचिकानां सूचीवद्वेधकबुद्धीनां बुद्धिमतामित्यर्थः  
ज्योतिःशास्त्रं ज्ञातुं अवगंतुं प्रश्नशास्त्रं प्रकाशितं किं तु अस्मिन्कलियुगे मं-  
दानां यथावज्ज्ञातुं यच्छक्तं भवति तन्मे वदस्व ॥ १ ॥ एवं प्रश्नं कृत्वोपायं  
वक्तुं उपक्रमते कृते इति चतुर्भिः । हे द्विजोत्तम मैत्रेय ! कृते युगे धर्मस्य  
पूर्णत्वात्सर्वे जनाः तपसान्विताः अत एव एतच्छास्त्रं जानन्ति अज्ञासिगुरि-  
त्यर्थः तेन भूतं प्राक्कालीनं भवद्भूतमानकालीनं भावि भविष्यत्कालीनं च  
विदुः ततस्त्रेतायां तपसा युक्ताः केचिद्विजाः जानन्ति । सर्वे द्वापरे तपसा  
भाषा ।

अब यह अठारहवें अध्यायमें मैत्रेयऋषि पराशरगुरुके मुखसे संपूर्ण जातक  
शास्त्रका श्रवण करके मनमें विचार किया कि यह जातकशास्त्रका उत्तम ज्ञान  
कलियुगमें होना दुर्लभ है; कारण मानव, जडबुद्धि बहुत हैं. वास्ते कलामें पूर्ण  
ज्ञान जिससे होवे, ऐसा ज्योतिःशास्त्र पूछते हैं. हे भगवन् ! जिनोंकी सूक्ष्म वेधक  
बुद्धि हैं उनोको ज्ञानदायक प्रश्नशास्त्र तुमने प्रकाशित किया. यह कलियुगमें मंद-  
बुद्धिकूं जैसा ज्ञान होवे वो उपाय कहो ॥ १ ॥ पराशरजी कहते हैं. हे मैत्रेय !  
सत्ययुगमें सब लोक तपश्चर्यामें रहते. वास्ते इस शास्त्रकूं जानते उससे त्रिकाल

वै द्विजाः ॥ पश्यन्ति द्वापरे शास्त्रज्ञानेन तपसाऽपि च॥३॥  
 कलौ युगे तु धर्मस्य पादमात्रव्यवस्थितिः ॥ तपःशक्त्या  
 तु तज्ज्ञानं न शक्ता मानवा भुवि ॥ ४ ॥ तथाऽत्र परमः  
 शंभुर्लोकानुग्रहकाक्षया ॥ लक्ष्मीकृत्य निजां शक्तिं विद्या-  
 माधात्स ईश्वरः ॥ ५ ॥ कलावधि च भक्तानां त्रिकालज्ञा-  
 नदायिनी ॥ वेदादि वाग्भवं गौरीवदद्वयमथो गिरि ॥ ६ ॥  
 परमेश्वर्यसिद्धयर्थं वाग्भवं स्यादयं मनुः ॥ सर्वज्ञेतिपदं

### टीका ।

शास्त्राभ्यासेन च पश्यन्ति । एवं युगत्रये एतच्छास्त्रस्य सम्यक् ज्ञातारो व-  
 भूवुः । अस्मिन्कलियुगे तु धर्मस्य पादमात्रव्यवस्थितिः धर्मपादावशेषत्वं  
 अतः तपःशक्त्या तच्छास्त्रं ज्ञातुं भुवि मानवा न शक्ताः संति तस्माद्यथार्थ-  
 स्तव प्रश्न इति ॥ १ । २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ अथ ज्ञानोपायमाह तथेत्यादिसार्धाष्ट-  
 श्लोकपर्यन्तम् । तथाऽप्यकृष्टज्ञानानत्र भूमंडले मानवान्दृष्ट्वा परमः सर्वोत्कृष्टः  
 शंभुः सदाशिवः लोकानुग्रहकाक्षया परोपकाराय निजां शक्तिं स्वकीयज्ञा-  
 नशक्तिं लक्ष्मीकृत्य स्मृत्वा सः ईश्वरः विद्यां आद्यान्निर्ममे इत्यर्थः । तत्र मंत्रो-  
 द्धारः । वेदादिः प्रणवः वाग्भवं वाग्बीजं ऐमिति गौरीति संबोधनं वदद्वयं  
 वदवदेत्येवं रूपं अथो नंतरं गिरि ततः परमेश्वर्यसिद्धयर्थं ऐमिति मंत्रनि-  
 र्णयः “ ॐ ऐं गौरि वद २ गिरि परमेश्वर्यसिद्धयर्थं ऐं ” अयं शक्तिमंत्रः । अथ

### भाषा ।

ज्ञान कहते. बाद त्रेता युगमें लोक तपने रहते. किन्तुनेक ब्राह्मण उमने  
 जानते हैं. सब जानते नहीं हैं. द्वापर युगमें तप और शान्ताभ्यामसे देखने हैं.  
 ऐसा तीन युगमें इस शान्तिपूर्व उत्तम तर्हसे जाननेवाले होते भये. यह कलियुग-  
 में धर्म एकपादमात्र रहा है. वाग्ने तपशक्तिविना इस शान्तिपूर्व जाननेकूं पृथ्वीमें  
 मनुष्य समर्थ नहीं हैं. वास्ते नुमाग प्रश्न यथार्थ है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ अब ज्ञान  
 होनेका उपाय कहते हैं. इन भूमंडलमें अपकृष्टज्ञानी मनुष्योंकूं देखके सर्वोत्कृष्ट  
 नदाशिवने परोपकारार्थ अपना ज्ञानशक्तिका स्मरण करके विद्या निर्माण किया.  
 सो शक्तिशिवके दोनों मंत्र स्पष्ट दिग्बाने हैं. ॐ ऐं गौरि वद वद गिरि परमेश्वर्य

पूर्वं नाथा तं पार्वतीपते ॥७॥ सर्वलोकगुरो पश्चाच्छिवेति  
द्वयमक्षरम् ॥ शरणं तु पदं पश्चात्त्वाम्प्रन्नोऽस्मि तत्परम्  
॥ ८ ॥ पालयेति पदं ज्ञानं प्रदापय ततः परम् ॥ ऋषि-  
स्तु दक्षिणामूर्तिगौरी परमेश्वरी तथा ॥ ९ ॥ सर्वज्ञश्च  
शिवो देवो गायत्री छंद ईरितम् ॥ अनुष्टुप् च पङ्गं  
स्याद्वाग्भवेन तद्दादि च ॥ १० ॥ अनेनाभ्यां द्विजश्रेष्ठ  
बुद्धिस्तु विमला भवेत् ॥ जपमात्रेण सिद्धिः स्यादैवज्ञत्वं

### टीका ।

शिवमंत्रोद्धारः पूर्वं सर्वज्ञ इति ततः नाथ इति पदं ततः पार्वतीपते इति पदं  
ततः सर्वलोकगुरो इति पदं ततः शिवेति पदं ततः शरणमिति पदं ततस्त्वां  
प्रपन्नोऽस्मीति पदं ततः पालयेति पदं ततः ज्ञानमिति पदं ततः प्रदापयेति  
पदम् । “ सर्वज्ञ नाथ पार्वतीपते सर्वलोकगुरो शिव शरणं त्वां प्रपन्नोऽस्मि  
पालय ज्ञानं प्रदापय ” इति स्पष्टमंत्रनिष्कर्षः एवं रूपौ ज्योतिःशास्त्रज्ञानाय  
शक्तिशिवमंत्रौ महाविद्येति निर्ममे इति ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ अथ सर्वमः  
त्राणां ऋष्यादिस्मरणं विना मंत्रसिद्ध्यभावः न्यासेन विना मंत्रस्य भुजंग-  
त्वापत्तिः ध्यानेन विना इष्टसिद्ध्यभावः तंत्रे प्रसिद्धः अतः ऋष्यादीनाह  
ऋषिरित्येकादशश्लोकपर्यंतम् । अनयोर्मंत्रयोः दक्षिणामूर्तिऋषिः गौरी पर-  
मेश्वरी सर्वज्ञः शिवश्च देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छंदसी वाग्भवेन ऐं इत्याकारकेण  
तद्दादि अंगुष्ठादि न्यासः हे द्विजश्रेष्ठ ! आभ्यां मंत्राभ्यां अनेन विद्या-  
नेन जपाद्बुद्धिः विमला भवेत् जपमात्रेणैव सिद्धिः स्यात् न पुरश्चर्याद्याव-

### भाषा ।

सिद्ध्यर्थं ऐं यह शक्तिका मंत्र. अब शिवका मंत्र कहते हैं. सर्वज्ञ, नाथ, पार्वती-  
पते, सर्वलोकगुरो, शिव, शरणं त्वां प्रपन्नोऽस्मि पालय ज्ञानं प्रदापय यह शि-  
वका मंत्र कहा ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ अब शक्तिशिवके दोनों मंत्रकं ऋषि देवता  
छंद कहते हैं. “ अनयोर्मंत्रयोः दक्षिणामूर्तिऋषिः गौरी परमेश्वरी सर्वज्ञः शिवश्च  
देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छंदसी मम त्रिकालदर्शकज्योतिःशास्त्रज्ञानप्राप्तये जपे वि-

प्रकाशते ॥ ११ ॥ उद्यानस्यैकवृक्षाधः परे हैमवते द्विज ॥  
 क्रीडन्तीं भूषितां गौरीं शुक्लवस्त्रां शुचिस्मिताम् ॥ १२ ॥  
 देवदारुवने तत्र ध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ चतुर्भुजं त्रिने-  
 त्रं च जटिलं चंद्रशेखरम् ॥ १३ ॥ शुक्लवर्णं महादेवं ध्या-  
 येत्परममीश्वरम् ॥ द्विविधं गणितं ज्ञात्वा शाखास्कंधं वि-

### टीका ।

शकत्वमनेन देवज्ञत्वं ज्योतिषिकत्वं प्रकाशते विराजते प्रश्नकथनपाठवं प्र-  
 वर्धते इत्यर्थः इति ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ अथ ध्यानमाह उद्यानस्येत्यादि-  
 सार्धद्वयेन । उद्यानरय आरामस्यैकवृक्षाधः मुख्यवटवृक्षाधोभागे हैमवते हि-  
 मवत्पर्वतोद्भूते परे उत्कृष्टे आसने इति शेषः भूषितामलंकृतां शुक्लवस्त्रां शु-  
 चिस्मितां गौरीं क्रीडन्तीं ध्यायेत् तत्रोपवने ध्यानस्तिमितलोचनं ध्यानेन  
 निमीलितदृष्टिं त्रिनेत्रं चतुर्भुजं जटिलं जटाधारिणं चंद्रशेखरं भालचंद्रं शु-  
 क्लवर्णं परमं सर्वोत्तमं ईश्वरं सर्वनियन्तारं महादेवं सर्वदेवश्रेष्ठं दीव्याति प्रका-  
 शयति सर्वोद्दिष्टादीनिति देवः महाश्र्वासौ देवश्च महादेवस्तेषां सर्वेषामपि  
 श्रेष्ठः परब्रह्मेति भावः एवं ध्यायेदिति ॥ १२ ॥ १३ ॥ अथ गणकाधिकार-

### भाषा ।

नियोगः ॥ " ऐंमा विनियोग पठकं पीछे ऐं यह धीजसे अंगुष्ठादिक न्यास हृदया-  
 दि न्यास करना. हे मंत्रय! यह दोनों मंत्रोंके पुरश्चरण करनेसे निर्मल बुद्धि और  
 ज्योतिषका यद्यार्थ ज्ञान प्रकाशित होवेगा ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ ऐंमे न्यास करके  
 पीछे शक्तिशिवका ध्यान करना. सो कहते हैं. हिमालय पर्वतके उपर एक घटा  
 बर्गीचा है. उसमें एक वटका झाड़ है. उसकी छायानीचे उत्तम आसनके उपर  
 बैठे हुए शोभायमान, सुपेद वस्त्र जिनोंने पहने हैं, और पवित्र हाथमहित जिनका  
 मुख ब्रीडा कर रहे हैं, ऐसी गौरीका ध्यान करना. और ओई बर्गीचमें ध्यान करके  
 जिनोंने दृष्टि नीचे लिये है, तीन नेत्र चार भुजा हैं, जटा धारण किये हैं, जिनके  
 गालमें चंद्र मुशोभित हैं, श्वेत जिनका वर्ण है, सबके नियन्ता, सर्वोत्तम, सर्वदेवमें  
 श्रेष्ठ ऐंमे नादानमहादेव परब्रह्म हैं ऐंमा ध्यान करना ॥ १२ ॥ १३ ॥ अथ ज्यो-

मृश्य च ॥१४॥ होरास्कंधस्य शकले श्रुत्वार्थमवधार्य चा॥  
वाङ्मी द्विजवरो यः स्यान्न वंध्या तस्य भारती ॥ १५ ॥  
अलुब्धो नैष्ठिकः शुद्धो विनयप्रश्रयान्वितः ॥ रत्नं स्वर्णं  
धनं वस्त्रं पुष्पमूलफलानि तु ॥ १६ ॥ दैवज्ञपुरतो दत्त्वा  
पृच्छेदिष्टं प्रियान्वितः ॥ अथ प्राङ्मुख आसीनः शुचि-

### टीका ।

माह द्विविधमितिपंचदशश्लोकपर्यंतम् ॥ यः द्विविधं खगोलभूगोलविषयं ग-  
णितं ज्ञात्वा शाखास्कंधं विमृश्य विचार्य होरास्कंधस्य शकले द्विप्रकारके  
श्रुत्वा गुरोः सकाशादधीत्येत्यर्थः अर्थमवधार्य निश्चित्य वाङ्मी प्रशस्तवा-  
ग्द्विजवरो भवति न तु जैनशूद्रादिज्योतिषिकः तस्य वाणी बंध्या विफला  
न भवति ॥ १४ ॥ १५ ॥ अयं प्रदुर्लक्षणमाह अलुब्ध इति सार्धेन । पृच्छकः  
नैष्ठिको निष्ठावाञ्छुद्धो निष्कपटः विनयप्रश्रयान्वितः विनयादियुक्तः अ-  
लुब्धो लोभरहितः सत्त्वस्वर्णधनवस्त्रान्यतमं अशक्तश्चेत्पुष्पमूलफलान्य-  
तमं वा दैवज्ञपुरतः ज्योतिषिकाग्रे दत्त्वा समर्प्य प्रियान्वितः प्रीतमनः न तु  
दानेन खिन्नमानसः इष्टं मनीषितं पृच्छेदिति ॥ १६ ॥ अथ दैवज्ञकर्तव्य-  
माह अथेति द्वाविंशतिश्लोकपर्यंतम् । अथ प्रश्नानंतरं देवविद्वैवज्ञः शुचिः  
संप्राङ्मुख आसीनः प्राङ्मुखोपविष्टः अग्रतः पुरोभागे तिर्यग्धर्वाः प्राङ्-

### भाषा ।

तिपिका लक्षण कहते हैं, जो पुरुष भूगोल, खगोल, गणितकुं जानता है और जात-  
कके दो भाग उत्तम रीतिसे गुरुमुखसे जानके विचार करके जो उत्तम वाणीसे बोलता  
है, जो जाति ब्राह्मणही है, जैन या शूद्रजातका ज्योतिषी नहीं होना, वो उत्तम  
दैवज्ञ होता है, उसकी वाणी निष्फल नहीं होती ॥ १४ ॥ १५ ॥ पृच्छक निष्ठा-  
वान्, निष्कपट, नम्रतादिगुणयुक्त, लोभरहित होके अपने हाथमे सुवर्ण रत्न वस्त्र  
धान्यमेंसे कोई पदार्थ लेना, गरीब होवे तो पुष्प फल मूलमेंसे कोईभी पदार्थ लेके  
ज्योतिषिके सामने रखके प्रसन्नमन होके मनईप्सित प्रश्न पूछना ॥ १६ ॥ अब  
ज्योतिषिका कर्तव्य कहते हैं, पृच्छकने प्रश्न किया पीछे ज्योतिषिमें पवित्रतासे पूर्वा-

दैवविदग्रतः ॥ १७॥ तिर्यगूर्ध्वाश्रितस्तु रेखा रज्जुसमा  
लिखेत् ॥ एकीकुर्यात्तु चत्वारि मध्यस्थानि पदानि च  
॥ १८ ॥ तत्र पदं लिखेद्रेखापद्ममध्यं सकर्णिकम् ॥ ई-  
शान्यकोष्ठादारभ्य मीनाद्या राशयः क्रमात् ॥ १९॥ मेष-  
वीथीवृषाद्यास्तु कौर्ष्याद्या मिथुनस्य तु ॥ वीथयो मीनमे-  
षौ तु तुलाकन्ये वृषस्य तु ॥ २०॥ आरूढाद्वीथिभं यावता-  
वच्छत्रं तु लग्नतः ॥ आरूढराशिर्लग्नं चेच्छत्रं चाऽपि भवे-  
त्तथा ॥ २१ ॥ जन्मलग्नं समासाद्य यद्यत्प्रोक्तं तु जातके ॥  
तत्सर्वम्प्रश्नलग्नेन प्रश्नकालाद्बदेद्बुधः ॥ २२ ॥ यत्काला-

टीका ।

पश्चिमाः दक्षिणोत्तराश्च रज्जुसमाश्रितः चतस्रो रेखाः लिखेत् तत्र मध्य-  
स्थानि चत्वारि पदानि एकीकुर्यात् तत्र पदं रेखापद्ममध्यस्थं सकर्णिकं लि-  
खेत् । ततः ईशान्यकोष्ठात् आरभ्य मीनाद्याः राशयः क्रमादलिखेत् तत्र वृ-  
षाद्या वृश्चिकाद्याश्च मेषवीथयो भवन्ति मिथुनस्य वीथयः मीनमेषौ वृषस्य  
तु तुलाकन्ये आरूढा लग्नतः यावद्वीथिभं तावच्छत्रं लग्नमेव आरूढराशिश्चे-  
त्तदेव छत्रं भवेत् एवं विचार्य जातके जन्मलग्नं समासाद्य यद्यत्प्रोक्तं तत्सर्वं  
प्रश्नकारलग्नाद्बुधो वदेदिति ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ अ-

भाषा ।

भिमुख बैठके राशिचक्र आगे लिखा है वैसा लिखना. बीचमें कमल लिखके आ-  
रूढ लग्नका विचार करना. पृच्छक जिस दिशामें बैठा होवे वो आरूढलग्न अथवा

|    |                |   |   |
|----|----------------|---|---|
| १२ | १              | २ | ३ |
| ११ |                |   | ४ |
| १० | मध्यराशिचक्रम् |   | ५ |
| ९  | ८              | ७ | ६ |
| ८  | ७              | ६ | ५ |
| ७  | ६              | ५ | ४ |
| ६  | ५              | ४ | ३ |
| ५  | ४              | ३ | २ |
| ४  | ३              | २ | १ |

राशिको स्पर्श करे. वारहलग्नमें उसकू आरूढ जानना. वृ-  
षादि चार राशिमें मेषवीथी जानना. वृश्चिकादि चार रा-  
शिमें मिथुनवीथी जानना. मेष, मीन, कन्या, तुला, यह रा-  
शिमें वृषमवीथी जानना. आरूढलग्नसे जहांतक वीथीकी  
राशि होवे उतनी संख्यातुल्य तत्काल लग्नसे, संख्याराशिकू  
जावे वो छत्रराशि जानना ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ अब आरूढलग्नसे आयुष्यनिर्णय और द्रेष्काणफल कहते हैं.



वधि लग्नं तत्तत्कालावधि चेत्स्थिते ॥ तेषां बलवतां चैव  
निर्णयः स्वायुषः स्मृतः ॥ २३ ॥ आद्यद्रेष्काणमन्त्यं च  
मृत्युदं च क्रमाद्भवेत् ॥ मृगादिकर्कटानां च मीनस्यारूढ-  
लग्नतः ॥ २४ ॥ लग्ने पृष्ठोदये क्रूरवेश्मास्तव्ययगा यदि ॥  
धने धर्मे कुजे मंदे चंद्रे रंघ्रे मृतिर्भवेत् ॥ २५ ॥ पापैर्दुरु-  
धरे जाते लग्नकामसुहृत्स्थिते ॥ चंद्रेऽर्के च विलग्नस्थे मि-

### टीका ।

थारूढलग्नतः आयुर्निर्णयं द्रेष्काणफलं चाह यदितिद्वाम्याम् । अथ लग्नं य-  
त्कालाऽवधि यत्कालपर्यन्तं तत्कालावधि तत्कालपर्यन्तं इच्छिते आयुर्नि-  
र्णये पृष्ठे सतीत्यर्थः तेषां ग्रहाणां बलवतां सतां आयुषो निर्णयः स्मृतः ग्रह-  
बलेनायुर्निर्णय इत्यर्थः ॥ अथ मृगालिकर्कटानां मकरवृश्चिककर्काणां मी-  
नस्य च आरूढलग्नतः आद्यं तद्रेष्काणे सति लग्नं मृत्युदं भवेत् ॥ २३ ॥ २४ ॥  
लग्ने पृष्ठोदय इति । अथ मृत्युलक्षणमाह । पृष्ठोदये प्रश्नलग्ने सति तथा  
क्रूरा ग्रहा यदि वेश्मास्तव्ययगाः प्रश्नलग्नाच्चतुर्थसप्तमव्ययस्थाः सति चेत्  
अथ धने धर्मे द्वितीयनवमे वा स्थाने कुजे मंदे मंगले शनौ वा सति तथा  
रंघ्रे अष्टमस्थाने चंद्रे सति मृतिर्भवेत् ॥ २५ ॥ अथ पुनर्मरणयोगांतरमाह  
पापैरिति सार्धेन । पापैः पापग्रहैः दुरुधरे योगे जाते सति अथवा जन्म-  
लग्नेऽथवा कामसुहृत्स्थिते सप्तमचतुर्थस्थे चंद्रे सति अथवा प्रश्नलग्नस्येर्के

### भाषा ।

तत्काल लग्नको जो कालावधि है वहांतक आयुप्यनिर्णय कहा है. मकर, वृश्चिक,  
कर्क, मीन इनका आरूढलग्नसे आद्यतं द्रेष्काण होवे तो वो लग्न मृत्युकारक जा-  
नना ॥ २३ ॥ २४ ॥ अब मृत्युका लक्षण कहते हैं. प्रश्नलग्नमें पृष्ठोदय लग्न  
होवे और लग्नसे पापग्रह ४।७।९२ होवे अथवा २।९ मंगल होवे और ८ स्थान-  
में चंद्र होवे तो मृत्यु होवे ॥ २५ ॥ अब और मरणका योगांतर कहते हैं. प्रश्न-  
लग्नमें वा जन्मलग्नमें पापग्रहका दुरुधरा योग होवे अथवा ७।८ चंद्र होवे अथवा  
प्रश्नलग्नमें सूर्य होवे और प्रश्नसमयमें राहुकालसमायोग होवे तो व्याधिके निम्न-

यते व्याधिना भृशम् ॥ २६ ॥ राहुकालसमायोगे मरणं निश्चितं भवेत् ॥ मेषाद्व्युक्रमतो राहुर्वृषात्कालः क्रमाच्चरेत् ॥ २७ ॥ राशौ राशौ तु पंचाशद्भोगकालो विनाडिका ॥ अर्कोदयादितश्चोभौ भुंजते च पुनः पुनः ॥ २८ ॥ एका दृष्ट्यब्धिरामेषु षडष्टारंतराः क्रमात् ॥ अर्कवारादितो राहु रात्रावेवमुदीरितः ॥ २९ ॥ राहुरुक्रमशः प्राच्याः कालश्च क्रमशश्चरेत् ॥ उभौ सार्धविनाडयेन राशिषु द्वादशस्वपि ॥ ३० ॥ इंद्रद्विनिशाचरशमवारीशवाय-

टीका ।

सति च व्याधिना भृशं म्रियते प्रश्नलक्ष्णे राहुकालसमायोगे वा निश्चितं मरणं भवेत् ॥ २६ ॥ अथ राहुकालयोगज्ञानमाह मेषादीत्यादिसार्धचतुस्त्रिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । राहुः मेषाद्व्युत्क्रमतः विलोमरीत्या क्रमाच्चरेत् कालः वृषात्क्रमात् द्वादशलक्ष्णेषु चरेत् राशौ राशौ प्रतिराशिं पंचाशद्दिनाडिकाः भोगकालः अर्कोदयादितः सूर्योदयलग्नमारभ्य उभौ पुनः पुनः लग्नादि भुंजते तत्रार्कवारादितः सप्तवारिषु क्रमात् राहुः १ द्वि २ अधि ४ राम ३ इपु ५ पद ६ अष्ट ८ घटिका राहुः रात्रौ प्राच्याः दिशः सकाशाद्व्युक्रमशः विलोमगत्या दिक्षु उदीरितः कथितः तथा तेनैव मानेन कालः प्राच्या दिशः सकाशात् क्रमशः दिक्षु चरेत् संचरति उभौ द्वावपि सार्धद्विनाडयेन सार्धघटिकाद्व-

भाषा ।

चसे मृत्यु होवे ॥ २६ ॥ अब राहुकालयोगका ज्ञान कहते हैं. राहु मेष, मीन, और कुंभ ऐसे क्रमसे चलता है. काल है वो वृषभ, मिथुन, कर्क ऐसे क्रमसे चलता है. एक राशिमें सूर्योदयसे लेके पचास पल भोगकाल है. इसरीतिसे राहु और काल यह दोनों वारंवार लग्नादिकुं भोगते हैं. उससे सूर्यादि सात वारके विषे क्रमसे १।२।४।३।५।६।८ घटी राहु. रात्रीकुं पूर्व, ईशान, उत्तर वायु यह क्रमसे भोगता है. वैसा काल पूर्व, अग्नि, दक्षिण, नैऋत्य, ऐसे क्रमसे चलता है. यह दोनोंका प्रत्येक दिशामें भोगकाल घटी २. पल ३० तक रहता है. पहिले

वः ॥ रुद्रचंद्रजलेशेशपापकेंद्रयमस्थितः ॥ ३१ ॥ रक्षो  
वायुस्ततोऽग्नीशयमवारुणराक्षसाः ॥ वायुसोमशचीनाथ-  
रक्षोऽग्निजलपेंदवः ॥ ३२ ॥ वाय्वीर्षोऽद्रयमाः पश्चाद्युग्मेंद्रौ  
च निशाचरः ॥ मरुद्वरुणचंद्रेशपावको वरुणो यमः ॥ ३३ ॥  
वायुरुद्रशशीन्द्राग्नी राक्षसाश्च ततः परम् ॥ वायुरक्षः श-  
शीन्द्रेशपावकांतकवारुणाः ॥ ३४ ॥ अर्कवारादितो वामं  
राहुः संचरति क्रमात् ॥ रुद्रः समीरः सोमाग्नी यमोऽथ  
निर्ऋतिर्जलम् ॥ नक्षत्रेऽपि च वारे च तिथौ चोक्रमतः

टीका ।

येन द्वादशस्वपि राशिषु संचरेतां तत्र राहुः दिक्षु क्रमाद्वामं संचरति इति पं-  
चविंशत्तमश्लोकार्धेनान्वयः तमेव क्रममाह । रविवारे इंद्रः, मारु ईंद्रुः सोमः,  
उदक् अग्निः, आग्नेयी निशाचरः निर्ऋतिः, शमः शमनः दक्षिणः, वारीशः  
वरुणः पश्चिमः, वायुश्चेता दिशः क्रमेण संचरति इंद्रुवारे रुद्रः, चंद्रः, जलेशः,  
ईशः, पावकः, इंद्रः, यमः एषां दिक्षु. भौमवारे रक्षः, वायुः, अग्निः, ईशः,  
यमः, वरुणः, राक्षसः एषां दिक्षु. सौम्यवारे वायुः, सोमः, शचीनाथः, रक्षः,  
अग्निः, जलप, इंद्रुः एषां दिक्षु. शुक्रवारे वायुः, ईशः, इंद्रः, यमः, पश्चात्  
युग्मः पश्चिमायां इंद्रः, निशाचरः, एतदिक्षु. शुक्रवारे मरुतः, वरुणः, चंद्रः,  
ईशः, पावकः, वरुणः, यमः, एतदिक्षु. शनिवारे वायुः, रुद्रः, शशी, इंद्रः,  
अग्निः, राक्षसः, वायुः अथवा रक्षः, शशी, इंद्रः, ईशः, पावकः, अंतकः, वरु-  
णः एषां दिक्षु. क्रमाद्रव्यादिसप्तवारेषु राहुः संचरतीति ॥ २७ ॥ २८ ॥  
॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ अथ नक्षत्रतिथिवारेषु दि-  
क्क्रममाह रुद्र इतिद्वयेन । अथ नक्षत्रे वारे तिथौ च रुद्रः ईशानी समीरः

भाषा ।

जो ५० पल भोगकाल कहा दो लग्न भोगका जानना. अब प्रत्येक वारमें दिशा  
भोगते हैं 'वो क्रम टीकामें स्पष्ट है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥  
॥ ३३ ॥ ३४ ॥ अब नक्षत्रतिथिवारके क्रमसे राहु और कालका परिभ्रमण कहते  
हैं. दिशाक्रम ईशान १, वायु २, उत्तर ३, अग्नि- ४, दक्षिण ५, नैर्ऋत्य ६, प-

क्रमात् ॥ ३५ ॥ अंतिमादादिमाद्राहुः कालश्च चरतस्त-  
था ॥ द्वयोर्योगे तु मरणमेकस्मिन्व्याधिरुच्यते ॥ ३६ ॥  
नृपा मूर्च्छा शरास्तत्त्वं तिथिषोडश पंच च ॥ द्वितीयेत्वंष्टमे  
भावस्त्वंतरे त्वनुपाततः ॥ ३७ ॥ नागाब्देषु गुणा रुद्रा वा-  
जिवेदांगपंक्तयः ॥ दशपंचाष्टका मेषाद्रश्मयः संप्रकीर्ति-

### टीका ।

वायुदिक् सोमः उदक् अग्निः आग्नेयी यमो दक्षिणा निर्ऋतिः स्पष्टा जलं  
पश्चिमा आसु दिशासु अश्विनीनक्षत्ररविवारप्रतिपत्तिथीः आरभ्यांतमाद्रा-  
हुस्तत्क्रमतः आदिमात्कालः क्रमतः एवमुभावपि दिक्षु चरतः एवं संचारेणै-  
कस्मिंस्तिथ्याद्यन्यतमयोगे व्याधिः द्वयोस्तिथ्याद्यन्यतमद्वियोगे मरणमि-  
त्युच्यते ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अथ द्वितीयभावादष्टमभावपर्यंतं रश्मीनाह नृपा  
इति । द्वितीयभावस्य नृपाः १६, तृतीयस्य मूर्च्छाः २१, चतुर्थस्य शराः ५,  
पंचमस्य तत्त्वं २५, षष्ठस्य तिथिः १५, सप्तमस्य षोडश १६, अष्टमस्य पंच५,  
ततः अंतरे ये भावाः संति तेषामंकास्तु अनुपाततो ग्राह्याः इति विषयः पूर्वं  
रश्मिप्रकरणे स्पष्टीकृतोऽस्त्येव ॥ ३७ ॥ अथ मेषादिराशिषु रश्मीनाह नागेत्या-  
दिसार्धेनागाः ८, अष्ट ८, इषवः ५, गुणाः ३, रुद्राः ११, वाजिनः ७, वेदाः ४,  
अंगानि ६, पंक्तयः १०, दश १०, पंच ५, अष्ट ८, एते रश्मयः रश्म्यंकाः मे-

### भाषा ।

श्विम ७, यह ७ दिशामें अश्विनीसे वर्तमाननक्षत्रतक, रविवारसे वर्तमानवारतक,  
प्रतिपदासे वर्तमानतिथितक, दिशामें फिरते हैं. सो ऐसा कि राहु अंतिमक्रमसे  
पश्चिम निर्ऋति ऐसा और काल आदिक्रमसे ईशान, वायु ऐसा पीछे यह दोनोंका  
संचार एक ठिकाने तिथ्यादिकका दो योग होवे तो मरण. एक होवे तो व्याधि  
जानना ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अब भावके रश्मि कहते हैं. द्वि. १६, तृ. २१, च. ५,  
पं. २५, प. १५, स. १६, अ. ५, शेषभावके अनुपातसे पूर्वी कई हैं वे जानने  
॥ ३७ ॥ अब मेषादिराशिके रश्मि कहते हैं. मेष ८, वृषभ ८, मिथुन ५, कर्क ३,  
सिंह ११, कन्या ७, तुला ४, वृश्चिक ६, धन १०, मकर १०, कुंभ ५, मीन ८,

ताः ॥ ३८ ॥ एकयोगे तु सर्वेषु व्याधिर्द्वाभ्यां भवेन्मृतिः ॥  
लक्ष्मीयोगेषु सर्वेषु व्याधिस्तस्य नवाऽपि वा ॥ ३९ ॥  
वैधृतौ च व्यतीपाते सार्षभेतिमसंज्ञिते ॥ कुलीरे विष-  
नाडीषु सूर्यदृष्टेषु पंचसु ॥ ४० ॥ पापयुक्ते च नक्षत्रे  
राशौ तत्संयुतेऽपि च ॥ संघौ च मासशून्यर्क्षे तिथिरा-  
शिषु जन्मभे ॥ ४१ ॥ व्ययाष्टमे च क्षीणेदौशत्रुग्रहनि-  
टीका ।

पादिराशिषु क्रमात्संप्रकीर्तिताः एषु राहुकालयोर्द्वयोयोगे व्याधितो मृत्युः  
स्यात् तथा एषु सर्वेषु एकयोगे व्याधिः स्यादिति ॥ ३८ ॥ अथाऽस्याप-  
वादमाह लक्ष्मीत्यर्थेन । सर्वेषु पूर्वोक्तेषु लक्ष्मीयोगेषु पूर्वोक्ते एकयोगे स-  
त्यपि तस्य व्याधिः कदाचित्स्यात्कदाचिन्नस्यादपि ॥ ३९ ॥ अथ व्याधितस्य  
प्रश्नकालमरणसूचककालराहुविशेषयोगांतराण्याह वैधृतौ चेत्यादिपंचच-  
त्वारिंशच्छ्लोकपर्यंतम् । वैधृतौ व्यतीपाते सार्षभे आश्लेषानक्षत्रे अंतिमसंज्ञिते  
रेवत्यां कुलीरे कर्काशे विषनाडीषु नक्षत्रोद्भासु पंचसु भौमबुधगुरुशुक्रश-  
निषु सूर्यदृष्टेषु सूर्यदोषसहितेषु पापग्रहयुक्ते नक्षत्रे तत्संयुते पापग्रहयुते रा-  
शावपि संघौ प्रातः सायं मध्याह्नादिषु यस्मिन्मासे शून्यर्क्षे तिथिराशयः सति  
तास्मिजन्मभे जन्मनक्षत्रे प्रश्नलग्न्याद्वययाष्टमे द्वादशाष्टमे क्षीणेदौ क्षीणचंद्रे  
सति अथवा तस्मिंस्थानद्वये शत्रुग्रहनिरीक्षिते सति अथवा कालराहुः पादं

भाषा ।

यह मेपादिराशिके रश्मि जानना ॥ ३८ ॥ अब पूर्वोक्तका अपवाद कहते हैं.  
पूर्वोक्त जो योग मरणके कहै हैं परंतु लक्ष्मीयोग होवे तो कभी व्याधि होवे कभी  
न होवे ॥ ३९ ॥ अब रोगीका मरणजीवनप्रश्न कहते हैं, प्रश्नकालमें वैधृति, व्यती-  
पात, आश्लेषा, रेवती, कर्काश, विषघटिका, वार, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि,  
पापग्रहयुक्त नक्षत्र, सायंकाल, प्रातःकाल, मध्याह्नकाल, मास शून्य तिथि वार  
नक्षत्र, जन्मनक्षत्र, प्रश्नलग्नसे १२।८ क्षीणचंद्र, अथवा १२।८ शत्रुग्रहकी दृष्टि  
होवे. कालराहु अंगस्पर्श करे तो व्याधि अथवा मरण होवे अथवा राहु आठवी

रक्षिते ॥ पादं पृष्ठं च जंघां च जानुनाभिं च गुल्फके  
 ॥ ४२ ॥ कर्णौ च चक्षुषी भालमास्यं कंठं स्पृशेद्यदा ॥  
 व्याधिर्वा म्रियते तद्वन्मृतिं राशिं स्पृशेत्तु वा ॥ ४३ ॥  
 अष्टमर्क्षं स्पृशेद्यद्वा कलांशादिषु वा तथा ॥ विपद्द्वयप्र-  
 त्यक्षे च वैनाशं ऋक्षमेववा ॥ ४४ ॥ संस्पृशेत्प्रश्नकाले  
 तु व्याधिर्वा तस्य वा मृतिः ॥ ४५ ॥ शिरोललाटभ्रूनेत्र-  
 नासाकर्णकपोलकाः ॥ ओष्ठं च चुबुकं कंठमंसौ हृदयमेव  
 च ॥ ४६ ॥ पाश्वौ च वक्षः कुक्षिश्च नाभिश्च कटिरेव च ॥  
 जघनं च नितंबं च लिंगमंडं च बस्ति च ॥ ४७ ॥ ऊरू  
 च जानू जंघा च गुल्फांग्री चाश्विभाक्रमात् ॥ तैलाभ्य-

### टीका ।

पृष्ठं जंघां जानुं नाभिं गुल्फं कर्णौ चक्षुषी भालमास्यं कंठं वा यदा स्पृशे-  
 त्तदा प्रश्ने व्याधिः मरणं वाऽथ वा राहुर्मृतिं राशिं अष्टमं राशिं स्पृशेच्चत्तदा-  
 पि मृतिः अथ वाऽष्टमर्क्षं अष्टमलग्नं राहुः स्पृशेत् अथवा कलांशादिषु षोड-  
 शांशादिषु राहुः स्पृशेद्यथा विपत्तारां वधतारां प्रत्यस्तारां वैनाशं ऋक्षं वा  
 स्पृशेत्सचेत्प्रश्नकाले तर्हि तस्य व्याधिर्वा मृत्युर्वा भवेदिति ॥ ४१ ॥ ४२ ॥  
 ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अथाश्विनीक्रमात्त्रक्षत्रेष्ववयवानाह शिर इतिसार्धद्वा-  
 म्याम् । आश्विमात् अश्विनीनक्षत्रात्सकाशाक्रमात् कालस्य शिरःप्रभृति  
 अध्यन्तं सप्तविंशतिसंख्याकाः अवयवा ज्ञेयाः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ अथ प्रष्टुर्द्वि-  
 श्रिह्वज्ञानमाह तैलाभ्यक्त इति तैलाभ्यक्तः वा अशुद्धः सूतकी वा जलद्वद-

### भाषा ।

राशिकूं स्पर्श करे तो मृत्यु होवे. अथवा राहु आठवे लग्नकूं वा षोडशांशकूं अथवा  
 राहु आठवे लग्नकूं वा षोडशांशकूं अथवा विपत्ताराकूं वा वैनाशनक्षत्रकूं प्रश्नकालमें  
 स्पर्श करे तो व्याधि वा मृत्यु होवे ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अब नक्षत्रपरत्व  
 करके कालके अवयव कहते हैं. अश्विनीनक्षत्रसे लेके रेवतापर्यंत क्रमसे कालके  
 भरतक आदि लेके चरणपर्यंत सत्तावीस अवयव जानना ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ अब

क्तोऽथ वा शुद्धो जलगर्तसमीपगः ॥ प्रष्टा देवविदे वाथ  
मरणं तस्य निर्दिशेत् ॥ ४८ ॥ लग्नत्रिसुतकामारिधर्मक-  
र्मायगः शुभः ॥ रोगशांतिकरा नोचेद्रिपुनीचग्रहस्थिताः  
॥४९॥ एषु पापा मृति करा नोचेत्स्वर्क्षोच्चमित्रगाः ॥ यस्य  
यस्य शुभं वाथ रिःफस्थानगताः शुभाः ॥ ५० ॥ यद्वा  
त्रिकोणकेंद्रस्थास्तस्य तस्य शुभप्रदाः ॥ मृगकक्ष्यादितः

### टीका ।

निकटवर्ती एवं भूतः प्रश्नकाले प्रष्टा पृच्छकः अथवा देवविज्योतिषिको  
वापि चेत्तदा तस्य प्रधर्मणं निर्दिशेत् ॥ ४८ ॥ अथ लग्ने शुभाशुमग्रहान्प्र-  
श्नकाले आह लग्नेतिसार्धेन । अथ लग्ने तृतीये पंचमे सप्तमे षष्ठे नवमे द-  
शमे लामे वा शुमग्रहश्चेद्रोगशांतिकरा भवन्ति किं तु उक्तस्थानगता अपि  
रिपुग्रहनीचग्रहवर्तमाना नोचेत्तथा एषु स्थानेषु पापाश्चेन्मृतिकराः मृत्युदाः  
तथापि यदि ते स्वर्क्षस्वोच्चस्वमित्रराशिवर्तमाना नोचेन्नसन्ति चेदिति ॥४९॥  
अथान्यच्च शुभाशुममाह यस्येत्यर्धकद्वयेन । यस्य यस्य पुंसः रिफस्थान-  
गताः द्वादशभावस्थाः यद्वा त्रिकोणकेंद्रस्थाः ९।५।१।४।७।१०। एषु स्थिताः  
शुभाः शुमग्रहाः तस्य तस्य पुंसः शुभं भवति यतस्ते शुभप्रदाः शुभदायका  
इति ॥ ५० ॥ अथ प्रश्नकाले वाज्यनर्तुज्ञानमाह मृगेति । मृगकक्ष्यादितः

### भाषा ।

पृच्छकके दुश्चिन्ह कहते हैं. तैलसे स्नान किया होवे, सूतका, जलके डोहके पास  
बैठा हुवा प्रश्न करे, वा पूर्वोक्त लक्षणयुक्त ज्योतिषी प्रश्न कहे तो पृच्छकका मृत्यु  
जानना ॥ ४८ ॥ अब रोगप्रश्नका शुभाशुभ कहते हैं प्रश्नकालसे ३।५।६।९।१०।  
११ शुभग्रह होवे तो रोग शांत होवेगा, और यह ३।५।६।९।१०।११ स्थानोंमें  
पापग्रह होवे तो मृत्यु होवेगा. परंतु शुभग्रह नीचादिस्थानगत न होवे तो और  
पापग्रह उच्चादि स्थानगत न होवे तो पूर्वोक्त फल जानना ॥ ४९ ॥ यह स्थानमें  
१२।९।५।१।७।१० जन्मकालमें या प्रश्नकालमें शुभग्रह होवे तो शुभदायक फल  
है ॥५०॥ अब प्रश्नकालमें जन्मकालमें अयनऋतुका ज्ञान कहते हैं. मकरराशिसे

सूर्यो राशिपूर्वापरार्धतः॥ शनिशुक्रारचंद्रज्ञगुरवः शिशि-  
रादिषु ॥ ५१ ॥ अर्के ग्रीष्मस्ततोऽन्यैर्वा वाऽयनादतुरेव

टीका ।

मकरराशितः पद्माशिवर्तमानः सूर्यश्चेदुत्तरायणं तथा कर्कराशितः पद्माशिव-  
र्तमानः सूर्यश्चेदक्षिणायनमिति प्रश्नलग्नजन्माम्यामयनं ज्ञेयं अथ राशिपू-  
र्वार्धतः एतदुक्तं भवति मकरादिषट्पद्माशिषु राशिपूर्वार्धे कर्कादिषट्पद्माशिषु रा-  
श्यपरार्धे वर्तमानाः क्रमाच्छनिशुक्रारचंद्रज्ञगुरवः संति चेद्वाशिपंचांशविभा-  
गेन शिशिरादिऋतुक्रमो जन्मनि ज्ञेयः तथा मकरकुंभमीनमेषवृषमिथुनरा-  
शिपूर्वार्धे शनिश्चेच्छिशिरऋतुः तथा शुक्रश्चेद्वसंतः तथा भौमश्चेद्ग्रीष्मः तथा  
चंद्रश्चेद्वर्षा तथा बुधश्चेच्छरत् तथा गुरुश्चेद्वेगंतः एवं कर्कादिराशिषट्कोत्त-  
रार्धे क्रमाच्छन्यादिषु स एव क्रमो ज्ञेयः इति अयं ग्रहाणां योगः प्रश्नजन्म-  
लग्नयोरेव ऋतुसूचको ज्ञेयः यथा मकरं जन्मलग्नं प्रश्नलग्नं वा तत्र पूर्वार्धे  
शन्याद्यन्यतमे शिशिराद्यन्यतमः एवं कर्कादिषट्कान्यतमलग्ने सति तत्रो-  
त्तरार्धे शन्याद्यन्यतमेऽपि शिशिराद्यन्यतमऋतुर्ज्ञेय इति॥५१॥ अर्के इति सा-  
र्थेन । प्रश्नलग्नेऽर्के खौ सति ग्रीष्मः ततोऽन्यैः क्रमशः ऋतव इति वा एतदुक्तं  
भवति । लग्ने ख्यादिशुक्रांतपद्मग्रहान्यतमे क्रमशो ग्रीष्माद्यन्यतमः क्रमाद-  
तुः इति वेति अथ तत्रापि अयनादतुः मृगकर्क्यादितः सूर्य इति पूर्वोक्तायनः

भाषा ।

छः राशितक सूर्य होवे वो उत्तरायण, कर्कसे छः राशितक सूर्य होवे तो दक्षिणा-  
यन जानना, अब ऋतुज्ञान कहते हैं, प्रश्नलग्न, जन्मलग्न, मकर, कुंभ, मीन, मेष,  
वृषभ, मिथुन राशिके पूर्वार्धमें शनि होवे तो शिशिर ऋतु जानना, वैसा शुक्र होवे  
तो वसंत जानना, मंगल होवे तो ग्रीष्म जानना, चंद्र होवे तो वर्षा जानना, बुध  
होवे तो शरत् जानना, गुरु होवे तो हेमंत जानना, इस रीतिसे कर्क, सिंह,  
कन्या, तुला, वृश्चिक, धन इनोके उत्तरार्धमें पूर्वसरिखे शनि आदि ग्रह होवे तो  
पूर्वी कहे हवे ऋतु जानना, बहुधा यह नष्टपत्रिका करनेका विषय है ॥ ५१ ॥  
प्रश्नलग्नमें सूर्य होवे तो ग्रीष्मऋतु, चंद्र होवे तो वर्षा, मंगल होवे तो शरत्, बुध  
होवे तो हेमंत, गुरु होवे तो शिशिर, शुक्र होवे तो वसंत जानना, अथवा शुक्र,



च ॥ शुक्रारमंदचंद्रज्ञजीवाश्च परिवर्तिताः ॥ ५२ ॥ लग्न-  
द्रेष्काणकाः प्रोक्ता नवांशेनैव चापरे ॥ तत्पूर्वपरतो मासौ  
तिथिः स्यादनुपाततः ॥ ५३ ॥ लग्नत्रिकोणगो जीवो नवां-  
शस्थोऽथ वा भवेत् ॥ ज्ञात्वा वयोनुरूपेण ह्यनुमानवशा-  
टीका ।

वशादनुमानमिति । अथ च लग्ने ग्रहाभावे किमित्यत्राह शुक्रारेति । शुक्रा-  
रमंदचंद्रज्ञजीवाः लग्नद्रेष्काणकाः परिवर्तिताः संतः द्रेष्काणदृष्ट्या ग्रीष्मादि-  
ऋतुग्रहणं अथवाऽपरे नवांशेन प्रश्नलग्ने यन्नवमांशतः ग्रहविहितः पूर्वोक्त-  
रीत्या ऋतुग्रहणमिति मतांतरम् ॥ ५२ ॥ अथ मासतिथिज्ञानमाह तदित्य-  
र्थेन । तत्पूर्वपरतो मासौ तस्य पूर्वोक्तरीत्या प्राप्तऋतोः पूर्वपरतो मासौ पू-  
र्वार्धे एकमासः उत्तरार्धे द्वितीयमासः तदित्यं वृषभे मिथुने ग्रीष्मे इतित्या-  
येन पूर्वोक्तरीत्या ग्रीष्मर्तो प्राप्तौ पूर्वार्धे वैशाख उत्तरार्धे ज्येष्ठः अथवा संतो  
मधुमाधवौ इति रीत्या ग्रीष्मर्तो पूर्वार्धे ज्येष्ठः उत्तरार्धे आषाढ इति पक्षांत-  
तम् । एवमेव तिथिस्तु अनुपाततः स्यात् ऋतोः शुक्लभोग्यानुपातेन तिथि-  
ज्ञेयेति ॥ ५३ ॥ अथ प्रश्नलग्नाद्यवर्षमाह लग्नेति । लग्नात्मन्लग्नात्स-  
काशात् त्रिकोणगो जीवश्चेत्तर्हि यस्मिन्नाशौ वर्तमानस्तद्राशिस्थो यदा  
जीव आसीत्तस्मिन्वर्षे जन्म ज्ञेयम् । लग्नत्रिकोणगो न चेद्यत्र कुत्रापि राशौ  
यद्राशिनवांशो वर्तते तद्राशिरथे जन्म बभूवेति ज्ञेयम् । ननु द्वादशवर्षवयो-

भाषा ।

मंगल, शनि, चंद्र, बुध, गुरु यह ग्रह लग्नके द्रेष्काणपति हैं इनके क्रमसे ग्रीष्मादि  
ऋतु जानना, अथवा नवांशक्रमसे ऋतु जानना ॥ ५२ ॥ अब मास तिथिका  
ज्ञान कहते हैं, पूर्वी जो ऋतु सिद्ध मया उसके पूर्वार्धमें पूर्व मास, उत्तरार्धमें उत्तर  
मास, जैसा ग्रीष्मऋतुमें वृषभ, मिथुन मास जानना, अथवा ग्रीष्मके पूर्वार्धमें ज्येष्ठ,  
उत्तरार्धमें आषाढ, यह मतांतर है ऐसी अनुपातसे तिथि जानना, ऋतुसे मुक्त-  
भोग्य सैं ॥ ५३ ॥ अब वर्षज्ञान कहते हैं, प्रश्न लग्नसे त्रिकोणस्थानमें गुरु होवे  
तो जो राशिका गुरु है वो राशिका गुरु पहिले हो गया है, वो वर्षमें जन्मलग्न  
जानना, अवस्थाका अनुमान देखके वर्ष कहना, परंतु गुरु राशिका तो चारह वर-

त्समाः ॥ ५४ ॥ सूर्यस्थितांशतुल्यां वा तिथिं प्रोवाच  
 भार्गवः ॥ राशौ रात्रिदिवाख्ये च जन्मस्यात्तु विलोमतः  
 ॥ ५५ ॥ गतप्राणैर्जन्मकाले ते च प्राणा भवन्त्यथ ॥  
 यद्वाशिगः शशी मासः समं वाऽस्पृशदंगकम् ॥ ५६ ॥

### टीका ।

धिकस्य कथमिति चेदाह । वयोरूपेणानुमानवशात्समा ज्ञात्वा वदेत् यथा-  
 गुरुनवांशराशिर्मेषः तथा संप्रति वृषे गुरुर्वर्तमानः वयस्तु द्वादशवर्षाधिकं  
 अनुमानतो ज्ञात्वा प्राक्तनद्वितीयावृत्त्या मेषस्थे गुरौ वर्षे जन्म वक्तव्यं तथा  
 चतुर्विंशाधिकेऽनुमानवयसि प्राक्तनतृतीयावृत्त्या मेषस्थे गुरौ जन्म ज्ञेयम् ।  
 एवमेवाग्रे षट्त्रिंशाधिकेऽनुमानवयसि प्राक्तनचतुर्थ्यावृत्त्या मेषार्के वर्षे ज-  
 न्मेत्यादि वयोवर्षज्ञानम् ॥ ५४ ॥ अथ तिथिज्ञानं दिवारात्रिज्ञानंचाह सू-  
 र्येति । सूर्यस्य स्थिता वर्तमाना येऽशास्त्रिंशांशास्तुल्यां तिथिं शुक्लप्रति-  
 पदाद्यमांतान्यतमां भार्गवः प्रोवाच तथा प्रश्नलग्नराशौ रात्र्याख्ये दिवा-  
 जन्म तस्मिंश्च दिवाख्ये रात्रिजन्मेति विलोमतो ज्ञेयम् । अथ प्राण-  
 ज्ञानमाह गतेत्यर्थेन । गतप्राणैः जन्मकालात्प्राग्गतैरित्यर्थः तैः करणभूतैः  
 जन्मकाले ये प्राणा उपलभ्यन्ते ते एव जन्मकालीनाः प्राणा ज्ञेयाः ॥ ५५ ॥  
 अथ प्रश्नकालान्मासराशिलग्नज्ञानमाह यदितिद्वाम्याम् । प्रश्नकाले य-

### भाषा ।

सका परावर्तन है. और वयोमान बीचमें आता होवे तो गुरुनवांश राशिलेके वर्ष  
 कहना ॥ ५४ ॥ अब तिथिका ज्ञान. दिवारात्रिका ज्ञान कहते हैं. सूर्यके जितने  
 अंश हैं उसके तुल्य तिथि शुक्राचार्य कहते हैं और प्रश्नलग्न रात्रिसंज्ञक होवे तो  
 दिवा जन्म दिवस संज्ञक होवे तो रात्रि जन्म कहना ॥ ५५ ॥ प्रश्नकालसे पूर्वी  
 जितने प्राण गये होवे उतने प्राण जन्मकालमें जानना ॥ ५६ ॥ अब प्रश्नकालसे  
 मास, राशि लग्नज्ञान कहते हैं. प्रश्नकालमें जिस राशिका चंद्र होवे वो महिना  
 जानना, मेष राशिका होवे तो चैत्रमास जानना. वैशाख चंद्रमा सम या विषम जिस  
 लग्नकूं स्पर्श करे वहांसे नवम या पंचम घर चलवान् होवै, वो राशि जानना.  
 प्रश्नलग्नसे जितनी राशिउपर चंद्र होवे उतनी राशिका जन्मलग्न जानना. तीन

तत्रिकोणबलाधिक्यं राशिर्लघ्नान्तु यावति ॥ चंद्रस्तावति  
भं चापि जन्मलग्नं विनिर्दिशेत् ॥ ५७ ॥ मीने मीनं तु  
लग्नं वा तथान्यैस्त्वन्यलग्नभम् ॥ छायाया संयुता यामवा-  
रक्षतिथिराशयः ॥ ५८ ॥ यावंतस्तु धनिष्ठादि जन्मर्क्षं  
तद्विनिर्दिशेत् ॥ कलांशादिषु यत्प्रोक्तमृक्षं तद्वा भवेदिदम्  
॥ ५९ ॥ कलांशाद्यर्धहोरांतप्रोक्तहोरेर्विभावयेत् ॥ पृथग्लि-  
टीका ।

द्राशिगः शशी स मासः मेषे चैत्र इत्यादिः तथा शशी समं वा विषमं  
यदंगकं लग्न अस्पृशत्तस्मात्त्रिकोणं पंचमनवमान्यतमं यद्वलाधिक्यं भवेत्स  
राशिर्ज्ञेयः तथा लग्नात्प्रश्नलग्नाद्यावति राशौ चंद्रस्तावति यद्गं राशिस्तज्ज-  
न्मलग्नं विनिर्दिशेत् मीने प्रश्नलग्ने मीन एव लग्नं एवमन्यैः प्रश्नलग्नैः अन्य-  
लग्नमिति वा प्रकारांतरम् ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ अथ जन्मर्क्षज्ञानमाह छायायेति ।  
प्रश्नकाले छाया द्रष्टव्या तत्पदैः संयुता मिश्रिताः यामवारक्षतिथिराशयः  
महेश्वारनक्षत्रतिथिराशयः यावंतो भविष्यंति तावत्संख्याकं धनिष्ठानक्षत्रादि-  
गणनयोपलब्धं जन्मर्क्षं जन्मनक्षत्रं विनिर्दिशेत्कथयेत् ॥ ५८ ॥ अथ प्रकारा-  
ंतरेण नक्षत्रज्ञानमाह कलांशादिष्वित्यर्थेन । पूर्वकलांशादिषु यद्गं प्रोक्तं तदे-  
वेदं जन्मर्क्षं वा भवेत् ॥ ५९ ॥ तत्र विशेषप्रकारमाह कलांशेत्यर्थेन । कलां-  
शेभ्यः सकाशादधर्धहोरांतं अर्धहोरापर्यंतं ये प्रोक्ता होराः तैः विभावयेजा-  
नीयादिति ॥ ५९ ॥ अथ प्रकारांतरेण मासादीनाह पृथगित्यादिसार्धकय-  
भाषा ।

प्रश्नलग्नं होवे तो मीनलग्नं अन्य लग्नं होवे तो अन्य लग्नं जानना ॥ ५६ ॥ ५७ ॥  
अब जन्मनक्षत्रं ज्ञान कहते हैं. प्रश्नकालमें पादछाया करके उसमें प्रहर, वार,  
तिथि, नक्षत्रसंख्या मिलावे, सत्तार्वीससे ज्यादा होवे तो २७ का भाग लेवे जो  
संख्या है उतनी संख्यातुल्य धनिष्ठादि गणनासे जन्मनक्षत्र जानना ॥ ५८ ॥  
अब प्रकारांतर कहते हैं. पूर्वी कलांशादिकमें जो नक्षत्र कहा है वो नक्षत्र  
जानना कलांशसे अर्ध होरापर्यंत जो कहे हैं उतनी होरा जानना ॥ ५९ ॥  
अब प्रकारांतरसे मासादिज्ञान कहते हैं. लग्न दो ठिकाने मांडके कला करके स्व-

सीकृतं लग्नं वर्गणाभिर्हतं पुनः ॥ ६० ॥ आरूढदृष्टत्रयोर्वी-  
र्यबलस्य वर्गणाहतम् ॥ ओजे योगः समे हानिरिति त-  
स्य विधीयते ॥ ६१ ॥ स्वैः स्वैर्भागैश्च भक्तं तत्तथा मासा-  
दयः स्मृताः ॥ यद्वा कलीकृतं लग्नं तथा कुर्याद्विचक्षणः  
॥ ६२ ॥ भावकस्य च शुद्धि च योगं चैव करोत्यतः ॥  
नवभिश्च कलांशाद्यैस्तथैवोच्चादिभिः क्रमात् ॥ ६३ ॥  
एकाशीति भिदाः संति नवकाद्यंगशोधनैः ॥ येषां योग-  
गते काले समाप्तेषु सतां यतः ॥ ६४ ॥ राशिस्तु बलवा-  
न्स्वामिगुरुज्ञप्रेक्षणान्वितः ॥ अन्यैः पापैरदृष्टः स्याच्छु-

### टीका ।

ष्टिपर्यंतम् । लग्नं पृथग्विधा स्थापयित्वा कलीकृतं वर्गणाहतं कृत्वा पुनः आरू-  
ढदृष्टत्रयोर्मध्ये यो वीर्येण बलवान् तस्य वर्गणाभिः हतं ओजे विपमे सति पृथ-  
कृतस्य योगः कार्यः समे सति तु हानिः पृथक्कृतास्यजात् इत्येवं प्रकारं तस्य  
विधानं ततः तत् स्वैः स्वैः मासे द्वादशभिः दिवसे त्रिंशद्भिरित्यादिभागैर्भ-  
क्तं तत्तथा पूर्वोक्तरीत्या मासादयः स्मृताः ॥ ६० ॥ ६१ ॥ अथ प्रकारान्तरेण  
मासाद्यानयनमाह यद्वेत्यतः पष्टिपर्यंतम् । यद्वाऽथवा लग्नं कलीकृतं सत्  
तथा पूर्वोक्तवत्कुर्यात् ततः भावशुद्धिं कृत्वा प्राग्बलपृथक्कृतस्य योगं कृत्वा न-  
वभिः कलांशाद्यैः प्रकारैः तथोच्चत्रिकोणादिप्रकारैश्च क्रमादेकाशीतिभिदाः  
भवांति तासु नवकाद्यंगशोधनैर्येषां सतां योगगते काले समाप्तेषु तेषु तत्त-

### भाषा ।

वर्गसे गुणन करके पुनः आरूढदृष्टत्रयमें जो बलवान् होवे उसके वर्गसे गुणन  
करके विपम होवे वो पृथक्में मिलाना. सम होवे तो पृथक्मेंसे कमी करना.  
पीछे १२ से भाग लेना तो मास जानना. तीससे भाग लिये तो दिवस  
जानना ॥ ६० ॥ ६१ ॥ अथवा लग्नकी कला करके पूर्वसरीखी सब गणि-  
तक्रिया करके भावशुद्धि करके पृथक्से मिलायके नवकलांशसे और उच्च  
त्रिकोणादि प्रकारसे इक्यासी भेद होते हैं उसमें नवकाद्यंगशोधनसे जहां अवसान

भट्टष्टया प्रयोजयेत् ॥ ६५ ॥ चंद्रार्काचार्यशुक्रज्ञाः पादं  
मित्रं भकर्मणी ॥ पश्यति च शनिः पूर्णमथ धर्मसुतो  
गुरुः ॥ ६६ ॥ सर्वेऽर्धबंधुमृत्यू च पूर्णं पश्यति भूमिजः  
परे त्रिपादं पूर्णं च सर्वे पश्यन्ति सप्तमम् ॥ ६७ ॥ उच्चमू-  
लसुहृत्स्वर्क्षस्वद्रेष्काणनवांशके ॥ स्थितस्य स्थानवीर्यं  
टीका ।

न्मासादिवोद्धव्यमिति ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ अथ लग्नस्य बलवत्त्वमाह  
राशिरिति । राशिर्लग्नं स्वामिगुरुप्रेक्षणान्वितः पतिगुरुबुधानां पूर्णदृष्ट्या  
युतः बलवान् भवति अन्यैः पापैः स्वामिभिन्नेः पापग्रहैः अदृष्टः सन् शुभ-  
दृष्ट्या गुरुबुधव्यतिरेकेणापि अन्यशुभग्रहदृष्टिवशेन च तस्य बलवत्त्वं प्रयो-  
जयेति ॥ ६५ ॥ अथ ग्रहणां दृष्टिमाह चंद्रेति द्वाभ्याम् । चंद्ररविगुरुशुक्रबुधाः  
भौमश्च मित्रमकर्मणी तृतीयदशमस्थाने पादं पाददृष्ट्या पश्यति शनिस्तु  
तृतीयदशमस्थानद्वयं पूर्णं पश्यति एवं धर्मसुतो नवमपंचमस्थाने सर्वे ग्रहा  
अर्धं गुरुस्तु १।५ एतत्स्थानद्वयं पूर्णं पश्यन्ति एवमेव बंधुमृत्यू चतुर्थाष्टमे  
भूमिजो भौमः पूर्णमपश्यति परे सर्वे ४।८ एतत्स्थानद्वयं त्रिपादं त्रिपाददृ-  
ष्ट्या पश्यन्ति अथ सर्वेपि ख्यादिशान्यताः सप्तमं स्थानं पूर्णं पूर्णदृष्ट्या प-  
श्यन्तीति ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ एवं ग्रहणां दृग्बलमुक्त्वा स्थानबलं दिग्बलं चाह  
उचेति द्वाभ्याम् । अथ स्वोच्चमूलत्रिकोणस्वसुहृत्स्वराशिस्वद्रेष्काणस्वनवांशके  
भाषा ।

आत्रे वहां नासादिक जानना ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ अब लग्नका बल कहते हैं.  
जिस लग्नकूं अपना गुरु, बुध, पूर्णदृष्टिसे देखते होवे तो लग्न बलवान् जानना.  
परंतु अपने स्वामिदिना अन्य पापग्रहसे दृष्ट न होवे तो, बलवत्त्व योजना ॥ ६५ ॥  
अब ग्रहोंकी दृष्टि कहते हैं. सू० च० म० बु० गु० शुक्र ३।१० वें घर ऊपर पाददृ-  
ष्टिसे देखते हैं, शनि ३।१० वें घरऊपर पूर्णदृष्टिसे देखते हैं १।५ वें घर ऊपर  
सब ग्रह द्विपाददृष्टिसे देखते हैं, परंतु गुरु पूर्णदृष्टिसे देखता है, वैसा चार ८ वें  
घरऊपर मंगल पूर्णदृष्टिसे देखता है. दूसरे सर्व ग्रह त्रिपाददृष्टिसे देखते  
हैं. और ७ घरमे सूयादि सात ग्रह पूर्ण दृष्टिसे देखते हैं ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ अब

स्यात्कुजार्को दशमे शनिः ॥ ६८ ॥ सप्तमे ज्ञगुरु लगे च-  
न्द्रशुक्रौ तु वेदमनि ॥ दिग्वीर्यसंयुता एते नाऽन्यत्र प्रश्न-  
कर्मणि ॥ ६९ ॥ मृगादिराशिषट्कस्थाश्वंद्रार्कज्ञार्यभार्ग-  
वाः ॥ बलवंतः कुजार्को तु कर्कटादिगतौ तथा ॥ ७० ॥  
पूर्वपक्षे शुभे कृष्णे पापास्तु बलिनस्तथा ॥ वक्रिणो बलि-  
नः खेटा श्रेष्ठाबलसमन्विताः ॥ ७१ ॥ शुभाः पापा दिवा

### टीका ।

समाहारे एकवचने एषु स्थानेषु स्थितस्य स्थानवीर्यं स्यादिति ज्ञेयम् । अथ  
लम्बादशमस्थाने कुजार्को सप्तमे शनिः लगे ज्ञगुरु वेदमनि चतुर्थे चन्द्रशुक्रौ  
चेति ग्रहाः प्रश्नकर्मणि दिग्वीर्ययुता भवन्ति एतेऽन्यत्र विषयेनेति ॥ ६८ ॥  
॥ ६९ ॥ अथायनबलमाह मृगेति । मृगादि मकरादि यन्मिथुनांतं राशिषट्कं  
तत्रस्थाः चंद्रविबुधगुरुशुक्राः तथा कुजार्को भौमशनी तु कर्कटादिगतौ  
कर्कादिधनुर्मर्यादिराशिषट्कगतौ च बलवंतः अयनबलिनो भवन्ति अथ प-  
क्षचेष्टादिवारात्रिनिसर्गबलान्याह पूर्वेतिद्वाम्याम् । शुभाः ग्रहाः पूर्वपक्षे शु-  
क्लपक्षे तथा पापाः खलास्तु कृष्णपक्षे बलिन इति प्रश्ने पक्षबलं ज्ञेयम् ।  
अथ वक्रिणः वक्रंगताः खेटाः चेष्टाबलसमन्विताः बलिनः नाम चेष्टाबलवंत

### भाषा ।

ग्रहोंका स्थानबल दिग्वल कहते हैं, जो ग्रह स्वक्षेत्र उच्च मूल त्रिकोण मित्र  
अधिमित्र राशिका होवे और स्वनवांश स्वद्रेष्काणमें होवे तो स्थानवीर्य जानना,  
अथ दिग्वल कहते हैं, प्रश्नलग्नेसे १० घर सूर्य, मंगल दिग्वली जानने, ७ वंघर  
शनि दिग्वली जानना, १ घरमें बुध गुरु दिग्वली जानने, ४ घरमें चंद्र शुक्र  
दिग्वली जानने, यह प्रश्नकर्ममें दिग्वल जानना, अन्य जातक मुहूर्तमें नहीं लेना  
॥ ६८ ॥ ६९ ॥ अब अयनबल कहते हैं, मकरसे मियुनपर्यंत छः राशीमें सूर्य,  
चंद्र, बुध, गुरु, शुक्र यह पांच ग्रह होवे तो अयनबली जानने, और कर्कसे धन-  
पर्यंत छः राशीमें मंगल, शनि, यह दोनों होवे तो अयनबली जानने ॥ ७० ॥  
अथ पक्षबल कहते हैं, शुक्लपक्षमें शुभग्रह बलवान् जानने, कृष्णपक्षमें पापग्रह  
बलवान् जानने, अथ चेष्टाबल कहते हैं, वक्रां ग्रह चेष्टाबली जानने, अथ दिवारा-

रात्रौ बलिनः स्युः क्रमात्स्मृताः ॥ निसर्गबलिनः प्राग्वदेवं  
स्युः प्रश्नकर्मणि ॥ ७२ ॥ लग्नहोराद्रेष्काणार्कनवांशाः स-  
प्तमांशकः ॥ कलांशः कालहोरा च त्रिंशांशः षष्टिभाजकः  
॥ ७३ ॥ पूर्वपूर्वो बली प्रोक्तो न बली चोत्तरोत्तरः ॥ प्रश्न-  
टीका ।

इति चेष्टाबलं अथ शुभाः दिवाबलिनः पापाः रात्रौ बलिनः क्रमात्स्मृताः  
इति दिनरात्रिबलम् । निसर्गबलिनः प्राग्वत्पूर्वोत्तरीत्या ज्ञेयाः एवं प्रश्नक-  
र्मणि षड्बलं कथितमिति ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ अथ दशवर्गबलमाह लग्नेतिसा-  
धेन । लग्नं १ होरा २ द्रेष्काणः ३ अर्को द्वादशांशः ४ नवांशः ५ सप्तांशः ६  
कलांशः षोडशांशः ७ कालहोरांशः ८ त्रिंशांशः ९ षष्टिभागकः १० एवं  
दशवर्ग्यां पूर्वपूर्वः उत्तरापेक्षया पूर्वो बली प्रोक्तः उत्तरोत्तरः पूर्वापेक्षया न  
बली हीनबली इत्यर्थः इति दशवर्गबलम् ॥ ७३ ॥ अथ प्रश्नलग्नाजन्मल-  
ग्नमाह प्रश्नलग्नं कलीकृत्येत्यादिभिस्त्रिभिः श्लोकैः । प्रश्नलग्नस्य कलां कृत्वा  
नवसंख्यया गुणितं कृत्वा पश्चाद्देन सप्तविंशतिसंख्यया भागः कार्यः ततश्च  
यल्लब्धं तन्नवमांशसंज्ञकं ज्ञेयम् । ततश्च यच्छिष्टं तदेकत्र संस्थाप्य लग्नसंख्यां  
सप्तभिर्गुणितां कृत्वा चतुर्भिर्विभज्य च यल्लब्धं तन्नवमांशसंज्ञकं जातं तादृ-  
शानवमांशसंज्ञकसंख्या जन्मलग्नस्य बोद्धव्या अथवा पूर्वाज्जिष्टसंख्यया  
त्रिगुणीकरणं कृत्वा द्वादशभिर्विभज्य यदवशिष्टं तज्जन्मलग्नं बोद्धव्यं अ-  
भाषा ।

त्रिवल कहते हैं. शुभग्रह दिवाबली जानना. पापग्रह रात्रिबली जानना. निसर्ग-  
बल पहिले सरित्वा जानना. इसतरह प्रश्नकालके षड्बल कहै ॥ ७१ ॥ ७२ ॥  
अब दशवर्ग उत्तरोत्तरबली कहते हैं. लग्न १, होरा २, द्रेष्काण ३, द्वादशांश ४,  
नवांश ५, सप्तांश ६, षोडशांश ७, कालहोरांश ८, त्रिंशांश ९, षष्टिभाज १०,  
यह उत्तरोत्तर हीनबली जानने ॥ ७३ ॥ अब प्रश्नसे जन्मकाल कहते हैं. प्रश्न-  
लग्नकी कला करके नवसे गुणन करना. पीछे सत्तावीससे भाग लेना. लब्ध जो  
आवे वो नवमांश जानने. शेषकूँ एकतरफ रख छोड़ना. पीछे लब्धकूँ सातगुणे  
करके चारसे भाग लेना. जो लब्ध है वो नवांश जानना. वो नवांशतद्वत् लग्न

लग्नं कलीकृत्य नवघ्नं मेनभाजितम् ॥ ७४ ॥ लब्धं नवां-  
शकं ज्ञेयं शिष्टमात्मकसंस्थिते ॥ लब्धं सप्तगुणं वेदभक्तं  
शिष्टमिहांशकः ॥ ७५ ॥ नवांशसदृशं लग्नं यद्वा त्रिघ्नार्क-  
भाजितम् ॥ सप्ताप्तशिष्टं लग्नं च सप्तमे मासि निश्चिते  
॥ ७६ ॥ सौम्ये तदेव कमर्क्षं जन्मर्क्षं वा भवेद्बलम् ॥ इदं  
शास्त्रं मया प्रोक्तमाद्यन्तं तव सुव्रत ॥ ७७ ॥ नाशिष्याय  
प्रदातव्यं नापुत्राय कदा चन ॥ गुणशील्युतायैव शिष्या-  
यैव द्विजातये ॥ ७८ ॥ दातव्यं तु प्रयत्नेन वेदांगमिदमु-

### टीका ।

यथा शेषसंख्यां सप्तभिर्विभाज्य यल्लब्धं तत्सप्तममासस्य लग्नमवगंतव्यं स-  
राशिः शुभग्रहयुक्तः स्याच्चेत्तदेव कर्मनक्षत्रं जन्मनक्षत्रं वा ज्ञातव्यम् ॥ ७४ ॥  
॥ ७५ ॥ ७६ ॥ अथास्य शास्त्रास्य वेदांगत्वं प्रतिपादयन्नध्याय्यधिकारं च  
प्रतिपादयन्नपसंहरति इदमिति द्वाभ्याम् । हे सुव्रत ! उत्तमाचारसंपन्न मै-  
त्रेय ! इदमुक्तप्रकारकं शास्त्रं ज्योतिःशास्त्रं आद्यन्तं समग्रमित्यर्थः तव प्रोक्तं  
अशिष्याय कुशिष्यायेत्यर्थः तथाऽपुत्राय कुपुत्रायेत्यर्थः कदा च न न प्रदा-  
तव्यं यत इदं उत्तमं त्रिकालजनकत्वादुत्कृष्टं तथा वेदांगं वेदानामवयवी-  
भूतं वेदमूलत्वात्सर्वमान्यामिति भावः ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ इति होरागमे त्वार्षे  
पराशर्युरुदिते ॥ उत्तरार्धाऽष्टादशोवाच्याये ऽऽख्यापितं मया ॥१॥ इति वृ०

### भाषा ।

जन्मका जानना, अथवा उसकूं त्रिगुणित करके वाग्रहमे भाग लेना, वो शेष जन्म-  
लग्न जानना, अथवा शेषकूं भागमे भाग लेके जो आवे वो लग्न ज्ञातये महिने जा-  
नना, शुभग्रहकी राशि होवे तो ओई कर्मनक्षत्र वा जन्मनक्षत्र जानना ॥ ७४ ॥  
॥ ७५ ॥ ७६ ॥ अब शास्त्रका वेदांगत्व प्रतिपादन करते हैं, हे मैत्रेय !  
यह जो कदा आद्यन्त ज्योतिःशास्त्र नो कुपुत्रकूं और कुशिष्यकूं कदापि देना  
नहीं, जो गुणवान्, शीलवान् होवे, उनकूं प्रयत्न करके देना, यह शास्त्र त्रिकाल-



च्यते ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे प्रश्नकरणं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्यायानुक्रमं वक्ष्ये त्वादौ शास्त्रावतारणम् ॥ प्रादुर्भावो ग्रहाणां तु द्वितीये च प्रकीर्तितः ॥ १ ॥ ततो राशिस्वभावश्च चतुर्थे दृष्टिवर्णनम् ॥ गर्भाधानं ततः पश्चात्सूतिकाविधिरेव च ॥ २ ॥ अरिष्टं सप्तमाऽध्याये सुतस्य तदनंतरम् ॥ पित्रोश्च मातुलादीनां तद्भंगो दशमात्स्मृतः ॥ ३ ॥

### टीका ।

उत्तरभागे श्रीम० ज्योतिर्विच्छ्रीधरेण विरचितायां सुबोधिनीटीकायां प्रश्नकरणं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

एकोनविंशोऽध्यायेस्मिन्ननुक्रम उदीर्यते ॥ श्रीगणेशः प्रेरयतु सम्यग्व्याख्याकृताविह ॥ १ ॥ अथ श्रीमहर्षिः उक्तशास्त्रानुक्रमं सुखेनेष्टविषयोपलब्धये कथयति अध्यायेत्यादिसार्धसप्तभिः । हे मेत्रेय ! उक्ताध्यायानामनुक्रमं वक्ष्ये कथयिष्ये तत्रादौ प्रथमाध्याये शास्त्रावतारणं शास्त्रोत्पत्तिः ततः द्वितीये ग्रहाणां रव्यादीनां प्रादुर्भावः प्रकटीभावः तृतीये राशीनां मेषादीनां स्वभावश्चतुर्थे दृष्टिवर्णनं ततः पश्चात्पंचमे गर्भाधानं षष्ठे सूतिकाविधिः सप्तमेऽरिष्टं अनंतरमष्टमाध्याये सुतस्य पुत्रादिसंततेः पित्रोर्जननीजनकयोश्च विचारः नवमे मातुलादीनां विचारः दशमात्तेषां पूर्वयोगानां मंगविचारः एकादशे

### भाषा ।

ज्ञानदायक हैं, उत्तम वेदांग वेदके नेत्र हैं, वेदमूल हैं, वास्ते सर्वमान्य है ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ इति वृ० भाषाटीकायामष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अब यह उगर्नासर्वे अध्यायमें पूर्व भाग और उत्तर भागका विषयानुक्रम कहते हैं, पहिले अध्यायमें शास्त्रोत्पत्ति कहाँ, दूसरेमें सूर्यादिग्रहोंका प्रादुर्भाव कहा, तीसरेमें मेषादिराशिका स्वभाव कहा, चौथे अध्यायमें दृष्टिका वर्णन, पांचवें अध्यायमें गर्भाधाननिर्णय, छठे अध्यायमें सूतिकाविधान कहा, सातवें अध्यायमें अरिष्टयोग, आठवें अध्यायमें पुत्र, माता, पिता इन्नोंका विचार, नवमें मातुलादिकका विचार, दसवें अध्यायमें योगमंगविचार, ग्यारहवें अध्यायमें धूमादिग्रहोंका विचार,

धूमाद्येकादशे मिश्रः पंचांगानां फलं तथा ॥ कारकादि  
फलं तद्ब्रह्मावानां च फलं तथा ॥ ४ ॥ द्वादश द्वादशाध्या-  
ये द्विग्रहाद्याश्च षट् स्मृताः ॥ अष्टवर्गादिचैकस्मिन्नाभसा-  
दिस्तु चापरे ॥ ५ ॥ चिरायुषादियोगश्च पंचाध्यायास्ततः  
परम् ॥ राजयोगास्तथावस्था अंतर्दायविधिस्ततः ॥ ६ ॥  
दायानां च फलं सप्तस्वंतर्दायस्त्रयोदश ॥ लक्षणं भूपवर्गा-  
णां योगादिषु बलं ततः ॥ ७ ॥ एवं त्वशीतिरध्यायाः पू-

टीका ।

धूमादिग्रहविचारः द्वादशमारम्य त्रयोविंशत्यध्यायपर्यंतं द्वादशाध्यायेषु मि-  
श्रफलं वा मिश्रफलाध्यायः पंचानां फलं च तथा कारकादिफलं द्वादशमा-  
वानां फलं च द्विग्रहाद्याः षट् योगास्तत्र षडध्यायाः स्मृताः एकस्मिन्नध्याये-  
ऽष्टवर्गादिकथितं अपरे विंशत्यध्यायास्तेषु नाभसादियोगानाह ततः पंचा-  
ध्यायाः एषु चिरायुषादियोगः ततः राजयोगाः ततोऽवस्थाविचारः ततोऽंतर्दा-  
यविधिः ततः दायानां फलं सप्तस्वध्यायेषु ततः अंतर्दायास्त्रयोदशाध्यायाः  
ततः भूपवर्गाणां लक्षणं ततोऽवशिष्टेषु योगादिषु यद्बलं तदुक्तमिति पूर्वभागेऽ-  
शीतिरध्याया उक्तविषयज्ञापकाः क्रमात्समीरिताः कथिता इति पूर्वार्धानु-  
क्रमः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ अथोत्तरार्धानुक्रमणिकामाह

भाषा ।

वारहवें अध्यायसे लेके तेर्वास अध्यायतक ( वारह अध्यायमें ) मिश्रफल, पंचा-  
ंगका फल, कारकादिग्रहोंका फल, वारह भावोंका फल कहे हैं, द्विग्रहादि छः योग-  
के फलके छः अध्याय, अष्टवर्गका वर्णन, २० अध्यायमें नामसादियोगोंका  
वर्णन, अध्यायमें चिरायुष्यका योगविचार उसके अध्याय ५ आगे राजयोगवर्णन  
फिर अवस्थाविचार, १ अध्यायमें, पीछे अंतर्दायविधि एक अध्यायमें, दायका फल  
सात अध्यायमें, अंतर्दशाका विचार, १३ अध्यायमें, राजवर्गका लक्षण १ में फिर  
वार्त्ताके जो अध्याय रहे उसमें योगादिकके विषयमें जो बलाबल कछा है, उसका  
विचार ऐसा ( ८० ) अध्याय पूर्वभागका विषयानुक्रम कछा ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥  
॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ अब उत्तरभागका अनुक्रम कहते हैं, प्रथम अध्यायमें

वर्भागे समीरिताः ॥ कलौ युगे ततः प्रोक्तं प्रथमेऽष्टकव-  
र्गकः ॥ ८ ॥ द्वितीये भावदृग्वीर्यमिष्टकष्टबलं ततः ॥ चतु-  
र्थे रश्मिसंभूतिरिष्टकष्टं द्विजोत्तम ॥ ९ ॥ लोकयात्रैकदेशो  
च पंचमे च ततः परम् ॥ भंगं च लोकयात्राणामेकदेशस्य  
चाष्टमे ॥ १० ॥ नवमे लोकयात्रा च दशमे दाय एव च  
॥ अंतर्दायस्तथाध्याये दायानां विषयस्ततः ॥ ११ ॥ त्र-  
योदशे तथा भाग्यं कलांशादिफलं द्विज ॥ चतुर्दशेऽब्द-  
चर्या च विजानीहि ततः परम् ॥ १२ ॥ अब्दचर्याफलं  
पश्चान्मासचर्याफलं ततः ॥ दिनचर्या ततः प्रश्नजातकं  
टीका ।

कलावितिसार्धसप्तभिः । ततः पूर्वार्धकथनानंतरं उत्तरार्धे कलियुगे कलियु-  
गनरविषये यत्प्रोक्तं तस्यानुक्रमो यथा-प्रथमेऽध्यायेष्टकवर्गः द्वितीये भावदृ-  
ग्वीर्यं भावबलं दृष्टिवलं च तृतीयेऽष्टवर्गश्चतुर्थे रश्मिसंभूतिः रश्म्युत्पादितेष्ट-  
कष्टफलं पंचमे लोकयात्रैकदेशः षष्ठे सप्तमे च तद्वंगः अष्टमे पुनर्लोकयात्रैक-  
देशः नवमे लोकयात्रा दशमे दायः एकादशेऽंतर्दायः ततः द्वादशाध्याये दा-  
यानां विषयः त्रयोदशाध्याये भाग्यं कलांशादिफलं षोडशांशादिफलं हे  
द्विज ! चतुर्दशेऽब्दचर्यां विजानीहि ततः परं तदनंतरं पंचदशाध्याये उक्ता-  
ब्दचर्यायाः फलं पश्चात् षोडशाध्याये मासचर्याफलं ततः सप्तदशे दिनचर्या  
ततोष्टादशेऽध्याये प्रश्नजातकं ब्रवीति कथयति हीति निश्चयेन पश्चादेको-

भाषा ।

अष्टवर्गका विचार दूसरेमें भावबल, दृष्टिवलविचार, तीसरे अध्यायमें इष्टकष्टका  
विचार, और चौथे अध्यायमें रश्मिकी संभूति, इष्टकष्टबल, पांचवें अध्यायमें लो-  
कोंका सुखदुःखविचार, छठे, सातवेंमें उसका भंग, आठवेंमें लोकयात्रा, नवम अ-  
ध्यायमें लोकयात्रा, दशवें अध्यायमें दायविचार, ग्यारहवें अध्यायमें अंतर्दायवि-  
चार, बारहवें अध्यायमें दायविषय, तेरहवें अध्यायमें भाग्यविचार, कलांशादिफल,  
षोडशांशादिफल, चौदहवें अध्यायमें वर्षचर्याविचार, पंधरवें अध्यायमें वर्षचर्याफल,  
सोळहवें अध्यायमें मासचर्या, सतरावेंमें दिनचर्या, अठारवें अध्यायमें प्रश्नविद्या,

प्रव्रवीति हि ॥ १३ ॥ अध्यायानुक्रमं पश्चाद्विंशे शास्त्रफलं  
द्विज ॥ एवं होराशताध्यायी सर्वपापप्रणाशिनी ॥ १४ ॥ युगे-  
षु च चतुर्ष्वेव प्रत्यक्षफलदायिनी ॥ १५ ॥ इति श्रीवृ० होरो-  
त्तरभागेऽध्यायानुक्रमवर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

होराशास्त्रमिदं सर्वं श्रद्धाविनयसंयुतः ॥ श्रुत्वा गुरुमु-  
टीका ।

नविंशेऽध्यायानुक्रमं अनुक्रमणिका हे द्विज ! विंशे शास्त्रफलं कथितं एवं  
होराशास्त्रे पूर्वार्धोत्तरार्धवर्तमानशताध्यायी सर्वपापप्रणाशिनी पठतः श्रोतुश्चे-  
तिशेषः । चतुर्ष्वपि युगेषु प्रत्यक्षफलदायिनी परोक्षस्यापि प्रत्यक्षवज्ज्ञानरूप-  
फलदायिनीति ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ एकोनविं-  
शत्यध्याये कृता व्याख्या यथामति ॥ बुद्धिदाता गणेशोऽयं प्रसन्नोऽस्तु  
सदा मम ॥ १ ॥ इति श्रीमद्बृहत्पाराशरहोरोत्तरभागे श्रीमद्द्व्यङ्गः नव्यवेदशा-  
स्त्राद्यनवद्यविद्याविद्योतितदशदि इम्ण्डलजटाशंकरसूनुज्योतिर्विचक्षीधरे-  
ण धोरेयोपाभिधश्रीकृष्णसहायेन विरचितायां सुबोधिनीटीकायां अध्या-  
यानुक्रमवर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

श्रीगणेशमथो नत्वा विंशे टीकां यथामति ॥ कुर्वे शास्त्रफलं चात्र शा-  
स्त्रस्यापि परंपराम् ॥ १ ॥ श्रीमन्महर्षिरस्मिन्विंशोऽध्याये शास्त्रफलं शास्त्रप-  
रंपरां चाह होरेति पंचश्लोकाध्यायेन । तत्राद्यसार्धद्वयेन फलं चाह । इदं  
मयोक्तं सर्वं होराशास्त्रं श्रद्धाविनयसंयुतः शास्त्रगुरुचनविश्वासरूपा श्रद्धा  
भाषा ।

उन्नीसवें अध्यायमें ग्रंथानुक्रमणिका, बीसवें अध्यायमें शास्त्रफलादेश, ऐसा यह  
होराशास्त्र पूर्वार्द्ध उत्तरार्ध सहित सौ १०० अध्यायका जो कोई पठन करे, या  
श्रवण करे उसके पापनाश करनेवाला चारयुगमें प्रत्यक्षफलदायक है. उसमें क-  
लियुगमें विशेष करके है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥  
इति वृ. भा. टीकायामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अब शास्त्रका फल और शास्त्रपरंपरा कहते हैं. यह जो होराशास्त्र मैंने कथा  
उसकूं गुरुमुखसे पढ़के उसका विचार करना, तो ज्ञान होवेगा, पीछे गुरुशास्त्रके

जोत्तमः॥२॥सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोकं स शास्त्रफलं  
 देभ्यश्च समुद्धृत्य ब्रह्मा प्रोवाच विस्मृतम् ॥ ३ ॥॥युगे-  
 द्यं तदेवेदं वेदांगं वेदचक्षुषी ॥ गर्गस्तस्मादिदं प्रहोरो-  
 या तस्माद्यथा तथा ॥ ४ ॥ तदुक्तं तव मैत्रेय शास्त्रमाद्यं-  
 तमेव हि ॥ ५ ॥ इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे  
 फलश्रुतिकथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

### टीका ।

समालोक्येतत्प्रवृत्तिधिया मया ॥ २ ॥ भ्रामं भ्रामं बहून्देशान्वर्षैः कतिप-  
 रयम् ॥ यतो यतो यथा लब्धो यावान्यावांस्ततस्ततः ॥ ३ ॥ तथा ता-  
 न्समादाय ग्रंथः संपादितो मया ॥ अकारि टीकाऽपि बुधानाश्रित्येह य-  
 मति ॥ ४ ॥ अनेकपुस्तकालाभात्प्रमादाल्लेखकस्य च ॥ अशुद्धे पुस्तकेऽ-  
 स्मिन्यावहुद्धिबलोदयम् ॥ ५ ॥ कृत्वा शोधं कृता टीका न्यूनमत्राऽधिकं  
 यत् ॥ क्षमाप्य सर्वं विद्वांसः कृपया शोधयन्त्वपि ॥ ६ ॥ इति श्रीबृहत्पार-  
 शरहोराशास्त्रे उत्तरार्धे श्रीमद्ध्यङ्ग्यवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्योतितवि-  
 ग्दिङ्मंडलजटाशंकरसूनुना ज्योतिर्विच्छ्रीधरेण धौरेयोपाभिधश्रीकृष्णस-  
 हायेन विरचितायां सुबोधिनीटीकायां फलश्रुतिकथनं नाम विंशतितमोऽ-  
 ध्यायः ॥ २० ॥

### भाषा ।

कह्या. यह शास्त्र वेदका नेत्ररूपी अंग है ॥ ३ ॥ ऐसा यह शास्त्र गर्गमुनिने ब्र-  
 ह्मार्जीके पाससे पढके पीछे मेरेकूं कह्या. हे मैत्रेय ! मैने यह आद्यंत शास्त्र  
 तुमारेकूं कह्या ॥ ४ ॥ ५ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरार्धे श्रीमद्ध्यङ्ग्यवेदशास्त्राद्यनवद्यविद्याविद्यो-  
 तितविच्छ्रीधरेण ज्योतिर्विद्वेकटरामतनयहरिकृष्णसहायेन विरचितायां भाषाटीकायां  
 फलश्रुतिकथनं नाम विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥